Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

LIB. G K V.

का १५ मं
भाग-१०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

110774

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार
पुस्तकालय

R
८०
का २५ जी
भाग-१०

विषय संख्या
पुस्तक संख्या
आगत पंजिका संख्या
पुस्तक पर किसी प्रकार का निशान लगाना वर्जित है । कृपया १५ दिन से अधिक समय तक पुस्तक अपने पास न रखें ।

303

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह पुस्तक वितरित न की जाय
NOT TO BE ISSUED

सन्दर्भ ग्रन्थ
REFERENCE BOOK

लगातार सत्यापन (?) १९८२-१९८३

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नागरीप्रचारिणी पत्रिका।

CHECKED 1973

दसवां भाग।

सम्पादक
कालिदास।

पुस्तक सं० ना.प्र.प.
आगत सं० 8(1)
गुरुकुल ग्रन्थालय काँगड़ी

काशी नागरीप्रचारिणी सभा द्वारा प्रकाशित।

BENARES:
Printed at the Medical Hall Press
1906.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

110774
Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
110774

नागरीप्रचारिणी पत्रिका ।

दसवां भाग ।

राजपुताने में प्राचीन शोध—अंक १ ।

(मुंशी देवी प्रसाद लिखित ।)

(१) बूंदी ।

बूंदी आड़ाबला पहाड़ के नीचे जो एक विभाग अर्वली[1] पर्वत का है, एक प्राचीन राजधानी हाड़ा जाति के चौहानों की है। इस-को इनका राज होने से पहिले बुंदा मीने[2] ने बसाया था। उस समय सब मिला कर ३०० घरों की बस्ती थी। बुंदा के पोते जैता का कर्म-चारी एक राजपूत था। उसकी बेटी जैता ने अपने बेटे के लिये मांगी। राजपूत ने बहुत कहा कि हमारा आपका सम्बन्ध नहीं हो सकता परन्तु जैता ने नहीं माना, तब वह मेवाड़ देश के गांव बम्बावदे में बांगाजी हाड़ा के पास गया और उनके कंवर देवाजी की सलाह से उसने व्याह करना स्वीकार कर लिया और बरात ठहराने के लिये एक बाड़ा बनाकर उसके नीचे बारूद बिछा दी। आषाढ़ बदी ९ संवत १२९८[3] का व्याह ठहरा था। उस दिन कंवर देवाजी भी आगए। मीने बड़ी धूम से बरात लेकर आए, उनको उसी बाड़े में

---

(१) अर्वली या अरिवली का नाम राजा भोज की बनाई "त्रिमाद्रि भूगोल" में अहिगवली लिखा सुना है। वह भूगोल एक मित्र ने भोपाल में राठी जाति के महेसरी महाजन रामलाल के पास देखी थी।

(२) आड़ाबला तथा अर्वली पहाड़ में मीने विशेष कर के रहते हैं। इनको मारवाड़ और मेवाड़ में मेणे कहते हैं। हाड़ोती अर्थात् कोटा बूंदी और ढूंढाड़ तथा जयपुर के राज्य में मीने दो प्रकार के हैं एक उज्वल जो गाय बैल नहीं खाते हैं और दूसरे मैले जो खाते हैं। इनके हाथ का कोई हिन्दू पानी नहीं पीता। मारवाड़ और मेवाड़ के मेणे भी इसी प्रकार के हैं। इनका सविस्तर वृतान्त हमने मारवाड़ मनुष्यगणना की रपोट के तीसरे विभाग में लिख दिया है।

(३) सही संवत दूसरे इतिहासों से हमको १३४२ मिला है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ठहराया और खूब मद्यपान कराया, जब वे नशे में धुत्त हो गए तो देवाजी ने बारूद में आग लगा कर उनको उड़ा दिया और जो बचे उनको तलवार से मार कर बूंदी में अमल कर लिया और उस राजपूत की तेल चढ़ी कन्या का बिवाह टोड़े के सोलंखी(१) रूपाल से कर दिया। फिर बूंदी से ढाई कोस दक्षिण पश्चिम के कोने में अपने पिता बांगाजी के नाम से बागेश्वरी देवी का मंदिर बावली सहित बनवाया और अपने दादा कोलणजी की छत्री गांव लाखेरी में बनवाई।

राव देवाजी के कंवर समरसी थे उनके राज में भीलों ने बड़ा उपद्रव मचाया। समरसी चंबल से उतर कर उनको दंड देने गए। पीछे आते हुए कोटे के भील कोटिये को भी लड़ाई में हरा कर भगा दिया। इनके २ कंवर जैतमाल और नरपाल थे, जैतपाल ने गांव बसाने के लिये वह धरती पिता से मांगली जहां उन्होंने भीलों पर जीत पाई थी और वहां जाकर कोटिया भील को मारा और कोटे में अपना अधिकार कर लिया।

राव समरसी के पीछे नरपाल और उनके पीछे हामा बूंदी के राव हुए जो संवत १३९३ में अपने कंवर बरसिंह को राज देकर काशी सेवन करने को चले गए और वहीं १४१३ में धाम प्राप्त हुए।

राव बरसिंह ने संवत १४११ में पहाड़ के ऊपर तारागढ़ का क़िला बनवाया और उसके नीचे नई बूंदी बसाई जिससे पुरानी बूंदी उजड़ गई। इस नई बूंदी की पोलें स्वर्गबासी महाराव राजा रामसिंह जी ने बहुत सुन्दर और सुदृढ़ बनवाई हैं।

बूंदी के क़िले में अच्छे अच्छे महल और दरीखाने रावरतन आदि पिछले राजाओं के बनाए हुए देखने के योग्य हैं। यह राजधाना हिन्दू बस्तियों का एक नमूना है।

महाराव राजा रामसिंहजी एक विद्वान और विद्यारसिक

(१) टोड़े के सोलंखी राजों की संतान में टोंक के भोमिये हैं। ये कहते हैं कि देवा जी बाप से रुठ कर बूंदी में रहते थे और उन्हींकी सहायता करके हमारे मूल पुरुष राव रूपाल जी ने मीनों को मारा था और बूंदी का राज दिलाया था। जिसके प्रतिफल में देवाजी ने अपनी पुत्री राव रूपाल जी को व्याही थी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्रीमान थे। उनकी सभा के उत्तमोत्तम पण्डित और कवि शोभा देते थे जिनमें मुख्य पण्डित गंगासहाय जी थे जो अब भी विद्यमान हैं और कौंसिल के मेम्बर हैं। ये पहिले दीवान भी रह चुके हैं। बूंदी में जो संस्कृत ग्रंथ नहीं लगते थे वे सब इन्होंने पढ़ कर उनकी टीका भी बनादी है। यंत्रराज बनाने में तो ये बड़े कुशल हैं। इनके बनाए दो यंत्रराज बूंदी के दरीखाने में हैं एक भूगोल यंत्र है जिस पर लिखा है कि भादों सुदी १० संवत १९२८ को शिवलाल कारीगर से यह भूगोल यंत्र पण्डित गंगासहाय ने बनवाया।

दूसरा खगोल यंत्रराज है। इस पर यह लिखा है कि महाराव-राजा श्री रामसिंहजी के पण्डित गंगासहाय ने अपनी युक्ति से यह यंत्रराज पौष सुदी ३ संवत १९२८ को महाराजा की वर्षगांठ के दिन शिवलाल कारीगर से बनवाया।

इन पण्डितजी ने कई पुस्तकें बनाई हैं जिनमें श्रीमद्भागवत की टीका विद्वानों के समाज में अति आदर से देखी जाती है।

ऐसे ही वैद्यक विद्या में विशारद बाबा आत्मारामजी सन्यासी महाराव राजा के सभासदों में थे। इन्होंने कई शीघ्र प्रभाव दिखाने वाली औषधियां, चंद्रोदय, सत्त, सिलाजीत, वसंतमालती, मृगांक, अभ्रक, अभ्रक का सत्त, सोमल, रसकपूर, रूपरस, आदि महाराव राजा को दी थीं।

बाबा जी का यह नियम था कि जिस औषधि का गुण जितने दिनों, महीनों, वा वर्षों तक बना रहता था उतनी अवधि तक उसे रखते थे फिर फेंक देते थे, चाहे वह कितना ही द्रव्य लगकर क्यों न बनी हो।

महाराव राजा के पास चार अपूर्व पदार्थ रोग और विष का नाश करने वाले थे जिनकी परीक्षा वे अनेक बेर कर चुके थे। उनमें से चौथा पदार्थ बाबा जी ने मोर के पंखों से तांबा निकालकर बना दिया था।

१—पत्थर का प्याला जिसमें पानी भर कर पिलाने से सांप का जहर उतर जाता था और यह उनके किसी पूर्वज को एक फ़कीर ने दिया था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२– एक पत्थर का कड़ा जिसको पूरे दिनों स्त्री की कोख पर फेरने से कड़ी से कड़ी पीड़ा बालक जन्मने की शांत हो जाती है।

३–एक पत्थर की माला जिसे पसलियों पर फेरने से पसली की पीड़ा जाती रहती थी।

४ एक छल्ला बाबा आत्माराम जी का बनाया हुआ जिसे धोकर पानी पिलाने से सर्प का काटा हुआ आदमी अच्छा हो जाता था।

सूरजमलजी चारण भी जिन्होंने एक बहुत बड़ा काव्यग्रंथ वंशभास्कर नामक भाषाकविता का बनाया है इन्हीं राव राजाजी के आश्रित थे।

आसानन्द जी आदि और भी अनेक पंडित और बुद्धिमान पुरुष राव राजा रामसिंह जी के समय में बूंदी के भूषण थे। जिनमें आसानंद जी, बोहरा जीवनलाल जी, दंडी आत्माराम जी, चंडादान जी चारण के आत्मज सूर्यमल जी और पठाण हमीद खां जी तो पञ्चरत्न(१) ही कहलाते थे।

जैतसागर।

यह तलाव बून्दी के बाहर बस्ती से लगा हुआ प्रारम्भ में तो जैता मीने का खुदवाया हुआ था, पीछे से महाराव राजा शत्रुशल्ल जी की रानी ने उसकी पक्की पाल बंधवाई, फिर और महल तथा मकान

(१) इन पंचरत्नों के विषय में पंडित लोग यह श्लोक पढा करते हैं।

आशानंदो ज्ञानभाण्डो दण्डी चण्डीदानजः सूर्यमल्लः।
भूभृद्रत्नत्वत्सभायां हमीदखां ज्ञायते पंचरत्नान्यमूनी ॥ १ ॥

इस श्लोक में कुछ अशुद्धि देखकर कविराव रामनाथ जी ने यह नया श्लोक बना के फागुन बदी १२ संवत १९६० को मेरे पास भेजा था।

आशानंदो जीवनः सूर्यमल्लोऽप्यात्मारामोऽयहमीदखां प्रवीणः।
भूभृद्रत्नैत्वत्कृपापात्रसभ्येष्वालोक्यं पंचरत्नान्यमूनी ॥ १ ॥

अब आशानंदजी के पुत्र आचार्य सदानंदजी हैं। जीवनलाल जी के पुत्र न होने से उनके स्थानापन्न उनकी दो बहिनें हैं। आत्मारामजी विरक्त थे, सूर्यमल्लजी के औरसपुत्र नहीं थे, अंकस्थ पुत्र मुरारिदानजी हैं। हमीदखांजी के ऊपर रावराजाजी की अति कृपा थी। ये ताजीमी थे। इन्हें दो गांव जागीर में मिले थे परंतु जीवनलाल जी ने रावराजाजी के दिल पर और तरह जचादी जिससे वे सकुटुंब चले गए

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भी उसके ऊपर बने। सुखराम धाभाई ने महल बनवाया । यह तालाव इस बात के लिये विख्यात है कि महाराव राजा बुधसिंह जी के भाई जोध सिंह जी गनगोर सहित इसमें डूब गए थे जिसकी यह कहावत अब तक चली आती है " हाडोले डूबो गनगोर'।

छारबाग ।

बून्दी से एक कोस उत्तर नगर नेणवे के रास्ते पर छारबाग है जिसमें राव शत्रुशल्ल जी से लेकर अब तक पिछले राजाओं के चबूतरे और छत्रियां उत्तमोत्तम पाषाणों की बनी हुई हैं। महाराव राजा रामसिंह जी ने सब को सुधार कर प्रत्येक में लेख भी खुदवा दिए हैं। जिस राजा के साथ जितनी रानियां सती हुईं उनकी भी मूर्तियां उन राजाओं की मूर्तियों के साथ हैं।

केदारजी ।

छारबाग से आगे एक और बून्दी से दो क्रोस उत्तर टोंक के मार्ग में परबत के नीचे एक सुरम्य स्थान है जहां बाण गंगा बहती है, केदार जी और बाणेश्वर महादेव जी के पुराने मंदिर हैं, पर लेख कोई नहीं है। केदारा जी का मंदिर देवा जी के दादा कोलण जी हाड़ा का बनवाया हुआ है और उन्हींकी भक्ति से केदार यहां प्रगट भी हुए ऐसी जनश्रुति है।

बाणेश्वर जी का मंदिर पुराना है। बाण गंगा के तटस्थ होने से बाणेश्वर नाम महादेव का हुआ है। बाण गंगा पर राव शत्रु शल्ल जी के पहिले पूर्वजों के चबूतरे हैं क्योंकि इस भूमि के पुनीत होने से उनकी उत्तर क्रिया यहीं हुई थी।

(२.) खटकड़ ।

बूंदी से ८ कोस पूर्व में पहाड़ों के नीचे मेज नदी के तट पर खटकड़ नाम एक प्राचीन ग्राम है। इसके पास जंगल झाड़ी बहुत हैं। पहिले एक बंधा भी इस नदी का बंधा हुआ था जो अब टूटा पड़ा है।

बंधा ।

कहते हैं कि इस बंधे को दोसा और कानड़ नाम के दो ब्राह्मणों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ने बांधा था और इसकी एक विचित्र कथा है कि गांव दुर्गापुरे की सीमा में जो यहां से पासही है महादेव जी का एक मंदिर था उसमें एक पत्थर के ऊपर ये अक्षर खुदे थे।

ईंको बीज कछै पतवांणों।
तींको भेद विलाइ जाणें॥

इसके नीचे एक बिल्ली सिर झुकाए हुए बनी थी। विचारशील लोग इन अक्षरों का आशय सोचते रहते थे। कोई कोई पतवाने और बिलाई का अर्थ नीचे और कांटा[1] मान कर कुओं में कांटा डाला करते थे परन्तु कुछ हाथ नहीं लगता था। निदान दोसा और कानड़ दो ब्राह्मण भाई यह कल्पना करके कि यहां कुछ द्रव्य गड़ा है जिसका भेद यह बिल्ली जानती है, बिल्ली के नीचे जमीन खोदने लगे तो उनको द्रव्य मिल गया।

वहां के राजा ने यह बात सुनकर उनको बुलवाया और पूछा तो उन्होंने कह दिया कि द्रव्य तो मिला है आपको चाहिए तो ले लीजिए। राजा ने कहा कि प्रथम तो महादेवजी के मंदिर से निकला, दूसरे तुम ब्राह्मण हो मैं तो क्या लूं। तुमही किसी पुण्य के काम में लगा दो। तब उन्होंने यह बंध बनाया और महादेवजी के मंदिर का जीर्णोद्वार भी किया।

इन दोनों भाइयों का देहान्त दुर्गापुरे में हुआ। दोनों की स्त्रियां सती हुईं। वहां उनके चबूतरे हैं जिनके लेखों से संवत् ११६० के वैशाख में दोसा और कानड़ का मरना जाना जाता है।

धूंधलाजी जोगी और पट्टण डट्टण।

यहां पहाड़ के पूर्व नाके में धूंधलाजी जोगी का मंदिर राव शत्रुशल्ल जी हाड़ा का बनवाया हुआ है। धूंधला जी को गुरु गोरखनाथ जी और जलंधरनाथ जी का चेला बताते हैं। वे तपस्या करने को इस पहाड़ में आगए थे और यहां पाटण नाम एक नगर बसता था परन्तु धूंधला जी के चेले को कोई भीख नहीं देता था, वह जंगल

---

(१) बिलाई उस कांटे को भी कहते हैं कि जिससे कुए में गिरे हुए लोटे तथा डोल निकाला करते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

से लकड़ियां काट कर बेचता और उनके मोल से अनाज लेकर एक तेलन को देता, वह पीस कर रोटी बना देती थी। एक दिन गुरु ने चेले की टाट के बाल उड़े देख कर कारण पूछा तो उसने वह सब कथा सुनाई। धूंधला जी ने कहा कि तू जाकर उस तेली से कह दे कि अभी अपने बाल बच्चे लेकर चार कोस पर चला जाय क्योंकि इस नगरी पर उल्कापात होने वाला है।

जब वह तेली वहां से चला गया तो धूंलाजी ने कोप करके कहा कि "पट्टण पट्टण सब डटण और तेली का घर बच्चन"।

बस उसी समय से गर्म रेत बरसने लगी जिसमें सब लोग जल मरे और सब मकान रेत में दब गए परन्तु तेली का घर बच गया।

कहते हैं कि उस दिन पट्टण नाम के सब शहरों का (१) यही हाल हुआ। अब भी उनके खंडहरों में खोदने से राख और उस समय के दबे हुए बरतन निकलते हैं।

इस दुर्घटना के पीछे धूंधला जी लाखेरी में जा रहे। वहां उनकी गुफा है जिसके आगे धूनी लगी रहती है और उस गुफा का एक सिरा खटकड़ में भी इस पहाड़ पर आ निकला है जहां यह मंदिर बना है और पहाड़ का सिरा मंदिर पर झुका हुआ है।

धूंधला जी की मूर्ति सफ़ेद पत्थर पर खुदी रखी है, कानों में मुद्रा हैं और चरण चौकी में यह लेख है।

संवत् १२०३ अगहण सुदी १४ देवता धूंधला जी राजा शिव सिंह का राज स्थिर रक्खे और नाथ सेवक रहें।

राव राजा शत्रुशल्ल जी और सिंधुनाथ जी जोगी।

राव राजा शत्रुशल्ल जी के समय में यहां सिंधुनाथ जोगी तपस्या करते थे। रावजी उनके चेले होगए थे। उनके और सिंधुनाथ जी के चित्र कए पाषाण में खुदे हैं। दोनों के हाथ में प्याले हैं। एक मनुष्य

---

(१) मारवाड़ में भी ऐसी कई कथाएं धूंधली धमाल जोगी के नाम से विख्यात हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राव जी पर चंवर कर रहा है और नीचे एक लेख खुदा है जिसका यह आशय है कि संवत १७१६ ज्येष्ठ सुदी ११ सोमवार को राव राजा जी शत्रुशाल जी बूंदी नरेश और गुरु जी बाबा सिंधुनाथजी के चेले ने बनाया, चुंगी और भूमि सदा के लिये लगा दी, लेख के सिरे पर ये अक्षर हैं।

श्री धुधला जी आदि अनादि।

पुरानी सतियाँ।

मंदिर की भीतों में कुछ पत्थर पुरानी सतियों के चबूतरों के भी लगे हैं जिनमें से दो के लेखों का सार यह है।

१ संवत १०६९ बैशाख सुदी १४ बृहस्पति वार सालिंगा सती।

२ संवत १०८९ आषाढ़ बदी ९ गंगा सती।

तिल द्रोणी नदी।

तिलद्रोणी नदी पूर्व दिशा से आकर खटकड़ से कुछ दूर जंगल में मेज नदी से मिलजाती है।

श्रीकृष्णजी और इन्द्र के युद्ध का स्थान।

यहां के लोग कहते हैं कि श्रीकृष्णजी और राजा इन्द्र की लड़ाई जो श्रीमद्भागवत में लिखी है इसी जगह हुई थी।

इस लड़ाई का वर्णन विष्णुपुराण में भी १६९ अध्याय से लेकर आगे के कई अध्यायों में लिखा है। उनमें के कई श्लोक खटकड़ के ब्राह्मणों ने कंठ कर रक्खे हैं जिनका तात्पर्य यह है कि उस लड़ाई में इंद्र का हाथी और श्रीकृष्णजी का गरुड़ दोनों लड़ते लड़ते पारियात्रिक पर्वत पर गिरपड़े थे और श्रीकृष्णजी ने विजय पाकर बिल्वके-श्वर महादेवजी को वहां स्थापित किया था और महादेवजी ने कहा था कि यहां गंगा प्रकट होगी इससे पहिले इस जगह आवर्ता नाम नदी बहती थी।

फिर जब देवताओं ने दोनों में संधि कराई तो इंद्र और श्रीकृष्ण जी उस नदी में स्नान करके एक दूसरे के कंठ से लग कर मिले थे।

वे ब्राह्मण कहते हैं कि अब जो मेज नदी है वही आवर्ता है और तिलद्रोणी गंगा है जिसका प्रादुर्भाव महादेव जी के वर-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

द्वान से हुआ था। जहां ये दोनों मिले हैं उस ठौर का नाम प्रिय-संगम था, वही अब सुमेल कहलाता है और पारियात पर्वत का नाम अब गेंद (गयंद) पहाड़ है जिस पर इन्द्र के हाथी के गिरने का चिन्ह हैं और बिल्वकेश्वर महादेव जी को अब बिलकेसर जी बोलते हैं। इस पते से प्रतीत होता है कि वह युद्ध यहीं हुआ था।

ब्रह्मदत्त का यज्ञ स्थान।

कुछ दूर आगे एक बड़ा मंदिर ढहा पड़ा है। कहते हैं कि यहां बसुदेव जी के मित्र ब्रह्मदत्त ब्राह्मण ने यज्ञ किया था और श्रीकृष्ण जी ने निकुंभादि दैत्यों को मार कर इस प्रांत का राज ब्रह्मदत्त को दिया था।

गेंदपहाड़।

खटकड़ से एक कोस उत्तर गेंद (गयंद) पहाड़ है उस पर वृक्षों के बीच में एक नीची भूमि को यहां वाले हाथी थाना बोलते हैं और कहते हैं कि इन्द्र का हाथी श्रीकृष्ण जी के गरुड़ से हार कर यहीं पर गिरा था।

बिलकेसर (बिल्वकेश्वर)।

यहीं बिल्वकेश्वर महादेव जी का शिखरबंद मंदिर है पर उसमें कोई पुराना लेख नहीं है। एक नया लेख माघ बदी १४ संवत् १७४२ का है जिससे जाना जाता है कि इस मंदिर को खटकड़ निवासी व्यास चुतरा के बेटे रिखीराम ने बनवाया था।

बिल्वकेश्वर महादेव जी का माहात्म्य जो हरिवंश पुराण के पारिजातक हरन कथा में लिखा है वह यहां के ब्राह्मणों को याद है। उससे जाना जाता है कि श्रीकृष्ण जी ने इन महादेव जी को अपनी फ़तह की यादगारी में जो देवराज (इन्द्र) के ऊपर हुई थी बिल्वपत्र और जल हाथ में लेकर स्थापित किया था।

ऐसी पुनीत यादगारें भारत में प्राचीन काल से बहुत चली आती हैं जिनकी रक्षा और मरम्मत धर्म समझ कर राजा और प्रजा दोनों किया करते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कार्तिक के महीने में यहां मेला होता है, दूर दूर के यात्री महादेव जी के दर्शन करने को आते हैं।

खटकड़ के खंडहर।

खटकड़ में अब तो थोड़ेसे ही घर बसते हैं परन्तु पहिले किसी समय में यहां बड़ी बस्ती होगी यह बात खटकड़ के खंडहरों से जानी जाती है, जो दूर तक पड़े हैं। पश्चिम के खंडहरों में एक शिखरबंद मंदिर महादेव जी का है जिसकी मूर्तियाँ मरहठा गरदी में टोंक के नव्वाब अमीरख़ां के किसी फ़ौजी अफ़सर ने तोड़ डाली हैं।

खटकड़ का इतिहास।

कहते हैं कि अनादि काल में यहां उजाड़ पड़ी थी, जब त्रिपुर के दैत्यों की दुष्टता से देवताओं ने जंबुकारण्य में जो यहां से ८ कोस है, जाकर महादेव जी से पुकार की और महादेव जी ने उन दैत्यों को जला दिया तो बचे हुए दैत्य ब्रह्मा जी की शरण में गए और ब्रह्मा जी ने उनको इस उजाड़ धरती में बसने की आज्ञा दे दी तो निकुंभादि छ राक्षसों के आकर बस जाने से इसका नाम खटपुर हो गया। इसी को खैराड़ कहते हैं और खटकड़ भी इसीका नाम है, परन्तु अब खैराड़(१) तो देश है और खटकड़ नगर है।

दैत्य और देवता दोनों ब्रम्हाजी के पोते कश्यप ऋषि के बेटे और आपस में सोतेले भाई थे। कश्यपजी की एक स्त्री दिति थी और दूसरी अदिति। दिति से देवता और अदिति से दैत्य हुए और ये दोनों प्राचीन काल में राज्य के लिये परस्पर लड़ा करते थे।

श्रीकृष्णजी और अर्जुनादि पांडवों ने खटकड़ के दैत्यों को मार कर यहां की राज्य ब्रम्हदत्त ब्राम्हण को दिया था। अब जो ब्राम्हण यहां रहते हैं वे अपने को ब्रम्हदत्त के वंश में बताते हैं। राज के बदले यहां

(१) यथार्थ में खैराड़ का अर्थ है खैर के वृक्षों की आड़। इस प्रान्त में खैर के वृक्षों की सघन झाड़ी थी, इसीसे यह नाम प्रसिद्ध हुआ है और अब भी वहां खैर के वृक्ष बहुत हैं, यह खैराड़ देश बूंदी और उदयपुर के राज्यों में बंटा हुआ है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की पटेलाई इनके पास रहगई है। इनसे किसने और कब राज लिया यह इनको भी याद नहीं है और न और किसी प्रमाण से जाना जाता है। धूंधलाजी की चरणचौकी में जो शिवसिंह राजा का नाम लिखा है उससे प्रगट होता है कि शायद उसके पूर्वजों तथा उनसे पहिले के राज करने वालों ने यह पापकर्म किया हो।

यद्यपि उस लेख में राजा शिवसिंह का वंश नहीं लिखा है और न उसके बाप दादों के नाम हैं परन्तु यहां उनका राज्य होने में संदेह नहीं है, क्योंकि लेख में नाम और समय राजा का ही लिखा जाता। है शिवसिंह तथा उसके वंश का राज कब और क्योंकर गया, इसका भी कुछ पता नहीं लगता परन्तु खींचियों के भाटों की बही में पीलपिंजरजी खींची का संवत् ११९१ में लाखेरी और संवत् १२०१ में खटकड़ जीतना लिखा है, किससे जीता इसका कुछ पता नहीं है।

पीलपिंजर जी के पीछे छितसेन, रणधीर, संग्राम, दूल्हराय, और राव सनजी, पारी पारी से गद्दी पर बैठे। सनजी का बेटा देवअंसी और बेटी गंगाबाई थी जो टोलरगढ़[१] के राजा बीजल डोडस[२] से व्याही थी। देवअंसी ने गद्दी बैठे पीछे ३०० बछेरे चरने के लिये बीजल के पास भेजे थे और बीजल ने एक एक बछेरा अपने एक एक गांव में छोड़ दिया था। फिर जब देवअंसी ने मंगाए तो नहीं भेजे। देवअंसी चुप हो रहा। एक दिन बीजल ने गंगाबाई को सुना कर कहा कि खींचियों में कुछ रजपूती नहीं है, हमने ३०० बछेरे देवअंसी के दबा रक्खे हैं और वह आजतक हम से नहीं ले सका है।

यह बात गंगा के कलेजे में कटारी सी लगी। उसने भाई को लिखा कि ये लोग खींचियों की निंदा करते हैं। देवअंसी ने कहलाया कि मुझे ऐसा समय बता कि जब सब डोड एक ठौर मिल जावें। उसने लिख भेजा कि फागुन में पेमपुरे के तालाब पर फूलडोल का मेला होता है उसमें ये सब इकट्ठे हो जाते हैं। देवअंसी ने खटकड़ से उस

(१) खटकड़ से ३० कोस पूर्व और दक्षिण के कोन में स्थित है।
(२) पंवारों की एक शाखा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मेले में जाकर डोडों को मारा। खीची केवल १६ मारे गए। बीजल उस समय ३०० बछेरों के बदले ६०० घोड़े देता था परन्तु देवअंसी ने नहीं लिया और भाले से उसको मारकर ढोलरगढ में अमल कर लिया। फिर बहिन से मिला, वह अपने पति की लोथ मंगाकर सती हो गई और भाई से कह मरी की मेरा नाम स्थिर रखना, तब उसने ढोलरगढ़ का नाम गढ़ गागरोण रख दिया। उस समय ५२ परगने इस गढ़ के नीचे थे।

देवअंसी के पीछे इतने राजा हुए।

१	नेतूजी	२	रणधीर संवत् १२३०
३	केवल अंसी संवत् १२३२	४	हंसराज
५	गईयूजी, इसने सं १३३० में गईयूदह का बाँध बँधाया	६	नेतसी
७	गणेसी	८	मलेसी
९	रतनसी	१०	जैनसी संवत् १३६४
११	सांडलसी	१२	रावकड़वा
१३	राव अचला जो मंडू के बादशाह[१] से लड़कर कुटुम्ब सहित माघ बदी १२ संवत् १४४२ [२]को काम आया। लाखेरी, खटकड़ और गागराण में बादशाह का अमल हुआ।		

जब मंडू की बादशाहत बिगड़ी[३] तो बूंदी वालों ने खटकड़ ले लिया और जैतावत जाति के हाड़ों को दे दिया, जिनके महलों के खँडहर खटकड़ में हैं।

(३) केशवराय जी का पट्टण।

यह बहुत पुरानी नगरी बूंदी से १० कोस पूर्व दिशा में चंबल

(१) इस बादशाह का नाम होशंग था–तवारीख मालवा।

(२) सही संवत् १४८४ है। ऐसेही ऊपर लिखे और संवतों में भी संदेह है।

(३) इसका समय संवत् १५७६ के करीब हो सकता है जब कि राना सांगा ने मंडू के बादशाह महमूद को पकड़ कर उसका आधा राज छीन लिया था और बूंदी वाले भी उनके आधीन थे। उसी प्रसंग से उनको भी यह हिस्सा मालवे के राज का मिल गया हो तो आश्चर्य नहीं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नदी के पश्चिम तट पर बसती है। इसका प्राचीन नाम रन्तदेव पत्तन है क्योंकि माहेश्वरपुरी चन्द्रवंशी राजा रन्तदेव ने इसको बसाया था।

जम्बुकारण्य।

भूमि के जिस भाग में यह शहर बसा है उसका प्राचीन नाम जम्बुकारण्य है। यहाँ पहिले जम्बुक (गीदड़) बहुत रहते थे जिससे ऐसा नाम हुआ था अर्थात् गीदड़ों का जंगल। जब त्रिपुरासुर दैत्य ने इन्द्रादि देवताओं को दुःख दिया और उन्होंने यहां आकर महादेव जी की शरण ली तो महादेव जी ने श्वेत बैल पर उनको दर्शन देकर दैत्यों का नाश किया जिसके चिन्ह स्वरूप जम्बुकेश्वर और श्वेतवाहन नाम के लिंग देवताओं ने यहां स्थापित किए।

अब भी यहां जंगल में एक जाति का गीदड़ होता है जिसके मुंह से ज्येष्ठ के महीने में ज्वाला निकला करती है।

पुरानी सतियां।

चंबल के घाट में कई पुराने पत्थर सतियों के लगे हैं एक में संवत् ९२ और दूसरे में सं १५० पढ़ा जाता है, बाकी अक्षर घिस गए हैं।

पुराने सिक्के और बरतन।

बरसात में जब नदी के करारे पानी की मार से टूट जाते हैं या जो कोई गहरा कुआं खोदा जाता है तो कभी कभी प्राचीन समय के बरतन और सिक्के निकल आते हैं।

मेला।

पाटन में हर साल कातिक सुदी ९ से १५ तक मेला भरा करता है जिसमें २०, २० कोस के यात्री और व्यापारी आते हैं और यहां के तीर्थों की जो पांच कोस के भीतर हैं परिक्रमा करते हैं। आखातीज के दिन भी इस पंचकोसी यात्रा के लिये बहुधा लोग आया करते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ज़म्बुकेश्वर महादेव जी का मंदिर ।

यह पुराना मंदिर चंबल के घाट पर था जो अब केशवराय जी के मंदिर के परकोटे में आगया है। महादेव जी मंदिर से भी पुराने हैं। इनके बाण में जगह जगह गराड़ें पड़ गई हैं और जो पानी उनपर डाला जाता है वह नीचे चलाजाता है। ये गराड़ें इतनी चौड़ी हैं कि उनके अंदर आदमी का हाथ जा सकता है। इस बाण का पाषाण अति जीर्ण हो जाने से दिन दिन खिरता है। लोगों का ऐसा विश्वास है कि जब घोर कलू होगा तो यह बिलकुल खिर जावेगा।

इस पर बचाव के लिये किसी राजा ने पीतल का चोला चढ़ा दिया है जिससे लिङ्ग रात दिन ढका रहता है, पूजन करने के लिये चोला उतारा जाता है।

यह मंदिर पंडशाला कहलाता है क्योंकि पंड नाम का एक राजा हुआ था जिसने इसको बनवाया था। कोई इसे पांडवों का बनाया हुआ कहते हैं। महाभारत से भी पांडवों का जम्बुकारण्य में दो बेर आना सिद्ध होता है।

इसीके पास एक पूतना का मंदिर कुन्ती का बनवाया हुआ, और दूसरा बीजासन माता का द्रोपदी का बनवाया हुआ प्रसिद्ध है।

केशवराय का मंदिर ।

केशवराय जी का मंदिर चंबल के एक ऊंचे और संगीन घाट पर बना है। इसका शिखर इतना ऊंचा है कि बहुत दूर से दिखाई देता है। इसमें, लाल, पीले, गुलाबी, सफ़ेद, और बसंती रंग के पत्थर लगे हैं जो पाटन के आसपास' की खानों तथा बूंदी और कोट आदि से लाए गए थे और पत्थरों में कोरनी भी बहुत सुंदर हुई हैं। अंगरेज़ लोग बहुधा इस मंदिर को देखने को आते हैं और नक़शे उतार कर लेजाते हैं।

कहते हैं कि रावरतन हाड़ा की रानी बड़ी पुण्यशीला थी उसने यहां एक विशाल मंदिर बनवाना स्थिर करके १२ पक्के घाट चंबल पर बनवाए जिनमें विष्णुघाट सब से ऊंचा था। उसकी पोल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

से लेकर नदी तक १०० सीढियां हैं। इसी घाट पर मंदिर का उछाला (कुरसी) आठ दस गज़ चौक छोड़ कर बना था जो घाट से ३ गज़ ऊंचा, १४–१५ गज़ लम्बा और इतना ही चौड़ा भी है। उसपर साफ़ और स्वच्छ पत्थरों का अठपहलू फ़र्श तैयार हुआ था। फिर रानी के मरजाने से काम बन्द होगया पर तीसरी पीढ़ी में राव शत्रुशाल जी ने मंदिर बनवाकर अपनी दादी का मनोरथ पूरा किया और केशवराय जी को उसमें विराजमान करा दिया।

केशवराय जी की चतुर्भुजी मूर्ति सफ़ेद पाषाण की है। एक आंख में हीरा है जो चमकता हुआ दिखाई देता है। इसी प्रकार का हीरा दूसरी आंख में भी था जिसको एकाहु हुल्कर जसवंतराव निकाल लेगया और अपनी एक आंख के समान ठाकुरजी की इस आंख को भी बिना हीरे की कर गया।

यह मूर्ति राव शत्रुशाल जी को चंबल नदी में से मिली थी और कोई कहते हैं कि वे उसे मथुरा से लाए थे।

राव शत्रुशाल जी शाहजहां बादशाह और शाहजादे दाराशिकोह के बड़े कृपापात्र थे। वे संवत् १७१५ में दाराशिकोह की तर्फ़ होकर औरंगज़ेब से बहादुरी के साथ लड़कर काम आए। औरंगज़ेब जी ने इस द्वेष से केशवराय जी का मंदिर गिराने को फ़ौज भेजी जिसके लिये १००० हाड़े लड़ने मरने पर तैयार हुए। निदान बादशाही अफ़सर बादशाह की बात रखने के लिये कलश और थोड़ासा शिखर गिराकर चले गए जिसकी मरम्मत महाराव राजा बुधसिंह जी के समय में हुई और उनकी कछवाही रानी ने सोने के कलश चढ़ाए। इस मंदिर में जो लेख है उससे जाना जाता है कि संवत् १७७६ में फागुन सुदी ७ शुक्रवार को महाराव राजा बुधसिंह जी की बड़ी रानी कछवाही[१]जी ने शिखर और गुमटियों के ऊपर कलश चढ़ाए थे।

(१) यह रानी जयपुर के महाराजा सवाई जयसिंह की बहिन थीं। सवाई जयसिंह ने भी ऐसेही औरंगज़ेब के गिराए हुए मंदिरों की जगह जगह मरम्मत कराई थी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राजा रन्तदेव और चंबल नदी की उत्पत्ति।

राजा रन्तदेव महेश्वर का राजा था। इन्होंने एक बड़ा यज्ञ किया था जिसके पीछे जब वह ब्राह्मणों और मेहमान राजाओं सहित जो दूर दूर से आए थे स्नान करने को जाने लगा तो उदास होकर बोला कि यहां कोई समुद्रगामिनी नदी नहीं है। यह कहतेही उसकी श्रद्धा और ब्राह्मणों के वरदान से मृगछालाओं के नीचे से जो ब्राह्मणों को देने के लिये रक्खीं थीं पानी बहने लगा जो आगे बढ़कर चंबल नदी का सोता बन गया असली नाम इसका चर्मन्वती है।

रन्तदेव का प्रजापालन।

दूसरी कथा इस राजा की सब पुराणों में यह लिखी है कि इसने अकाल में अपना सब ख़ज़ाना प्रजा को खिला दिया और आप रंक होकर प्रजा के साथ परदेस में निकल गया, तब भी जो कुछ भिक्षा मिलती थी भूखों को खिलाए बिना वह नहीं खाता था।

रन्तदेव को भागवत बचन।

तीसरी बात यह है कि रन्तदेव ने जम्बुकारण्य में चंबल नदी के तट पर रन्तदेवपत्तन नाम का एक नगर बसाया था। वही यह पाटण है। उसको भगवान के दर्शन हुए थे और भगवान ने बचन दिया था कि कलियुग में हमारी एक मूर्ति तेरी नगरी में रहेगी। सो वह यही मूर्ति केशवराय की है जो महाराव शत्रुशाल जी को चंबल नदी में से मिली थी।

श्वेतबाहन जी का मंदिर।

शहर से बाहर बाहड़िया नाम के तलाब की पाल पर श्वेतवाहन जी का मंदिर है। इसके पास एक कुंड परशुराम जी का बनाया हुआ है जिसका पानी दिन भर में कई रंग बदलता है। इसको महादेव जी की करामात समझते हैं।

(४) सथूर।

बूंदी से तीन कोस पश्चिम को चंद्रभागा नदी के तट पर पहाड़ के नीचे यह पुराना खेड़ा बसा है। असली नाम इसका सुरथपुर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

था। इसको चंद्रबंशी राजा सुरथ ने जो शत्रुओं से पराजित हो कर यहां आरहा था, मारकंडेय ऋषि के उपदेश से रक्तदन्ता देवी का पूजन कर के यह शहर बसाया था और देवी का मंदिर बनवाया था जो अब तक मौजूद है परन्तु कोई पुराना लेख नहीं है जिससे समय का निर्णय होता, हां मारकंडेय पुराण में इसकी कथा है।

बैजनाथ जी।

गांव से पश्चिम दिशा में बैजनाथ जी का मंदिर संवत् १८०० का बना हुआ है। यहाँ सतियों की देवलियां (पत्थर पर खुदी हुई मूर्तियें) में संवत् १३९१ से लेकर संवत् १४०० तक के लेख हैं जिनमें कोई इतिहास के उपयोगी बार्ता नहीं है।

चंद्रभागा और मारकंडेय ऋषि।

चंद्रभागा नदी दक्षिण दिशा में एक पहाड़ की खोह से निकलती है, जो सथूर से ढाई कोस जंगल में है, मारकंडेय ऋषि इसी पहाड़ पर तपस्या करते थे। यहां जंगल बहुत बिकट है और दूर तक चला गया है जिसमें शेर बघेरे आदि जानवर रहते हैं।

महादेव जी का मंदिर।

इस पहाड़ में महादेव जी का भी एक मंदिर है परन्तु जब तक कि बहुत सा साथ न हो अकेला दुकेला आदमी दर्शनों के लिये नहीं जा सकता है।

पुराने लेख।

इस मंदिर के मंडप की ताकों में कई पुराने पत्थर धरे हुए हैं जिन पर अक्षर खुदे हैं जिनमें से कुछ का सारांश नीचे लिखा जाता है।

१ संवत् १३२ सावन बदी १४। आगे मतलब नहीं खुलता।

२ श्रीहटसा-संवत् १२२ सावन बदी ऊपर ४ मूर्तियां मर्दों की, नीचे १२ औरतों की खुदी हैं।

३ राव श्रीबोलिया—ऊपर एक मूर्ति पुरुष की और नीचे तीन औरतों की।

४ राव श्रीसंडा और दो औरतों की मूर्तियाँ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

५ राव श्रीरत्न सिंह और नीचे चार स्त्रियाँ।

६ राव श्रीहालू और नीचे दो औरतें।

७ राव श्रीजयसिंह और नीचे एक स्त्री।

इस तरह नं· ३ से ७ तक पत्थरों में १५ औरत मर्द खुदे हैं और नाम के पहिले राव की पदवी होने से जाना जाता है कि ये सथूर के पुराने राजा रहे होंगे और यहां इनको दाग दिया गया होगा। जिन औरतों की मूर्तियां इनके साथ खुदी हैं वे इनके पीछे सती हुई हैं पर संवत् मिती नहीं होने से समय का कुछ पता नहीं लगता।

यहीं एक टूटे हुए पत्थर पर ये अक्षर हैं।

"संवत् १३३४ का बैशाख बदी ११ सुनपत हाड़ा पर सती जी बड़ी" यह सुनपत हाड़ा राव देवाजी के भाइयों में से होंगे।

(५) हींडोली।

बूंदी से सात कोस उत्तर को डोंडोली नाम का एक पुराना गांव बसता है। इसके पास इससे भी पुरानी नगरी डोंडोली के खँडहर पड़े हैं जो संवत् १४०० तक वर्तमान थी। यहां होड़ेश्वर महादेव जी का मंदिर है। लोग कहते हैं कि जब पाँचो पांडव लाक्षाभवन में जलने से बचकर यहां आए थे तो भीम ने हिडंब राक्षस को मार, कर उसकी बेटी हिडंबा से गंधर्व विवाह किया था और इन महादेव जी की स्थापना की थी। मंदिर पीछे से एक बनिये ने बनवाया था जब कि यहां डोंडोली नगरी बसी थी।

हींडोली और डोंडोली के बीच में एक बड़ा तालाव निर्मल जल का है जिसका नाम रामसागर है। यह भी एक बनिये का ही बनवाया हुआ है। डोंडोली भी एक बनिये की लड़की थी उसीके नाम पर यह बस्ती बसी थी। डोंडोली की मूर्ति एक पत्थर पर खुदी है जिसमें संवत् १०७ का अंक तो रह गया है महीने और पक्ष के अक्षर उड़ गए हैं, मिती ११ है, आगे भी कुछ नहीं पढ़ा जाता क्योंकि अक्षर जाते रहे हैं।

हींडोली हींडा नाम एक गूजर ने संवत् १४२५ में बसाई थी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फिर यहाँ हम्मीर ज्ञाति के हाड़ा आकर रहे। उनके महल टूटे पड़े हैं।

इन्हीं हाड़ों में से श्यामदास हाड़ा का वृत्तान्त लिखने के लायक जान कर नीचे लिखते हैं।

वह महाराव शत्रुशाल जी का खजानची था। रावजी बादशाही चाकरी में बाहर रहा करते थे। एक बेर उन्होंने खर्च मंगाया तो श्यामदास ने लूट मार के भय से मेखें ठोकने की मोगरियों को पोली करके उनमें रुपये भरे और गाड़ी में लाद कर अपने कामदार डूंगर के साथ दिल्ली को चलते किए। डूंगर जब वहां पहुंचा तो रावजी के मिलने का अवसर नहीं था और वह सरावगी था, दिन थोड़ा रह गया था। इसलिये गाड़ी को हवेली की पोल पर छोड़ कर रोटी खाने चला गया।

पीछे महाराव जी ने ऊपर से देख कर पूछा कि गाड़ी कहां से आई तो किसी ने कह दिया कि श्यामदास ने रुपए के बदले में मोगरियां हमलोगों के सिर फोड़ने के लिये भेज दी हैं।

राव जी ने नशे की तरंग में कंवर भाव सिंह जी को लिख भेजा कि हुकम पहुंचते ही श्यामदास को मार डालना।

दूसरे दिन डूंगर ने हाज़िर हो कर अर्ज किया कि खर्च हाज़िर है। श्यामदास ने बचाव के लिये मोगरियों में भर कर भेजा है। तब राव जी ने दूसरा हुकम नहीं मारने का लिखा परन्तु उसके पहुंचने से पहिलेही भावसिंह ने बूंदी से हींडोली पहुंच कर श्यामदास को तोप से उड़ा दिया और उसका घर लूट लिया था उसका बेटा रूकमांगद भाग कर उदयपुर चला गया था। भावसिंह ने उसको बुला कर फिर हींडोली में बसाया।

इन महलों के आगे तीन शिखरबंद मंदिर हैं जिनसे इस उजाड़ बस्ती की रौनक बनी हुई है।

(६) लोयचा।

यह गांव बूंदी से पांच कोस दक्षिण पश्चिम के कोने में है। यहां

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक पानी का कुंड और उसके पास महादेव जी का मंदिर है। मंदिर के सामने एक खड्डा हाथ भर लंबा और इतनाही गहरा है परन्तु चैाड़ा कम है। उसमें रात से लेकर पहर भर दिन चढ़े तक ता बैंत भर पानी रहता है फिर घटने लगता है और दो पहर तक कुछ भी नहीं रहता। रात को फिर भर जाता है। लोग इसको महादेव जी की सकलाई (करामात) समझते हैं॥

(७) लाखेरी ।

यह गांव चैाहान जाति के एक राजपूत लाखा नाम ने बसाया था। इसमें दो पहाड़ों के नाकों पर एक दरवाजा बना है जो लाखेरी का दरा कहलाता है। इसके आगे कोटे का राज है।

यहां लूनानाम एक अच्छी बावली लूना जी अतीत की बनवाई हुई है। असली नाम लूनाजी का अध्यातमजी था। यह राव राजा रतनजी के समय में थे। एक बनजारा खांड की बालद लिये जाता था। अध्यातमजी ने पूछा इसमें क्या है तो लवन (नमक) बताया। इन्होंने कहा है कि लवन ही होगा। उसने गांव में जाकर देखा तो सब बालद में नमक हो गया था। तब तो रोता पीटता आया और कहने लगा कि मेरी बालद में तो खांड थी। अध्यातमजी ने कह दिया कि खांडही होगी सो खांड हो गई। उसने १०० बैल पीछे एक आना अध्यातमजी का लगा दिया जो अब तक उनके चेलों को मिला जाता है।

खांड को लवन कर देने से अध्यातमजी का नाम लूणाजी हो गया और इसके पीछे उन्होंने यह बावली बनवाई थी जो लूणाजी की बावली कहलाती है और राव रतन ने संवत् १६६५ में उनके लिये मठ बनवाकर बाज़ार में चुंगी लगा दी जो अब तक उनके चेलों को मिली चली जाती है।

लूणाजी की छत्री उनके मरे पीछे उनके चेले रामदास ने संवत् १७०१ में बनवाई। लाखेरी में पान होते हैं जो बिकने को दूर दूर जाते हैं।

यहां एक छत्री संवत् १६८८ की बनी है उसमें लिखा है कि अंकुसराँय मूतादहिया राजपूत चैाहान पर बीलांदे सती हुई।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१०७७४ २५ना

फ़ाहिश्रान और युश्रन च्वांग का सरल रेखा माप।

[पण्डित रामेश्वर प्रसाद त्रिपाठी द्वारा अनुवादित।]

सरल रेखा माप के दो मुख्य शब्द जो कि फ़ाहिश्रान और युश्रन च्वांग तथा चीन के दूसरे यात्रियों ने भारतवर्ष के वा उसकी सीमा के भिन्न भिन्न देशों के वर्णन में व्यवहार किए हैं वे योजन और ली हैं। इन दोनों शब्दों का हमारे अंग्रेज़ी समय के सरल रेखा के माप के अनुसार क्या अर्थ है सो अभी तक सर्व सम्मति से निश्चय नहीं हुआ है। जब तक यह पूर्ण निश्चय न हो जाय तब तक उन बातों का समझना जो कि इन यात्रियों ने लिखी हैं बिलकुल असंभव है। उनके वर्णन में भारतवर्ष की ५, और ७, शताब्दी के भूगोलीय वृत्तान्त के बहुत ठीक वर्णन दिए हैं।

फ़ाहिश्रान और युश्रन च्वांग के बहुत तरह से योजन के माप उनके पढ़नेवाले को बहुत घबड़ा देते हैं।

एच॰ एच॰ विलसन साहब ने युश्रन च्वांग के योजन को अंग्रेज़ी चार मील के बराबर ठहराया है, जनरल कनिङ्गहाम ने ६.७५ और मिस्टर वी॰ ए॰ स्मिथ ने ६.५ के लगभग और जूलियन साहब ने ८ मील के बराबर माना है।

फ़ाहिश्रन के योज़न को जनरल कनिङ्गहाम ने ६.७१ मील के बराबर माना है, सर एच॰ एम॰ इलियट ने ७ मील, मिस्टर वी॰ ए॰ स्मिथ ने ७.२५ के लगभग और गाइल साहब ने ५ से ९ मील तक ठहराया है और जो कुछ डाक्टर एम॰ ए॰ स्टीन साहब ने अपने "मेमायर में (Memoir on Maps of Kasmir) जिसमें कि उन्होंने काश्मीर के पुराने भूगोल का वृत्तान्त दिया है लिखा है उससे मालूम होता है कि योजन वर्तमान राजधानी अर्थात् श्रीनगर के समीप युश्रन च्वांग के समय में अंग्रेज़ी ८ मील के बराबर था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

युअन च्वांग अपनी किताबों में भारतवर्ष की लंबाई और दूरी के माप का इतिहास बयान करता है परन्तु अभाग्य से उसने इन बातों को साफ़ साफ़ नहीं लिखा है। वह लिखता है–

"माप में पहिली बात योजन है। यह योजन प्राचीन समय के धर्मशील राजाओं के समय से सेना के एक दिन के कूच के बराबर समझा जाता है। प्राचीन वृत्तान्तों से मालूम होता है कि यह ४० ली के बराबर है। भारतवर्ष की सामान्य गणना के अनुसार यह ३० ली के बराबर है। परन्तु बुध की धर्मपुस्तकों में योजन केवल १६ ली का है। दूरी के भाग में योजन ८ कोस के बराबर है। एक कोस उतनी दूरी को कहते हैं जहां तक गौ का शब्द सुनाई दे। एक कोस का ५०० धनुष में भाग हुआ और एक धनुष चार हाथ में बांटा गया है और एक हाथ २४ अंगुल में और एक अंगुल ७ जव में"। इसी तरह पर जनरल कनिङ्गहाम जूलियन साहब के ऊपर के वृत्तान्त के फ़रासीसी अनुवाद की टीका में यह कहते हैं "हुनथशांग लिखता है कि योजन परंपरा के अनुसार ४० चीनी ली के बराबर था परन्तु उसका माप उस समय के व्यवहार के अनुसार केवल ३० ली के बराबर था। चीन के भिन्न भिन्न यात्रियों के प्रसिद्ध स्थानों की दूरी के वृत्तान्तों को एक दूसरे के साथ मिलाने से यह मालूम होता है कि हुनथशांग ने परंपरा के योजन के माप को ४० ली के बराबर माना है।" इसके बाद वह लिखता है कि ३० ली का योजन कदाचित् पुराने हिन्दुस्तानी २४००० फुट का योजन है जो कि करीब साढ़े चार अंग्रेज़ी मील के बराबर है और इसका भाग ३० चीनी ली में हुआ है और प्रत्येक ली बराबर ८०० फुट के है। परन्तु फिर वह कहता है कि हुनथशांग ने जो हिन्दुस्तानी योजन को ३० ली के बराबर ठहराया है, उसमें अवश्य कोई गलती मालूम होती है। अन्त में उसने यह निश्चय किया है कि "युअन च्वांग" का योजन अंग्रेज़ी ६·७५ मील के बराबर है क्योंकि ऐसा प्रसिद्ध स्थानों की दूरी के नापने से मालूम हुआ है। मैंने जनरल कनिङ्गहाम के वृत्तान्त को कुछ पूरी तौर से लिखा है क्योंकि इस बात को दिखलाने से कि कहां पर उस वाक्य को जिसमें कि योजनों की दूरी का वर्णन हुआ है वह नहीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समझा है मुझे आशा है कि मैं उन कठिनाइयों को जो कि युअन च्वांग के योजन के विषय में पड़ती हैं दूर कर दूं और उसके माप की लंबाई को ठीक ठीक ठहरा दूं।

मेरा बिश्वास है कि उस वाक्य से जिसमें दूरी की माप युअन-च्वांग ने हमको साफ़ साफ़ बताई है यह मतलब है कि बौद्ध धर्मपुस्तकों में योजन का भाग १६ ली या हिस्से में हुआ है परन्तु यदि हिन्दुओं की पुरानी परिपाठी पर चलें तो एक योजन ४० ली या हिस्सों में प्रायः बांटा जाता है। आज कल हिन्दुस्तान की बड़ी बड़ी जगहों के नियम के अनुसार योजन ३० ली का होता है अर्थात् पुराने योजन का $\frac{3}{4}$ होता है।

जुलियन का अनुवाद इस बात को स्पष्ट करता है कि १ योजन जिससे उसका मतलब कोई योजन है वहां के नियम के अनुसार ४० हिस्सों में बांटा जाता था। हमको इसका विश्वास है कि जनरल कनिङ्हाम इस बात के बिचारने में भ्रम में पड़े थे कि युअनच्वांग की बातों से मालूम होता है कि उसके यात्रा के समय में या उससे पहिले १ चीन की ली $\frac{1}{30}$ योजन के बराबर थी।

४० खण्ड में विभाग करना अब तक प्रचलित है और सदा से प्रचलित रहा है। जब कभी कोई मनुष्य भारतवर्ष में किसी तौल को भिन्न भिन्न हिस्सों में बांटता है तो मन के $\frac{1}{40}$ वें हिस्से को १ सेर कहता है। युअन च्वांग के मतलब को समझाने के लिये जैसा कि मैं समझता हूं मैं एक उदाहरण देता हूं।

जब कभी कोई व्यापारी सुनता है कि किसी देश में गल्ला सस्ता है और उसको विश्वास हो कि वहां जाने से बहुत गल्ला मिलेगा और उससे लाभ होगा और वह उस देश में पहिले कभी नहीं गया है और वहां के मन और सेर के विषय में कुछ नहीं जानता है, तो उस स्थान पर जहां कि वह गल्ला खरीदने जाता है पहुंचने पर उसका पुराना परिचित मनुष्य जो कि उसके देश से व्यवहार कर चुका है उसको कहता है कि इस नगर के तौल उसके नगर से $\frac{1}{3}$ हिस्सा भारी हैं। व्यापारी ने अब जाना कि उसके नगर का

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

५३ १/३ सेर या ५०+४०/३ तौल उस स्थान की तौल के एक मन के बराबर है। उस अपरिचित व्यापारी के परिचित मनुष्य से यदि उस अपरिचित मनुष्य के नगर की तौल पूछी जाय तो वह अपने प्रश्न करने वाले को उत्तर देगा कि उस अपरिचित मनुष्य के नगर के एक मन की तौल यहां के मन की तौल से भिन्न है अर्थात् एक मन शामिल करता है अथवा बराबर होता है ३० सेर के, जिससे उसका मतलब यह होगा कि वहां का मन यहां के ३०/४० मन के बराबर होगा। इसको वह ठीक ठीक उन्हीं क्रिया और शब्दों से कहता है जैसा कि युअनच्वांग ने ३० ली के योजन और दूसरे योजनों को कहा है। संक्षेप में उस अपरिचित व्यापारी का मित्र कहेगा कि ३० सेर का मन है और सेर बराबर १२ छटांक के है।

इस प्रकार से वर्णन करने से यह बात स्पष्ट होजाती है कि उस अपरिचित के नगर का एक मन दूसरे नगर के ३० सेर के बराबर है। निःसन्देह वहां का मन ३०/४० मन है। परन्तु उसका मतलब यह नहीं है कि वहां का मन ३० हिस्सों में बांटा गया है और उसका प्रत्येक भाग एक सेर के बराबर है क्योंकि यह असंभव है जैसा कि प्रत्येक मनुष्य जानता है कि सेर मन का १/३० भाग नहीं है।

इस कारण से एक सेर से प्रत्येक स्थान में मन का ४० वां हिस्सा, न कि १/३० हिस्सा समझा जाता है। युअनच्वांग ने ३० ली के योजन का वैसाही बयान किया है जैसा कि उस अपरिचित व्यापारी के मित्र ने उसके नगर के मन को समझाया था।

उसका भावार्थ यह नहीं था कि उसकी यात्रा के समय के प्रचलित योजन भारतवर्ष में ३० भाग में बँटे थे क्योंकि वह अपने पढ़ने वालों को जनाता है कि प्राचीन समय से भारतवर्ष में योजन का ४० हिस्सों में बांटना प्रचलित है, सिवाय उस समय के जब कि बौद्ध मत की पुस्तकों के अनुसार एक योजन के १६ भाग होते थे।

यह रीति जिसको हमने वर्णन किया है भारतवर्ष भर में प्रचलित है। यह एक तो बहुत सरल है, दूसरे उन मनुष्यों की समझ में जो इसको जानते हैं वह बहुत सहज में आ जाती है। वह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मनुष्य जो इस रीति से अपरिचित है पहिले पहल इसको सुनकर बहुत घबड़ा जाता है कि इसका क्या तात्पर्य है। इस रीति में भिन्न का हर नहीं बतलाया जाता क्योंकि बोलने वाला यह मान लेता है कि जो कुछ वह कहता है उसका मतलब साफ़ है। वह हर जो नहीं बतलाया गया है चाहे वह पृथ्वी के माप के भिन्न का हो, चाहे तोल के भिन्न का हो, भारतवर्ष के प्रत्येक देश में बदल जाता है और किसी मुख्य भिन्न को भली भांति जानने के लिये उसके हर का जानना अति आवश्यक है। यह बहुधा सुना गया है कि फलाना आदमी फलाने गांव के ३ आना या ५ आने का अधिकारी है अथवा फलाना सिक्का १० माशे भर है। इसका अर्थ यह है कि ३ आना बराबर है उस संपूर्ण ग्राम के $\frac{३}{१६}$ वें भाग के या वह १० माशे वाला सिक्का बराबर है $\frac{१०}{१२}$ तोले के—३ आने वाले हिस्से में हर १६ है क्योंकि एक रुपया १६ आना में बँटा है और १० माशे वाला सिक्का बराबर है $\frac{१०}{१२}$ तोले के क्योंकि १२ माशे का १ तोला होता है। यह प्राय: सुना गया है कि उस रुपये को जो बृटिश इंडिया में प्रचलित है और जो कानूनी तोल का है अथवा १८० ग्रेन के बराबर है उसको १० माशे भर कहते हैं। ऐसे उदाहरणों से यह स्पष्ट झलकता है कि उनका कहने वाला अपने मन में किसी स्थानी तोल से मुकाबिला कर रहा है।

युअनच्वांग ने योजन के $\frac{१}{४०}$ वें भाग का नाम एक ली रक्खा है। इस नाम रखने का तात्पर्य कदाचित यह है कि चीन और भारतवर्ष के भूमि के माप में जो संबन्ध उस समय था जिस समय उसकी पुस्तक लिखी गई थी उसको चीनी पाठक भली भांति समझते थे।

इस समय हम ठीक ठीक नहीं कह सकते कि युअनच्वांग का एक ली कितने अंगरेजी गज़ फ़ीट और इञ्च के बराबर है। इसका मुख्य कारण केवल यही है कि ली का अर्थ वंशपरंपरा के साथ बदलता रहा है।

युअनच्वाङ्ग ने अपनी यात्रा के वर्णन में ली शब्द का प्रयोग योजन से अधिक किया है। इससे यह सिद्ध होता है कि यहाँ के

CC-0. In Public Domain: Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

योजन और इससे समता रखने वाला जो चीन का माप था इन दोनों में बहुत अन्तर था। इसके विरुद्ध फ़ाहिआन छोटी छोटी दूरी को छोड़कर और स्थानों पर योजन शब्द का प्रयोग करता है।

इससे यह मालूम होता है कि उस समय जब वह भारतवर्ष में आया तब यहां के योजन और चीन के माप में बहुत समता थी।

युअनच्वाङ्ग के वर्णन से हमें निम्नलिखित बातें ज्ञात होती हैं।

(१) जिस समय वह भारतवर्ष में था उस समय सब के लिये एकही प्रकार का योजन था और वह ४० भागों में विभक्त था। युअनच्वाङ्ग ने भी इसी योजन को माना है।

(२) युअनच्वाङ्ग कहता है कि यह योजन $\frac{3}{4}$ उस योजन का था जो कि पहिले प्रचलित था और वह भी ४० भागों में विभक्त था जैसा कि परम्परा से चला आया था कि प्रत्येक योजन के ४० भाग होने चाहिए।

(३) बुद्ध की धर्मपुस्तकों में योजन के ४० भाग नहीं हैं। उसमें प्रत्येक योजन के केवल १६ भाग किए गए हैं।

यदि हमारी सम्मति सही है तो इस प्रकार युअनच्वाङ्ग के समय में यहां पर दो प्रकार के योजन प्रचलित थे।

(१) प्राचीन योजन जो कि बहुत कम काम में आता था और ४० ली में विभक्त था।

(२) प्रचलित योजन जो कि प्राचीन योजन का $\frac{3}{4}$ था और वह भी प्राचीन योजन के सदृश ४० ली में विभक्त था।

और प्राचीन अथवा नवीन योजन जब कि १६ भागों में विभक्त किए जाते थे तो उन्हें पवित्र योजन कहते थे।

और इन दोनों योजनों से पहिले कितने योजन प्रचलित थे इस विषय में युअनच्वाङ्ग कुछ भी नहीं लिखता। परन्तु यह सम्भव है कि इनके पहिले और भी योजन प्रचलित हों।

जनरल कनिङ्गहाम साहब ने जूलियन साहब की पुस्तक से यह अर्थ निकाला है कि योजन एक ही था परन्तु उसका विभाग

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दो भिन्न भिन्न प्रकार से किया गया था। एक तो प्राचीन प्रथा के अनुसार जिसे युअन च्वांग ने माना है, और जो योजन कि ४० ली में विभक्त था। दूसरा वह जो कि भारतवर्ष के राज्यों में उस समय प्रचलित था जब वह यात्री भारतवर्ष में आया और यह योजन ३० ली में विभक्त था। जनरल कनिङ्गहाम साहब कहते हैं कि योजन को जो ३० ली में विभक्त किया है इसमें कुछ भूल है।

मेरी सम्मति यह है कि इसमें कुछ भी भूल नहीं है। भूल जनरल साहब की है जिन्होंने हुएन तीसियांग के यथार्थ मतलब को नहीं समझा है।

मेरे विचार में इसमें कुछ सन्देह नहीं है कि यदि हम उस रीति पर ध्यान देवें जिसके अनुसार दूरी, तोल आदि के भिन्न बतलाए जाते हैं जो कि भारतवर्ष में प्रचलित हैं तो हमारी समझ में आ जायगा कि ३० ली का योजन जैसा कि हमने वर्णन किया है दूसरे योजन का केवल $\frac{30}{40}$ योजन है और यह दूसरे योजनों की भांति ४० ली में विभक्त है और ३० ली में नहीं विभक्त है जैसा कि जनरल साहब ने समझा है।

अब केवल १६ ली वाला योजन बतलाना रह गया है। हमको यह भली भांति नहीं मालूम है कि जनरल कनिङ्गहाम साहब ने इसका वर्णन अथवा इसके विषय में कहीं पर वाद-विवाद किया है या नहीं।

जिस प्रकार ३० ली का योजन दूसरे योजन का $\frac{30}{40}$ वा $\frac{3}{4}$ है उसी प्रकार १६ ली के योजन से युअन चवांग का यह तात्पर्य है कि वह किसी दूसरे योजन का $\frac{16}{40}$ वा $\frac{2}{5}$ है।

बरमा और लंका के लोगों के लेखों में लिखा है कि कपिलवस्तु नगर से अनोमा नदी ३० योजन की दूरी पर है और सियुहिंग पेनकीकिंग नाम की पुस्तक में ४८० ली का अंतर लिखा है और हारडी साहब के अनुसार ४८० मील का अन्तर है। इन सभों को देखने से यह ज्ञात होता है कि एक समय बरमा और लंका में १६ ली का योजन था। यह १६ ली का योजन कदाचित उस बड़े योजन का

CC-0. In Public Domain: Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जिसके विषय में युअन च्वांग ने लिखा है (यदि उसका तात्पर्य किसी खास योजन से है) एक छोटा भाग है ।

श्रावस्ती नगर का अनाथ पिंडिका नाम का एक व्यापारी राजगृह को गया था और वहां पर जाकर उसने बौद्ध मत को स्वीकार किया और बुध से श्रावस्ती नगर में चलने की प्रार्थना की ।

राजगृह से श्रावस्ती ४५ योजन की दूरी पर थी । बुध ने श्रावस्ती के लिये प्रस्थान किया और वह सुख से १६ मील नित्य चलता था । इस चाल से वह ४५ दिन में राजगृह से श्रावस्ती पहुंच गया ।

इससे प्रगट होता है कि बुध प्रति दिन एक योजन चलता था और प्रत्येक योजन के १६ भाग थे जिनमें से प्रत्येक भाग बराबर एक मील अथवा ली के है जैसा युअन च्वांग कहता है । अब इसमें कोई संदेह नहीं है कि यह वही पवित्र योजन १६ ली का है जिसका कि यात्री (युअन च्वांग) वर्णन करता है और जो बुध की धर्मपुस्तकों में मिलता है ।

इसके विपरीत इस पर भी ध्यान देना चाहिए कि युअन च्वांग ने जहां पर योजनों के विषय में लिखा है वहां पर १६ ली के योजन को प्रचलित योजन माना है ।

इससे यह ज्ञात होता है कि उसका यह तात्पर्य है कि ४० ली का प्रचलित योजन १६ ली के पवित्र योजन के बराबर था । पवित्र योजन जिसके विषय में उसने कहा है वह प्रचलित योजन के १०० ली के बराबर था ।

क्योंकि १६ : ४० :: ४० : १०० अर्थात् उसका पवित्र योजन प्रचलित योजन का ढाई गुणा था जैसा कि यात्री कहता है कि एक योजन में ४० ली होते थे । इस प्रकार से प्रचलित योजन पवित्र योजन का $\frac{१६}{४०}$ या $\frac{२}{५}$ भाग था ।

हमने उसकी पुस्तक से यही अर्थ निकाला है और अपने पक्ष को सबल करने के लिये यष्टी के बन से राजगृह तक की दूरी को जो कि १२ मील अथवा लगभग ३ गव्यट के है मैं उपस्थित करता हूं ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राजगृह से श्रावस्ती तक की दूरी में जितने योजन हैं प्रत्येक १६ मील में विभक्त हैं। इसलिये यष्टी के बन से राजगृह तक के १२ मील १०० ली के $\frac{१२}{१६}$ या ७५ ली के बराबर हैं।

यदि ऐसे शुद्ध योजन किसी और योजन के २$\frac{१}{२}$ गुणे के बराबर हैं और भारतवर्ष में जितने पवित्र योजन हैं सब १६ भागों में विभक्त हैं तो इसमें कोई सन्देह नहीं है कि यष्टी का बन वही है जिसको युअनच्वाङ्ग यष्टी बन कहता है। भाग्य से मुकाबिला करने के लिये चीन के यात्री ने यष्टी बन से राजगृह तक की दूरी लिख दी है। युअनच्वाङ्ग ने इस दूरी के विषय में यह लिखा है।

(१) यष्टी बन के दक्षिण पूर्व (अग्निकोण) में ६, ७, ली की दूरी पर एक बड़ा पहाड़ और स्तूप है।

(२) इस पहाड़ के उत्तर में ३, ४, ली की दूरी पर व्यास ऋषि की पहाड़ी है।

(३) व्यास ऋषि की पहाड़ी से उत्तर पूर्व (ईशानकोण) दिशा में ४ या ५ ली की दूरी पर वह पहाड़ी है जिसमें असुरों की गुहा है।

(४) असुरों की गुहा से पूर्व दिशा में लग भग ६० ली की दूरी पर कुशागारपुर है जहां का मार्ग असुरों की गुहा से पर्वतों में होकर जाता है।

(५) कुशागारपुर से उत्तर दिशा में लग भग १ ली की दूरी पर करंडवेणु-वन-विहार है।

(६) करंडवेणु-वन-विहार से उत्तर २०० कदम अथवा ३.३ ली की दूरी पर करंड हृद है।

(७) करंड हृद से उत्तर पश्चिम २ या ३ ली की दूरी पर अशोक स्तूप और हाथी के सहित एक स्तंभ है।

(८) अशोक स्तंभ से उत्तर पूर्व बहुत ही निकट राजगृह है।

व्यास ऋषि की पहाड़ी गुफा यदि यष्टी बन की पूर्वी सीमा पर नहीं है तो उसके बहुत ही निकट है। मेरी समझ में वह

CC-0. In Public Domain: Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्थान यष्टी वन से २ ली की दूरी पर है। मेरे ऊपर के विभागों में से आठवां छोड़ देने में कोई हानि नहीं है।

३, ४, ५, ६, ७, विभागों की दूरी ७२.३ वा ७४.३ ली के बराबर है। इसमें दूसरे विभाग के लिये २ ली और भी जोड़ दी गई है। फाहियान के अनुसार कुशागारपुर से करंडवेणु-वन-विहार ३०० कदम की दूरी पर है जो कि मैं विचारता हूं कि युअनच्वाङ्ग के ४०० कदम के बराबर है। और युअनच्वांग के अनुसार एक ली केवल ६० कदम के बराबर है। प्रचलित हिसाब से ३४० कदम या ५.६ं का अंतर पड़ता है। इस कारण से प्रचलित हिसाब के अनुसार राजगृह से यष्टी वन ७८ या ८० ली है, यदि हम फाहियान के अनुसार ३०० कदम की दूरी मानें।

यदि युअनच्वांग का एक ली सही है तो कुछ ली ७२.३ वा ७४.३ ली में जोड़े जा सकते हैं क्योंकि चीनी यात्री पुराने राजगृह या कुशागारपुर में भी गया था और उसकी दूरी इसमें नहीं जोड़ी गई है।

ऊपर लिखी हुई दूरिओं को जांचने से मेरे बिचार में केवल यही परिणाम निकल सकता है कि यह मील युअनच्वांग के अनुसार $\frac{७५}{१२}$ या ६.२५ ली के बराबर है। पवित्र योजनों में से एक (कदाचित वही एक जिसका वर्णन युअनच्वांग ने किया है) प्रचलित १०० ली के तुल्य था।

राजगृह से यष्टी बन को दो रास्ते गए हैं एक तो चकरा घाट से और दूसरा कुशागारपुर से। दूसरा मार्ग सीधा गया है परन्तु बहुत कठिन है। इस प्रकार से १६ ली वाले योजन के ये तीन अर्थ हो सकते हैं अथवा १६ ली वाले योजन से यह तीन मतलब निकलते हैं।

(१) किसी योजन का $\frac{१६}{४०}$ वा $\frac{२}{५}$।

(२) किसी योजन का $\frac{१००}{४०}$ वा $२\frac{१}{२}$ गुणा।

(३) अथवा यह कि बुध ने अपने योजनों को १६ भाग में बिभक्त किया है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परन्तु इन तीनों अर्थों में से कौन सा सत्य है यह विचारणीय है।

सरल रेखा का माप जो कि गौतम को उसके लड़कपन में सिखलाया गया था उसमें और युअनच्वांग के योजन में कुछ भी अन्तर नहीं है, यदि दोनों का अंगुल बराबर है। एक योजन ४ कोसों में विभक्त है, न कि ८ में, जैसा कि चीनी यात्री की सारणी में दिया है। इस योजन का चतुर्थांश अर्थात् २ कोस मगध देश के १ कोस के बराबर है, यदि हम यह मान लेवें कि मगध देश में ऐसे ऐसे आठ कोस का एक योजन होता है क्योंकि हिन्दुओं की पुस्तकों में एक योजन* आठ कोसों में विभक्त है। यष्टी बन से नया राजगृह मगध देश के ६ कोस वा एक योजन के ¾ भाग अथवा १२ "मील" की दूरी पर है। क्योंकि ये कोस दूने हैं इस लिये दूसरी जगह मगध देश का ६ कोस १½ योजन वा ६० ली के बराबर है। इस ६ ली में यदि इसी की एक तिहाई और जोड़ देवें तो राजगृह से यष्टी बन ८ ली हो जावैगा।

यह संभव है कि गौतम को जो माप सिखलाया गया था वह प्राचीन योजन के अनुसार या जिसके विषय में हम ऊपर लिख आए हैं और युअनच्वांग का योजन इस योजन का ¾ भाग है।

यह विचारना चाहिए कि सरकूप जो कपिलवस्तु (के राज्य) में है उतनीही दूरी पर नहीं है जितनी दूरी पर चीनी यात्री ने लिखा है किन्तु यह लिखा है कि १० कोस उससे अधिक दूरी पर है। मैं यह विचारता हूं कि कदाचित ललित विस्तर के टीकाकार ने जिसका नाम नहीं मालूम है और जिसके कोस के वर्णन से यह ज्ञात होता है कि कदाचित वह मगधदेशी है, बिना समझे १० कोस लिख दिया है जैसा कि उसने उस पुस्तक में पाया जिसमें से उसने नकल किया था। इसी लेख के देखने से हम यह विचार करते हैं कि सरकूप जो कि १० कोस की दूरी पर है वह मगध देश के कोस के हिसाब से नहीं है। इस हिसाब से ३० ली की दूरी से कई गुणा अधिक है, न कि केवल ३० ली है जैसा कि फाहिआन और युअन च्वाङ्ग ने लिखा है। आगे मैं प्रमाण देकर

CC-0. In Public Domain: Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह सिद्ध करूंगा कि कपिलवस्तु के समीप स्थानीय कोस अंग्रेजी मील का ६·६१ वां गुणा था। १० स्थानीय कोस ६·६१ अंग्रेजी मील के बराबर थे।

युअनच्वाङ्ग का सवा योजन वा १० कोस बराबर था ६·६१ मील के। इन लेखों के देखने से यह ज्ञात होता है कि सर-कूप प्रचलित हिसाब के अनुसार कपिलवस्तु नगर से ५० ली की दूरी पर था और पुराने माप के अनुसार ३७·५ ली की दूरी पर था। इसके अनन्तर मैं ३० ली की सत्यता के विषय पर जैसा कि युअ-नच्वाङ्ग ने लिखा है विवाद करूंगा, जब मैं फाहिआन के योजन के विषय में लिखूंगा।

यह न समझ लेना चाहिए कि जितने योजन बुध की पवित्र पुस्तकों में लिखे हैं वे सब पवित्र योजन वा पुराने योजनों के बराबर वा प्रचलित दूरी के बराबर अथवा १०० ली के बराबर हैं जो कि इस समय का माप है। यह बात प्रोफ़ेसर राइज़ डेविडस की उस फिहरिस्त के देखने से ज्ञात होती है जिसमें कुछ स्थानों की दूरी योजनों में लिखी हुई है। उनकी दूरी जातक आदि से ली गई है।

मैं ने अभी वर्णन किया है कि राजगृह श्रावस्ती नगर से ४५ योजन की दूरी पर है। इस दूरी की पुष्टि जातक, विगनडेट और हारडी में दी हुई सारणी से होती है।

इसमें कुछ सन्देह नहीं है कि कपिलवस्तु का नगर श्रावस्ती नगर से दक्षिण पूर्व (अग्नि कोण) की तरफ़ बहुत दूरी पर था। इस पर जातक और हारडी के अनुसार राजगृह से कपिलवस्तु ६० योजन की दूरी पर है परन्तु राकहिल ने जो बुध की जीवनी लिखी है उसमें यही दूरी केवल ६० ली लिखी हुई है।

यह संभव है कि बुध ने अपनी पुस्तकों में कई प्रकार के योजन लिखे हों। वे योजन कितने बड़े थे इसका पता लगाना अभी बाकी है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मैं विचारता हूं कि उन पुस्तकों को जिनमें से प्रोफ़ेसर साहब ने अपने दूरी के टेबुल लिखे हैं, फिर से भली भांति इस दृष्टि से देखना उचित है, कि उनमें दूरी से क्या तात्पर्य है, देश की दूरी से है अथवा राजधानी की दूरी से। इसके विषय में हमने इस लेख में भी लिखा है।

जब कि राजगृह का व्यापारी श्रावस्ती जाता था या अनाथपिंडिका राजगृह को जाता था जैसा कि प्रायः हुआ करता था तो वे एक दूसरे को १६ "मील" अथवा हर एक के नगर से एक योजन की दूरी पर मिलते थे। इसी भांति जब बुध अपनी जगत विख्यात यात्रा में कपिलवस्तु गया तो वहां पर उसका पिता राजा शुद्धोधन नगर के बाहर ४० ली की दूरी पर अपना रथ लेकर उसको अगवानी के हेतु खड़ा रहा।

युअन च्वाङ्ग यहां पर उस रीति को लिख रहा है जिसके अनुसार किसी प्रसिद्ध पुरुष को लेने के लिये लोग नगर के बाहर कुछ दूर तक जाते हैं। यह रीति भारतवर्ष में अब तक प्रचलित है। इस बात पर भी ध्यान देना चाहिए कि उसने एक योजन की दूरी ४० ली से जनाई है।

तिब्बत वालों ने वैद्यक और गणित चीनवालों से सीखा है। सन् ६३९ और ६४१ ईसवी के बीच में टांग वंशी बौद्धमतावलंबी राजकुमारी वेनचेंग का पाणिग्रहण महाराज श्रान-टन-गंपू से हुआ और इसी विवाह का यह परिणाम हुआ कि ये शास्त्र तिब्बत में प्रचलित हुए। उनके वर्णन के अनुसार कपिलवस्तु नगर से अनोमा नदी १२ योजन की दूरी पर थी। चीन के हिसाब के अनुसार यदि समीकरण की दोनों तरफ़ की संख्या तुल्य है जैसा हमारे कहने से मालूम होता है तो यह दूरी ४८० ली है। इससे यह ज्ञात होता है कि योजन में ४० ली होते थे। युअनच्वाङ्ग के योजन के हिसाब लगाने के पूर्व हमको यह जानना अति आवश्यक है कि उसके माप के अनुसार एक क्यूबिट (हाथ) कितने के बराबर है।

सब सरलरेखा के मापों की जड़ हाथ है जो कि अंगुली से ले

CC-0. In Public Domain: Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कर टेहुनी तक होता है और जो अंग्रेज़ी १८·२५ इंचों के बराबर होता है। यहूदी लोगों का हाथ ५ हथेली अथवा २० अंगुल के बराबर था। इस स्वाभाविक क्यूबिट अथवा हाथ में एक हथेली अथवा ४ अंगुल और जोड़ने से रायल ब्याबिलन वा यहूदियों का पवित्र अथवा म्यासिडोनियन लोगों का क्यूबिट अथवा हाथ होता था जो २४ अंगुल अथवा ६ हथेलियों के बराबर था और अंग्रेज़ी २१·९ इंचों के बराबर होता था। २१·९ इंच के ब्याबिलोनियन क्यूबिट से जिसमें से $\frac{२४}{२५}$ निकाल लिया गया, आम ब्याबिलोनियन, अरेबियन, परशियन, और हिन्दुस्तानी क्यूबिट निकले जो २४ अंगुल वा १९·५ इंचों के बराबर होते हैं। १९·५ इंच के क्यूबिट में से उसीका $\frac{२४}{२५}$ लेलिया तो वही रोमन माप की जड़ हुई जो अंग्रेजी १७·४ इंचों के बराबर है।

युअनच्वाङ्ग के प्रचलित योजन का हिसाब यदि २१·९ इंच वाले क्यूबिट से लगाया जावे तो वह बराबर होगा २१·९ इंच×४×५००×८ अथवा ५·५३०+१९६० गज का अंग्रेज़ी मील, और १९·५ अंग्रेज़ी इंचों के क्यूबिट के हिसाब से बराबर होगा ४·९२३८× अंग्रेज़ी मील के।

कदाचित् १९·५ इंचों का क्यूबिट चीन में यात्री के बहुत दिन बाद प्रचलित हुआ।

रत्ती, मासा, तोला, अंगुल, बित्ता, हाथ, गिरह, गज आदि तथा माप संबन्धी ऐसे अन्य परिमाण गढ़े गए हैं जिनकी दर कुछ नियमित न थी, केवल राजा की आज्ञा पर वह निर्भर थी। इसका अच्छा उदाहरण ली है।

सन् १७१० ई० में नोइल साहब ने एक प्रसिद्ध चीनी कोश के आधार पर यह लिखा है कि प्राचीन ली ३६० कदमों के प्रचलित ली के ३०० कदमों के बराबर था और उसी कोश में यह भी लिखा है कि १२५ प्राचीन ली हाल के १०० ली के बराबर थे और कुछ लोगों ने यह भी लिखा है कि प्राचीन ली ३६० कदम का था।

यहां पर ली की लंबाई में अंतर देख पड़ता है। सन् १७०१ ई० में ३६० कदमों का ली हुआ। जैसा कि लिखा है प्राचीन १२५ ली हाल के १०० ली के बराबर है। इससे यह तात्पर्य है कि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३६० कदम वाले ली के पूर्व किसी समय २८८ कदमों का ली था क्योंकि २८८×१२५=३६०×१०० कदम ।

इसको छोड़कर कहीं कहीं यह भी पाया गया है कि प्राचीन ली ३६० कदमों में विभक्त था । इससे यह अनुमान किया जाता है कि २४० और २५० कदमों के ली को बढ़ा बढ़ा कर २८८ और ३०० कदमों का ली बनाया गया है ।

३६० कदमों का ली वा चीन का मील लंबाई में अंग्रेज़ी ११५८ से १८९४ अंग्रेज़ी फुट होता था ।

यदि हम इनमें से सब से छोटी संख्या को लेवें तो ११५८ फ़ीट, २४० कदम या $\frac{२}{३}$, ५·८५+ अंग्रेज़ी मील; २५० कदम या $\frac{२५}{३६}$, ६·०९२+मील; २८८ कदम या $\frac{४}{५}$ ७·०१८२+मील या ३०० कदम या $\frac{५}{६}$, ७·३१०,+ मील के बराबर होगा ।

डी लाकूपेरी साहब प्राचीन चीनी सिक्के की माप से लिखते हैं कि सिक्के सम्बन्धी शास्त्र, पुरातत्व शास्त्र और दूसरे प्राचीन प्रमाणों से यह सिद्ध होता है कि चीन में लंबाई के माप का परिमाण बित्ता वा चीह था जो १०·६३ इंचों के बराबर था–इसके भिन्न अर्थात् $\frac{३}{४}$ और $\frac{२}{३}$ या पूरी संख्या में ७ और ८ इंच टशु वंश के अन्तिम समय में किसी विशेष कार्य में परिमाण गिने जाते थे । परन्तु सिक्के के प्रमाण से उसके २ भाग, ४ भाग, ५ भाग, ६ भाग और १० भाग होने से यह सिद्ध होता है कि उसका पूरा परिमाण क्या था । वह यह भी कहता है कि चीन में एक चीह था जो २०·६३ इंचों के बराबर था ।

यदि हम और पूर्व की लंबाई के माप को देखें तो ज्ञात होगा कि वहां पर एक बित्ता १२ अंगुल के बराबर होता है और इस लिये वह १ क्यूबिट का आधा है जिसकी लंबाई कितनी ही हो परन्तु वह २४ अंगुलों में विभक्त होता है । इस लिये वह चीह जो १०·६३ इंच के अथवा १२ अंगुल के बराबर है उस क्यूबिट का आधा होगा जो २१·२६ इंचों के बराबर है और २०·६३ इंचों वाला चीह दूने बित्ते या २४ अंगुल वाले क्यूबिट के बराबर होगा ।

CC-0. In Public Domain: Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यहां पर हमको इस बात का शुद्ध और विश्वास योग्य प्रमाण मिलता है कि युअनच्वांग के भारतयात्रा करने के कुछ पूर्व (५९९-६६४ई०) चीन में २०·६३ और २१·२६ अंग्रेजी इंचों का क्यूबिट प्रचलित था। यदि हम यात्री के योजन की लंबाई इस क्यूबिट के अनुसार निकालें तो यह ज्ञात होता है कि यदि एक क्यूबिट २१·२६ इंचो का होगा तो एक योजन ५·३६९८ अंग्रेज़ी मील के बराबर होगा और यदि एक क्यूबिट २०·६३ इंचों के बराबर होगा तो एक योजन बराबर होगा ५·२०९+ "मील" के।

सिक्के के प्रमाण से यह स्पष्ट प्रगट है कि चीन में प्राचीन लंबाई का माप २१·९ इंच के क्यूबिट पर निर्भर था और क्रमशः क्यूबिट छोटा होता गया यहां तक कि एक क्यूबिट २१·२६ और २०·६३ इंचों के बराबर किसी किसी भाग में हो गया।

लंबाई और तोल के जितने माप हैं सब क्रमशः घटते जाते हैं। सब से पुराने पैट्रिआर्कल क्यूबिट के विषय में जो हम कह आए हैं उससे विदित होता है कि युअनच्वाङ्ग का योजन ५·५३० अंग्रेज़ी मील (क्यूबिट=२१·९ इंच) से अधिक नहीं हो सकता और ४·९२४ अंग्रेज़ी मील [क्यूबिट=१९·५ इंच] से कम भी नहीं हो सकता।

यदि हम युअनच्वाङ्ग के योजन को ५·३६९८ और ५·२०९+ अंग्रेज़ी मील के बीच की संख्या के बराबर अर्थात ५·२८८ अंग्रेज़ी मील के बराबर मानें तो हम यह बड़ी दृढ़ता के साथ कह सकते हैं कि थोड़ी थोड़ी दूरी नापने में भी बहुत थोड़े गजों की अशुद्धि होगी।

योजन का ली बनाने के लिये यह आवश्यक है कि उसे ४० से भाग देवें।

युअनच्वाङ्ग जिस समय भारतवर्ष में आया उस समय में यहां के भिन्न भिन्न नगरों में जो योजन प्रचलित था उसको यदि हम ५·२८८ अंग्रेज़ी मीलों के बराबर मानें तो उससे यह सिद्ध होता है कि प्राचीन योजन जिसका ३/४ युअनच्वाङ्ग का योजन था लगभग ७·०५० अंग्रेज़ी मीलों के बराबर था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यदि युअनत्वाङ्ग भिन्न भिन्न मापों को जिसके विषय में उसने अपनी पुस्तक में लिखा है हिन्दुस्तान की जगह चीन के अनुसार लिखे होता तो वे निम्नलिखित टेबल के अनुसार होते।

अंग्रेजी माप	अंगुल	हथेली	फुट	क्यूबिट	चंग टचंग	कदम	चन	लीया मील	योजन
इंच ·८७२५२	१								
३·४९००८	४	१							
८·७२५२०	१०		१						
२०·९४०४८	२४			१					
३४·९००८०	४०	१०			१				
५२·३५१२०	६०					१			
६९·८०१६०	८०					१ १/३			
८७·२५२०	१००						१		
मील ·१३२२	९६००	२४००	९६०	४००	२४०	१६०	९६	१	
५·२८८	३८४०००	९६०००	३८४००	१६०००	९६००	६४००	३८४०	४०	१

निम्नलिखित आधार पर ऊपर वाला टेबल बनाया गया है। युअनत्वाङ्ग के फुट, कदम और ली का विचार फ़ाहियान के माप के साथ किया गया है। युअनत्वाङ्ग कहता है कि उसका योजन ४० ली और ३८४००० अंगुलों में विभक्त था।

लाकूपेरी साहब कहते हैं कि एक टचंग १० टचीह के बराबर होता है। हम टचीह का यथार्थ अर्थ एक हथेली वा ४ अंगुल लेते हैं न कि एक बित्ता जैसा कि कभी कभी अनुवाद मे आया है क्योंकि **"फेमिली सेएंगिस आफ़ कनफ्यूसियस"** नामी पुस्तक में (४ शताब्दी ईसा के पूर्व) यह लिखा है कि अपनी एक अंगुली फैलाओ तब तुमको टशू वा इंच मालूम होगा और अपना हाथ फैलाओ तब तुम को एक टचीह वा बित्ता मालूम होगा।

यहां फैलाने का अर्थ निकालना है क्योंकि एक अंगुली फैलाना वा चौड़ाई में बढ़ाना यह असंभव है और चीनी वर्णों के अनु-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मार फैलाना शब्द दोनों दशा में एकही प्रकार का है, इसलिये मैं यह कह सकता हूं कि टचीह का अर्थ यहां पर एक हथेली या ४ अंगुल से है जो एक दूसरी से सटी होवें और एक बित्ता नहीं है। इस प्रकार यह ज्ञात होता है कि प्राचीन समय में चीन में हथेली ४ अंगुल की होती थी और पूर्वी देशों में आज कल भी यही दशा है।

इस प्रकार यह ज्ञात होता है कि चीनी इतिहास में टचीह माप भिन्न भिन्न देशों में भिन्न भिन्न प्रकार के थे और ये हथेली के गुणय ज्ञात होते हैं। हमने देखा है टचीह कहीं हथेली वा ४ अंगुल के बराबर और कहीं ½ क्यूबिट वा बित्ता के बराबर माना गया है जो १२ अंगुल का होता है और फिर २४ अंगुल के दूने बित्ते के बराब कहा गया है। कनफ्यूसियस ९·६ टचीह लंबा था। यहां पर टचीह ठीक ८ अंगुल के बराबर है। युअनच्वाङ्ग के माप के अनुसार कनफ्यूसियस ५.५८ अंग्रेज़ी फुट लम्बा था। आज कल लंबा से लंबा चीन का मनुष्य ५·९२ फुट होता है।

टचाऊ वंश के राजा जब राज्य करते थे उस समय जो टचीह बर्ता जाता था वह ८ अंगुल का था।

भारतवर्षीय सरल रेखा के माप में ८ यव का १ अंगुल होता है। परन्तु यह स्पष्ट है कि युअनच्वाङ्ग के माप के अनुसार ७ ही यव का एक अंगुल होता है। मैं भी एक समय यह मानने को था (क्योंकि जरविस साहब कहते हैं कि चीन का क्यूबिट १९·५ इंचों का था) कि किसी भांति ७ की संख्या यात्री के क्यूबिट की लंबाई में कुछ फरक डाले और उसको १९·१६२५ इंचों के बराबर या २१·९ इंच के पैट्रिआर्कल क्यूबिट के ⅞ के बराबर बनावे। १९·१६२५ इंच के क्यूबिट के अनुसार युअन च्वाङ्ग का योजन केवल ४·८३९० अंग्रेजी मीलों के बराबर होगा। यह बहुत छोटा है।

जिस भांति जरविस साहब यह नहीं मानते कि हिन्दुस्तानी माप में अंगुल ७ यव का होता है उसी भांति मैं भी यह नहीं मानता। वे कहते हैं कि तीन भिन्न भिन्न प्रकार के जो सरल रेखा के ख्याली माप हैं और जो क्रमशः ६, ७ और ८ यव बिछा कर बनाए गए हैं वे वास्तव में प्रचलित नहीं हैं परन्तु इससे हमें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारतवर्षीय तथा बाहरी देशों के माप समझने में बड़ी सहायता मिलती है। युअन च्वाङ्ग का चन फाहिअान की भांति १०० अंगुलों का मालूम होता है। इस संख्या से युअन च्वाङ्ग के माप की अशुद्धि नहीं मिल सकती।

यह स्मरण रखना अति ही लाभदायक है कि सबसे पुराने पैट्रिआर्कल क्यूबिट से बड़ा कोई क्यूबिट अभीतक नहीं मालूम हुआ है और वह २१·८ इंचों के बराबर था। युअन च्वाङ्ग का बड़ा से बड़ा क्यूबिट इस संख्या से अधिक नहीं हो सकता। हम इस संख्या पर आप लोगों का ध्यान इसलिये दिलाते हैं क्योंकि जनरल कनिङ्गहाम ने अपने लेखों में युअन च्वाङ्ग का योजन ६·७५ अंग्रेज़ी मीलों के बराबर बताया है। यह बहुत अधिक है। अंग्रेज़ी मील ६३३६० इंचों के बराबर होता है। और ६·७५ मील में ४२७६८० इंच होवेंगे। युअन च्वाङ्ग का योजन उसीके अनुसार केवल ३८४००० अंगुलों के बराबर होता है। इसलिये उस में १६००० क्यूबिट होंगे क्योंकि वह कहता है और हम सब जानते हैं कि एक क्यूबिट २४ अंगुलों का होता है।

यदि हम ४२७६८० इंचों को जो ६·७५ मीलों के बराबर है वा जो जनरल कनिङ्गहाम के अनुसार युअन च्वाङ्ग के एक योजन के बराबर है १६००० क्यूबिटों से भाग देवें (क्योंकि १६००० क्यूबिटों का युअनच्वाङ्ग का १ योजन होता है) तो इसके उत्तर में यही आवैगा कि १ क्यूबिट २६·७३ अंग्रेज़ी इंचों के बराबर है। और इतना इंचों का क्यूबिट जनरल कनिंगहाम का होवेगा यदि उनका योजन ६·७५ मीलों का सही है। क्योंकि २६·७३ इंचों का क्यूबिट जो २४ अंगुलों में विभक्त है वह इस पृथ्वी पर नहीं पाया जाता और न इतना बड़ा क्यूबिट प्राचीन समय में ही था। इस लिये जनरल साहब का योजन जिसको वह ६·७५ मीलों के बराबर बतलाते हैं बहुतही अधिक है।

इस प्रकार से यह हमारे हिसाब के लगभग है जिसके अनुसार युअनच्वाङ्ग का २०·९४ इंचों का क्यूबिट मेमफिस के राजकीय क्यूबिट के (जो व्याबिलन और चाल्डिया में भी पाया जाता है) बराबर है। किसी किसी लेखक ने इसको २०·६० अंग्रेज़ी इंचों के बराबर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भी माना है। जनरल कनिंगहाम ने जो फ़ाहिआन और युअन-च्वांग के योजन की लंबाई निकाली है वह दूसरी भांति से भी शंका उत्पन्न करती है। जनरल साहब ने उन लोगों के योजन की लंबाई प्रसिद्ध प्रसिद्ध स्थानों की दूरी के हिसाब से लगाई है। जब आप भली भांति पढ़ेंगे कि इन यात्रियों ने इन दूरियों के विषय में क्या लिखा है तो आपको मालूम होगा कि वह माप एक राजधानी से देश तक की दी हुई है। किसी नगर के वर्णन के अन्त का वाक्य युअनच्वाङ्ग का इस प्रकार का होता है 'इधर से जाकर [दिशा दी हुई है] —ली पर हम—देश में पहुंचें'। जनरल कनिंगहाम और दूसरे लेखकों ने जिन्हों ने इन चीनी यात्रियों की यात्रा के विषय में लिखा है बहुधा आगे वर्णन किए हुए देश की राजधानी तक की दूरी मानी है। हमको इसमें बहुत शंका है कि देश और राजधानी दोनों शब्दों का अर्थ एकही है। मैं यह विश्वास करता हूं कि देश शब्द जो उसने अपने वाक्य के अन्त में प्रयोग किया है उसका अर्थ उस नगर की सीमा है। प्रायः नगरों की राजधानी उस नगर की सीमा से कुछ दूरी पर रहती है परन्तु राजधानी सीमा पर बहुत कम होती है और होती भी है तो तब होती है जब नगर की सीमा कोई नदी हो और राजधानी उसी नदी के तट पर हो।

मैं यह दृढ़ता पूर्वक कह सकता हूं कि देश और राजधानी का अर्थ एक मान लेना उन कारणों में से है जिनसे हमको पुराने स्थानों की ठीक ठीक स्थिति नहीं ज्ञात होती। इसी कारण से जनरल कनिंगहाम साहब ने यह बिचार किया है कि दूरी के माप में योजन सर्वदा घटता बढ़ता रहता है और जनरल साहब को यह भी संदेह हुआ है कि योजन कोश के अनुसार अथवा किसी और माप के अनुसार जो कि किसी किसी देश में या जैसे पिलोशन वा कपिथ के राज्य में, घटता बढ़ता रहा है और संभव है कि इसी कारण से यह भी अनुमान किया जाता है कि किसी किसी जगह यात्रियों ने जो दूरी बतलाई है सो ठीक नहीं है।

जनरल कनिङ्हाम का यह बिचार कि यात्रियों के योजन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का माप मुख्य मुख्य स्थानों की दूरी से निकाला गया है, ठीक नहीं है यदि देश का अर्थ देश की सीमा से है ।

वह स्थान जहां तक किसी देश की सीमा फैली रहती है प्रायः लोगों को मालूम रहता है। हम इस विषय की सत्यता को भली भांति नहीं जानते परन्तु केवल इसका अनुमान कर सकते हैं। प्रायः देशों की सीमा बड़ी बड़ी नदियों से जानी जाती है और इस कारण से यह संभव मालूम होता है कि युअनच्वाङ्ग ने जो दूरी लिखी है वह नदी तक की है अथवा उस देश के और स्वाभाविक पदार्थों तक की है और उसका तात्पर्य राजधानी से नहीं है ।

यदि हमारी यह सम्मति कि देश का अर्थ कदाचित सर्वदा देश की सीमा से है, ठीक है तो युअनच्वाङ्ग वा वे लोग जिन्हों ने उसकी जीवनी लिखी है कुछ दशाओं में बतलावेंगे कि देश की सीमा से राजधानी तक क्या दूरी है ।

युअनच्वाङ्ग ने देश और राजधानी इन दोनों शब्दों के प्रयोग में बहुत अन्तर दिखलाया है और देश शब्द से उसका तात्पर्य उस देश की सीमा से है न कि राजधानी से। इसको मैं आगे साबित करता हूं।

देश शब्द का अर्थ देश की सीमा है इसके मानने से मेरा मुख्य आशय यह है कि यदि हम एक राजधानी से दूसरी समीप की राजधानी तक की दूरी नापैं तो युअनच्वाङ्ग का योजन बहुत छोटा पड़ जाता है। ये अन्तर जो कि इन नीचे लिखे वाक्यों में लिखे हैं जिनमें पिलोशन राजधानी से पवित्र सीढ़ी कपिलवस्तु राजधानी से २० ली पूर्व कही है तभी ठीक सिद्ध होंगे जब देश शब्द का अर्थ देश की सीमा माना जायगा। वे वाक्य जिनका हमने उल्लेख किया है ये हैं।

"यात्रा—पिलोशन देश की राजधानी के मध्य में एक प्राचीन संघाराम है। इसके समीप वे चिन्ह हैं जिनसे यह ज्ञात होता है कि यहां पर चार प्राचीन बुध बैठे थे और टहले थे।

यहां से दक्षिण पूर्व की ओर २०० ली के लगभग जाने पर हम कपिथ देश में पहुंचेंगे ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नगर (कपिथ राजधानी) से पूर्व २० ली के लगभग जाने पर एक बड़ा संघाराम मिलेगा......इस बड़े संघराम के हाते में ३ बहुमूल्य सीढ़ियां हैं।

२ जीवनी-फिर २०० ली के लगभग पूर्व जाने पर (यह दूरी पिलोशन राजधानी से ली गई है) हम कपिथ देश में पहुंचेंगे।

नगर (कपिथ राजधानी) से लगभग २० ली पूर्व एक संघा राम है जिस के आँगन में तीन सीढ़ियां हैं।

२ जीवनी-एक बार फिर वह इस स्वर्गीय सीढ़ी के पवित्र चिन्हों के दर्शन के लिये गया था और वहां से ३ योजन उत्तर पश्चिम बढ़ने पर वह पिलानन की राजधानी (बीराशन) में पहुंचा"

पिलोशन और पिलोनन ये दोनों नाम बीराशन ही देश के हैं।

यात्रा और जीवनी में २०० ली और २० ली दोनों दूरी एकही है और बिना सन्देह के इन्हें सही मानना चाहिए।

यदि देश और राजधानी दोनों शब्दों का अर्थ एक ही है तो पिलोशन नगर की राजधानी से कपिथ नगर की सीढ़ी तक की दूर २०० ली वा ५ ½ योजन होगी। परन्तु जीवनी के दूसरे वाक्य के अनुसार यह दूरी केवल ३ ही योजन है। सम्भव है कि यही दूरी सही हो। यदि यह ठीक नहीं है और ३ योजन किसी और पूर्ण अंक की जगह भूल से लिख गया है तो फिर ½ योजन क्या हुआ? यह सम्भव है कि ४ वा ५ योजन की जगह पर भूल से ३ योजन लिख गया हो परन्तु मैं बिचार करता हूं कि ५ ½ में भूल नहीं हो सकती।

यदि ५ ½ योजन और ३ योजन इन दोनों दूरियों को सही मान लेवें तो पिलोशन की राजधानी से पवित्र सीढ़ियों तक जो कपिथ नगर के पूर्व हैं दोनों दूरियों को जोड़ने से हमारा तात्पर्य सिद्ध हो जावैगा, इन दोनों का जोड ८ योजन होवैगा-यह हिसाब यदि सत्य है तो यही दूरी होवैगी।

(१) पिलोशन देश की राजधानी से कपिथ देश की सीमा तक २०० ली होगा जैसा कि यात्रा में है।

(२) ऊपर लिखे हुए दोनो नगरों की सीमा से कपिथ की राजधानी तक १०० ली होगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(३) कपिथ की राजधानी से सीढ़ियों तक २० ली है जैसा कि यात्रा और जीवनी में लिखा है।

ऊपर की १०० ली, और २० ली इन दोनों दूरियों को पूर्ण प्रकार से जोड़ने पर मैं बिचारता हूं कि जो ३ योजन लिखा हुआ है वह निकल आवैगा।

जीवनी और यात्रा में जो अन्तर है उसको ठीक करने में जो कुछ हमने लिखा है उससे यह अशुद्धि युअन च्वाङ्ग के जीवनी लिखने वाले की पुस्तक में मिलती है कि उसने ३ योजन की दूरी जो लिखी है वह पिलोशन देश तक नहीं है बल्कि पिलोशन राजधानी तक की है।

जीवनी के संक्षेप (थोड़े) वर्णन में देश और राजधानी में प्रायः अन्तर नहीं माना है।

यात्रा के पाठ को दो भिन्न भिन्न अनुवादों के साथ मिलान करना यह जानने के लिये प्रायः आवश्यक है कि जीवनी में देश शब्द से संपूर्ण देश अथवा केवल राजधानी ही मानी गई है और कहीं कहीं पर न तो देशही शब्द लिखा है और न राजधानी ही लिखी है। कहीं कहीं पुस्तक में यह शब्द छूट गया है और कहीं राजधानी छूट गई है। जीवनी और यात्रा में जो त्रुटि दूरी के विषय में हैं उसमें से कुछ दूर हो सकती है यदि हम देश से उसकी सीमा मानें और इसीसे यह भी स्पष्ट होजाता है कहीं पर यात्रा में कपिथ देश से दक्षिण पूर्व और जीवनी में उसी नगर से पूर्व क्यों लिखा है।

जनरल कनिंगहाम साहब ऊपर लिखी हुई दूरियों को जिनके विषय में हमने इतना विवाद किया है उदाहरण की भांति देते हैं और उन्हों से वह यह भी समझते हैं कि युअनच्वाङ्ग का योजन स्थानी कोश की लंबाई के अनुसार घटता बढ़ता रहा है और उन्होंने ३ योजन वाला विषय बिल्कुलही उड़ा दिया है।

देश और राजधानी ये दोनों भिन्न भिन्न शब्द हैं इसके सिद्ध करने के लिये उदाहरण की भांति श्रावस्ती से कपिलवस्तु तक की दूरी आगे लिखी जावैगी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जनरल कनिंगहाम ने जो युअनचवाङ्ग का योजन बतलाया है उसको हमने दो प्रकार से दिखला दिया कि विश्वास करने योग्य नहीं है। अब जो हमने कहा है कि उसका योजन ५·२८८ मील के बराबर है इसको पुष्ट करने के लिये हमको प्रमाणों का देना अति ही आवश्यक है।

मैं यह साफ़ साफ़ कहता हूं कि इसको करने में हमको कुछ कठिनता पड़ेगी क्योंकि ऐसे बहुत कम अचल स्थान हैं जिनकी दूरी हम युअनच्वाङ्ग के अनुसार निकाल सकते हैं। केवल थोड़ेही से ऐसे स्थान हैं जिनकी दूरी ज्ञात है। परन्तु उनका ठीक ठीक स्थान इतना संदिग्ध है कि हम अपने तात्पर्य को सिद्ध करने के लिये उनको नहीं लिख सकते।

युअनच्वाङ्ग का योजन ५·२८८ अंग्रेज़ी मीलों का था इसको सिद्ध करने के निमित्त हमको नीचे लिखी हुई बात लिखनी पड़ती है।

(१) एक बहुत पुष्ट प्रमाण वह है जो कि मैं विचार करता हूं एक हिन्दुस्तानी समाचार पत्र में दिया हुआ है जिसमें कर्नल डीन साहब ने उदयान देश में जो कुछ देखा था वह सब लिखा है और जिसकी एक सूचना प्रोफ़ेसर बुहलर साहब की लिखा हुई वीना की इम्पीरियल अकेडमी में भेजी गई थी। जैसा कि उस समाचार पत्र में लिखा है ठीक वैसाही हम नीचे लिख देते हैं "चीन का यात्री कहता है कि उसने स्वात नदी के उत्तर लगभग ३० ली की दूरी पर और नाग अपलाल झील के दक्षिण पश्चिम ओर एक बड़ी चट्टान पर बुद्ध के अद्भुद पद के चिन्ह को देखा। यह पत्थर जिस पर बुद्ध के पद के चिन्ह हैं उस मूलमई देवी के टूटे टीले से कुछ गज की दूरी पर हैं जो तिरह के ऊपर एक पहाड़ी पर है। स्वात नदी जो गांव के दक्षिण ओर बहुत मोड़ के साथ बहती है लगभग ४ मील की दूरी पर होगी।"

ऊपर के वर्णन से ज्ञात होता है कि युअनच्वाङ्ग का योजन ५·३ मील के बराबर था जो कि हमारी संख्या ५·२८८ के लगभग है। हमको यह ठीक ठीक नहीं मालूम है कि पद चिन्ह से स्वात नदी तक की दूरी ठीक ठीक नापी गई थी क्योंकि उसकी कर्नल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

डीन ने खोज की है। मगध देश के मुख्य मुख्य प्राचीन नगरों के स्थानों के विषय में डाक्टर एम॰ ए॰ स्टीन साहब ने हाल में लिखा है। नीचे जो कुछ हम लिखते हैं वह सब उन्हीं के लेख से लिया गया है और प्राय: जिन शब्दों में डाक्टर साहब ने लिखा है उन्हीं शब्दों में हमने लिख दिया है।

(२) जेष्टीवन (जो कि उनके अनुसार उस पहाड़ी के पश्चिम ओर जो हंडिया पहाड़ की अन्तिम शाखा है जेठियन ग्राम से पौन मील पूर्व दिशा में एक स्थली है) से दक्षिण पूर्व की ओर पौन मील की दूरी पर बड़ी पहाड़ी में एक घाटी है जिसका नाम सफी घाट है। जेठी वन से यदि दक्षिण पूर्व की ओर चलें तो सफोघाट के ठीक पश्चिम निकली हुई एक चट्टान दिखाई पड़ेगी जिसपर एक मन्दिर है जिसका नाम सहूद्र स्थान है। इस मन्दिर की स्थिति ठीक उसी स्थान पर है जहां पर वह स्तूप वा खंभा था जो कि यष्टी बन से ६ या ७ ली (लगभग सवा मील) की दूरी पर दक्षिण पूर्व की ओर था।

यदि एक योजन ५.२८८ मील के बराबर मानें तो ६ ली बराबर होगा ७९३२ मील के और ७ ली ·९२५४ मील के बराबर होगा। यह लगभग पौन मील के है न कि सवा मील के जैसा कि डाक्टर स्टोन ६ या ७ ली को बतलाते हैं। वे कहते हैं कि सहूद्र स्थान उसी खंभ का स्थान है। इसमें कुछ भी संदेह नहीं है।

(३) युअनच्वांग फिर कहता है कि सहूद्र स्थान स्तूप से उत्तर की ओर ३ या ४ ली की दूरी पर एक निर्जन पहाड़ी है। यहां पर पहिले एकान्त में व्यास ऋषि रहते थे। इस पहाड़ी को डाक्टर स्टीन उसी स्थान पर बतलाते हैं जहां पर भलुआही अब है। उसके दक्षिण की तरफ़वाली पहाड़ी दरारों को जिनमें अनुमान किया जाता है कि ऋषि रहते थे पत्रशब्द कहते हैं। सफ़ीघाट से उत्तर को तरफ़ आध मील की दूरी पर भलुआही पहाड़ी है जो हुएन तीसियांग के अनुसार उस पहाड़ से जिसके एक ओर सहूद्र स्थान पर वह स्तूप वा खंभ खड़ा है ३ या ४ ली की दूरी पर है।

यदि एक योजन को ५.२८८ मील के बराबर मानें तो ३ ली

CC-0. In Public Domain: Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'३९९६ मील के और ४ ली '५२८८ मील के बराबर है। इस प्रकार खंभ और व्यास की गुहा के निश्चित स्थान में अब कोई संदेह नहीं है।

(४) निर्जन पहाड़ी से उत्तर पूर्व ओर ४ या ५ ली की दूरी पर जहां ऋषि व्यास रहते थे युअनचवांग कहता है कि एक दूसरी छोटी निराली पहाड़ी है। इसमें एक पत्थर की कोठरी इतनी बड़ी है कि उसमें एक सहस्र मनुष्य बैठ सकते हैं।

डाक्टर स्टीन इस गुफा को राजपिंड की गुफा बतलाते हैं जो कि चन्दु पहाड़ी से उत्तर दिशा में है। यह चन्दु पहाड़ी हंडिया पहाड़ में कीरी ग्राम से १$\frac{1}{2}$ मील दक्षिण पूर्व में है, और चन्दु पहाड़ी निर्जन पहाड़ी से लगभग १ मील उत्तर पूर्व है जो कि हंडिया पहाड़ का एक छोर है और ठीक सफीघाट के सामने है।

यदि हम १ योजन ५·२८८ मील के बराबर मानते हैं तो ४ ली बराबर होगा·५२८८ मील के और ५ ली '६६१ मील के बराबर होगा। व्यास की निर्जन पहाड़ी से राजपिंड की गुफा लगभग एक मील की दूरी पर है, इस लिये ठीक दूरी से यह ४ या ५ ली कुछ थोड़ी सी कम है जैसा कि डाक्टर स्टीन ने लिखा है। क्या यह संभव है कि जंगली मार्ग जो कि हुएन तीसियांग ने लिखा है सहूद्र स्थान के स्तूप से गुफा तक की दूरी को कुछ घटा देता है।

(५) डाक्टर स्टीन साहब सोबनाथ पहाड़ी को यात्रियों का कुक्कुटपद गिरि बताते हैं। इसका वर्णन उन्होंने भली भांति किया है। हुएन तीसियांग पहाड़ी तक की दूरी को माही नदी के पूर्व से एक बड़े बन में होकर १०० ली के लगभग बतलाता है। डाक्टर स्टीन साहब कहते हैं कि यदि हम नकशे नापें तो सोबनाथ पहाड़ी से बुधगया के ठीक सामने मोहन नदी के तट तक की दूरी १४ मील है। इस दूरी में यदि एक चौथाई और जोड़ा जाय जो मामूली सडकों पर एक गांव से दूसरे गांव तक के माप को पूरा करने के लिये आवश्यक है और १ ली को $\frac{1}{5}$ मील के लगभग मानें तो चीनी यात्री का १०० ली उतना ही होगा जितना कि हम आशा करते हैं।

यदि एक योजन ५·२८८ मील के बराबर है तो १०० ली

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१३.३२ मील के बराबर होगा और नकशे का माप १४ मील के लगभग है।

इसमें कुछ सन्देह नहीं है कि हमें दूरी थोड़ी अधिक माननी चाहिए क्योंकि यात्री ने "या इस के लगभग" इन शब्दों का प्रयोग किया है।

आरकेलाजिकल सरवे रिपोर्टस में जो नकशा दिया है उसके देखने से ज्ञात होता है कि माहेर की पहाड़ियों में एक बहुत तंग मार्ग है जिसमें पूर्व जाकर फिर थोड़ासा उत्तर की ओर एक अच्छा मार्ग बन सकता है। इस मार्ग से माही नदी तक नकशे की दूरी के अनुसार १३ ½ मील के लगभग होगा।

(६) जनरल कनिंगहाम ने जो नवीन नगर राजगृह को नापा है सो इस प्रकार है—नगर की भीतरी दीवारों की माप १३००० फुट है और खाहियों के बाहर की माप १४२६० फुट है, इन दोनों का मध्यमान १३६३० फुट है। युअन चवांग कहता है कि भीतरी दीवार का घेरा २० ली था। यदि हम ५.२४८ मील का योजन मानें तो यात्री का माप १३९६० फुठ के बराबर होगा और यदि हम योजन को ६.७५ मील के बराबर मानें तो दीवारों का घेरा १७८२० फुट होगा और यदि ८ मील का योजन मानें तो घेरा २११२० फुट का होगा!

(७) जहां तक हमको मालूम हुआ है भारतवर्ष भर में केवल बहराइच ही ऐसा ज़िला है जहां पर युअनचवांग के माप के अनुसार का कोश अर्थात् .६६१ मील का, अब भी प्रचलित है। सन् १८७३ ई० में जो इस ज़िले की सेटिलमेंट रिपोर्ट लिखी गई है उसमें भिन्न भिन्न प्रकार के प्रचलित माप लिखे हुए हैं और उसमें यह भी लिखा है कि पहाड़ियों के नीचे (वह देश जो श्रावस्ती और कपिलवस्तु के बीच में है) दूसरे प्रकार का कोश प्रचलित था, जो कि एक मील के दो तिहाई से अधिक नहीं था। यदि हम योजन बनाने के लिये ⅔ को ८ से गुणें तो यह ज्ञात होगा कि एक योजन ५.३ मील के बराबर है।

अब हम फाहिआन के माप का पता लगाना प्रारंभ करते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अंग्रेज़ी माप	अंगुल	हथेली	फुट	क्यूबिट	चंग	छिन	कदम	टचङ्ग चन	ली या मील	[illegible]
इंच ·८७२५२	१									
३·४६००८	४	१								
८·७२५२०	१०		१							
२०·६४०४८	२४	६		१						
३४·६००८०	४०	१०			१					
५२·८५१२०	६०	१५				१				
६९·८०१६०	८०	२०					१			
८७·२५१२०	१००	२५						१		
मील ·१३२२	९६००	२४००	९६०	४००	२४०	१६०	१२०	९६	३/४	
·१७६२६	१२८००	३२००	१२८०	५३३⅓	३२०	२१३⅓	१६०	१२८	१	
७·०५०६	५१२०००	१२८०००	५१२००	२१३३३⅓	१२८००	८५३३⅓	६४००	५१२०	४०	१

इस टेवल में फाहिआन का चीनी माप, युआनच्वांग का योजन और पुराना योजन दिया हुआ है। आगे चल कर हमको ज्ञात होगा कि प्राचीन योजन जो दिया हुआ है यही फाहिआन का योजन है।

प्राचीन योजन ५१२००० अंगुल का होता है और उसकी एक ली १२८०० अंगुलों के बराबर है। सामान्य प्रचलित योजन की एक ली अथवा युआनच्वांग के योजन की एक ली इस ली का ३/४ है या ९६०० अंगुलों के बराबर है।

वेल्स विलियम्स साहब ने अपने चीनी भाषा के कोश में लिखा है कि चीन में भिन्न भिन्न वंशों के समय में फुट ८, ९ या १० चूं या अंगुल (अंगुल) के बराबर था, आजकल १६ अंगुलों के बराबर है।

युआनच्वांग के एक फुट की और फाहिआन के एक क्यूबिट की लम्बाई अशोक के उस खंभ के वर्णन से जो कपित्थ राजधानी के निकट स्वर्ग की सीढ़ी की समीप है निकल सकती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फ़ाहिआन के द्वारा हमको यह ज्ञात होता है, कि संकाश्य देश में पवित्र सीढ़ी के ऊपर अशोक ने एक विहार बनवाया था और इसी विहार के पीछे महाराज अशोक ही ने ३० क्यूबिट ऊंचा एक पत्थर का खंभ भी बनवाया था।

युअनच्वांग का वर्णन इससे कुछ भिन्न है। फ़ाहिआन के पश्चात और युअनच्वांग के भारतवर्ष में आने के पूर्व यह सोढ़ी और विहार की मरम्मत सामीपवर्ती राजाओं ने कराई परन्तु अशोक का खंभ वैसेही खड़ा था और उसको यात्री ७० फुट ऊंचा बतलाता है।

इसमें कोई सन्देह नहीं है कि युअनच्वांग जिसको कपिथ देश कहता है उसीको फ़ाहिआन संकाश्य देश कहता है। युअनच्वाङ्ग और फ़ाहिआन दोनों का खंभ एक ही है।

यात्रियों की ऊपर लिखी हुई वार्ता से यह ज्ञात होता है कि फ़ाहिआन का ३० क्यूबिट युअनचवाङ्ग के ७० फुट के लगभग है।

हमको ज्ञात हो चुका है कि युअनच्वाङ्ग का एक क्यूबिट २०·९४०४८ इंचे के बराबर है। यह विश्वास करने में कि फाहिआन के क्यूबिट की लम्बाई ठीक ठीक या लगभग दूसरे यात्री के क्यूबिट की लम्बाई के है हमें बहुत कम संकोच है क्योंकि १ क्यूबिट २४ अंगुलो के बराबर है। फाहिआन का ३० क्यूबिट जैसा कि वह खंभे की ऊंचाई बतलाता है ७२० अंगुल के बराबर होगा। युअनच्वाङ्ग के अनुसार वह ऊंचाई ७० फुट है और प्रत्येक फुट बराबर है १० अंगुल के। इस प्रकार खंभे की उंचाई लग भग ७०० अंगुल के है। इन दोनों को मिलान करने से यह सिद्ध होता है कि युअनच्वाङ्ग का फुटमाप १० अंगुल था जैसा चीनी पुस्तको में लिखा है और फाहिआन का क्यूबिट २४ अंगुल का था जो कि युअनच्वाङ्ग के अंगुल के बराबर है।

फाहिआन के अनुसार वह खंभ ६९८·२१४४ इंच ऊंचा है परन्तु युअनच्वाङ्ग के अनुसार ५९०·७६४ ही इंच है।

बुध का दंड (स्टाफ) एक चंग और $\frac{६}{१०}$ या $\frac{७}{१०}$ या १६ वा १७ फुट लम्बा था।

युअनच्वाङ्ग के माप के वर्णन में यह कहा गया है कि १ चंग

७

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और १० वी टोनो बराबर हैं। इसलिये ४०+२४ वा ४०+२८ अंगुल अर्थात् ६४ या ६८ अंगुल एक चंग और $\frac{६}{१०}$ या $\frac{७}{१०}$ के बराबर है। यदि प्रत्येक फुट का ४ अंगुल से गुणा दिया जाय तो वही १६ या १७ फुट होगा। यदि फुट को ४ अंगुल के बराबर मानते हैं तो बुध का दंड ५५·८४१२८ या ५९·३३१३६ अंग्रेज़ी इंचों के बराबर होगा।

वर्तमान समय में भारतवर्ष में साधुओं का सँड़सा (चिमटा) ३४ इंच के लगभग लम्बा होता है और कुछ साधु कोसियर या कुबड़ी लेते हैं जिसकी लम्बाई लगभग ५४ इंच के होती है।

सँड़सा एक लोहे का दंड होता है जो थोड़ी दूर पर चिरा होता है और नीचे की तरफ इस तरह बना होता है कि जिससे जलते हुए कोयले के अंगारे उठाये जा सकें। चिरे हुए दोनों भाग आग की तरफ़ दबाने से जुट जाते हैं। सँड़से के ऊपर ३ या ४ इंच के व्यास का एक कड़ा लगा होता है जो चिमटे के छेद में जिसका व्यास कड़े की मोटाई से अधिक होता है पहिनाया रहता है। इस प्रकार वह कड़ा चिमटे के छेद में सहज से घूम सकता है। यह कड़ा ५ या ६ दो दो इंच व्यासवाली कड़ियों में होकर गुजरता है। साधु लोग सँड़से को बीच में पकड़ते हैं और जब वे दिहातों में घूमते हैं जहां पर यह संभव है कि जंगली पशु उन पर झपटें तो वे इन कड़ियों को खड़खड़ाते हैं अथवा इसके एक छोर को पृथ्वी पर पटक कर शब्द पैदा करते हैं।

बुध का खखरम कदाचित चिमटे ही के ढंग का था, इसको हिलाने से भी शब्द होता था।

कोसियर (कुबड़ी) $\frac{३}{४}$ इंच मोटे लोहे की बनी होती है और नीचे की ओर कुछ उभड़ी हुई होती है। मुड़ी हुई छोर की ओर एक या एक से अधिक कड़ियां सँड़से की नांई होती हैं। जहां पर साधु ठहरते हैं वहां पर वह अपनी कोसियर (कुबड़ी) अपने सामने थोड़ी दूर पर पृथ्वी में गाड़ देते हैं।

बुध का दंड उतनाही लम्बा था जितनी लम्बी कोसियर या कुबड़ी भारतवर्ष में २० शताब्दी में होती है। आइशिंग भी इसकी पुष्टि करता है जहां पर वह अपनी आंख की देखी हुई बात लिखता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है कि धातु का दंड संस्कृत में खखर कहाता है जिसमें से (जब दंड को लेकर कोई चलता है) शब्द निकलता है। छड़ी लंकड़ी की होती है चाहे चिकनी हो चाहे खुड़खुड़ी और ऊंचाई में आदमी की भौंह तक होती है।

मेरी समझ में इसमें कुछ भी संदेह नहीं है कि फाहिआन ने जो बुध के पवित्र दंड के माप में चंग शब्द का प्रयोग किया है वह चंग १० ची के बराबर है और प्रत्येक ची ४ अंगुल के बराबर है। वह माप जो १६ या १७ फुट की दी हुई है भूल है। उसको १६ या १७ ची या हथेली लिखना चाहिए जिसकी जगह पर १६ या १७ ची या फुट लिख गया है। फाहिआन का फुट केवल ४ अंगुल का है यह उस पुरानी चीनी माप के बिलकुल प्रतिकूल है जो हम जानते हैं और जिसके अनुसार एक फुट ८, ९ या १० अंगुलों के बराबर था।

यह चंग जिसके विषय में हमने अभी लिखा है फाहिआन के चंग से अवश्य भिन्न समझा जाना चाहिए। वह कहता है कि कनिष्क स्तूप जो पेशावर में है ४० चंग ऊंचा है और युअनच्वाङ्ग कहता है कि यही स्तूप ४०० फुट ऊंचा है जैसा कि अब हमको मालूम है कि ह्यूनश्यांग का फुट १० अंगुल के बराबर है। इसके अनुसार उस स्तूप की ऊंचाई ४००० अंगुल होगी। इसका हिसाब अब यह हुआ कि ४० चंग ४००० अंगुल के बराबर है। इसलिये १ चंग १०० अंगुल के बराबर है। यह चंग ठीक २½ गुणा बड़ा है उस चंग से जो १० ची का है। यह हिसाब ठीक है क्योंकि एक लेखक ने लिखा है कि चंग १०० अंगुल का होता है। यह ज्ञात होता है कि यह चंग सर्वदा १०० अंगुल का रहा।

युअनच्वाङ्ग का फुट कितने के बराबर है यह हिसाब बड़ा मनोहर है जैसा कि हम सिद्ध कर चुके हैं कि उसका एक फुट १० अंगुल के बराबर है।

हम यह देख चुके हैं कि पेशावर में जो कनिष्क का स्तूप है वह फ़ाहिआन के ४० चंग या ४०० फुट के बराबर है और युअनच्वाङ्ग के ४००० अंगुल या २९०.८४ अंग्रेज़ी फुट के बराबर है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फ़ाहिश्रान ने यह भी लिखा है कि भारतवर्ष भर में उसके समय में उससे बड़ा कोई स्तूप नहीं था। युअनच्वाङ्ग के अनुसार उसका नीचे का घेरा (वृत्त) १½ ली या·१९८३ अंग्रेज़ी मील अथवा ३५० गज़ के लगभग था जब कि एक योजन ५·२९८ मील के बराबर माना जाय।

वह विहार जो कि फ़ाहिश्रान के अनुसार श्रावस्ती से दक्षिण जेतवन के पूर्व फाटक से ७० कदम उत्तर की ओर है और जहां पर बुध ने धर्म विमुख लोगों से शास्त्रार्थ किया था, ६ चंग (७० फुट) से कुछ अधिक ऊंचा है। युअनच्वाङ्ग इसी विहार की ऊंचाई लगभग ६० फुट के बतलाता है।

यहां पर भी चंग १०० अंगुल का और फुट १० अंगुल का है।

फ़ाहिश्रान का फुट १० अंगुल के बराबर मालूम होता है और ठीक उतनाही बड़ा है जितना कि दूसरे यात्री का है।

यह जो ऊपर लिखा गया है उस वर्णन से विदित होता है जो अशोक के उस खंभ का किया गया है जो कि फ़ाहिश्रान के माप के अनुसार प्राचीन नगर पाटलीपुत्र से तीन ली दक्षिण तरफ़ है। हम फ़ाहिश्रान (१,२) और युअनच्वाङ्ग के ३ वर्णन नीचे लिखते हैं। (१) गुंबज के दक्षिण ओर एक पत्थर का खंभ है जिसका घेरा डेढ़ चंग और जिसकी ऊंचाई ३ चंग है और उस खंभ के ऊपर यह लिखा हुआ है। राजा अशोक ने संपूर्ण जम्बूद्वीप को ब्राह्मणों को दे दिया और फिर उसने उनको धन देकर ले लिया। ऐसाही उसने तीन बेर किया। (२) मंदिर के दक्षिण ओर एक पत्थर का खंभा है जिसका वृत्त (घेरा) १४ या १५ फुट है और ऊंचाई ३० फुट के करीब है। (३) विहार के बगल में जिसमें बुध के चिन्ह हैं और उसके समीपही पत्थर का एक बड़ा खंभ है जो कि ३० फुट ऊंचा है और जिस पर कुछ लिखा हुआ है जो कुछ कुछ मिट गया है। (उसमें भी वही लिखा है जो कि हम (१) में कह आए हैं)।

यहां पर युअनच्वांग के वर्णन में जो ३० फुट के लग भग ऊंचा लिखा है वह फाहियान के अनुसार ३० फुट या ३ चंग हुआ—क्योंकि युअनच्वांग का एक फुट १० अंगुल के बराबर है और ३० फुट में ३०० अंगुल हुए। हमनें ऊपर लिखा है कि ३ चंग में ३०० अंगुल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होते हैं क्योंकि एक चंग १०० अंगुल का होता है। नम्बर २ के ण्यारा में जो ३० फुट लिखा हुआ है यह ३ चंग का अनुवाद नहीं है परन्तु ठीक वही शब्द है जो कि उस पुस्तक में लिखा है, जिससे यह लिया गया है। इससे साफ़ मालूम होता है कि फ़ाहिआन का एक फुट १० अंगुल के बराबर है। उस खंभ की ऊंचाई २१·६१३ अंग्रेज़ी फुट थी। सिन या फैदम कितने के बराबर है इस विषय में हम को बहुत कम कहना है। जहां तक हम को मालूम है यात्रियों ने अपनी पुस्तकों में इस माप के विषय में कुछ नहीं कहा है।

ऐसा मालूम होता है कि चीन में एक फैदम ६ फुट के बराबर सर्वदा रहा है। वर्तमान समय में एक फैदम ९६ अंगुलों का होता है क्योंकि एक फुट १६ अंगुल का होता है परन्तु प्राचीन काल में १ फुट ८, ९, या १० अंगुल का होता था। इस हिसाब से भिन्न भिन्न समयों में फैदम ४८, ५४, और ६० अंगुल का अवश्य होता होगा।

युअनच्वांग और फ़ाहिआन का फैदम ६० अंगुल का था क्योंकि इन यात्रियों का फुट १० अंगुल या ५२·३५१२ अंग्रेज़ी इञ्च के बराबर था। इन सब बातों से यह परिणाम निकला कि दूरी नापने में फ़ाहिआन ने प्राचीन योजन का प्रयोग किया है। इसका सिद्ध करना सहज नहीं है परन्तु इसके सिद्ध करने की मैं कोशिश करूंगा।

फ़ाहिआन का योजन कितना बड़ा था इसका पता लगाने के लिये यात्रियों ने जो दूरी श्रावस्ती नगर से कपिलवस्तु नगर तक लिखी है उसकी जांच करूंगा।

युअनच्वांग की "जीवनी" और "यात्रा" में उस नगर से जो श्रावस्ती के उत्तर-पश्चिम या पश्चिम है और जिसमें काश्यप बुध पैदा हुआ था कपिलवस्तु तक की दूरी नापी गई है। फ़ाहिआन इस नगर को तोवई कहता है और उसने श्रावस्ती से और न कि तोवई से कपिलवस्तु तक की दूरी नापी है।

यात्रा में यह लिखा है कि श्रावस्ती से तोवई तक की दूरी "१६ ली या इसके लग भग" है। जीवनी में यह लिखा है कि "६० ली या इस के लगभग" है परन्तु फ़ाहिआन के अनुसार केवल ५० ली है।

ये सब माप आपस में नहीं मिलते। कदाचित १६ ली भूल से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

६० ली की जगह पर लिख गया है परन्तु इधर देखिये तो बुध का योजन १६ ली में विभक्त है और इससे यह संभव है कि युअनच्वांग ने अपने पहिले लेख में लिखा था कि श्रावस्ती नगर से तोबई १६ ली या एक प्राचीन योजन की दूरी पर है और भूल से १६ ली जैसा का तैसा रह गया और प्रचलित माप को ली में नहीं बदला गया।

"१६ ली या इसके लगभग" यदि इससे यही तात्पर्य है तो यह दूरी प्रचलित ५३⅓ ली के बराबर है क्योंकि १६ ली का एक प्राचीन योजन होता था।

इस लिये मैं विश्वास करता हूं कि जीवनी में जो ६० ली की दूरी दी हुई है वही सही है।

यदि यह माना जाय कि पुराने माप में फ़ाहिआन ने ५० ली लिखा है तो यह माप प्रचलित ६६·६ ली के बराबर होगी और इसी माप का प्रयोग युअनच्वांग ने किया है।

अब मैं युअनच्वांग की और उसके जीवनी लिखने वालों की लिखी हुई दूरी के विषय में विचार करूंगा।

"जीवनी" से यह ज्ञात होता है कि तोबई से यदि हम दक्षिण पूर्व की तरफ़ लगभग ८०० ली जावें तो हमको कपिल-वस्तु का राज्य मिलेगा।

यहां पर भी उसी प्रकार की भूल है जैसी कि "जीवनी" में थी और जिसको हमने पिलोशन और कपिथ की दूरियों के विषय में बतलाया था अर्थात् नगर की जगह हमको राजधानी पढ़ना चाहिए क्योंकि यात्रा में तोबई से कपिलवस्तु के राज्य तक "५०० ली या इसके लगभग" दूरी है।

इससे मैं यही परिणाम निकालूंगा कि युअनच्वांग के अनुसार प्रचलित माप में तोबई से कपिलवस्तु नगर तक ये दूरियां थीं।

(१) तोबई से श्रावस्ती नगर तक ६० ली या इसके लगभग।

(२) श्रावस्ती नगर से कपिल राज्य की सीमा पर्यंत ५०० ली या इसके लगभग।

(३) कपिल की सीमा से कपिलवस्तु नगर तक २४० ली के लगभग।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह देखा जायगा कि मैंने जो राज्य (राजधानी) की जगह नगर मान कर तोवई से कपिलवस्तु तक की दूरी ८०० ली लिखी है उसीको मैं सही स्वीकार करता हूं।

मिस्टर विन्सेएट स्मिथ और जनरल कनिंगहाम इन दोनों महाशयों ने श्रावस्ती से लेकर कपिलवस्तु तक की दूरी के विषय में जो विवाद किया है उसमें ८०० ली को भुला दिया है।

क्योंकि यह मालूम हो गया है कि श्रावस्ती से तोवई ६० ली की दूरी पर है तो "जीवनी" के अनुसार कपिलवस्तु से श्रावस्ती तक की दूरी ८००-६० ली अर्थात् ७४० ली है। प्रचलित हिसाब के अनुसार यह १८.५ योजन हुआ। इस दूरी को यदि हम प्राचीन माप में बदल देवें तो १८.५ योजन १३.८७५ योजनों के बराबर होगा। यदि हम इसमें से १.८७५ योजन घटा देवें तो हमें १२ योजन बचते हैं जो कि फ़ाहियन के अनुसार श्रावस्ती से नापिक तक की दूरी है और १.८७५ योजन जो बचता है वही पुराने माप के अनुसार नापिक से कपिलवस्तु तक की दूरी है, यदि प्राचीन योजन और फ़ाहिआन का योजन दोनों एकही हैं।

यदि मामूली योजन ५.२८८ मील का है तो दोनों राजधानियों के बीच की दूरी जो कि ७४० ली है वह ९९.८२८ अंग्रेज़ी मील के बराबर होगी।

इस लिये यह बिलकुल असंभव है कि सहेतमहेत श्रावस्ती है क्योंकि न तो वह दिशा में और न दूरी में कपिलवस्तु से मिलता है, जिसकी ठीक ठीक स्थिति आज कल के उद्यमी ढूंढने वालों ने मालूम की है।

यद्यपि यह पता लग चुका है कि श्रावस्ती कपिलवस्तु से ९८ मील की दूरी पर है और यह भी मालूम हो चुका है कि वह असिरावती (रापती) पर बसी है तो श्रावस्ती नगर से कपिलवस्तु दक्षिण पूर्व की तरफ़ हुआ परन्तु सहेतमहेत कपिलवस्तु के खंडहर से ५० वा ६० मील की दूरी पर पश्चिम की ओर जाकर कुछ दक्षिण पर है।

मिस्टर विन्सेएट स्मिथ ने श्रावस्ती कहां पर है इस विषय पर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दो लेख लिखे हैं और उनमें यह परिणाम निकाला है कि श्रावस्ती और सहेतमहेत दोनों एकही नहीं है जैसा कि जनरल कनिङ्गहाम और कई एक लेखकों ने विचार किया है।

इसको छोड़ कर मैं विचार करता हूं कि मिस्टर स्मिथ ने दो जगह भूल की है (१) कपिलवस्तु और श्रावस्ती के बीच में ५०० ली की दूरी मानी है (२) उन्होंने राजधानी और देश इन दोनों शब्दों का अर्थ एकही माना है और यद्यपि मैं इससे भी संतुष्ट नहा हूं कि उन्होंने चीनी यात्रियों के योजन का जो परिमाण इस उदाहरण में या बुध के और स्थानों के पता लगाने में माना है वह सही है परन्तु मेरे अनुसाधानों का भी यही फल निकला है कि मेरा और उनका मार्ग और दिशा श्रावस्ती नगर से कपिलवस्तु नगर तक एकही है और दूरी भी लगभग बराबरही है। उनके अनुसार दूरी ८३⅓ से ९० मील तक है या हाल में उन्होंने लिखा है कि ९० मील से ले कर १०० मील के भीतर है और मेरे अनुसार ९८ मील है। मैं विचार करता हूं कि उन्होंने श्रावस्ती नगर की स्थिति बहुत ठीक मानी है। यह विश्वास योग्य नहीं है कि राजा प्रसेनजित और उसकी रानी जब श्रावस्ती नगर से भागे तो सहेतमहेत से कपिलवस्तु नगर तक जाने में ७ दिन और ७ रात लगे और दूत को ३ दिन लगे।

श्रावस्ती नगर को छोड़ कर यदि हम दक्षिण पूर्व की ओर १२ योजन जावें तो फाहिआन कहता है कि हम नाविक या नाविका नगर में पहुंचेंगे जहां पर क्रकुचंद बुध पैदा हुआ था। फ़ाहिआन कहता है कि नाविक से यदि हम उत्तर दिशा को चलें तो १ योजन से कमही पर हमको एक स्थान मिलेगा जहां पर कनकमुनि बुध पैदा हुए थे। वहां से पूर्व को ओर एक योजन से कमही दूरी पर कपिलवस्तु नगर है।

युअनच्वांग कहता है कि क्रकुचंद का नगर कपिलवस्तु से दक्षिण की ओर ५० ली की दूरी पर है। कनकमुनि का नगर क्रकुचंद के नगर (नाविक) से उत्तर पूर्व की ओर ३० ली की दूरी पर है। उसके अनुसार कनक मुनि के नगर का मार्ग कपिलवस्तु के दक्षिण पूर्व है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस प्रकार से इन दोनों पथिकों के अनुसार कपिलवस्तु से कनकमुनि के नगर का स्थान भिन्न भिन्न है।

यह विचार में आता है कि यात्रियों की पुस्तकों में कपिलवस्तु से नापिक का मार्ग और कनकमुनि का नगर इन दोनों विषयों में कुछ गड़बड़ है।

यह बहुत असंभव है कि कोई पथिक श्रावस्ती नगर से सीधा कपिलवस्तु की राजधानी तक जावे जैसा कि ज्ञात होता है कि फ़ाहिआन ने किया है तो नगर में पहुंचने के पूर्व कपिलवस्तु के दक्षिण पूर्व एक जगह जाना पड़ेगा जहां कि युअनच्वांग के अनुसार कनक मुनि के नगर की स्थिति है। और यह ज्ञात होता है कि इसकी पुष्ठि फाहिआन ने की है। वह कहता है कि कनक मुनि के स्थान से कपिलवस्तु पूर्व है। और यदि हम नापिक के छोड़ने के उपरान्त दोनों यात्रियों के मार्ग का मिलान करें तो यह और भी अधिक पुष्ट होता है, यदि उन नगरों से जिनके साथ इनका वर्णन हुआ है इनका पृथक विचार करें। फ़ाहिआन जो कहता है कि कनकमुनि से कपिलवस्तु पूर्व है वह ठीक वही है जो युअनच्वांग कहता है कि नापिक से कनक मुनि उत्तर-पूर्व है। फाहिआन जो कहता है कि नापिक से कनकमुनि उत्तर है वह ठीक वैसेही है जैसे युअनच्वांग कहता है कि कपिल-वस्तु से नापिक दक्षिण है।

युअनच्वांग के अनुसार कपिलवस्तु और नापिक के बीच में कनक मुनि है। एक नगर दूसरे से उत्तर है। इस लिये यह ठीक है कि कनकमुनि नापिक से उत्तर है। इस प्रकार फाहिआन के अनुसार कनकमुनि से अन्तिम मार्ग पूर्व की ओर हुआ और युअनच्वांग के अनुसार उत्तर-पूर्व हुआ।

इस विवाद से यह परिणाम निकलता है कि दोनों कनकमुनि और नापिक कपिलवस्तु से पश्चिम दिशा में हैं। और कपिलवस्तु पहुंचने के पूर्व इनमें से होकर जाना पड़ेगा। और फ़ाहिआन का मार्ग सही है यदि हम उसके लेख में पूर्व के बदले उत्तर-पूर्व पढ़ें।

युअनच्वांग कहता है कि नापिक से कनकमुनि का नगर ३० ली की दूरी पर है और कपिलवस्तु से नापिक तक ५० ली है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कदाचित् हम यह समझेंगे कि यह ५० ली कनक मुनि से कपिलवस्तु तक की माप है। उसके यह कहने से ठीक मालूम होता है कि नगर के उत्तर पूर्व ४० ली की दूरी पर एक स्तूप है जहां पर एक हल का मेला लगा था। इस वर्णन के पश्चात कनकमुनि के नगर के विषय में जो कुछ लिखा है उससे यह ज्ञात होता है कि ४० ली की दूरी इसी नगर से ली गई है।

फ़ाहिश्रान कहता है कि कपिलवस्तु से कुछ ही ली की दूरी पर उत्तर-पूर्व की तरफ़ हल का मेला लगा था।

दूसरे प्रमाणों से ५० ली और ३० ली की दूरियों का जोड़ अर्थात कपिलवस्तु से नापिक तक और नापिक से कनकमुनि तक की दूरी ८० ली या दो योजन है और फ़ाहियान के अनुसार भी वह इतनीही है क्योंकि वह कहता है कि संपूर्ण यात्रा दो योजन से कुछ कम थी। फ़ाहिश्रान के "दो योजन से कम" इस पद का तात्पर्य यह मालूम होता है कि तीनों नगरों की दूरी बराबर थी और वे एक दूसरे से पूरे एक योजन की दूरी पर थे। यह संभव है कि युअनच्वांग का ३० ली वही दूसरी दूरी ५० ली है। इस दशा में प्रचलित माप के अनुसार नापिक से कपिलवस्तु १०० ली की दूरी पर होगा।

हम अब इस दशा में पहुंच गए हैं कि दोनों यात्रियों की दूरी के विषय में जो लिखा गया है उसका थोड़ा थोड़ा करके मिलान कर सकते हैं।

इस लिये हम पहिले श्रावस्ती से तोवई तक की दूरी लेवें जो कि ६० ली है क्योंकि यह उन दोनों दूरियों के मध्य में है जिनको हमने बतलाया है। और यही दूरी "जीवनी" में भी लिखी है।

यदि हम ६० ली को जो तोवई से श्रावस्ती तक की दूरी है ८०० ली में से घटा देवें और ८० ली और घटा देवें जो कि नापिक से कपिलवस्तु तक की दूरी है (यह सब युअनच्वांग की "जीवनी" और यात्रा में दिया हुआ है) तो प्रचलित माप के अनुसार श्रावस्ती से नापिक तक की दूरी ६६० ली होगी परन्तु फ़ाहिश्रान के अनुसार यही १२ योजन या ४८० ली है। यदि यह माना जाय कि फ़ाहिश्रान

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का ली एक तीसरा भाग युअनच्वांग के ली से अधिक है तो फ़ाहिआन का १२ योजन या ४८० ली प्रचलित ली के अनुसार ६४० ली होगा और यह युअनच्वांग की दूरी से २० ली कम होता है। युअनच्वांग ने श्रावस्ती से नापिक तक की दूरी में जो २० ली अधिक किया है वह यह समझने से ठीक हो जाता है कि नापिक से कनकमुनि तक की दूरी ठीक २० ली कम समझी गई है।

युअनच्वांग दूरी और दिशा बतलाने में फ़ाहिआन से बहुत चतुर है। इस लिये यह संभव है कि उसका ५० ली और ३० ली का हिसाब ठीक है, यद्यपि कपिलवस्तु से कनकमुनि तक का मार्ग ठीक नहीं है। यह मान करके कि ५० ली और ३० ली ठीक है यह संभव है कि तोवई से कपिलवस्तु तक की दूरी प्रत्येक यात्री की मिल जावे। हम यह पहिले बतला चुके हैं कि फाहिआन कहता है कि नापिक से कपिलवस्तु प्राचीन माप के अनुसार १·८७५ योजन की दूरी पर है। १·८७५ योजन ७५ ली के बराबर है। इसको यदि प्रचलित माप में लावें तो १०० ली के बराबर होता है। यदि युअनच्वांग का ५० ली और ३० ली प्राचीन माप के अनुसार समझा जावे तो यह ८० ली प्रचलित माप के अनुसार १०६·६ ली के बराबर होगा। ६·६ ली का जो अन्तर है यही इन दोनों यात्रियों के लिखी हुई दूरी में श्रावस्ती से तोवई तक में अधिक होता है। (फ़ाहियान का ५० ली प्रचलित ६६·६ ली के बराबर है।) फाहिआन के अनुसार दूरी ५० ली है परन्तु युअनच्वांग के अनुसार ६० ली है।

ये सब दूरियां इस सारणी के देखनेही से मालूम हो जावेंगी।

फ़ाहिआन				युअनच्वांग	
	प्राचीन योजन	ली (पुरानी माप)	ली नवीन माप	ली पु· मा·	ली न· मा·
तोवई से श्रावस्ती	..	५०	६६·६	..	६०
श्रावस्ती से नापिक	१२	४८०	६४०·०	...	६३३·४
नापिक से कपिलवस्तु	१·८७५	७५	१००·०	३०+५०	१०६·६
जोड़	..	..	८०६·६	..	८००·०·

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हमने जो दूरियों के विषय में लिखा है उसमें यह शंका हो सकती है कि हमने जो यह माना है कि युअनच्वांग ने कभी प्रचलित प्रणाली को छोड़ दिया है इसको मान लेने के लिये हमारे पास कोई प्रमाण नहीं है।

मैं बिचारता हूं कि कदाचित कोई प्रमाण मिल जावे। उसने और फ़ाहिआन दोनों ने लिखा है कि सरकूप कपिलवस्तु से दक्षिण पूर्व की ओर ३० ली की दूरी पर है। यदि फाहिआन का योजन युअनच्वांग के योजन से बड़ा है जैसा कि मैं बिचारता हूं कि सब मानते हैं और दोनों के योजन ४० ली में विभक्त हैं तो युअनच्वांग यहां पर फाहिआन के माप में लिखता है न कि प्रचलित माप में। मैं मानता हूं कि सरकूप तक की ३० ली की दूरी हमारी उस सम्मति को जो हमने सारणी में दी है पुष्ट करती है कि युअनच्वांग की कपिलवस्तु के आस पास की दूरी प्राचीन माप के अनुसार माननी चाहिए अर्थात् ३० ली और ५० ली प्राचीन माप के अनुसार है।

यदि यह ऐसा है तो युअनच्वांग ने नापिक से कपिलवस्तु तक की दूरी दो प्राचीन योजन लिखी है। और फाहिआन के अनुसार इन दोनों नगरों की दूरी दो योजन से कुछ कम अर्थात् १.८७८ योजन है। फाहिआन के अनुसार इन दोनों नगरों में युअनच्वांग ने प्रचलित माप से ६.६ ली अधिक लिखा है। यही यदि श्रावस्ती से नापिक तक की दूरी में जो कि ६३३.४ ली है जोड़ दिया जावे तो प्रत्येक यात्री की दूरी इतनी यात्रा में ठीक ठीक बराबर होवेगी।

फ़ाहिआन और युअनच्वांग ने जो तावई से कपिलवस्तु नगर तक की दूरी लिखी हैं उसके देखने से यह स्पष्ट विदित होता है कि

(१) प्रचलित माप के अनुसार श्रावस्ती नगर से तावई ६० ली की दूरी पर थी।

(२) प्रचलित माप के अनुसार श्रावस्ती नगर से नापिक ६४० ली की दूरी पर था।

(३) युअनच्वांग की ५० ली और ३० ली की दोनों संख्याएं जो कि दो योजन के बराबर है ठीक हैं। ये यदि ठीक हैं तो प्राचीन माप के अनुसार हैं और प्रचलित माप के अनुसार उनमें से हर एक ६६.६

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और ४० ली के बराबर है। इन दोनों के जोड़ में अर्थात् ८० ली या प्रचलित माप के अनुसार १०६·६ ली में अवश्य प्रचलित माप के अनुसार ६·६ ली अधिक है, यदि फ़ाहिआन के लेख पर ध्यान दिया जावे जो कि कहता है कि यह दूरी दो योजन से कम है।

(४) यह बहुत ही संभव है कि प्रचलित माप के अनुसार नाविक से कनकमुनि ५० ली पर था और कनकमुनि से कपिलवस्तु भी ५० ला पर थी और प्रचलित माप के अनुसार तोवई से कपिलवस्तु तक की दूरी में जो ६·६ ली का अंतर है। वह यों है कि फ़ाहिआन ने उतनीही ली तोवई और श्रावस्ती नगर की दूरी में अधिक कर दी है।

मैं विश्वास करता हूं कि फ़ाहिआन के अनुसार ५० ला और युअनच्वांग के अनुसार ६० ली जो श्रावस्ती से तोवई तक की दूरी है ये १० के गुणनफल के करीब करीब पूर्णांक है। पता लगाने से कदाचित यह मालूम होगा कि श्रावस्ती से तोवई तक की पूरी दूरी प्रचलित माप के अनुसार ६३ या ६४ ली के लग भग है। इस विचार से युअनच्वांग ने इसी दूरी को "६० ली या इसके लगभग" लिखा है। ६३ या ६४ ली का तीन चतुर्थांश पुराने माप के अनुसार ४७·२५ या ४८ ली होगा जिसको फ़ाहिआन ने ५० ली लिखा है।

इन दूरियों का इस प्रकार मिलान करने पर जैसा हमने किया है हम विश्वास करते हैं कि हमने सिद्धकर दिया कि युअनच्वांग का योजन $\frac{3}{4}$ उस योजन का था जिसको फ़ाहिआन ने वर्ता है अथवा फ़ाहियन ने उस प्राचीन माप को वर्ता है जिसका वर्णन (या जिसके विषय में) युअनच्वांग ने कहा है।

प्रत्येक यात्री का योजन ४० ली में विभक्त हो सकता था और प्रचलित माप का योजन पुराने योजन का $\frac{3}{4}$ था। इसलिये यह सिद्ध होता है कि प्रचलित ली पुराने ली का $\frac{3}{4}$ है।

यदि युअनच्वांग ने कुछ जगहों की दूरी प्राचीन माप के अनुसार दी है तो उसका निर्णय बहुत कठिन होगा। यह हो सकता है कि जब वह भारतवर्ष में घूम रहा था तब कपिलवस्तु के इधर उधर की कुछ जगहों या उन कुछ जगहों के विषय में जो बुध के इतिहास में प्रख्यात हैं केवल कथामात्र ही रह गई हो और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दीवार आदि सब नष्ट हो गई हो। इसलिये उन मार्ग और स्थानों की स्थिति जो उसने लिखी है उन इतिहासों से जो उसे प्राप्य थे अथवा स्थानीय खोज से उसने ली हो।

हम को कोई उदाहरण ऐसा नहीं उपस्थित है जिससे यह सिद्ध हो जावे कि फाहिआन ने अपने वर्णन में प्रचलित माप के योजन का प्रयोग किया है परन्तु यह संभव है कि उसके लेख में ऐसे उदाहरण होवें।

अब केवल यह पता लगाना रह गया कि कदम (पाद) कितने के बराबर है।

नगर (श्रावस्ती) के दक्षिण द्वार से १२०० कदम की दूरी पर पश्चिम ओर वह स्थान है जहां पर सुदत्त ने एक विहार बनवाया था।

नगर (श्रावस्ती) से दक्षिण ओर ५ या ६ ली की दूरी पर जेतवन है। यह वही स्थान है जहां पर अनाथ पिंडद (क्रिऋुता) (दूसरा नाम) सुदत्त प्रसेनजित राजा के प्रधान मंत्री ने बुध के लिये एक विहार बनवाया था।

यह मालूम होता है कि युअनच्वांग ने श्रावस्ती नगर से जेतवन की उत्तरी सीमा तक की दूरी लिखी है परन्तु फाहिआन ने सुदत्त के विहार तक की दूरी लिखी है जो कि वह कहता है कि जेतवन के हाते के बीचो बीच में है। इसलिये इन दोनों की माप, एक ही जगह तक की नहीं है।

युअनच्वांग की ली ९६०० अंगुल की थी (टेवल देखो) इसलिये प्रचलित माप के अनुसार ५ ली ४८००० अंगुल के बराबर और ६ ली ५७६०० अंगुल के बराबर है। यदि यह विचार कर लिया जावे कि फाहिआन और युअनच्वांग की दूरियां एक ही जगहों से नापी गई हैं और यदि हम ४८००० और ५७६०० इन दोनों संख्याओं को १२०० कदमों से भाग देवें तो ४० या ४८ अंगुल एक कदम की लंबाई निकलती है।

यदि हम यह विचार करें कि प्राचीन चीन का फुट ८, ९ या १० अंगुलों का था तो यह संभव मालूम होगा कि किसी समय में फुट और कदम के लंबाई में कोई नियत संबन्ध (प्रपोरशन) था

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जैसा कि जब फुट ८ अंगुल का था तब कदम ४८ का था और जब फुट ९ अंगुल का था तब कदम ५४ अंगुल का, जब फुट १० अंगुल का था तब कदम ६० अंगुल का था। इस का तात्पर्य यह है कि उस माप से जो उस समय वर्ती जाती थी एक कदम ६ फुट का था।

जरविस ने प्राचीन चीन के सरल रेखा के माप का एक टेबुल बहुत ठीक प्रकार से लिखा है जिसमें १ फुट १० अंगुल का है और कदम ठीक ६० अंगुल का।

इन प्रमाणों से जो ऊपर दिए हुए हैं यह संभव है कि हम लोग यह परिणाम निकाल लेवें कि दोनों यात्रियों का कदम बराबर था क्योंकि दोनों के फुट १० अंगुल के थे।

यह भी ध्यान रखना चाहिए कि प्रचलित माप के अनुसार एक ली और एक योजन में जितने अंगुल होते हैं उनकी संख्या को यदि हम पृथक पृथक ६० से भाग देवें तो वे पूरे पूरे कट जाते हैं और शेष कुछ भी नहीं रहता परन्तु प्राचीन योजन की अंगुल संख्या को यदि हम ६ से भाग देवें तो वह पूरी पूरी नहीं कटती और कुछ शेष रह जाता है। इससे यह संभव है कि युअनच्वांग का कदम ६० अंगुल का था और फाहिआन का ८० का था और पहिले यात्री के कदम भी ली और योजन की नांई युअनच्वांग के उन्हीं मापों से एक तिहाई बड़े होते थे।

यदि हम कदम को ६० अंगुल का मान लेवें तो फाहिआन का माप नगर के दक्षिण द्वार से जेतवन के बीचों बीच तक प्रचलित माप के अनुसार ठीक ७.५ ली था। यदि युअनच्वांग की औसद संख्या ५.५ ली श्रवस्ती से उद्यान की उत्तर सीमा तक दूरी मान लें तो हम जेतवन का क्षेत्रवर्ग करीब करीब निकाल सकते हैं। प्रचलित माप के अनुसार उसकी लंबान ४ ली है क्योंकि जेतवन विहार बीचों बीच में है।

इसकी चौड़ाई ६० या ७० कदम की दूनी होगी। ७० कदम का दूना ८४०० अंगुल या $\frac{2}{6}$ ली है। एक ली अंग्रेज़ी मील का ·१३२२ होता है (योजन=५·२८८ मील) अर्थात् २३२·६७२ गज़ जिसका $\frac{2}{6}$

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वां भाग २०३·५९८८ गज़ के बराबर है। यही उस वाटिका की चौड़ाई है। ४ ली ५२९८८ मील के या ९३०·६४८ अंग्रेजी गज़ों के बराबर है। इस भांति उस का क्षेत्रफल ९३०·६४८ गज़ लंबाई में और २०३·५९८८ गज चौड़ाई में निकल आवैगा।

जेतवन की चौड़ाई उस संघाराम की स्थिति से पाई गई है जिसमें यात्रियों ने सुना था कि बुध ने विरुद्ध पाठशाला वालों से विवाद किया था और जहां पर उन लोगों ने बुध की एक बैठी हुई मूर्ति भी देखी थी। जेतवन हाते के पूर्व फाटक से उत्तर की ओर उस सड़क के पश्चिम तरफ जो कि उस आराम की एक सीमा है ७० कदम की दूरी पर संघाराम है। पिछले यात्री के अनुसार यह ६० या ७० कदम जेतवन विहार के पूर्व था, यद्यपि जेतवन विहार उस हाते के ठीक बीच में था इसलिये इस पुष्प वाटिका की चौड़ाई ६० या ७० कदम की दूनी थी।

यदि फाहिआन का कदम ८० अंगुल का था तो जेतवन विहार प्रचलित माप के अनुसार १० ली की दूरी पर होगा और इसमें से यदि हम ५·५ ली जो कि नगर से वाटिका की उत्तर सीमा तक की दूरी है घटा देवें तो प्रचलित माप के अनुसार ४·५ ली शेष रहैगा और यह उत्तर दक्षिण माप का आधार है और चौड़ाई मामूली ली का $\frac{2}{6}$ वां भाग होगी।

यह संभव है कि ६० या ७० कदम जो कि उस हाते के पूर्व पश्चिम माप का आधा है प्राचीन माप के अनुसार लिखा होवे।

यह भी लिखा है कि जेतवन की चौड़ाई में $1\frac{1}{6}$ ली है जिसका क्षेत्रफल वर्ग में ५७६०००००००० अंगुल होगा जो कि प्रचलित माप के अनुसार $5\frac{1}{4}$ ली की लगभग लंबाई को $1\frac{1}{6}$ ली की चौड़ाई से गुणा करने से अथवा ७ ली की लंबाई को $\frac{2}{6}$ ली की चौड़ाई से गुणा करने से निकलैगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शाक्यमुनि गौतम बुद्ध ।

[पण्डित रामगरीब चौबे लिखित ।]

अध्याय १ ।

भारत और बौद्ध धर्म्म ।

बौद्ध धर्म्म का इतिहास भिक्षुओं के एक दल से प्रारम्भ होता है जो गङ्गा के तटस्थ देशों में खीष्टीय शताब्दी के ५०० वर्ष पूर्व गौतम बुद्ध की सेवा में एकत्रित हुआ था। उनमें परस्पर एकता और उनके विचारों की सुन्दरता का मूल मन्त्र यह था कि उनके हृदयस्थल में यह बात भली भांति जम गई थी और उसी को वे स्पष्टतया एवम् दृढ़ता से प्रगट भी करते थे कि सांसारिक जीवन दुःखमय है और उससे छुटकारा पाने का मूल उपाय एक यह है कि मनुष्य संसार के सुखों का परित्याग करें।

बुद्ध देव और उनके अनुयायी भारत के बीच में घूम घूम कर ठीक उसी प्रकार घोषणा करने लगे जैसे कि पिछले वर्षों में वह दल जो ईसू सुसमाचार की घोषणा करता था कि "स्वर्गीय साम्राज्य आ गया," गैलिली देश में घूमा कि "ऐ संसार के जन अपने कानों को खोलो, त्राण का मार्ग मिल गया और ऐसा करते हुए वे स्वयम् उदासीन और मृत्यु के भय से भयभीत रहते थे।

संसार के इतिहास पर जब हम दृष्टिपात करते हैं तो देखते हैं कि जिस समय बुद्ध देव का आविर्भाव हुआ वह समय ऐसा था कि उसके पूर्व और उत्तर कोई ऐसी घटना घटित न हुई कि जिसका इतिहासों से कुछ पता लग सके।

प्रकृति की उन्हीं अलौकिक घटनाओं ने जिनके कारण भारत पाश्चिमात्य एवम् उत्तरीय शीतप्रधान देशों से आकाशवर्ती पार्वतीय दीवारों द्वारा विलग किया गया है, उन लोगों को भी जिन्होंने इस अत्यन्त प्रकृति प्यारी भूमि में पहिले पहल पांव रक्खा अन्य देशों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के लोगों से अनैक्य भी सिखाया। भारतीय लोगों ने जो एक प्रकार से संसार की सारी सभ्य जातियों में अद्वितीय हैं अपनी उन्नति आप ही आप अपने ही नियमों द्वारा की है और वे पश्चिम की सारी जातियों से, चाहे वे अपने सम्बन्ध की हों वा असम्बन्ध की और जिन्होंने आपस में एक दूसरे से सम्बन्ध रखने के कारण उन सारे ऐतिहासिक नाट्यों को किया, जिन्हें कि संयोग ने उनसे कराया, बहुत ही अलग रहे। भारत ने इस कार्य्य में भाग न लिया। भारतीय जातियों में, जिनके मध्य बुद्ध देव ने अपनी शिक्षाओं की घोषणा की, भारत के बाहर और कोई भूमि है इस बात का विचार उतना ही स्वल्प था जितना कि उन पिण्डों अर्थात् भूमियों के विषय में वे रखते थे जो कि असीम आकाश के बीच अन्य अन्य सूर्य्यों, अन्य अन्य चन्द्रों और अन्य अन्य स्वर्ग और नर्कों से मिल कर एक विलग ही संसार बनाती हैं।

अभी वह दिन आनेवाला ही था, जब कि एक सर्वदमन बाहु भारत और पश्चिमी देशों के बीच की सीमा भङ्ग कर देवे—अर्थात् बड़े सिकन्दर का बाहु। किन्तु भारत और यूनान के बीच मेल होने का समय उस समय से बहुत पीछे का समय है जब कि बौद्ध धर्म का जन्म हुआ। बुद्ध देव के स्वर्गारोहण और सिकन्दर (अलक्षेन्द्र) के भारतीय हल्लों के बीच कदाच् १६० वर्ष का अन्तर है। कौन सोच सकता है कि क्या होता यदि कुछ और पहिले भारतीय लोगों का जातीय जीवन विदेशी जीवन से मिल गया होता और तब ऐसी घटनाएं, जैसी कि मैसिडोनिया के वीर लोगों का भारत में आना और यूनानी सभ्यता का यहां पर प्रचार होना, घटित होतीं? भारत के पक्ष में अलक्षेन्द्र का आगमन बहुत देर में हुआ। जब भारत के आकाश में अलक्षेन्द्र का प्रादुर्भाव हुआ तब भारतीय लोग बहुत पहिले से घनिष्ट विलगता के कारण, अन्य जातियों के बीच अकेला रहना सीख गए थे और उनका शासन जीवन की ऐसी प्रणाली और सोचने के स्वभाव से होने लगा था जो भारत के बाहर की सारी जातियों से सम्पूर्णतः भिन्न था। गत काल का कोई सोच न होने से और न वर्तमान काल का ही जिसे कि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वे प्रेम वा घृणा में व्यवहार कर सकें और न उन्हें भविष्य की हो कुछ चिन्ता होने से कि जिसके निमित्त मनुष्य आशा कर के कार्य्य करते हैं, वे बैठे बैठे उदासीन और सगर्व उन बातों को जो सर्वकाल से परे हैं और उस अद्भुत शासन को जो इन सर्वकालीन देशों में प्रचलित है, सोचा करते थे। भारत के अत्यन्त ही प्रचुर शिक्षित समाज कृत किसी वस्तु में भारत के इस अद्भुत स्वभाव का लक्षण इस प्रकार लक्षित नहीं मिलता जैसा कि बौद्ध मत पर होता है।

किन्तु जितनी ही पूर्णरीति से ये बाहरी बन्धन इन दूरवर्ती देशों और संसार के बीच जहां लों कि हम लोग उससे परिचित हैं विलग हुए हमलोगों को ज्ञात होता है—(जहाँ तक कि वह जातियों के परस्पर आवागमन और मस्तिष्क-सम्बन्धी धन के अदल बदल से सम्बन्ध रखता है) उतना ही और स्पष्टतया हमलोग अन्य बन्धन को, जो उन वस्तुओं को जो बाह्य रीति से अलग अलग हुई हैं, आभ्यन्तरिक रीति से संगठित करते हैं, अर्थात् उन घटनाओं की ऐतिहासिक समानता- जो भिन्न भिन्न स्थानों में एक ही नियम द्वारा घटित होती हैं, देखने लगते हैं।

सर्वदा जब कभी कोई जाति बहुत काल तक मस्तिष्क जीवन की उन्नति पवित्रता और शान्ति के साथ करने के योग्य होती है, तब वह घटना घटित होती है जो प्राय: आत्मिक जीवन के साम्राज्य में ही दर्शित होने के योग्य होती है और जिसे हमलोग सारे सर्वोच्चत मानुषी स्वार्थों की गुरुता के केन्द्र का बाहर से भीतर की ओर घुसकना कहने का साहस कर सकते हैं। कोई प्राचीनतम् धर्म्म जो मनुष्य जाति को परमेश्वर के साथ आक्रमक एवम् रक्षक मैत्री करके येन केन प्रकारेण बल, समृद्धि, विजय और शत्रु के पराजय की आशा दिलाता था, कभी तो अादर्शनीय अंशों में और कभी बड़े बड़े उत्पातों के कारण एक नवीन प्रकार के विचारों से, जिसका सङ्केतवाक्य कुशल, विजय, राज्य, न रह के शान्ति, सुख, त्राण होगा, स्थान पाता है। तब बलिदान के जीव के रक्त से मनुष्य की पापी आत्मा को जो भय हो रहा हो, शान्ति नहीं मिलती है। तब नए नए मार्ग इस अभिप्राय के सिद्धार्थ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ढूंढे जाते हैं और मिलते हैं कि हृदय के बीच के शत्रुओं का दमन हो और मनुष्य पूर्ण, पवित्र और सुखी हो।

आभ्यन्तरिक जीवन की यह परिवर्तित दशा बाह्य रीति से एक प्रकार की आत्मा-सम्बन्धी सहयोगिता उत्पन्न करती है। पुराने धर्म्म में प्रकृति कुल, अल्ह और देश का जाति मात्र से धर्म सम्बन्धी ऐक्य उत्पन्न करती थी और इनके अन्तर्गत धर्म्म और पूजा का ऐक्य आपसे आप रहता था। अतएव, जो कोई उस जाति का होता या उसका स्वत्व और धर्म्म होता था कि वह सर्व साधारण के देवताओँ की पूजा करे। इस जाति के साथ उन के निकट हीं अन्य जातियां अपने देवताओँ के साथ रहती थीं प्रत्येक मनुष्य के लिये उसके जन्म की व्यवस्था के हिसाब से यह निर्णीत किया जाता था कि उसके निमित्त कौन कौन देवता ठीक होंगे और उसके मनोरथोँ को सफल करेंगे और यह बात प्राकृतिक आवश्यकता के कारण होती थी।

वे दशाएं जिनसे धार्म्मिक जीवन के पिछले आकार प्रकाशित होते हैं भिन्न हैं। वे ऐसे पुराने नहीं होते हैं जैसे कि वे लोग होते हैं जिनके मध्य उनका प्रादुर्भाव होता है। जब वे उत्पन्न होते हैं तब वे एक ऐसा धर्म्म पाते हैं जिसकी जड़ उस देश के लोगों में पहिले से जमी होती है और जिसका छाप उन लोगों के चाल चलन व्यवहार पर पड़ा होता है। अतएव इस नए धर्म के लोगों को अन्य धर्म्म के अनुयायी दल में से अनुगामियों को बटोरना पड़ता है। अब यह बात स्वाभाविक आवश्यकता की नहीं रह जाती किन्तु प्रत्येक जन की इच्छा पर निर्भर होती है कि अमुक जन इस रीति से त्राण पाने की आशा रखता है वा उस रीति से, नए विचार के नए नए आकार नया समाज और पवित्र लोगों का नया दल खड़ा होता है। शिक्षक और शिक्षित के सङ्कीर्ण सामाजिक वृत्त से अन्तत: एक दल उस मत के अनुसार भगवदाराधना करने हारों का उत्पन्न होता है। यह दल उस देश वालों का ही न रहकर एवम् उसी देश के विद्वत-मण्डली के भीतर समाप्त न

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होकर ऐसे ऐसे स्थान के लोगों को भी करतलगत कर लेता है जो अत्यन्त ही दूरवर्ती होते हैं।

यदि यह उचित होता कि उन घटनाओं में से एक घटना का नाम जिनसे इसका उदाहरण मिलता है इस संसार-मयी उलट फेर को जो जातियों के धर्म्म सम्बन्धी जीवन को आभ्यन्तरिक एवम् बाह्य रीति से बदल देती हैं, दे सकते तो हम लोग इसे "पुराने समाचार से नए समाचार के भगवत-शासन के नियम में पलटना" कहते।* धर्म्म के ऐसे स्वरूप के पलटने को, जिसका जोड़ा संसार के इतिहास में कहीं नहीं मिलता, अत्यन्त ही अद्भुत और अङ्कित नाम देने की प्रतिष्ठा सेमिटिक जाति को प्राप्त है।

इण्डो-जर्मनिक जातियों के मध्य पैलेसटाइन से ५०० वर्ष पूर्व के लगभग पहिले दो स्थानों में जो एक दूसरे से अत्यन्त ही विलग विलग लगभग एक ही समय में एकही प्रकार की घटनाएं संघटित हुईं।

प्रथम दशा में, हम लोग अथीनियन लोगों में जो सब से उन्मत्त था और जो मनुष्य के कर्म्म के आधार का सर्वांक अन्वेषणकर्ता था और जो हाट में तथा मदिरा के कटोरे पर अल्कीबाइडीज़ और प्लेटो को यह सिखाता था कि नेकी सिखाई जा सकती है और सीखी जा सकती है, उसे पाते हैं और दूसरी दशा में एक ऐसा मनुष्य आगे आता है जो भवरोगियों का सब से बड़ा वैद्य उस समय सन्त का अँचला गले में डाले भारत भूमि में घूमा। वह कौन था? सुकुलोत्पन्न गौतम, जिसने अपने को उन्नत, पवित्र, अत्यन्त ही चैतन्य पुकारा और जो देवताओं और मनुष्यों को शरीर के दुःखमय बन्दीगृह से निकाल के सर्वकालीन शान्ति की स्वतन्त्रता में ले जाने के मार्ग को दिखाने के लिये जगत में आया।

---

* इस ग्रन्थ में प्रायः खीष्ट और खीष्टीय मत से ही बुद्ध देव के मत को मिलाया है। कारण इसका यह है कि विद्वान लोग प्रायः यूरोप में खीष्ट धर्म से ही पूर्णतया परिचित हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अध्याय २।

पश्चिमीय और पूर्वीय भारत।

वह रङ्गभूमि जहां पर पूर्वापर बौद्ध धर्म की ऐतिहासिक घटनाएं हुईं वह गङ्गा की वादी है जो मुख्य भारतवर्ष है। उस समय जिसका वर्णन हम लोगों को करना है, गङ्गा की वादी ही में सारी आर्य्यजनों की राज्यप्रणालियां और सभ्यता आ गई थीं। इस देश के प्राकृतिक विभाग जो भारत के कुल-सम्बन्धी अल्हों (stock) के विभाग की अवस्थाओं से एवम् प्राचीन भारत की शिक्षा के विस्तार की अवस्थाओं से मिलते हैं, उन अवस्थाओं से भी मिलते हैं जो इस धर्म्म ने अपनी उन्नति के समय प्राप्त कीं।

सब से पूर्व हम लोगों का ध्यान गङ्गा की वादी के उत्तर पूर्वीय अर्द्ध भाग पर पड़ता है अर्थात् उन देशों पर जहां पर कि गङ्गा के निकटस्थ देश सिन्ध के निकटस्थ देशों से मिलते हैं और उन देशों पर भी जिनमें से होकर वे दोनों नदियां, जिन्हें गङ्गा और यमुना कहते हैं बहती हैं। यहीं पर, और बहुत काल तक यहीं पर ब्राह्मणों में जो शिक्षित थे बसते थे और यहीं पर बुद्ध के समय से सैंकड़ों वर्ष पहिले ब्राह्मण दार्शनिक लोगों की मण्डली में, यज्ञशाला में, तपोवन के एकान्त में वे गूढ़ विषय सोचे और कहे गए जिनमें वेद की प्राचीन प्राकृतिक वस्तुओं की पूजा के धर्म्म का त्राण की शिक्षा में पलटना प्रारम्भ हुआ और अन्त में उसने उन्नति प्राप्त की।

यह शिक्षा उत्तर-पश्चिम में बढ़ी और उसके साथ ही ये विचार गङ्गा के मार्ग को पकड़े पकड़े दक्षिण-पूर्व की ओर उन नसों में से होकर फैलते चले गए जिनमें भारत का जीवनस्वांस अत्यन्त दृढ़ता से चलता था। नए नए लोगों में जाके इस का आकार नया नया होता गया और जब अन्त में बुद्ध देव स्वयम् प्रगट हुए तब दो सब से बड़े साम्राज्य गङ्गा की वादी के दक्षिण-पूर्वीय आधे भाग में अर्थात् कोशलराज्य (अवध) और मगध (विहार) उनकी शिक्षा और परिश्रम के मुख्य रङ्गस्थल बने। इस प्रकार उन देश-भागों के बीच जिनमें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बुद्ध के बहुत पहिले, बौद्ध मत अपनी उन्नति की राह बना रहा था विस्तृत भूमिभाग पड़े हैं और वे भूमिभाग भी हैं जिनमें बुद्ध ने स्वयम् अपने पहिले अनुगामी एकत्र किए और इस रङ्गस्थल और नाट्यकारों के परिवर्तन ने अनेक प्रकार से नाटक की गति पर बड़ा प्रभाव डाला।

अब इस के उपरान्त हम लोग उन जातियों पर एक बार दृष्टि पात करना चाहते हैं जिनको हम लोग क्रम से कभी तो इस मत के उत्पादक और कभी उन्नति-कारक की नाईं पाते हैं।

भारत की आर्य्य जाति भारत के प्रायद्वीप में, जैसा कि सब लोग जानते हैं, उत्तर--पश्चिम से आई। इन देशों में आर्य्य जाति भारत की सब से प्राचीन स्मारक धर्म्म-सम्बन्धी कविताओं (रामायण और महाभारत) के निर्म्माण के बहुत पहिले आई। भारतीय जनों ने इन्हें इतना पूर्णतया भुला दिया था जितना कि उनके समान ही घटनाओं को यूनानी और इतालियन लोगों ने भुला दिया था। गौर वर्ण आर्य्य आगे बढ़े और उन्होंने अनार्य्य निवासियों के दुर्गों को, जो "काले" "नियम रहित" और 'ईश्वर-हीन" थे तोड़ डाला। शत्रुदल हटाए जाते थे, नाश किए जाते थे, वा आधीन कर लिए जाते थे। जब वेद के भजनों का निर्म्माण हुआ तब आर्य्य जातियां कदाच केवल धन और राज्य की खोज में और अकेले अग्रगामी की नाईं वहां तक पश्चिम में जहां पर कि सिन्धु और सम्भवतः पूर्व में वहां तक जहां पर कि गङ्गा समुद्र में अपने अथाह जल को शेष करती हैं पहुंच गई थीं। ये दोनों प्रान्त अकूत धनशाली थे, जिनमें आर्य्य जन अपने पशुवृन्द चराते थे और अपने देवताओं की पूजा, प्रार्थना करते और उन्हें बलिदान चढ़ाते थे।

ऐसा अनुमान होता है कि पहिले आनेवाली और अतएव सब से आगे के पूर्ववाली-(किम्बा आपस में एका किए हुए वा पृथक पृथक यह हम लोगों को ज्ञात नहीं है-) वे जातियां हैं जो आगे चल कर हम लोगों को गङ्गा और यमुना के सङ्गम के पूर्व गङ्गा के दोनों किनारों पर अङ्ग और मगध में, विदेह, काशी और कोशल में बसी हुई मिलती हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देश के भीतर आनेवालों की बड़ी बाढ़ की दूसरी लहर में आर्य्यों के नए नए झुण्ड आए जिनमें बहुत सी जातियां ऐसी थीं जो आपस में बहुत घनिष्ट सम्बन्ध रखती थीं और जिन्होंने अपने भाइयों से मस्तिष्क शक्ति में बढ़ जाने के कारण सब से प्राचीन भारतीय मस्तिष्क-सम्बन्धी बड़े स्मारक का, जो हम लोगों तक पहुंचा है अर्थात् वेदों का प्रादुर्भाव किया। हम लोग इन जातियों को, उस समय जिसका चित्र ऋग्वेद के भजन हम लोगों को देते हैं-दक्षिण के फाटक पर (भारतीय अन्तरीप) सिन्ध के मुहाने पर और पञ्जाब में पाते हैं। पीछे से वे दक्षिण- पूर्व की ओर हटा दी गईं और उन्होंने गङ्गा और यमुना की उपरी धाराओं के किनारे उन राज्यों को स्थापित किया, जो मनु के स्मृति में ब्रह्मर्षिदेश कहलाते हैं और जो पवित्रता और सत्यता के मानो घर ही हैं। मनुस्मृति में लिखा है कि "जो ब्राह्मण इस देश में उत्पन्न हुआ हो उससे संसार के सारे मनुष्य अपने जीवन का सद्व्यवहार सीखें"। भारत जाति, में कुरु और पाञ्चाल जातियों के नाम वैदिक शिक्षा की इस प्राचीन भूमि के लोगों में जो हम लोगों के नेत्रों के आगे स्पष्ट रीति से उन्नत मस्तिष्क सम्बन्धी सृष्टि में धनवान दीखती हैं अधिकतर प्रगट हैं। और साथ ही अन्य जातियां जो उनसे और पहिले देश में आई थीं उस समय तक अन्धकार में रहीं जब तक कि उनसे अपने सहयोगी जातियों की शिक्षा से भेट न हुई।

एक वैदिक-ग्रन्थ में जिसका नाम "शत-पथ ब्राह्मण" है एक अत्यन्त ही उपयोगी आख्यायिका है जिस में स्पष्ट रूप से यह दिखाया है कि वेद की शिक्षा और धर्म्म का प्रस्तार किस मार्ग से बढ़ा। अर्थात् उसमें लिखा है कि "प्रज्वलित अग्नि वैश्वानर जो यज्ञ की अग्नि है सरस्वती नदी से पूर्व की ओर जाती है जो वैदिक चक्र के प्राचीन पवित्र जन्मस्थान से परे है। उसके मार्ग में नदियां पड़ती हैं किन्तु अग्नि सब नदियों के पार भी जलती है और उसके पीछे पीछे राजा माथव और ब्राह्मण गोतम चलते हैं। इस प्रकार वे सदानीर नामक नदी के तट पर आए, जो उत्तर के हिममय पर्वतों से निकलती है। अग्नि इसके पार नहीं गई। ब्राह्मण इसके पार पहिले

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समय में नहीं गए क्योंकि अग्नि वैश्वानर उसके पार नहीं जली थी। किन्तु अब बहुत से ब्राह्मण पूर्व में उसके पार बसते हैं। पूर्व में यह स्थल बड़ा ही बुरा था और यह दलदली भूमि थी, क्योंकि अग्नि वैश्वानर ने इसे निवास-योग्य नहीं बनाया था। किन्तु अब ब्राह्मणों ने इसे बहुत अच्छी भूमि बना दिया, क्योंकि उन्होंने उसे अपने प्रसाद से आनन्द योग्य बना दिया"। भारत में बुरी भूमि संसार के और देशों की नाईं खेतिहरों द्वारा, जो खोदते और हल चलाते हैं अच्छी भूमि नहीं बनाई जाती है, किन्तु यज्ञकारी ब्राह्मणों द्वारा। राजा माथव सदानीर के पूर्व में ठहरे, जो बुरी भूमि थी, जिसे कि अग्नि ने जाने के योग्य नहीं बनाया था। उसी के सन्तान विदेह के शासन-कर्ता हुए। पूर्वीय जातियों को पश्चिमीय जातियां जिनके बीच कि अग्नि वैश्वानर प्राचीन काल से ही वर्तमान थी, जैसा विलग समझती थीं वह इस आख्यायिका से स्पष्ट है। बौद्ध धर्म के प्रस्तार के प्रारम्भ में जो कोई अन्वेषण करने लगेगा उसको स्मरण रखना होगा कि सब से प्राचीन बौद्ध समाज का घर उस भूमि भाग में वा उस भूमि भाग की सीमा के निकट था, जिसमें अग्नि वैश्वानर अपने ज्वलन्त मार्ग में पूर्व जाती बेर नहीं गई थी।

हम लोगों की शक्ति के बाहर यह बात है कि हम लोग किसी एक क्रम से-तिथि चाहे वर्ष के हिसाब से या शताब्दियों के हिसाब से-इस विजयी युद्ध-यात्रा को दे सकें जिसमें आर्य्य और वेद की शिक्षा ने गङ्गा की वादी भर में हल्ला मचा दिया। किन्तु हम लोग इससे अधिक उपयोगी बात कर सकते हैं। वह यह है कि हम लोग वैदिक साहित्य की तहों से-जो एक दूसरे के ऊपर पड़ी हैं इस बात का कुछ ध्यान बांध सकते हैं कि किस प्रकार एक नए निवास-स्थान अर्थात् भारतीय प्रकृति और भारतीय जलवायु के प्रभाव से आर्य्य लोगों के जीवन में भेद पड़ गया-अर्थात् उन लोगों में जो वैदिक लोगों में सब से अग्रगण्य थे अर्थात् उत्तर-पश्चिम के आर्य्य लोग-और इस बात का भी कि कैसे सर्व साधारण के मस्तिष्क ने उस उदासीनता और रोग का छाप ग्रहण कर लिया जो प्रायः के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अनेक परिवर्तन होने पर भी बना रहा और उस समय तक बना रहेगा जब तक कि हिन्दुस्तान में कोई जाति रहेगी।

अत्यन्त ही ग्रीष्मप्रधान जलार्द्र गंगा की घाटी में जिसमें प्रकृति ने अपनी सारी उदारता दिखाई है वे लोग जो अपने यौवन में मद-मस्त थे वहां उत्तर से आने पर युवा और बलवान न रह सके। ग्रीष्म-प्रधान देशों के उद्भिद की नाईं मनुष्य और जाति दोनों वहां पर शीघ्र ही परिपक्वता को पहुंच जाते हैं और फिर उनको शरीर से और मस्तिष्क से नाश हो जाते देर नहीं लगती। समुद्र की बल-कारक वायु और परिष्कृत जातीय बल भारतीय जनों के जीवन में फलीभूत नहीं होता। और लोगों से अधिक भारतीय जन, यौव-नावस्था ही में उससे अलग हो जाते हैं जो मुख्यतः एक जाति को युवा और बलवान रखता है अर्थात् जन्मभूमि और उसके राज नियम और गृहों की रक्षा के लिये युद्ध और श्रम से, भारत में स्वत-न्त्रता का विचार अपने सारे चैतन्यकारी एवम् अचैतन्यकारी अनु-यायी शक्तियों के साथ अज्ञात और अज्ञेय रहा है। मनुष्य की स्वतन्त्र बुद्धि ब्रह्मा की प्रणाली का अर्थात् जाति के प्राकृतिक नियम का जिसने कि प्रजावर्ग को राजा के आधीन और राजा को पुरो-हित की आधीनी में दे दिया है विरोध नहीं कर सकती है। यूनानी लोग यह देख कर भले ही आश्चर्य्य करें कि भारत में खेतिः हर दो परस्पर लड़ती हुई सेनाओं के बीच अपना खेत जोतने को बिना किसी चिन्ता के चला जाता है। "वह पवित्र और अनुल्लङ्घ-नीय है, क्योंकि वह शत्रु और मित्र दोनों का समान रूप से शुभ-कारी है"। किन्तु उस बात में जिसको यूनानी भारतीय जातीय ज़ीवन का सुन्दर और विचारसिद्ध आकार बताते हैं उसमें केवल कोमल धीरता और सहनशीलता के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं है। जब हैनिबल रोम में आया, तब रोम के किसानों ने अपना खेत बोना छोड़ दिया। भारतीय जन सब से उन्नत स्वार्थों और लक्षों से, जिन पर सारे पुष्ट जातीय जीवन का आधार होता है सर्वथा विमुख होते हैं। उनकी इच्छा और उनके कार्य्य विचारों के नीचे दब जाते हैं। किन्तु जब एक बार आभ्यन्तरिक समता में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विभेद पड़ जाता है, और आत्मा और भौतिक पदार्थ से सम्बन्ध टूट जाता है तब विचार को यह सामर्थ्य नहीं रह जाती है कि वह जो वस्तु गुणदायक है उसका गुणकारी रीति से व्यवहार कर सके।

प्रत्येक वास्तविक वस्तु का वास्तविक आकार भारतवासियों को उसके किनारे के प्रकाश के आगे जो उस के ध्यान में भर उठता है तुच्छ जँचता है। और उसके विचार के आकार पूर्वीय देशों के बढ़ाव अनुसार बढ़ते जाते हैं और भयङ्कर एवम् कुरूप होते जाते हैं और अन्त में भयावह शक्ति से अपने बनाने वाले के विरुद्ध फिरते हैं। उसके लिये वास्तविक संसार उसके मिथ्या विचारों की मूर्तियों से छिपा हुआ अज्ञात बना रहता है और वह न उस पर विश्वास करने के योग्य होता है और न उस पर उसका कुछ वश ही होता है। जीवन और उसके सुख इस संसार में अत्यन्त ही अधिक परलोक की चिन्ता के भार के नीचे टूट जाते हैं।

परलोक का प्रगट आकार इस लोक के बीच ब्राह्मणों की जाति है, जिन को ज्ञान और बल है जो मनुष्य के लिये देवताओं के पास जाने के मार्ग को खोल और बन्द कर सकते हैं और परलोक में उसके लिये शत्रु और मित्र बना सकते हैं। उन शक्तियों ने जो राजकीय जीवन में उन्नति पाने से विलग रक्खी गईं अकेले ब्राह्मणों की दशा में सृष्टिकारी अवसर पाया—किन्तु किसके लिये सृष्टि करने को? लीकरगस वा थेमिस्टोक्लीज़ के स्थान पर जिनको भाग्य ने भारतवासियों को देने से नाहीं किया, उनको आरुनीस और याज्ञवल्क्य मिले, जो यह जानते थे कि किस प्रकार वीरता से अग्नि-यज्ञ और सोम-यज्ञ की सूक्ष्मता को चलाना और उन दावों को फैलाना चाहिये जो उन जातियों के विरुद्ध वे लोग चलाते हैं जो परलोक के साम्राज्य के अगुआ हैं।

कोई मनुष्य उस मार्ग को, जो भारतीय विचार ने लिया बिना उन दार्शनिकों के दल के चित्र को, जिन्हें यूनानी ब्राह्मण कहते हैं उसके दोष और गुण के साथ ध्यान में रक्खे, समझ नहीं सकता और सब से अधिक इस बात को स्मरण रखना चाहिए कि न्यून से न्यून उस समय में वह वस्तु, जिसने पिछले समय के एवम्

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बौद्ध मत के मस्तिष्क-सम्बन्धी यत्न के निर्णय-कारी मुख्य विचारों को आकार दिया वह पुरोहितों की जाति थी और यह जाति अहङ्कारी और लोभी जाति ही न थी, किन्तु कुछ और भी थी-अर्थात् इसी आकार में भारतीय लोगों की दुर्बुद्धि ने आवश्यकता वश प्रागट्य पाया।

ब्राह्मणों के दिन शान्तिमय साधारण रीति से बीतते थे। प्रत्येक पद पर, वे उन सङ्कीर्ण, बाधक सीमाओं से परिबद्ध किए जाते थे, जिनके लिये उनका वह पवित्र पद जिसका वह प्रतिनिधन करते थे, उनके आन्तरिक और बाह्य जीवन को वाध्य था। वे अपना यौवन काल पवित्र ग्रन्थों के सुनने और पढ़ने में बिताते थे, क्योंकि वास्तविक ब्राह्मण वही हैं जो श्रुत हैं। और यदि उसको श्रुत होने की ख्याति प्राप्त हो गई, तो वह अपनी यौवनावस्था गांव में वा पवित्र मण्डल के किसी तपोवन के एकान्त में, जो केवल शिक्षा प्रदान के निमित्त अनुकूल स्थान समझा जाता था गुप्त शिष्य को पढ़ाने में बिताता था। किम्वा, वह यज्ञशाला में अपने लिये और अन्यों के लिये यज्ञ करता जिसमें अनगिनत सूक्ष्म विधान होने के कारण अत्यन्त ही ध्यान रखना होता था और बड़ा परिश्रम करना पड़ता था। और नहीं तो वह ब्रह्मयज्ञ करता अर्थात् वेद से ईश्वर की स्तुति नित्य प्रति करता, यज्ञ करने के बदले राजा बाबू उस पर धन की वर्षा चाहे भले ही करें, किन्तु वह अपना जीवन बड़ी योग्यता से खेतों में से बाली बटोर कर वा बिना मांगे पाई भिक्षा से वा ऐसे दान से, जो किसी ने कृपा पूर्वक दे दिया हो बिताता था। तो भी, चाहे वह भिक्षा मांग ही कर खावे वह अपने को सांसारिक शासकों और प्रवर्गों से ऊपर उन लोगों से भिन्न वस्तु से बना समझता था। ब्राह्मण लोग अपने को देवता पुकारते थे और आकाश के देवताओं के साथ सन्धि होने से ये संसार के देवता (अर्थात् भूदेव) को देवताओं के अस्त्र शस्त्र से सुसज्जित मानते थे अर्थात् आत्मिक शक्ति से, जिसके आगे सारे सांसारिक अस्त्र शस्त्र भग्न हो जाते हैं। वेद की एक ऋचा में लिखा है, "ब्राह्मणों के पास तीक्ष्ण बाण होते हैं जिनके चलाने में वे कभी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

असफलीभूत नहीं होते"। "वे अपने शत्रुओं पर अपने पवित्र उत्साह और क्रोध से आक्रमण करते हैं। वे उन को दूर ही से बंध देते हैं सम्राट, जिस का अभिषेक वे अपनी प्रजाओं पर शासन करने के लिये करते हैं उनका सम्राट नहीं होता। पुरोहित राजगद्दी के समय जब शासक को उसकी प्रजाओं के आगे पेश करता है तो कहता है "हे प्रजागण यही तुम्हारा सम्राट है। किन्तु हम ब्राह्मणों का नृपति सोमदेव है।" ब्राह्मण लोग राज्य नियमों के बाहर खड़े होकर एक प्रकार के बड़े ऐक्य के बन्धन में अपने को बांधते हैं और इस ऐक्य का वृत्त उन सब लोगों को अपने अन्तर्गत कर लेता है जो वेदों की शिक्षाओं को मानते हैं। इस ऐक्य के सभ्य लोग ही उन बालकों के शिक्षक होते हैं जो अब सयाने होकर यौवनावस्था में पहुंचनेवाले हैं। किसी आर्य्यवंश का भारतीय बालक यदि समुचित वय में किसी ब्राह्मण शिक्षक के पास लाकर उससे यज्ञोपवीत धारण न कराया जावे जो कि आत्मा-सम्बन्धी द्विजन्म का एक मात्र चिन्ह है एवम् जिससे मनुष्य वेदाध्ययन का अधिकारी होता है तो वह कुजाति और वर्णसङ्कर के समान समझा जाता है। उपनयन संस्कार करते समय गुरुदेव कहते हैं कि हे पुत्र "मैं तेरे हृदय को अपने आधीन करता हूं अपने विचारों के अनुसार होने दे और अपनी सारी अन्तरात्मा से मेरे वचनों को सुन के आनन्दित हो।" बहुत वर्षों तक, जब तक कि वह गुरुजी के घर पर रह के शिक्षा पाता है वह उनसे डर कर उनकी आज्ञा मानता हुआ चलता है। ब्राह्मण गुरु का घर वर्तमान राज्य-नियम में जैसे सेना होती है एक बड़ी पाठशाला है जिसमें प्रत्येक मनुष्य अपने जीवन का एक भाग बिताता है कि वह उससे उस समय निकले जब कि हृदय में यह बात अमिट अक्षरों में खचित हो जावे कि उसका धर्म्म कुछ ब्राह्मण की ओर भी है।

इस प्रकार के दार्शनिकों के जीवन के आकार के बलवान और निबल होने पर ही उनके विचारों के बली और निबल होने का मानों अङ्कुर निर्भर है। मानों वे स्वकृत संसार में, वास्तविक जीवन के मनोविनोदकारी वायु-मण्डल से विलग कर दिए गए थे जहां

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पर उनके असीम आत्म-पौरुष एवम् आत्म-सर्वज्ञता के विश्वास को न्यून करने के लिये कोई वस्तु समर्थ न थी और जिसके सामने अन्यों का जीवन एवम् जीवनव्यवहार तुच्छ और घृणित अवश्य लगता रहा होगा। और इसीसे उनके विचारों में भी संसार परित्याग की वीर घोषणा प्रगट होती है और ऐसे लोगों ने जो उन वस्तुओं से परे, जो दिखाई देती हैं, शून्य और अनन्त देशों तक चढ़ते हैं कि जिसमें निराधार बातों को बिना प्रयोजन निर्णय करें-जो बातें कि उन लोगों के अतिरिक्त जो कि स्थूल पदार्थों से तनिक भी स्वाद नहीं ले सकते कोई भी नहीं सोच सकता, विचार की एक ऐसी प्रणाली निकाली है जिसमें बड़ी और गूढ़ बातों के साथ साथ बालकों सी व्यर्थ बातें ऐसे आश्चर्य्य रूप से मिल गई हैं कि उसका जोड़ा मनुष्य मात्र के आत्मा और संसार के समझने के यत्न के इतिहास में मिल नहीं सकता।

अध्याय ३।

वैराग्य-विरागियों के पंथ।

पाठक! आप लोगों ने बुद्ध देव के पूर्व भारत की दशा कैसी थी यह देखा-ब्राह्मणों का जीवन एवम् उनका अधिकार प्रजावर्ग पर कैसा था यह आप इस अध्याय के पूर्व के अध्याय में पढ़ चुके-रही एक बात सो आप लोगों ने अब तक नहीं जानी-वह यह है कि भारत की प्रजाओं में बुद्ध देव के पूर्व मत किस प्रकार का हो गया था कि जिसके कारण बौद्ध धर्म के फैलने में देर न लगी। उसके जताने के निमित्त हम को अभी इस अध्याय के पूर्व दो एक अध्याय और देने होते, पर ऐसा करने से ग्रन्थ का आकार बहुत बढ़ जाता, जिससे पढ़नेवाले एवम् मुद्रण-करने हारे दोनों ही उकता जाते। अतएव उन दो अध्यायों की बातें संक्षेप में इसी अध्याय में दे दी हैं। सुचतुर पाठकों को इसी को विचार से पढ़ने से बौद्ध धर्म्म के आने के लिये पथ बनाने हारे उसके पूर्व के मतों का एवम् यहां वालों के जीवन का विधिवत् पता लग जायगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उन्हीं विचारों ने जिनके अनुसार आत्मन् के सामने भौतिक संसार अनस्थायी और व्यर्थ ठहरा एक ही चोट में सारे जीवन के उन व्यवहारों को, जो साधारण मनुष्य को साधारण दृष्टि में उपयोगी जान पड़ते हैं, व्यर्थ कर दिया। लोगों ने जान लिया कि यज्ञ और बाहरी आचार आत्मा को परमात्मा तक नहीं पहुंचा सकते और न उसको संसार-व्यापी आत्मा से मिला सकते हैं। इनके लिये मनुष्य को सारी सांसारिक वस्तुओं से दूर रहना होगा, प्रीति और घृणा, आशा और भय से भागना होगा, मनुष्य को ऐसा जीवन व्यतीत करना होगा कि मानों वह शरीर धारण ही नहीं किए था। ऐसा कहा जाता है कि "ब्राह्मण लोग, बुद्धि को खोजते हैं सांसारिक ऐश्वर्य्य को नहीं, वे कहते हैं कि हम लोगों को, जिन की आत्मा परमात्मा में विहार करती है, सन्तान ले के क्या करना है? वे बाल बच्चों की इच्छा छोड़ देते हैं, धन के लिये परिश्रम नहीं करते, सांसारिक प्रभुता नहीं मांगते और भिक्षुक की नाई जीवन व्यतीत करते हैं"।

बहुतेरे इससे न्यून ही आत्मस्वार्थ का परित्याग करते हैं। इसमें सन्देह नहीं कि वे अपने घर को छोड़ देतें हैं, और अपना सारा माल मता और अपने नियमित जीवन की प्रणाली के सुख और चैन को तिलाञ्जलि दे देते हैं तोभी वे गृहविहीन होकर संसार में परिभ्रमण नहीं करते हैं। वे अपने निमित्त जङ्गल में अर्द्ध-परिवेष्टित झोपड़े बना कर उसी में अकेले वा सस्त्रीक अरण्य के कन्द मूलों को खाकर जीवन व्यतीत करते हैं। वहां ही पर उनकी पवित्र अग्नि भी रहती है और वे, यदि सब नहीं, तो कुछ अंश अपने वैदिक यज्ञ धर्म्म का परिपालन करते ही रहते हैं।

ऐसा सम्भव है कि आदिम काल से कुछ लोग ऐसे थे-विशेष कर ब्राह्मण ही लोग-जो भिक्षुक वा अरण्यवासी तपस्वी होकर सांसारिक चिन्ताओं से दूर रहकर अपना त्राण चाहते थे। किन्तु प्रारम्भिक काल में केवल ब्राह्मणों ही का स्वत्व उन आत्मिक धनों के लिये, जिनके निमित्त मनुष्य अपने सारे सांसारिक धनों का परित्याग कर देते थे, नहीं माना जाता था। इस बात का पता नहीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लगता कि बुद्ध के समय के पूर्व वा ख़ास बुद्ध के समय में ही ब्राह्मणों ने कभी इस बात का दावा किया हो वा उन्हें इस बात की आवश्यकता पड़ी हो कि राजा वा प्रजा को वा ब्राह्मण को स्त्री और बालकों के छोड़ने के लिये धन धान्य का परित्याग इस निमित्त करने के लिये कि उसके द्वारा भिक्षुक यती होकर अकिञ्चनता और पवित्रता के जीवन में आत्मा का परित्राण खोजे, अस्त्र शस्त्रों द्वारा किसी पर विजय प्राप्त करनी पड़े। ब्राह्मणों के साथ साथ जो प्राचीन दर्शन-सम्बन्धी प्रश्नोत्तरों में परमात्मा के गूढ़ तत्वों के विषय मिलते हैं, अनेक स्थानों में हम लोगों को राजा लोग भी मिलते हैं, यहां लों कि ब्रह्मज्ञानी स्त्रियों की भी उन लोगों की मण्डली में कमी नहीं है । मनुष्य लोग क्यों उन लोगों को रोकने की इच्छा करेंगे, जिनके वार्तालाप त्राण के विषय में वे ध्यान से सुनते और अनुमोदन करते थे ।

इस वैदिक वैराग्य का यह अत्यन्त ही प्रगट चिन्ह जान पड़ता है कि इसमें लोग बड़ी दृढ़ता से केवल उन्हीं लोगों को जाने देते थे, जो इस के अधिकारी होते थे । लोग समझते थे कि इस वैराग्य का ज्ञान ऐसा है कि जिसको केवल थोड़े से चुने लोगों ही को जानना चाहिए सारी जाति के मध्य इस का प्रचार वाञ्छनीय नहीं है । मानों यह ज्ञान एक प्रकार का सब ज्ञानों में से चुना हुआ ज्ञान होता था, जो केवल चुने हुए लोगों ही के योग्य होता था। पिता इसे अपने पुत्र को सिखा देता था और गुरु अपने शिष्य को, किन्तु आत्मन में विश्वास करने वालों के मध्य में वह उत्साह तनिक भी नहीं था, जिसके अनुसार लोग ब्रह्मज्ञान के, जो स्वयम् प्राप्त है सारे संसार में प्रचार करने की इच्छा करते हैं ।

जिन द्वारों से हम लोगों को इन बातों का पता मिलता है वे इतने अपरिपूर्ण हैं कि हम लोग जब कि अन्य-स्थल में उल्लिखित घटनाओं की निर्विवाद बातों पर आधार रखते हैं इस बात के योग्य नहीं हो सकते कि भारतीय वैराग्य की और उन्नति के चिन्हों की प्रसिद्ध प्रसिद्ध अवस्थाओं का भी पता लगा सकें। यहां पर बस अनुमान की सहायता हम लोगों को लेनी पड़ती है, जो वहां पर भी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आवश्यक है जहां पर कि वह लग भग पूर्ण सचाई के साथ उन विषयों को बतलाता है, जो अवश्य घटित हुए होंगे। वह उन स्थलों पर तनिक भी काम नहीं देता जहां पर कि हम लोग इस वैराग्य के निकलने के उस चित्र को खोजने लगते हैं जिससे कि इसमें बल प्रगट होवे।

दो बातों ने जो प्रगट रीति से परस्पर घनिष्ट सम्बन्ध रखती हैं इस वैराग्य के आरम्भ से उस दशा तक जिसमें कि बुद्ध देव ने इसे पाया इसकी उन्नति में बड़ा भाग अवश्य लिया होगा, एक तो यह कि सन्यासियों अर्थात् संसार में रह कर वैराग्य ग्रहण करने वाले और दूसरे अरण्यवासी यतियों का मिलकर एक प्रकार की सुसज्जित भयवद्गी बनाना और उसके साथ ही उनमें से, बहुतों का वा उनमें से प्रधान अधिकार रखने वालों का वेद के अधिकार से युक्त हो जाना।

ऐसा जान पड़ता है कि इन दोनों बड़ी घटनाओं पर भौगोलिक स्थान परिवर्तन का बड़ा प्रभाव पड़ा होगा। हम लोगों ने इस ग्रन्थ के आदि में गङ्गा की घाटी के पश्चिमीय और पूर्वीय भागों में शिक्षा के भेद के विषय में उल्लेख किया है। वेद की पवित्र भूमि जहां पर वैदिक काव्य और वैदिक विचार की उन्नति हुई पश्चिम में पड़ी हुई है, पूर्वीय भाग ने मस्तिष्क की अधिकतर उन्नति-प्राप्त पश्चिमीय भाग से वेद और ब्राह्मणप्रणाली सीखी। किन्तु यह पश्चिमीय वस्तु पूर्ण रीति से पूर्वीय लोगों में मिल न सकी। पूर्व की वायु ही विलग है, वहां की भाषा की नाईं जिसमें पश्चिम के कर्ण-कटु "र" की अपेक्षा कर्ण-प्रिय 'ल' का व्यवहार बहुत होता है। इन देशों में ब्राह्मण न्यून और राजा और साधारण प्रजा अधिक माननीय होते हैं। वह उद्योग वा कार्रवाई जो पश्चिम में प्रारम्भ हुई यहां आकर उस विचार-सिद्ध गूढ़ विषय से बहुत कुछ रहित हो गई जो पश्चिम में उसमें था, सम्भवतः उसमें से कुछ वह दृढ़ विस्तार और स्पष्ट विचारों का क्रम भी जाता रहा। वे प्रश्न, जो पश्चिम में उन्हीं लोगों के मस्तिष्क में मनन किए जाते थे, जो मस्तिष्क-सम्बन्धी साम्राज्य के प्रधान पुरुष थे पूर्व में आकर साधारण लोगों के विचार करने के प्रश्न हो गए। पूर्व में ब्राह्मणों के विचार-सिद्ध

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सर्वव्यापी गुप्त परमात्मा के विषय में लोग अत्यन्त ही स्वल्प विचार करने लगे और इसी कारण से प्रत्येक योनी के दुःख का, आत्मीय पाप पुण्य के पलटे का आत्मा की शुद्धता का और त्राण का विचार स्पष्ट रूप से आगे की ओर बढ़ा।

इस बात का ठीक पता नहीं लगता कि प्रजावर्ग के मस्तिष्क को विशेष उत्साह और बल के साथ ऐसे प्रश्नों की ओर फेरने के लिये कोई राजकीय उत्पात वा सामाजिक हेर फेर भी उस समय कार्य्य में परिणत हुआ था या नहीं। ख्रीष्टीय धर्म्म ने अपना साम्राज्य अत्यन्त ही कठिन दुःख के समय में और संसार के नष्ट होने के बीच में स्थापित किया। यदि *पूर्वीय लोगों का दुःख उनके सूक्ष्म सूक्ष्म राज्यों का विलग विलग नृपति-अधिकारी शासन था, तो यहां वाले किसी दूसरे प्रकार की राज्य-प्रणाली को जानते ही न थे और न इसकी उन्हें कुछ चिन्ता ही थी। दरिद्रता (दरिद्र लोग) और धन (धनिक लोग) के बीच, वीर (राजा के सहकारी कुलोत्पन्न योद्धे) और खेतिहर के बीच बड़ा अन्तर था और प्राकृतिक आवश्यकता के कारण इस देश में ऐसा ही सदा से चला आता है और तिसपर भी धनहीन और दुखी लोगों ही ने केवल वा विशेष करके संसार के बोझे से सन्त का अंचला गले में डाल के त्राण नहीं खोजा।

ऐसी रीति है कि कभी कभी युग की अधोगति के विरुद्ध मनुष्य के असीम असन्तोष के विरुद्ध प्रजावर्ग ऐसी बड़ी चिल्लाहट मचाते हैं कि उससे छुटकारा केवल मृत्यु ही देती है, जब कि धनी और दरिद्र दोनों बराबर हो जाते हैं। बौद्धों के एक सूत्र में लिखा है कि "मैं देखता हूं कि धनी लोग उस धन में से जो वे प्राप्त करते हैं किसी को देते नहीं। वे बड़े उत्साह से धन एकत्रित करते जाते हैं और आनन्द और सुख मचाते हैं। सम्राट् चाहे वह संसार भर का राज्य जीते हो और चाहे वह समुद्र तक शासन करता हो तोभी वह उन देशों के राज्य की लालच, जो समुद्र के पार हैं असन्तोष से करता है। सम्राट् और बहुत से अन्य दूसरे लोग अपनी इच्छाओं के बिना पुर्ण हुए मृत्यु के कवर हो जाते हैं। न तो सम्बन्धी,

* इस ग्रन्थ में पूर्वीय देशों से अर्थ भारतवर्ष का है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

न तो मित्र, और न जान पहिचान वाले मरते हुए मनुष्य को बचा सकते हैं। उत्तराधिकारी लोग उसका माल मता ले लेते हैं। किन्तु उसी को अपने कर्म्मों का फल मिलता है। उसके साथ कोई धन नहीं जाता है; न स्त्री, न पुत्र, न रुपया, न पैसा और न साम्राज्य साथ जाता है।" और दूसरे सूत्र में यह लिखा है कि "वे संम्राट् लोग जो देशों का शासन करते हैं रुपए पैसे में धनी होने पर भी आपस में एक दूसरे के साथ ईर्षा करते हैं और कञ्चन और कामिनी के भोग विलास से उनको कभी सन्तोष नहीं होता। यदि ये लोग इस प्रकार अशान्त रीति से व्यवहार करते हैं और अल्पकालिक भव धारा में लोभ लालच और इन्द्रियों के सुख विलास की इच्छा से बहे चले जाते हैं तो कौन संसार में शान्ति से चल सकता है?"

ऐसे ऐसे पदसमूहों से जो कि सर्वदा सब देशों में सद्व्यवहार सिखाने वालों के बीच प्रचलित रहते हैं हम लोग यह भावार्थ नहीं निकाल सकते हैं कि उस समय ऐसी दशा प्रचलित थी, जैसी कि रोम में साम्राज्य के प्रारम्भिक दिनों के कठोर समय में थी। भारतीय लोगों के लिये, जीवन के उस चित्र पर, जो उसके चारों ओर था भयभीत होने के लिये, एवम् उस चित्र में मृत्यु के लक्षणों पर ध्यान दिलाने के लिये ऐसे समय की आवश्यकता न थी। जीवन की ऐसी दशा के व्यर्थ होने के कारण, जिनको वे परिश्रम और यत्न के योग्य अभिप्रायों के परिश्रम और यत्न से चिरस्थायिता नहीं दे सकते थे, मनुष्य संसार के परित्याग में आत्मा की शान्ति खोजने के लिये भागते हैं। धनवान और उत्तम-कुलोद्भव जन (सम्मानित पद पात्र) दीन और लघुपद-परम जनों से अधिकतर युवक जन जीवन से उसके सांसारिक व्यवहार के प्रारम्भ होने के पूर्व थकित होकर वृद्ध जनों से अधिकतर, क्योंकि उनको जीवन से लाभ प्राप्त करने की और आशा शेष ही नहीं रह जाती, स्त्रीजन और युवतीजन अपनी गृहस्थी त्याग कर संत और संतिनी का अंचला गले में डाल लेते हैं। सर्वत्र हम लोग उस झगड़े के चित्र को देखते हैं, जो नित्य प्रति उस समय में जो ऐसा करना चाहते थे और उनके पिता माता स्त्री और लड़कों के बीच उन लोगों को संसार परित्याग से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रोकने के लिये होता है। उन लोगों के अजेय संकल्प के कार्य्यों की कहानियां, जो सारे विरोध के रहते भी, उस बन्धन को तोड़ने में समर्थ हुए हैं जो उन्हें गृहस्थी में बांधता था, वर्णित हुई हैं।

शीघ्र ही ऐसे शिक्षक प्रगट हो गए जो अनेक स्थानों में वेद बिना ही एक नया पंथ त्राण का, जो सर्वतोभाव सत्य था जान लेने में सफलीभूत हुए थे और ऐसे शिक्षकों के समीप ऐसे सीखने वाले आने लगे जो उनके साथ संसार में परिभ्रमण करते समय भी योग देते थे। हृदय के विचारों की सर्वतोभाव पूर्ण स्वतन्त्रता की रक्षा में, जो भारत में सदैव से वर्तमान है, नए नए धर्म्म पन्थ बढ़ते ही चले गए जैसे निगन्थ, अर्थात् जो बन्धन से मुक्त है * और अश्लेष अर्थात् निहङ्ग लोग और ऐसे ही अनेक नामों के सन्त और सन्तनियों के पंथ खड़े हो गए थे, जिसके मध्य में बौद्ध धर्म्म अपने जीवन के आरम्भ में खड़ा हुआ।

वह नाम जो सर्व साधारण ने इन लोगों को दिया जो स्वकृत धर्म्म सम्बन्धी प्रतिष्ठा के थे। ब्राह्मणों के विरुद्ध जिनकी मर्यादा उनके जन्म (कुल) पर निर्भर थी, श्रामण वा यती था। अतएव बुद्ध को लोग **श्रामण गोतम** पुकारते थे–सर्व साधारण उसके अनुयायियों को "श्रामण, जो शाक्य कुलोद्भव पुत्र के पीछे चलते हैं" पुकारते थे। यह सम्भव है कि एक के उपरान्त दूसरे प्राचीन श्रामण पंथ ने अपने शिक्षक को धर्म्म–सम्बन्धी अधिकार रखने वालों के गुण वाचक नाम भी दिए हों–ठीक उसी के अनुसार जैसा कि बौद्धों ने अपने धर्म्म के चलाने वाले के सम्बन्ध में पीछे से व्यवहार किया। शाक्य जाति का मनुष्य ही अकेला और कदाचित् पहिला मनुष्य ऐसा नहीं है जो भारत में "बुद्ध" वा "जिन" के नाम की प्रतिष्ठा प्राप्त कर चुका है। वह केवल संसार के अनेक त्राण देने वाले और देवताओं

---

* यह पंथ, जिसका प्रवर्तक बुद्ध के समकालीन लोगों में से एक था, जैन के नाम से अबलों वर्तमान है–विशेष करके भारत के दक्षिणीय और पश्चिमीय भागों में। उस का वह चित्र, जिसको हम लोग उसके अन्य प्रकार नवीन, धर्म्म सम्बन्धी साहित्य में देखते हैं अपनी अनेक मुख्य बातों में बौद्ध–धर्म्म के समान ही है। एक अन्तर दोनों में यह है कि निगन्थ लोगों ने तपस्या को बड़ी मर्यादा दी है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और मनुष्यों के शिक्षकों में से एक था, जो उस समय में देश के भीतर सन्तों का अँचला गले में डाले चारों ओर घूम घूम कर ज्ञान की वक्तृता करते थे।

ज्ञान के मार्ग जिससे ये आचार्य्य लोग अपने विश्वासियों को मुक्ति की खोज में चलाते थे सहस्रों थे। हम लोगों को जिनके पास इस विषय पर बौद्धों और जैनों के पक्षपात से रहित ब्योरे कठिनता से प्रस्तुत हैं, यह अवश्य कहना होगा कि उनके गूढ़ विचार घनी रीति से मूर्खतामय एवम् कठोर अहङ्कार से परिवेष्टित हैं। हम लोगों की जान में वे ऐसे यती थे जो अपनी आत्मा को दुःख देते थे, बहुत दिन तक भोजन नहीं करते थे, स्नान नहीं करते थे, बैठते नहीं थे, लोहे की कीलें गाड़ कर उस पर सोते थे। इस धर्म्म के ऐसे अनुयायी भी थे, जो जल से आत्मा की शुद्धता पर विश्वास करते थे, जिनका ध्यान इसी पर रहता था कि उनके शरीर में जितना पाप लगा है सो सारा तीर्थ में कुछ काल लों नित्य स्नान करने से धुल उठेगा, फिर ऐसे लोग भी थे जो समझते थे कि परमात्मा का कोई रूप नहीं है, और जब कि वे अपने को बाहरी वास्तविक अर्थात् स्थूल पदार्थों से विलग रखते थे अपने में यह भावना लाना चाहते थे कि आकाश निरन्तर है, ज्ञान सर्वकालीन है और इसके अतिरिक्त और कुछ नहीं है। इस दशा में यह सरलता से समझा जा सकता है कि पवित्र लोगों की इस बहुतायत में स्वेच्छाचारी लोग भी आ गए थे। इसी प्रकार बौद्धों के ग्रन्थों में उस समय के पवित्र लोगों की अर्थात् मतप्रवर्तकों की बड़ी सूची दी है जिनमें से कठिनता से, कोई अपनी पवित्रता को हास्यास्पद वा उस से भी अधिक भयावह बातों से बचा सके।

अध्याय ४।

मिथ्या शिक्षक।

इन यतियों और दार्शनिकों की मण्डली के धूम धड़क्के में, जो कतिपय घटनाएं हुईं उनको एक प्रकार की भारतीय मिथ्या-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शिक्षकों का उत्पात कह सकते हैं—जहां कहीं साक्रेटीज़ (सुक़रात) सरीखे जन प्रगट होते हैं वहां मिथ्या-धर्म्म शिक्षक अवश्य ही साथ साथ खड़े हो जाते हैं। वे दशाएं जिनसे ये मिथ्या शिक्षक उत्पन्न हुए वास्तव में उन्हीं दशाओं के समान हैं जिनसे कि यूनानी इनके समान हुए। उन्हीं मनुष्यों के पगचिन्ह को पकड़े, जैसे इटली के रहने वाले वे लोग जो मानते थे कि मुख्य वा अचूक विज्ञान वह है जो इन्द्रियों से कोई सम्बन्ध नहीं रखता है किन्तु बुद्धि ही से सम्बन्ध रखता है, और श्लेष कहने वाले एशिया-माइनर-अन्तर्गत आयोना देश के एफिसस नगर वालों की नाईं जिन्होंने विचार के मार्ग अपने सरल और बड़े विचारों के साथ खोल दिए, गार्जियस और प्रोटागोरस से एक दल का दल विलक्षण बुद्धि वाले चमत्कार और कुछ कुछ हास्यजनक लेखकों का ऐसा उत्पन्न हुआ जो लेख की प्रणाली की सुन्दरता पर अधिक ध्यान देता था—न कि धार्म्मिक शिक्षा की सत्यता पर और जो एक प्रकार का भाषा और साहित्य के रोज़गारियों का दल था। उसी प्रकार से भारत भूमि में ब्राह्मणों के पुरुषीय, प्रथम वर्ग की उत्तमता के ब्रह्मज्ञान के उत्साही वास्तविक दार्शनिकों के उपरान्त भाषा जानने वाले वक्तृता करनेवालों का समय आया जिनके विचारों में नास्तिकता प्रधान अङ्ग थी और जो अपने बड़े पूर्वगामियों के विचारों को सब प्रकार से प्रगट करने में और उससे उन्हें बदल कर उनका उलटा सत्य सिद्ध करने में दक्ष और परम योग्य थे। एक प्रणाली के उपरान्त दूसरी प्रणाली सम्बन्धतः सूक्ष्म प्रसाले के साथ बनाई गई। हम लोगों को युद्ध घोषणा की लहुतायत के अतिरिक्त और कुछ ज्ञान नहीं है। संसार की नित्यता वा क्षणभङ्गुरता और आत्मा के विषय में, वा इन दोनों से विरुद्ध बातों में मेल करने में अर्थात् एक की नित्यता और दूसरी की अनित्यता के विषय में वा संसार के असीम वा सीमाबद्ध होने के विषय में विवाद उठाए गए थे। उसके उपरान्त न्यायानुसार अविश्वासकता प्रारम्भ हुई अर्थात् ये दो शिक्षाएं जिनकी मूल परिभाषा यह है कि "सब वस्तुएं मुझ को सच्ची जान पड़ती हैं" और "सब वस्तुएं मुझ को असत्य जान पड़ती हैं" प्रारम्भ हुई। और इस स्थल पर स्पष्ट रीति

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

से विवादकारी जो प्रत्येक वस्तु को असत्य मानता है इस प्रश्न का सामना करता है कि वह अपने इस विचार को कि सब वस्तुएं असत्य हैं उसी प्रकार असत्य मानता है या नहीं। मनुष्य परलोक के विषय में, मृत्यु के उपरान्त के जीवन के विषय में, मनुष्य की इच्छा के स्वतन्त्र और आत्मा का पाप पुण्य पलटा मिलने के विषय में विवाद करते हैं। यक्खाली गोसाल ने जिसको बुद्ध देव ने अशुद्ध शिक्षा देने वालों में से सब से बुरा बतलाया है स्वतन्त्र बुद्धि से नाहीं करता है। "बल (कर्म्म का) नहीं है योग्यता नहीं है, मनुष्य को कुछ भी बल नहीं है। मनुष्य बेबस है। सारी सृष्टि, जितनी वस्तुओं में स्वास चलता है, जो कुछ वर्त्तमान है, सब वस्तुएं जिन में जीवन है बेवश हैं, न उनमें बल है न योग्यता है कि अपने कर्म्मों को अपने अधिकार में रक्खें-वे शीघ्र शीघ्र भाग्य वा प्रकृति द्वारा अपने अन्तिम जाने की जगह पहुंच जाती हैं। प्रत्येक जीवधारी बहुत सी योनी में भरमता है उसके उपरान्त चाहे मूर्ख हो चाहे विद्वान दुःख से मुक्त हो जाता है।" ईश्वरीय शासन से भी नाहीं की जाती है। कश्यप पुराण सिखलाता है, "यदि कोई मनुष्य गङ्गा के दक्षिणीय तट पर धावा मारे, स्वयम् मनुष्य वध करे और औरों से करावे, देश को उजाड़ करे वा करावे, घर जलावे वा जलवावे तो उसके जान में कोई दण्ड नहीं होता है। यदि कोई मनुष्य गङ्गा के उत्तरीय तट पर लांघ कर जावे, दान करे वा दान करवावे, यज्ञ करे वा करवावे तो यह कोई अच्छा काम नहीं है। उसे अच्छे कामों का कुछ भी फल नहीं मिलता।" ऐसी शिक्षाओं के अन्य वाक्य ये हैं "बुद्धिमान और मूर्ख, जब शरीर नष्ट हो जाता है तो वे भी नाश हो जाते हैं। वे भी मृत्यु के परे नहीं है। अपने अनुयायियों, विरोधियों और मनुष्यों के बड़े समाज के साथ विवाद करने में ये लोग जिनका काम ही विवाद करना और बात का बतक्कड़ बढ़ाना या अपने विचारों को प्रकाश करते थे। अपने यूनानी जोड़ों के समान यद्यपि उनसे कठोर से कठोर ये लोग थे, अपने को विवाद में अजेय बतलाते थे। सकाका कहाता है, 'मुझे ऐसा श्रामण ऐसा ब्राह्मण, ऐसा आचार्य, ऐसा पाठशाला का मुखिया ज्ञात नहीं है, चाहे वह अपने को सर्व प्रधान

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पूज्य, बुद्ध कहता हो जो यदि हम से विवाद करे तो वह हिल न जाय, उसको कँपकपी न पड़ जाय, और जूड़ी न आजाय और जिसको पसीना न छूटने लगे। और यदि हम किसी निर्जीव खम्भे से भी विवाद करने लगें तो वह भी ऐसा ही करेगा—इस दशा में साधारण मनुष्य की क्या दशा होगी" सम्भव है कि बौद्ध लोगों ने, जिनके लिखे समाचार पर ही हम लोग इस विषय में निर्भर हैं ऐसे विवादियों से शत्रुता होने के कारण उनका अनुचित रीति से ऐसा बुरा चित्र खींचा है। ऐसे मिथ्या शिक्षकों का चित्र वास्तव में सर्वथा जालसाज़ी ही नहीं है।

घनिष्ट और अनेक पहलू वाले मस्तिष्क सम्बन्धी नए मतों के समय में, जो ब्राह्मण दार्शनिकों से लेकर प्रजावर्ग के बीच तक फैल गया था जब कि स्वेच्छा से धर्म्म-सम्बन्धी नित्यकर्म का सीखना गत काल के कठिन यत्न से उसके सरल गूढ़ विचारों को दबा कर उत्पन्न हो गया था और जब कि मत सम्बन्धी अविश्वासकता न्याय और धर्म्म-सङ्गत विचारों पर आक्रमण करने लगी उसी समय में जब कि जीवन के बोझ से मुक्त पाने को दुखद इच्छा का उत्तर धर्म्म की ग्लानि के प्राथमिक लक्षणों से मिल रहा था गौतम बुद्ध रङ्गशाला में उपस्थित हुआ

अध्याय ५।

बुद्ध की जीवनी

के विषय लोगों के विचार।

बौद्ध लोग अपने धर्म्म के नेता के विषय में जो कहावतें कहते हैं वे थोड़ी नहीं हैं। पर क्या उनसे बुद्ध देव के जीवन का कुछ पता लग सकता है? कतिपय आधुनिक विद्वान तो यहां तक कहते हैं कि क्या वास्तव में बुद्ध देव कोई मनुष्य थे; अर्थात् उनके अवतार ग्रहण करने के विषय में सन्देह करते हैं। वा यदि बौद्ध धर्म्म है तो उसका प्रवर्तक अवश्य कोई होगा सो वह बुद्ध जिसका इन कहानियों में अलौकिक आकार और आश्चर्य मय घटनों के साथ होना लिखा है वास्तव में संसार में उत्पन्न हुआ था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारत की प्राचीन बातों के वे बुद्धिमान खोजी श्रीमान् परम सुजान **सेनाट** साहब कहते हैं कि बुद्ध वास्तव में कोई मनुष्य न था। कोई बुद्ध किसी समय में कहीं रहा होगा किन्तु वह बुद्ध जिसके विषय में बौद्ध धर्म्म की कहावतें प्रचलित हैं वास्तव में कभी नहीं रहा। वह बुद्ध मनुष्य नहीं था, उसका जन्म, उसके यत्न और उद्योग और उसकी मृत्यु मनुष्य की नहीं है।

और यह बुद्ध कौन था? आरम्भिक समय से, भारतियों की रूपक-सम्बन्धी कविता, यूनानियों और जर्मन लोगों के सदृश सूर्य्य सम्बन्धी घटनाओं के विषय में होती चली आती हैं। अर्थात् उसके प्रातःकाल के बादलों से जन्म के विषय की, जोकि ज्योंही वह निकल चुकता है, अपने प्रकाश करने वाले लड़के के आगे अवश्य ही स्वयम् नाश हो जाता है; बादलों के बीच के कृष्ण-काय प्रेत के साथ उसके युद्ध और विजय के विषय में, फिर इस विषय की कि वह किस प्रकार विजय-पूर्वक आकाश के बीच यात्रा करता है और अन्त में दिन झुकता है और प्रकाशक वीर अन्धकार में लिप्त हो जाता है।

सेनार्ट बुद्ध अर्थात् सूर्य्य के जीवन के इतिहास का पद पद पर पता लगाते हैं। वह सूर्य्य की नाईं रात के बादलों से माया के अन्धकारमय पेट से निकलता है और जब वह उत्पन्न हो जाता है तब एक प्रकार का प्रकाश सारे संसार को वेध देता है। माया प्रातःकाल के बादलों की नाईं, जो कि सूर्य्य की किरणों के आगे उड़ जाता है मर जाती है। सूर्य्य के समान, जो गर्जने वाले प्रेत को जीतता है, बुद्ध मार अर्थात् बदी के लिये लोभ दिलाने वाले प्रेत को घोर युद्ध में पवित्र वृक्ष के नीचे जीतता है। यह वृक्ष आकाश का कृष्णवर्ण बादलों का वृक्ष है जिसके चारों ओर आंधी का युद्ध हुआ करता है। जब विजय प्राप्त हो जाती है, तब बुद्ध सारे संसार में अपना धर्म्म फैलाने निकलता है अर्थात् "नियम के पहिये को चलाने" निकलता है। इसका अर्थ यह है कि सूर्य्य अपने प्रकाश करने वाले पहिये को आकाश में एक ओर से दूसरी ओर चलाता है। अन्ततः बुद्ध के जीवन की समाप्ति हो जाती है। वह अपने सारे फल अर्थात् शाक्य जाति का, जो कि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपने शत्रुओं द्वारा नाश की जाती है, भयावह रीति से नाश होना देखता है जैसा कि सन्ध्या के समय प्रकाश के पिण्ड सन्ध्या के बादलों के रक्त-वर्ण में नाश हो जाते हैं। जब उसका अन्त आता है तब उसकी चिता की अग्नि आकाश की मूसल धार वर्षा से बुझाई जाती है, ठीक उसी प्रकार जैसे कि सूर्य्य अग्निधारा में जो उसी की किरणों की होती है डूब जाता है और उसकी ईश्वरीय चिता की अन्तिम ज्वाला क्षितिज में सन्ध्या के कुहरे की आर्द्रता में नष्ट हो जाती हैं।

सेनार्ट की सम्मति में वास्तविक बुद्ध था, वे कहते हैं कि उसकी वास्तविकता न्यायसङ्गत आवश्यकता है, क्योंकि हमलोग उसीका चलाया पन्थ देख रहे हैं; किन्तु इस रूखी वास्तविकता के अतिरिक्त कोई सारता नहीं दीखती। उसके अनुयायियों के ध्यान में उसके शरीर में वे गुण थे, जो सूर्य्यदेव में, मनुष्य का आकार ग्रहण करने पर, रूपक-सम्बन्धी गीतों में गाए हुए हैं और वे मनुष्य बुद्ध अर्थात् बुद्ध देव मनुष्य की दशा में जैसे थे उसको लोग भूल गए।

कोई मनुष्य सेनार्ट के उस लेख का जिसे उसने अपने सूर्य-सम्बन्धी सूर्य्य को सिद्ध करने लिये लिखा है विना प्रशंसा किए नहीं पढ़ सकता है। उसने वेद को, भारतीय प्राचीन युद्ध-सम्बन्धी कविता को, यूनानियों के एवम् नवीन काल की जातियों के साहित्य को ढूंढ कर अपना अर्थ सिद्ध करने में बड़ी चतुरता की है। किन्तु आश्चर्य इस बात का है कि बुद्ध के विषय की कहावतों को लिखते समय साहित्य के ऐसे बहुत पढ़ने वाले ने एक साहित्य से, जो होमर के भजनों और एड्डा से कम व्योरा नहीं दे सकता काम नहीं लिया अर्थात् बौद्ध धर्म्म के सब से प्राचीन प्राप्तसाहित्य से जो कि बुद्ध के चेलों के दल का उनके प्रभु के विषय में सब से प्राचीन साक्षी है काम नहीं लिया है। सेनार्ट अपनी आलोचना का आधार कहावत-मय जीवनी "ललित विस्तर" को बताते हैं, जो कि उत्तरीय बौद्धों के बीच तिब्बत चीन और नेपाल में प्रचलित है। पर क्या किसी मनुष्य के लिये, जो इसूमसीह की जीवनी की आलोचना लिखने बैठे नए सुसमाचार को अलग रखकर सन्दिग्ध ग्रन्थों से–चाहे वे कोई हों पर मध्य-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

काल के लिखे हों सहायता लेनी उचित समझी जायगी? वा क्या आलोचना का नियम, जो कहावतों को उनके प्राचीन रूप तक खोजना अपनी कोई सम्मति निश्चय करने के पूर्व आवश्यकीय करता है बुद्ध देव के धर्म्म के सम्बन्ध में उतना ही माननीय नहीं है जितना कि वह खीष्टीय धर्म्म के विषय में है?

बौद्ध धर्म्म की सब से प्राचीन कहावतें वे हैं जो सीलोन वा लङ्का में पाई जाती हैं और जिनको वहां के उस धर्म्म के साधु अद्यापि पढ़ते पढ़ाते हैं।

जब कि भारत के बौद्ध मूल ग्रन्थों का भाग्य प्रत्येक शताब्दी में पलटा खाता था और जब कि मुख्य धर्म्म की क्रिया पिछले काल की कविता और उपन्यासों के आगे नष्ट होती चली जाती थी तब सीलोन वा लङ्का में बौद्ध धर्म्म वाले अपने साधारण "प्राचीनों के महा-वाक्य" को ही मानते रहे। वह भाषा भी जिसमें वह लिखा है उसको भ्रष्ट होने से बचाने में सहाय हुई अर्थात् पूर्वीय भारत के देशों की बोलियों ने, जहां के धर्म्म मानने वालों और धर्म्म प्रचारकों ही ने यदि सीलोन में धर्म्म फैलाने का काम प्रारम्भ नहीं किया तो वहां वालों को बौद्ध धर्म्म में लाने में बड़ा भाग लिया *। मूल ग्रन्थों की यह भाषा (पाली) पूर्वीय भारत से वहां जाकर उन लोगों की पवित्र भाषा बन गई और वहां वालों का विश्वास है कि बुद्ध देव स्वयम् और उनके पूर्व के सब काल के लोग उसी पाली भाषा को बोलते थे। चाहे कहावतें और विचार जो नवीन काल के रहे हों सिलोन के धर्म्म विषयक साहित्य में वहां वालों की बोली में लिखे जाने के कारण मिल गए हों पर पवित्र पाली में लिखे मूल ग्रन्थों पर इनका कुछ भी प्रभाव न पड़ा।

हम लोगों को अन्य द्वारों को छोड़ कर पाली कहावतों ही का सहारा लेना चाहिए यदि हम लोग यह जानना चाहते हैं कि उनसे बुद्ध और उसके जीवन के विषय में कोई समाचार मिल सकता है वा नहीं।

---

* 'भाषा विज्ञानाङ्कुर' में अशोक के पुत्र की सिलोन में जाना पढ़ो।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उन्हीं में हम लोग सब से पहिले प्रारम्भ ही से (वहां तक जहां तक कि बौद्ध की धर्म्म-सम्बन्धी चैतन्यता के सब से आरम्भिक वाक्यों को हम लोगों ने देखा है) यह दृढ़ विश्वास देखा है कि त्राण का ज्ञान और पवित्र जीवन का मूल एक शिक्षक और धर्म्म-मण्डली का नेता है जिसको वह भगवा (महोदय) और चैतन्य कहते हैं। जो कोई आत्मा-सम्बन्धी मण्डली में जाना चाहता है इस मन्त्र को तीन बार कहता है, "मैं बुध की शरण लेता हूं। मैं शिक्षा की शरण लेता हूं। और मैं धर्म्म के दल की शरण लेता हूं"। अर्द्ध मासिक पाप के स्वीकार के समय जिसकी रस्में बौद्धों के धर्म्म-सम्बन्धी जीवन के स्मारकों में से सब से पुराना स्मारक है साधु जो पाप का स्वीकार कराता है, अपने सहगामियों से जो प्रस्तुत होते हैं कहता है कि किसी अपराध को, जो आप लोगों ने किया हो चुप रह कर न छिपावें; क्योंकि मौन एक प्रकार का झूठ बोलना है और "अभिप्रायसिद्ध असत्य भाषण से, हे भाइयो, नाश होता है, इस प्रकार से उच्चत प्रभु ने कहा है।" और वही दोष स्वीकार करने की रस्में सन्तों को, जो अन्य मत स्वीकार करते हैं, उनसे यह कहवा कर वर्णन करता है, "मैं इस प्रकार उस शिक्षा को समझता हूं जिसे महोदय ने दोषित किया है" इत्यादि। चारों ओर यह पुरुष रहित धर्म्म का तत्व प्रगट है और न यह एक मनुष्य का निज का विचार है, किन्तु यह बुद्ध देव महोदय का शरीर है, प्रभु का वाक्य है जो सचाई और पवित्र जीवन का द्वार है।"

और यह प्रभु अन्धकारमय गतकाल का बुद्धिमान मनुष्य ही नहीं गिना जाता है किन्तु लोग उसको ऐसा मनुष्य सोचते हैं जो बहुत काल पूर्व गत काल में नहीं हुआ था। ऐसा कहा जाता है कि विशाली में सात सौ धर्म्म के आचार्यों की सभा उसकी मृत्यु के सौ वर्ष पीछे हुई (खीष्ट प्रभु के ३८० वर्ष पूर्व) और इस बात को पूर्ण तया सत्य मानना चाहिए कि पवित्र धर्म्म ग्रन्थों के मूल सारांश सारे जिनमें आदि से अन्त लों उनकी ही (बुद्ध देव की ही) शरीर और शिक्षा केन्द्र के तुल्य है जिनमें उनकी जीवनी और मृत्यु उल्लिखित है, धर्म्म-मण्डली की इस विशाल सभा के होने के पूर्व लिखे जा चुके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

थे। इन मूल धर्म्म-ग्रन्थों के सब से पुराने भाग जैसे अपराधों के स्वीकार करने की रस्म, जिसका उल्लेख हम अभी पीछे कर आए हैं, पूर्णतया सम्भव है कि बुद्ध देव की मृत्यु के इस १०० वर्ष पीछे के आदि में—न कि अन्त में बने थे। अतएव वह समय जो साक्षी देने वाले साखियों को उस घटना से जिसकी वह साक्षी देते हैं अत्यन्त ही स्वल्प है। यह उस समय से बहुत ही अधिक नहीं है, सम्भवतः तनिक भी अधिक नहीं है, जो खीष्ट की मृत्यु और खीष्टीय सुसमाचार के बनने के बीच बीता। क्या यह विश्वास किया जा सकता है कि बुद्ध के धर्म्म के इतने समय के बीतने के बीच उसकी जीवनी का सारा विश्वसनीय स्मरण सूर्य्य-देव के गीतों के कारण विस्मृत हो गया और उसी में बदल गया? और क्या यतियों की बिरादरी में, जिनके विचारों के वृत्त के अन्तर्गत, उस साहित्य की साक्षी के अनुसार जिसकी पैतृक-वृत्ति हम लोगों को वे दे गए हैं प्रत्येक वस्तु इन प्राकृतिक गीतों से अधिक मूल्यवान थी बुद्ध देव कुचल उठे?

अध्याय ५।

बुद्ध देव की जीवनी।

शाक्य मुनि गौतम बुद्ध के जन्म-ग्रहण करने की ठीक ठीक तिथि और वर्ष अब निश्चित नहीं हो सकता। वे आख्यायिकाएं जिनसे उनके स्वर्गारोहण का वर्ष ५४३ खीष्ट के पूर्व माना जाता था अब तत्ववेत्ताओं की दृष्टि में अप्रमाणित और असङ्गत जंचने लगीं। और नवीन काल में जो अन्वेषण इन गूढ़ विषयों में किया गया है उसका प्रतिफल उनकी जन्म तिथि का पहिले की अपेक्षा १०० वर्ष पीछे होना भी अचूक और अशुद्धता रहित नहीं माना जा सकता। तथापि हम लोग सत्य से बहुत ही अन्तर पर न होंगे यदि हम लोग उनके जन्म का वर्ष खीष्ट प्रभु से ५०० वर्ष पूर्व मान लेवें। आपका जन्म कपिलवस्तु नामक एक नगर में, जिसे अब भुइला पुकारते हैं और जो कोशल (वर्त्तमान अवध) राज्यान्तर्गत बस्ती और अयोध्या के मध्य में अपनी राजधानी श्रावस्ती से, जहां पर शाक्य मुनि प्रायः रहा करते थे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

६० अंगरेज़ी मील पर और बनारस से १०० मील उत्तर और पश्चिम के कोने पर मगधराज्य की सीमा पर स्थित है खीष्ट प्रभु से ५०० वर्ष पूर्व हुआ था।

उनके पितृदेव महाराज सुद्दोदन, शाक्य जाति के एक भूमि स्वामि थे। "शाक्य" शब्द शक् धातु से बना है, जिसका भावार्थ "बलशाली होना" है। इनकी जमींदारी गोरखपुर प्रदेश में, नीचे की नैपाली पर्वत श्रेणियों से ले के अवध देशान्तर्गत राप्ती नाम्नी नदी के तट लों फैली हुई थी। लोगों ने विचार दौड़ाया है कि शाक्य जाति प्रथमतः एक अनार्य्य जाति थी, जिसका सम्बन्ध तिब्बत वा उत्तरीय एशिया से आए कतिपय पशु-पालक जातियों से था, जो भारत में भिन्न भिन्न काल में आई थीं; किन्तु यह विचार मान लेने पर भी यह अवश्य स्वीकार करना पड़ेगा कि शाक्य लोग आर्य्यों में से थे। इनमें से मुख्य मुख्य कुल अपने को राजपूत और सूर्य्यवंश के प्रथम पुरुष इक्ष्वाकु के वंशधर बताने लग गए थे। ऐसा जान पड़ता है कि ये लोग यद्यपि अपने को क्षत्री बतलाते थे तो भी अपना जीवन निर्वाह मुख्यतः कृषि द्वारा करते थे और तिसमें भी धान बोना उनकी मुख्य तम जीविका थी। यह भी कहा जाता है कि शाक्य कुल वाले प्रायः अपना नाम उस ब्राह्मण कुल के नाम से लेते थे, जो उनके गुरु थे और जो उनके लिये धर्म्म-सम्बन्धी पूजा आर्चा किया करते थे और इसी से सुद्दोदन का घराना गौतम वंशी अर्थात् गौतम ऋषि की सन्तान कहलाता था। किन्तु गौतम नाम की व्याख्या इस प्रकार करनी आवश्यक नहीं जान पड़ती। सत्य बात यह है कि गौतम नाम शुभमय है और प्राचीन काल में यह नाम प्रत्येक बड़े भूमि-स्वामी के लड़के को उसकी धर्म्म में निष्ठा दिखाने को एवम् ब्राह्मणों को प्रसन्न कर उनका आशीर्वाद प्राप्त करने को दिया जाता था।

बौद्ध धर्म्म के प्रवर्त्तक के पिता केवल शाक्य जाति के प्रधान पुरुष थे—निस्सन्देह आजकल के व्यवहारानुसार राजराजेश्वर नहीं किन्तु एक बड़े भूमि स्वामी थे। उनके नाम सुद्दोदन "शुद्धतन्दुल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

से यह ध्वनि निकलती थी कि उनकी जाति एवम् प्रजा तन्दुल उपजानेहारी और उसी पर जीवन निर्वाह करने हारी थी।

गौतम (पाली 'गोतम') नाम व्यक्तिवाची ठीक वैसा ही है जैसा आज दिन प्रत्येक हिन्दू बालक को उसके नामकरण के समय दिया जाता है। उन्होंने 'बुद्ध' की उपाधि उस समय लों ग्रहण न की, जब लों उन्होंने पूर्ण प्रतिभा और ज्ञान प्राप्त न कर लिया। किन्तु उस काल से आगे उनकी यही उपाधि सर्वमाननीय हो गई। बुद्धदेव के अन्य सारे नाम उपाधि मात्र हैं। जैसे 'शाक्य मुनि,' शाक्य जाति के ऋषि; 'शाक्यसिंह,' शाक्य जाति के सिंह वा शार्दूल; श्रमण (समनो) यती, भिक्षुक; 'सिद्धार्थ' जिसके जीवन का मुख्य अभिप्राय सिद्ध हो गया है; 'सुगत,' अर्थात् जिसका प्रादुर्भाव शुभ है; 'तथा गत,' जो अपने अग्रजों की नाईं आता जाता है; 'भगवान,' (भगवा); धन्य, प्रभु; 'सास्ता', (सत्था) गुरु; 'अशरण-शरण,' बिना आश्रय वालों का आश्रय; 'आदित्य-बन्धु,' सूर्य्य भगवान का सम्बन्धी; 'जिन,' जेता; 'महाबीर,' बड़ा बलवान; 'महा-पुरुष,' 'चक्रवर्ती;' और भक्त बौद्ध उन्हें 'संसार के अधीश,' 'अधीश;' 'संसार में माननीय' 'व्यवस्था के नृपति' और 'रत्न' आदि नामों से पुकारते हैं। ये लोग शाक्य-मुनि की उपाधि ही लेना उचित समझते हैं; मुख्य नाम लेना अनुचित मानते हैं। ठीक भी है बड़ों और प्यारों का नाम बार बार लेना हिन्दू शास्त्रों में भी बुरा कहा है।

बुद्ध देव के आश्चर्य्य-मय जन्म के विषय में भी बड़ी बड़ी कहानियां हैं। पर उनका उल्लेख यहां प्रर करना न्याय-सङ्गत नहीं है। किन्तु बौद्धों के बीच धवलहस्ती एक पवित्र वस्तु माना जाता है और उसकी बड़ी महिमा है अतएव इसके सम्बन्ध की एक किम्बदन्ती यहां पर लिख देते हैं। जब बोधि-सत्व (बुद्ध देव) के तुशित-स्वर्ग के छोड़ने, और गौतम बुद्ध की नाईं पृथ्वी पर जन्म ग्रहण करने का समय आया तो वे अपनी माता के उदर में धवल हस्ती के आकार में आए। वे एक शाल वृक्ष के नीचे उत्पन्न हुए और ब्रह्मदेव ने उनको उनकी माता के पार्श्वभाग से उठाया। उनकी माता माया सात दिन के अनन्तर मर गई और यह बालक अपनी मासी महा-प्रजापती की रक्षा में, जो सुद्धोदन को दूसरी पत्नी थी, पला।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गौतम के विषय में यह आख्यायिका नहीं है कि उनको कुछ धर्म्म विषयक शिक्षा भी दी गई हो। यद्यपि क्षत्रिय होने के कारण उनको वेद के कतिपय अंशों के पढ़ने का पूर्ण अधिकार था।

और न यही वर्णित है कि क्षत्री होने के कारण उनको योद्धा की विद्या ही सिखाई गई हो। यह अधिकतर सम्भव है कि उनको समाधि लगाने की प्रकृति बालकपन ही से पड़ गई हो और इस बात के सिद्धयर्थ उनको घर से बाहर रहने का अवसर भी दिया गया हो।

एक कहानी प्रसिद्ध है कि एक बार बुद्धदेव के पिता के समीप उनके सम्बन्धी लोग एकत्रित होकर आए और कहने लगे कि यह आश्चर्य्य की बात है कि इस बालक को शस्त्रविद्या और व्यायाम आदि नहीं सिखाया जाता है कि जिसके कारण युवा होने पर जब उसको अपनी जाति की रक्षा के लिये शत्रुओं से युद्ध करना पड़ेगा तो वह उसमें असमर्थ होगा। इतनी बात ऐतिहासिक ही माननीय होती यदि इसमें यह न मिला दिया होता कि जब इस बालक की शस्त्रविद्या और व्यायाम आदि में निपुणता देखने के लिये एक दिन नियत किया गया तो यह बिना किसी पूर्व अभ्यास के वाण-विद्या और 'बारह कलाओं' में सब से अधिक निपुण सिद्ध हुआ।

एक बात और है जो बिना किसी सन्देह के माननीय है। वह यह है कि गौतम बुद्ध का व्याह शीघ्र हो गया। उनकी स्त्री का नाम यशोदा था और उससे एक पुत्र, जिसका नाम राहुल था उत्पन्न हुआ। ऐसा कहा जाता है कि राहुल का जन्म बुद्ध के २९ वर्ष के होने के पूर्व न हुआ, अर्थात् उस समय के पूर्व जब तक कि उसके पिता के मस्तिष्क में सारे मानुषी अभिप्रायों की व्यर्थता, और सारे सांसारिक नातों के छोड़ने का विचार और यती-जीवन के ग्रहण करने की बलवती इच्छा न समाई। चार दृश्य, जिनसे उन्होंने संसार का परित्याग अन्त में किया वाक्बाहुल्य से परिपूर्ण हैं; किन्तु सारे बढ़ावों के होते हुए भी उनका वर्णन ऐसा रोचक और मनो-विनोदकारी है, कि बिना उनका उल्लेख किए हम लोग नहीं रह सकते। अतएव मै यहां पर उनका वृत्तान्त बील साहब के अभिनिष्क्रमण सूत्र के अंगरेज़ी अनुवाद से संक्षेप करके लिखता हूं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"एक दिन राजकुमार गौतम (बुद्ध) ने नगर के निकटवाली अपने पिता की वाटिका के देखने की इच्छा की और उनका विचार था कि वहां चल कर उस वाटिका के सुन्दर वृक्षों और पुष्पों को एक एक करके जाँचें।

मार्ग में दैवसंयोग से उनके आगे एक अङ्ग-भङ्ग दीन बूढ़ा, जिसके देहचर्म चिचुके, सिर के बाल झड़े, दांत सब टूटे और शरीर सारा दुर्बल और आगे की ओर झुका था, आया। अपने लड़खड़ाते शरीर के सम्हालने को एक लकुटी उसके हाथ में थी और वह आन कर उस मार्ग के बीच में खड़ा हुआ, जिससे होकर राजकुमार गौतम का रथ जा रहा था।

उसको देख कर सिद्धार्थ (गौतम बुद्ध) ने सारथी से पूछा "यह किस प्रकार का मानुषी शरीर, ऐसा दुखी और दूसरों को ऐसा दुखी करने हारा है, जिसके समान दूसरा शरीर मैंने कभी पूर्व में नहीं देखा है?"

सारथी ने उत्तर दिया, "महाराज यह वही शरीर है, जिसको लोग बूढ़ा कहते हैं।"

राजकुमार ने पुनः प्रश्न किया, "इस शब्द" बूढ़े "का यथार्थ भावार्थ क्या है?"

सारथी ने उत्तर दिया, "वृद्धावस्था का अर्थ शारीरिक बल की हानि, कार्य्य-कारी इन्द्रियों की दुर्बलता, और स्मरण-शक्ति एवम् मस्तिष्क का क्षय है। यह वृद्ध जन, जो आपके सम्मुख खड़ा है बूढ़ा है और उसका अन्त निकट आरहा है।"

फिर राजकुमार ने पूछा, "क्या यह नियम जगत्व्यापी है?"

"हां," उसने कहा, "सारे जीवधारियों का ऐसाही परिणाम होता है। जो जनमा, सो मरा।"

शीघ्र ही दूसरा आश्चर्य्य-जनक दृश्य आगे आया। एक रोगी, रोग और दुःख से दुर्बल पीला और संतापित, कठिनता से श्वांस खींचने में समर्थ, मार्ग में खड़ा खड़ा थरथरा रहा था। तब राजकुमार ने अपने सारथी से पूछा, "यह दुखिया कौन है?"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सारथी ने उत्तर दिया, "यह एक रोगाक्रान्त मनुष्य है; और ऐसा रोग सब किसी को होता है।"

थोड़ी देर के अनन्तर एक मृतक शरीर को लोग टिकटी पर लिए आगे आए।

उसे देख कर राजकुमार ने पूछा, "यह अपने बिछौने पर जो आगे लिया जा रहा है कौन है? उस पर आश्चर्य्य रङ्ग के वस्त्र पड़े हैं और उसके चारों ओर रोते पीटते और बिलाप करते मनुष्य घेरे हुए हैं।"

सारथी ने कहा, "इसी को मृतक वा मुर्दा कहते हैं। उसका जीवन समाप्त हो गया। उसमें अब सौन्दर्य्य का शेष नहीं है; और उसको कोई अभिलाषा नहीं है। उस में और प्रस्तर और काटे हुए वृक्ष में कुछ भी अन्तर नहीं है। वह जानों कोई नष्ट की हुई दीवार है; वा गिरी हुई पत्ती है। उससे अब माता पिता से वा भाई वा बहिन वा अन्य सम्बन्धियों से भेंट न होगी। उसका शरीर मर गया है और आपके शरीर का भी यही परिणाम होगा।"

अन्य दिवस जब राजकुमार दूसरे मार्ग से गया तो उसकी ओर एक मथ-मुंडा और यती वस्त्राच्छादित जन, सोंच सोंच कर पांव रखता आगे बढ़ता उसकी ओर आता हुआ दीख पड़ा। उसका दक्षिण कन्धा खुला था, दण्ड उसके दक्षिण हाथ में था और वाम हाथ में भिक्षा मांगने का पात्र था।

राजकुमार ने प्रश्न किया, "यह धीमे धीमे और प्रतिष्ठित जनों की नाईं पांव धरता और न इस ओर न उस ओर देखता, विचार में लीन, माथ मुड़ाए और रक्त-वर्ण (पीत) का अंचला गले में डाले कौन आरहा है?"

सारथी ने कहा, "यह मनुष्य अपना काल औदार्य्य में बिताता है, और अपनी क्षुधा और अपनी शारीरिक इच्छाओं को दबाए हुए है। वह किसी को हानि नहीं पहुंचाता है; सब का हित करता है और सब के निमित्त सहानुभूति-परिपूर्ण है।

तब राजकुमार ने उसी मनुष्य से अपना भेद बताने की प्रार्थना की।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसने तब यों कहना प्रारम्भ किया, "मैं घरविहीन यती हूं। मैंने संसार का परित्याग किया है। सम्बन्धी और मित्र छोड़ दिए हैं। मैं अपना त्राण खोज रहा हूं एवम् सारे जीव मात्र का त्राण चाहता हूं। मैं किसी को हानि नहा पहुंचाता हूं।"

इन वाक्यों के सुनने पर राजकुमार ने अपने पितृदेव की सेवा में जा के कहा, "हे पिता! मैं परिव्राजक हुआ चाहता हूं और मेरी इच्छा निर्वाण प्राप्त करने की है। संसार की सारी वस्तुएं परिवर्तन-शील और क्षणिक हैं।"

चारों दृश्यों के विषय में, जिनका होना दैवी घटना मानी जाती है यही आख्यायिका संक्षेपतः प्रसिद्ध है। गौतम बुद्ध की शेष जीवनी, जो आख्यायिकाओं से प्राप्त होती है अत्यन्त ही रोचक है और इस में कहीं कहीं ऐतिहासिक सचाई भी पाई जाती है। अतएव हम लोग उसे संक्षेपतः नीचे पाठकों के विनोदार्थ लिखते हैं।

इन दृश्यों के घटित होने के थोड़े ही दिन पीछे बुद्ध देव को अपने पुत्र राहुल के जन्म-ग्रहण करने का समाचार मिला। यहां उनके जीवन का एक बड़ा उपयोगी और कठिन काल था और गौतम बुद्ध इस समाचार को सुन कर बहुत काल लों बड़े ध्यान में निमग्न होगए। उनको पुत्र का होना सब से कड़ा बन्धन ज्ञात पड़ा, कि जिससे वे परिवार और गृहस्थी में बंध जाते। किन्तु उन्होंने अपना दृढ़ संकल्प कर लिया था। "मुझको अवश्य अभी भाग जाना चाहिए। नहीं तो सदा के लिये बन्दी हो जाना पड़ेगा।" उनके चारों ओर उनके पितृदेव के प्रासाद की सुन्दर सुन्दर युवतियां एकत्रित थीं और अपनी बोली ठोली, हाव भाव कटाक्ष से उनको अपने संकल्प से हटाने का उद्योग करने लगीं। किन्तु उनका यत्न सर्वतोभाव नष्ट होगया। पुनः अपनी धर्म्म-पत्नी के प्रासाद में आप गए और उसको अपने नए जन्मे पुत्र के माथे पर हाथ धरे सोया हुआ पाया। उनकी प्रबल कामना हुई कि वे एक बेर पुनः उससे बात करें किन्तु इस भय से कि कहीं उसको सन्देह न हो, वे उलटे पांव बाहर भाग आए। वाह्यप्रान्त में उनका मनोविनोदकारी अश्व खड़ा था कि उसी के सहारे शीघ्र भाग जावें। इन्होंने अपना प्रथम कर्म्म "महा-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भिनिष्क्रमण" अर्थात् "घर से निकल जाने का कर्म्म" सफलता पूर्वक किया किन्तु ऐसा करने में उनको अन्य अन्य अधिकतर कठिनाइयां उठानी पड़ीं। क्योंकि मार (कामदेव) अर्थात् वह देव जो मनुष्यों को इन्द्रियों के सुख विलास की ओर ले जाता है उनके सम्मुख आया और उनको साम्राज्य की प्रतिष्ठा न छोड़ने का परामर्श देने लगा कि जिसमें वे पुनरपि सांसारिक जीवन के मिथ्या सुख की ओर लौट आवें।

अपने सारे जालों को निष्फल देख कर, मार ने अपने आक्रमण का आकार बदल दिया। उसने वायु-मण्डल को मारे गर्जन तर्जन से भर दिया, और उस युवक (गौतम बुद्ध) के मार्ग को बड़ी बड़ी धाराओं, ऊंचे ऊंचे पर्वतीय शृङ्गों और ज्वाला फेंकती हुई अग्निदाह की छाया से आच्छादित कर दिया। किन्तु इनमें से किसी वस्तु से वे भयभीत न हुए और न अपने संकल्प से मुड़े। उन्हों ने उच्च स्वर से कहा, "मेरा एक एक अवयव चाहे टुकड़े टुकड़े चोंथ के कर दिया जाय और चाहे मैं चूल्हे में झोंक दिया जाऊं और चाहे पहाड़ में दब के चूर चूर हो जाऊं पर मैं एक क्षण के निमित्त भी अपना संकल्प परित्याग न करूंगा।"

अपने पिता की ज़मींदारी से कुछ दूर आके उन्होंने अपने वस्त्र एक भिखमङ्गे को दे दिए और उसके आप पहन लिए। फिर अपने बालों को तलवार से काटा और इस प्रकार उन्होंने अपना बाहरी आकार एक परिव्राजक का बनाया। उनकी जटा का बाल पृथ्वी पर न गिरा, किन्तु उसे देवता लोग **त्रियस त्रिशस** स्वर्ग में लेगये और उसकी अर्चना करने लगे।

प्रथम वे राजगृह (राजगिर) में, जो मगध का मुख्य नगर था ठहरे। यही स्थल पीछे से बौद्धमत वालों का पवित्र स्थल हो गया। वहां पर वे दो ब्राह्मणों के, जिनके नाम अलार (संस्कृत अराड-कालाप वा कालप्प उपाधि सहित) और उद्दक (उद्रक वा रुद्रक, जिसे राम-पुत्त भी कहते हैं) थे, शिष्य बने। इन दोनों ब्राह्मणों ने उन्हें अपने दर्शन-शास्त्र का ज्ञान और त्राण के विषय विचारांश सिखलाए। इस पूर्वोक्त वर्णन की सचाई के विषय में अलग रीति से प्रमाण प्रस्तुत हैं:

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारतवर्ष भर में जितने बौद्ध धर्म्म के चिन्हावशेष राजगृह में (पटने से ४० मील दक्षिण–पूर्व की ओर) पाए जाते हैं उतने और कहीं नहीं मिलते–जिससे सिद्ध होता है कि यह बौद्धधर्म्म का सबसे बड़ा तीर्थ-स्थान था और यहीं पर उसकी अत्यन्त प्रसिद्ध और मान-नीय घटनाएं उपस्थित हुई थीं। इस स्थान को पाली में राजगृह कहते हैं। यह विचार किया जा सकता है कि बौद्धधर्म्म और ब्राह्मणों के धर्म्म में जो सम्बन्ध पाया जाता है उसका कारण गौतम बुद्ध का इस प्रान्त के ब्राह्मणों के साथ सम्बन्ध रखना है और इन विचारों का उसमें आजाना है, जो उसने यहां पर ब्राह्मणों के बीच रहने के समय में आरम्भ में सीखे।

गौतम को ब्राह्मणों के दर्शनों (शास्त्र) में वह सुख और शांति न मिली, जिसके लिये उसकी आत्मा उसके गृहत्याग के समय प्यासी थी।

तिसपर भी अभी ब्राह्मण लोग एक और मार्ग त्राण का और परमात्मा में मिलने का बतलाते थे। यह तप का मार्ग था।

प्रारम्भिक काल से ही, ब्राह्मणों की एक बड़ी प्रचलित शिक्षा यह होती चली आई है कि शरीर को तपाने से अर्थात् दुःख देने से अन्य वस्तुओं की अपेक्षा अधिकतर पुण्य एकत्रित होता है। इसी तपस्या से अलौकिक शक्ति प्राप्त होती है, और इसीसे जीव शरीर की बन्दी से मुक्त हो कर परमात्मा में लीन हो जाता है।

इस तपस्या के रूप अनेक हैं जिनमें से एक यह है कि तपस्वी अपने चारों ओर पांच अग्नि जलाकर, ठीक ग्रीष्म ऋतु में सारे दिन उन्हीं अग्नियों के बीच एक आसन वा मञ्च पर बैठा रहता है। कभी कभी चारही अग्नि बाली जाती है और पांचवीं के स्थान पर परम प्रज्वलित ज्येष्ठ का आदित्य होता है। ऐसा कहा जाता है कि देवता लोग भी तपस्या इस अभिप्राय से करते हैं कि कहीं मनुष्य लोग इसे करके उनसे बढ़ न जावें। क्योंकि हिन्दू धर्म्म के अनुसार देवता लोग भी अपने पद से च्युत हो कर मनुष्यों को अपना स्थान देने को बाध्य हो जाते हैं, जब कि मनुष्य लोग बहुत काल लों कठिन तपस्या कर के उनसे अधिकतर सामर्थी हो जाते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अतएव हम लोगों को यह देख कर आश्चर्य्य न करना चाहिए कि जब गौतम बुद्ध को राजगृह के ब्राह्मणों के सिखाए धर्म्म के अनुसार सुख आनन्द और शान्ति मिलनी असम्भव और दुस्तर दीख पड़ी तो उन्होंने इस अपने अभीष्ट के सिद्ध्यर्थ राजगृह परित्याग कर गया की ओर उर्विला (उरुबिला) के अरण्यों में तपस्या करने के निमित्त यात्रा की।

वहां उन्होंने पांच और सन्तों के साथ अपना प्रसिद्ध षट-वर्षी व्रत प्रारम्भ किया। एक चबूतरे पर अपना पांव मोड़े, धूप, वायु, वर्षा, शीत और जाड़े से निडर बैठे उन्होंने अपना भोजन शनैः शनैः इतना सूक्ष्म कर दिया कि अन्त में वे चावल का एकही दाना खाकर रहने लगे। पुनः उन्होंने प्राणायाम करना प्रारम्भ किया पर सब का फल कुछ भी न हुआ। तनिक भी मानसिक शान्ति न मिली, और न दैवी प्रकाश हुआ। तब उनको तपस्या से प्रधान ज्ञान प्राप्त करना एक मूर्खता जान पड़ी और उससे जीवन के दुःखों और बुराइयों से छुटकारा पाना असम्भव जान पड़ा।

जैसे कोई दुःस्वप्न से उठे वैसेही गौतम बुद्ध तपस्या छोड़ कर उठे, उन्होंने भोजन किया और वे शरीर को प्राकृतिक रीति से पाल कर चङ्गा करने लगे। ऐसा करने से उनके पांचों तपसी साथी कुछ दिन को उनसे फिर गए। जब भली भांति बल होगया तो वे उसी प्रान्त के एक दूसरे स्थल में चले गए। वहां पर एक गांव में जिसे पीछे से लोग बुद्धगया पुकारने लगे एक पीपल के वृक्ष के नीचे बैठ कर उन्होंने उच्च प्रकार का ध्यान लगाया। ऐसा करने में उन्होंने ब्राह्मणों के योग का ही साधन प्रारम्भ किया। क्योंकि यद्यपि तब तक योग-शास्त्र भली भांति लेखनी बद्ध नहीं किया था तथापि ब्राह्मणों के बीच उसका प्रचार था। इसमें तनिक भी सन्देह नहीं है कि गौतम बुद्ध के समय में भी आत्मा-सम्बन्धी पूर्ण प्रकाश और परमात्मा से सम्मिलित करने के हेतु धारणा और ध्यान और योग-मार्ग की समाधि लगाई जाती थी।

किन्तु बुद्ध के ध्यान वा धारणा का फल यह हुआ कि उसको ज्ञान पड़ने लगा कि वह अद्यापि अपने संसार त्याग के एक मात्र

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अभीष्ट से उतना ही दूर है जितना वह पूर्व में था । उन्होंने सोचा "तब फिर क्यों न सांसारिक हो हो जावें ?" "क्यों न फिर इन्द्रियों का सुख ही भोग करें ?" "क्यों न लौट कर घर चलें और स्त्री और पुत्र से भेंट करें ?" इसी प्रकार के विचार उनके मन में आने लगे । और साथही उनकी सारी प्राचीन प्रीति और सारे भाव दश-गुने बल से जाग उठे । तब एक दिन रात को मार ने जो इन्द्रियों के सुख का रूप और रक्षक है इस अवसर से लाभ उठाना चाहा ।

कुभावना उसके समय को ताक रही थी कि कब अवसर पावे और उस ऋषि पर आक्रमण करे । जब कि गौतम बहुत काल तक तपस्या करने से शरीर से क्षीण होगए थे और दुर्बलता के कारण उन को लालच रोकने का सामर्थ्य शेष न थी तभी इस पिशाच ने अच्छा अवसर पाया ।

यह ध्यान देने योग्य बात है कि भले और बुरे, सत्य और असत्य, झूठ और सांच, विद्या और अविद्या और प्रकाश और अन्धकार के मध्य महान खींचा खींची सारे धर्म्मों में, चाहे वे कितने ही झूठे हों, मानी जाती है ।

बुद्ध देव की इस प्रकार की खींचा खींची की कहानी एवम् उन पर मार के आक्रमण का तथा उसके सारे अनुगामियों के आक्रमण का वर्णन ऐसा रोचक और अद्भुत है कि इसके अत्यन्त उपयोगी न होने पर भी हम लोग यहां पर उसे देने को बाध्य होते हैं ।

भूत और बैताल उनके चारों ओर झुण्ड के झुण्ड भयानक जीवों, कीड़ों तथा प्रेतों के आकार में अस्त्र शस्त्र से पूर्णरूप से सुसज्जित और सारे हिंसक हथियारों के लिए एकत्रित हुए । उनके लाखों मुंह देख कर डर लगता था, उनके अवयवों पर कोड़ों सांप गेंडुरी बांध कर बैठे थे । और उनके शीस से ज्वाला भक भक निकल रही थी । सन्त गौतम को उन्होंने घेर लिया और उनको सहस्रों रीति से सताने लगे । सब प्रकार के फेंक कर मारने के हथियार उन पर फेंकने लगे, विष और अग्नि उन पर बसाने लगे, किन्तु दुष्टों का विष फूलों में और अग्नि उनके माथे के इर्द गिर्द एक प्रकार के ईश्वरीय तेज में पलट जाती थी ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हार मानकर मारने अपनी रङ्गभूमि बदल दी। उसने अ
१६ जादू डालनेवाली कन्याओं को बुला भेजा और उनको आ
कि जाके अपना सौन्दर्य्य युवक सन्त को दिखाओ। किन्तु यह यु
यती उनके कुचलों में भूलनेवाला न था। वह शान्त और निर्दु
बना रहा। उसने अपने बदन की कड़ाई के साथ उन युवतियों
उनकी ढिठाई पर घुड़का और अपमानित तथा हताश और पराजि
होकर चले जाने के लिये बाध्य किया।

अन्य प्रकार की परीक्षाएं इनके उपरान्त आईं और दुर्बल य
बुद्ध का बल उसमें ठहरने के योग्य न होगा ऐसा ज्ञात होने लगा
किन्तु यह भी एक आपत्ति काल ही था, जो शीघ्र बीत जानेवाला था
एक दिन रात को बहुत देरतों समाधि लगाते लगाते और अप
आत्मा को उठाते उठाते उन्होंने इन अपने शत्रुओं को विजय क
लिया। विजय प्राप्त हुई और साथ ही सत्य ज्ञान का प्रकाश
उनके मस्तिष्क में समाया। एक कहानी में लिखा है कि पहिले प्रहर
उन्होंने अपने सारे पूर्वजन्म का ज्ञान प्राप्त किया, दूसरे में वर्तमा
सारी योनियों का और तीसरे में कारण और फल की कड़ी का ज्ञा
और ऊषा काल तक उनके हृदय में सारा ज्ञान स्पष्ट रीति से आगया।

वह सवेरा जिसमें उनका यह कठिन परिश्रम का का
समाप्त हुआ उनकी जन्म-तिथि का प्रातः था। गौतम की अवस्
उस समय ३५ वर्ष की थी। उसी दिन उनको बोधि-सत्व का
प्राप्त हुआ और उनको बुद्ध अर्थात् "ज्ञानी" की उपाधि मिली
अतएव कोई आश्चर्य्य की बात नहीं है कि वह पेड़ जिसके तले उन्हों
ज्ञान और प्रकाश प्राप्त किया "ज्ञान और प्रकाश का वृक्ष" प्रसि
हुआ। यह भी जानने योग्य बात है कि वह रात जिसमें बु
ने ज्ञान प्राप्त किया बौद्धों की सब से पवित्र रात है और बो
वृक्ष (अर्थात् पीपल का वृक्ष) उनका सब से पवित्र चिन्ह वैसा
प्यारा है जैसा खीष्ट-मतावलम्बियों को उनका क्रूश (जिस पर
खीष्ट ने जगत के हित के निमित्त प्राणविसर्जन किया था) और
सत्य-ज्ञान, जो उस मस्तिष्क से, जो समाधि और धारणा से ऊंचा
गया था, क्या था?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस अद्भुत आख्यायिका में यही सब से अद्भुत बात है। यह केवल कुछ आंशिक एक ओर ही की सचाई थी, एकही प्रकार के विचार का फल था, जिस पर बुद्ध ने उदासीनता के साथ प्रत्येक और विचार को छोड़कर ध्यान दिया था। इस जीवन की दुर्गति का ही छाया-चित्र था, इसमें दृढ़ संकल्प किया गया था कि संसार में जो सुख है उस पर ध्यान न दिया जावे। यह इस प्रकार की शिक्षा थी कि यह जीवन केवल मनुष्य के अनगिनत जीवनों की जञ्जीर की एक कड़ी मात्र है, चाहे वह जिस योनि में उत्पन्न हो दुःख ही दुःख भोगता है और इस प्रकार के दुःख से तभी त्राण प्राप्त होगा जब संयम और इन्द्रियों के निग्रह से वह रहे और सारी कामना छोड़ देवे, विशेष कर इस बात की कामना कि पुनः जन्म होवे।

किन्तु किस प्रकार इस आभ्यन्तरिक स्व-प्राप्त प्रकाश का जो बौद्ध धर्म्म का अन्य धर्म्मों से लक्षित करने का चिन्ह है-पहिले पहिल प्रकाश हुआ। ऐसा कहा जाता है कि उस गम्भीर समय में जब कि सत्य-ज्ञान उनको प्राप्त हुआ तो बुद्ध ने ये वाक्य कहे-

"अगणित जन्मों में मैं अपने इस नश्वर शरीर (गृह-कारक) के बनाने वाले को खोजता फिरा, किन्तु वह मिला नहीं-फिर फिर वही जन्म, जीवन और दुःख मेरा होता गया। किन्तु अन्ततः तू मिला-हे मांस के इस गृही के निर्म्माण-करता! अब मेरे लिये तुझे गृही निर्म्माण करनी न होगी। कड़ियां और धरनें चकना चूर हो गईं-और कामना (तृष्णा) के नाश के साथ पुनर्जन्म से अन्त में छुटकारा मिला। (धम्म-पद १५३, १५४, सुमङ्गल ४६)

बुद्ध के प्रथम वाक्य और उनका उत्तर (पीछे का) कथन और कर्म्म अधिकतर प्रशंसनीय है, जैसा कि दक्षिणीय धर्म्म ग्रन्थों में मिलता है।

महावग्ग में लिखा है कि पूर्णज्ञान प्राप्त करने के उपरान्त बुद्ध देव सात दिन लों पलथी मार कर पृथ्वी पर बोधी वृक्ष (पीपल के नीचे बैठे रहे और ध्यान लगाकर ज्ञान का आनन्द भोगते रहे) उस समय के पीछे, रात्रि के पहिले तीन प्रहर के बीच उसने अपना मस्तिष्क जीवन के कारण पर जमाया। तब इस कारण के निम्म

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को जानकर उसने प्रगढ भाव से कहा, "जब जीवन का कारण वास्तविक दार्शनिक पर प्रगट हो जाता है, तो उसके सन्देह दूर हो जाते हैं और सूर्य्य की नाईं वह मार की सेना को भगा देता है।"

फिर उसने अन्य सात दिन लों दूसरे बट वृक्ष के नीचे जिसे अज-पाल अर्थात् बकरियों का वृक्ष कहते हैं धारणा की। इसी स्थान पर एक अभिमानी ब्राह्मण ने यह प्रश्न किया, "वास्तविक ब्राह्मण कौन है?" और उनको यह उत्तर मिला "बुराई और गर्व से रहित जो है, इन्द्रियों का निग्रह रखने वाला, विद्वान और पवित्र जो है।"

इसके उपरान्त उसने तीसरी बार दूसरे पेड़ के तले सात दिन लों ध्यान किया। वहां पर नाग देवता मुचलिन्द) उनकी देह में लिपट कर बैठे और उन्होंने अपना फन उनके सिर के ऊपर छाते की नाईं फैला लिया कि उन पर आतप वर्षा वात आदि का प्रभाव न पड़े-यह भी उनकी एक प्रकार की परीक्षा थी। जब यह परीक्षा समाप्त हो गई, तब बुद्ध देव ने उच्च स्वर से कहा, "उस सन्तोष प्राप्त मनुष्य का एकान्त निवास सर्वोत्तम है, जिसने "सत्य" सीख लिया और देख लिया है।"

चौथी बार बुद्ध देव ने "राजायतन" नामक वृक्ष के नीचे २८ दिन लों ध्यान लगाया। क्या ये चार बार ध्यान लगाने ध्यान के चार वर्गों के द्योतक नहीं हैं। पिछली आख्यायिकाओं में ४९ दिन कहा है।*

ज्ञान प्राप्त करने के समय से लेकर उस की घोषणा करने के लिये यात्रा करने के समय तक बुद्ध देव ने सदैव व्रत किया-क्योंकि दैवी ज्ञान प्राप्त करने से उनका भाव ऐसा उच्च हो गया था कि भोजन किसी से मांगना वे अपने पद से छोटा कार्य्य समझते थे। केवल एक बार उन्होंने भोजन "त्रपुश" और "भल्लिक" नामक वैश्यों से प्राप्त किया। ये ही दोनों जन बुद्ध देव के पहिले रहस्य-चेले हुए और ये ही लोग बुद्ध देव की स्तुति के दोहरे मन्त्र

---

* "ध्यान" लगाना बन में प्रत्येक स्वर्गीय दूत के विषय में लिखा है। मुसल्मानों के पैगम्बर मुहम्मद और ख्रीष्ट ने भी इसी भांति बन में ध्यान लगाकर ज्ञान प्राप्त किया था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का जाप और उनकी शिक्षा की स्तुति के दोहरे मन्त्र का जाप सब से पहिले करने लगे। उस समय लों "सङ्घ" स्थापित न हुआ था। एक पीछे के काल की कथा में लिखा है कि उन दोनों ने अपने इस सद्व्यवहार के पलटे में उनके ८ बालों को पाया, जिसे वे उनके स्मारक की भांति सुरक्षित रक्खे रहे।†

४९ दिन लों व्रत करने के सम्बन्ध में सर मोनियर विलियम्स साहब, जो विलायत के एक बड़े प्रतिष्ठित व्यक्ति थे अपनी पोथी में कहते हैं कि उन्होंने बुद्ध गया में एक प्राचीन बुद्ध देव का प्रस्तर पर खुदा हुआ चित्र देखा था, जिसमें बुद्ध देव के एक हाथ में एक पात्र धरा कर ४९ दिन के लिये ४९ भाग खीर का अर्थात् एक दिन के लिये १ भाग बनाया हुआ था।

इस वर्णन के साथ खीष्ट का ४० दिन तक आरण्य में व्रत करने का वृत्तान्त मिलाना चाहिए।

बुद्ध देव का एकान्त से निकल कर संसार में आके अपने सुसमाचार की घोषणा करना सारे बौद्धों की दृष्टि में एक बड़ी प्रसिद्ध घटना है।

इस स्थल पर यह कहना आवश्यक है कि अब जब कि उन्होंने पूर्ण ज्ञान प्राप्त कर लिया था तो उनको सब प्रकार के कर्म्मों से रहित होकर पूर्ण रीति से बुद्ध देव की शिक्षा के अनुसार चलना चाहिए था क्योंकि क्या उन्होंने अपने हृदय की सब से बड़ी अभिलाषा न पूर्ण कर पाई अर्थात् क्या उनके सारे परिश्रम का फल—उनके सारे यत्नों का सारभूत—जिसे वे अपने सैकड़ों जन्म से करते चले आते थे अब मिल न गया? अतएव अब उनको किसी और जीवन का सुख दुःख भोगना न था, और किसी और सङ्कट में पड़ना न था। संक्षेपतः उन्होंने सारे सच्चे बौद्धों के जन्म का फल पा लिया—अर्थात् उनकी इन्द्रियों के बल को और कामना की अग्नि बुझ गई और उनको अब पूर्ण निर्वाण के सुप्राप्त

---

† शरीर का कोई अंश जो प्रायः बड़े जनों के स्मारक की भांति रक्खा रहता है पूजनीय समझा जाता है। साहब लोगों में भी प्रायः नामी लोगों के बाल इत्यादि मरते समय कतर कर बड़ी बुद्धिमत्ता से पवित्र स्थान में रख लिए जाते हैं और उनकी यथोचित प्रतिष्ठा की जाती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आनन्द को भोगना ही शेष रह गया था। किन्तु अपने सहयोगी जनों के सच्चे प्रेम ने उनको पुनः निवृत्ति से प्रवृत्ति में डाला। वास्तव में सर्वोच्च बुद्ध का यह लक्षण था कि वह अपने कर्म्मों से एवम् दयार्द्र भावों से सर्वतोभाव अनुत्सुकता और बेमन होने को जिसके निमित्त उसी की शिक्षा उसको बाध्य करती थी, झूठा करदे।

किन्तु उन्होंने अपने इस उदार विचार को एक दूसरे प्रकार की परीक्षा बिना कार्य्य में परिणत न कर पाया। उनके हृदय में बुरा विचार आया; और इसका कारण, जैसा कि पिछले समय की कहानियां कहती थीं, पुनः वही पहिला मार था। मार ने कहा "बड़े कष्ट से, हे धन्य प्रभु, आपने इस धर्म्म को प्राप्त किया क्यों अब इसकी घोषणा करनी? वे जन, जो कामना और इन्द्रियों के चेरे हैं इसे न समझेंगे। शान्त रहिए। निर्वाण का सुख भोगिए"

इन बुरे उपदेशों को जानों मिटाने के लिये ब्रह्मा सम्पति देव बुद्धदेव के आगे आकर बोले, "हे निर्दोष व्यक्ति, उठ निर्वाण का फाटक खोल। उठ, संसार की ओर देख, कि वह कैसे दुःख में डूबा है। उठ, घूम घूम कर धर्म्म की घोषणा कर।"

पहिले पहिल बुद्धदेव को अपने दोनों शिक्षागुरु आलार और उद्दक स्मरण आए। किन्तु ज्ञात हुआ कि वे मृत्यु को प्राप्त हो गए हैं। पुनः उनको वे पांचों यती स्मरण हुए, जिनको उन्होंने तपस्या से सत्य ज्ञान प्राप्त करने की रीति को छोड़ कर उदास किया था। वे लोग उस समय काशी के मृगरमने में, जिसे इसी-पत्तन कहते थे अपनी तपस्या कर रहे थे। यह प्राकृतिक बात थी कि बुद्धदेव पहिले पहिल काशी या बनारस की ओर चलें—चाहे कोई विचार विशेष उन्हें इस ओर न भी खींचे। क्योंकि वह नगर पूर्वीय विचार और जीवन का बड़ा भारी केन्द्र था अर्थात् वह ऐथेन्स की नाईं था जहां पर सारी विशेष शिक्षाओं के सुनने वालों के मिलने की सब से अधिक सम्भावना थी।

वहां जाते समय उपक नामक एक जन, जो निहङ्ग यतियों के आजीवक पंथ का एक सभ्य था मार्ग में मिला और उसने उनसे पूछा, "आप का बदन इतना चमत्कृत (परिशुद्ध) क्यों है?" उन्होंने उत्तर दिया "मैंने सबको जीत लिया है, मैं सर्वज्ञाता हूं; मैं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निर्दोष हूं, मैं सबसे बड़ा गुरू हूं, मैं जेता हूं, मैं काशी को जाता हूं कि संसार के तम को मिटाऊं।"

पाँचों यती जिनके नाम ये थे, कौण्डिन्य; अश्वजीत, वाष्प, महानाम, भद्रक, उनके बचनों द्वारा उनके मत में आए और तिहरे मन्त्र के उच्चारण करने मात्र से तुरन्त उनके पंथ के भिक्षुकों की मण्डली में भर्ती हुए। ये पांचों बुद्ध को ले के बुद्ध के अर्थात् उन मनुष्यों के समाज के, जो संसार से अलग रह कर जीवन के दुःखों से छुटकारा पाने का उपाय ढूंढते हैं, प्रथम ६ सभ्य हुए। और इस प्रकार का गोतम बुद्ध का प्रथम शिक्षा-प्रद वार्तालाप हुआ। उनका प्रथम व्याख्यान धर्म्म विषय में जिसे उन्होंने काशीस्थ हरिण के रमने में दिया, बौद्धों की दृष्टि में उतना ही आदरणीय है जितना खीष्ट प्रभु के प्रथम वाक्यों को खीष्ट-मतावलम्बी लोग मानते हैं। इसे पाली भाषा में धम्म-चक्क-पवत्तन सूत्त अर्थात् धर्म्म-चक्र-प्रवर्तन-सूत्र कहते हैं। इसका भावार्थ "वह वार्तालाप है जो व्यवस्था के चक्र को गति दे" वा जो "सत्य विश्वास की जगद्व्यापी प्रभुता है।"

नीचे उस व्याख्यान का सार जैसा "महावग" ग्रन्थ में लिखा है दिया जाता है। "यह लिखना उपयोगी होगा कि बुद्धदेव मगध वा बिहार की बोली जिसे अब पाली कहते हैं बोलते थे-सब किसी के साथ नहीं, किन्तु अपने पहिले पांचों भिक्षुकों के साथ।

"हे भिक्षुक लोग, दो सीमाएं हैं, जिन्हें उन मनुष्यों को उल्लङ्घन न करना चाहिए, जिन्होंने संसार त्याग दिया है-अर्थात् विषय वासना में जीवन बिताना, जो नीचकारी, तुच्छ, गंवारू, अनुत्तम, और व्यर्थ है और दूसरे अपनी आत्मा को दुःख देना (आत्म-क्लमथ), जो दुखद, अनुत्तम, और निष्प्रयोजन है। एक इन दोनों के बीच का मार्ग है जिससे ये दोनों बातें बचाई जा सकती हैं। यह बुद्ध का निकाला, उच्चजनों द्वारा माननीय अठ-पहल मार्ग है जिससे बुद्धिमानी, शान्ति, ज्ञान, पूर्णप्रकाश (सम्बोधि) कामना और दुःख से छुटकारा (निर्वाण) मिलता है।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यहां तो कोई ठीक स्पष्ट बात नहीं है। निस्सन्देह "मैं दोनों अन्त की बातों के बीच की बात है" और "मध्य के मार्ग में तुम अत्यन्त ही अभय हो कर चल सकोगे।" ऐसी शिक्षाएं लाभकारी यद्यपि पुरानी, सत्य बाते हैं किन्तु कठिनता इस बात की है कि बुद्ध के अठ-पहल मार्ग को कैसे इस प्रकार के बीच का मार्ग सिद्ध करें क्योंकि अत्यन्त ही उत्साही धर्म्म प्रचारक सदैव अपने ही धर्म्म को चाहे वह कैसी ही व्यर्थ बातों से भरा हो शान्तिमय बतावेगा। अतएव बुद्धदेव चारों उत्तम सत्य बातों को बताता चलता है (अरीय-सच्चानी=आर्य्य सत्यानी), जो कि उसके धर्म मात्र की कुञ्जी हैं। उनका उल्लेख हम इस प्रकार कर सकते हैं- १-सारी योनि-अर्थात् किसी योनि में जन्म-चाहे संसार में हो वा स्वर्ग में हो-अवश्यमेव दुःख दर्द से युक्त है। २-सारे दुःख का कारण राग और तृष्णा है। तृष्णा तीन प्रकार की होती है, इन्द्रियों के सुख की, (काम-सम्बन्धी), धन की (वैभव) और जीवन की (भव)। ३-काम, धनकामना और जीवन की इच्छा के नाश होने के साथ साथ दुःख का अन्त होता है। ये बातें उत्तम अठ-पहल मार्ग में चलने की धुन लगाने से (अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो), अर्थात् सत्य विश्वास वा विचार अर्थात् सब को बराबर देखना (समाडिट्ठी), सत्य सङ्कल्प, सत्य भाषण अर्थात् ठीक ठीक बोलना, सत्य कर्म्म (कमराये), सत्य जीविका, सत्य व्यायाम (वायामो), सत्य स्मरण (सति) और (सत्य समाधि) से प्राप्त होती हैं।

और किस प्रकार सब योनि केवल दुःख मात्र है?

"जन्म में दुःख, बुढ़ापे में दुःख, रोग-ग्रस्त होने में दुःख और उन वस्तुओं के (सम्प्रयोगो) सम्प्रयोग से जिन से हम को घृणा है दुःख होता है। अपनी चाही हुई वस्तु को न पाना दुःख है। जीवन के पांच तत्वों से मेल (उपादान) दुःख है। तृष्णा का सम्पूर्णतः नाश दुःख का नाश है। यही दुःख की उत्तम परिभाषा है।"

यही व्याख्यान (जिसे लङ्का में प्रथम "बाण"=भाण, कथा कहते हैं) भिक्षुकों के सम्मुख दिया गया, और चाहे इसकी तुलना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

खीष्ट के व्याख्यान से ठीक ठीक न की जा सके जो कि भिक्षुकों को नहीं किन्तु दुखी पापियों को सुनाया गया था और चाहे यह विचार कैसा ही स्पष्ट हो कि दुःख दर्द, काम और कामना के फन्दे में अनेक योनि में जन्म लेने के काल से पड़ने से ही उत्पन्न होता है परन्तु यह बड़ा ही रोचक है, क्योंकि इसमें उस मनुष्य की पहिली शिक्षा है, जो चाहे "एशिया का सूर्य्य" कहने के योग्य न होने पर भी संसार का एक अत्यन्त ही सफलीभूत शिक्षक था।

हृदय में विचार करो कि बुद्ध ने अपने प्रथम विचार (ध्यान) के फल की नाईं काम के पूर्व मूर्खता का होना जीवन के दुःख का मूल कारण माना है।

निःसन्देह सारे व्याख्यान का वास्तविक अभिप्राय "सत्य" शब्द के भावार्थ पर अठपहल मार्ग के वर्णन में है। "सत्य" के अर्थ में पाली भाषा में "सम्मा=सम्यक" लिखा है। स्पष्ट अर्थ "सत्य विश्वास" का बुद्ध और उसके धर्म्म का विश्वास है। "सत्य संकल्प" का अर्थ अपनी स्त्री और कुल का परित्याग है; क्योंकि यही सर्वोत्तम रीति इन्द्रियों की प्रबलता के रोकने की है। "सत्य भाषण" का अर्थ बुद्ध की धर्म्म शिक्षाओं का पटन पाठन है। "सत्यकर्म" भिक्षुक का कर्म है। "सत्य जीवन वृत्ति" भिक्षुक की नाईं भिक्षा मांग कर खाना है; "सत्य व्यायाम" अपनायत का दबाना अर्थात् अहङ्कार का दबाना है। "सत्य स्मृति" शरीर की अशुद्धता और नश्वरता का स्मरण है। "सत्य समाधि" ध्यान में सर्वतोभाव लीन होना है।

इस बात को समझ लो कि जीवन के दुःख को वर्णन करते समय प्यारी वस्तुओं का मेल घृणित वस्तुओं के साथ सम्बन्ध रखने के दुःख का पलटा नहीं कहा गया है।

बुद्ध के पहिले अनुयायी दरिद्र जन नहीं थे; क्योंकि छठें सङ्घ में समावेशित किया गया है एक उच्च-कुल-सम्भूत युवक जो 'यश' नामक था। इसके उपरान्त इस युवक का पिता, जो एक धनाढ्य वणिक था पहिला गृहस्थ चेला ठहरे अर्थात् त्रिपदी मन्त्र को उच्चा-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दया कर के हुआ; और उसकी माता और स्त्री उनकी प्रथम गृहस्थ चेलिन हुई। इसके उपरान्त चार उच्च कुल वाले यश के मित्र और उसके पीछे पचास और मनुष्य भिक्षुक हुए। इस प्रकार प्रथम व्याख्यान के कुछ दिन पीछे, गौतम के ६० गिने हुए भिक्षुक चेले हो गए। ये सब बड़ी जाति के लोग थे।

जब बुद्धदेव ने इन साठ भिक्षुकों को अपने सुसमाचार (अर्थात् धर्म्म की शिक्षा) की जो त्राण के विषय थी घोषणा करने के लिये भेजा तो उन्होंने इस प्रकार उनसे कहा—"मैं सारे बन्धनों से, चाहे वे मनुष्य के हों वा ईश्वर के हों छुटकारा पा गया। हे भिक्षुक लोग, आप लोग भी उन बन्धनों से मुक्त हो गए। जाओ और चारों ओर संसार की माया और देवताओं और मनुष्यों के लाभार्थ घूमिए। एक एक कर के आप लोग सब दिशाओं में जाइए। धर्म्म को जो आदि, मध्य और अवसान में तथा अपने अर्थ और व्यञ्जन में कल्याणकारी है घोषित करो। पूर्ण निग्रह शुद्धता और ब्रह्मचर्य्य के जीवन की घोषणा करो। मैं भी इसी धर्म्म के प्रचारार्थ जाता हूं।" (महावग्ग)

जब गौतमबुद्ध के भिक्षुक–धर्म्मदूत लोगों ने प्रस्थान किया तो गौतम भी चले; पर उनकी यात्रा के पूर्व एक बार फिर मार (काम) ने उन्हें परीक्षा में डाला। बनारस छोड़ कर वे उरुबिला में, जो गया के निकट है, गए। उन्होंने वहां पर पहिले ३० नवयुवक लोगों को और फिर १००० धर्म्म के पक्के ब्राह्मणों को अपना शिष्य बनाया। ये ब्राह्मण कश्यप और उनके दो भाइयों की आधीनी में थे जिनका एक यज्ञकुण्ड था। इस अग्निकुण्ड वाले गृह में एक क्रोधी सर्पाकार प्रेत रहता था। अतएव बुद्ध ने कहा कि रात भर मैं इस गृह में रहना चाहता हूं। आज्ञा पाने पर बुद्धदेव उस गृह में गए, सर्प–देव अर्थात् प्रेत से लड़े और उसको अपने भिक्षा मांगने के पात्र में बन्द कर लिया। इसके उपरान्त उन्हों ने अन्य अलौकिक कर्म किए जिनकी संख्या ३५० थी, जैसे कि जल प्रवाह को अपने वचन से पीछे हटा दिया, लकड़ी को दो टुकड़े कर दिया और अग्निमय वर्तनों को निकाला। कश्यप और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उनके भाई लोग, उनके अलौकिक बल को जान कर अन्य ब्राह्मणों के साथ बुद्धदेव के सङ्घ के सभ्य बने। इस प्रकार बुद्धदेव ने लगभग एक सहस्र भिक्षुक अपने साथ बटोरे। उन लोगों को गया के निकट एक पहाड़ी पर जिसका नाम गयासीस था उन्होंने अपना ज्वलन्त अग्नि-विषयक व्याख्यान सुनाया। उन्होंने कहा, "हे भिक्षुको, सब वस्तुएं जलनेवाली हैं (आदीप्तम्)। नेत्र जल रहे हैं या प्रकाशित हैं। सूझने वाली वस्तुएं बल रही हैं। वह भावना, जो सूझने वाली वस्तुओं के स्पर्श से उत्पन्न होती है जलने वाली है। कर्णेन्द्रिय जल रही है। शब्द जल रहे हैं। नाक जल रहा है। गन्ध जल रहे हैं। जिह्वा जल रही है। स्वाद जल रहा है। शरीर जल रहा है। इन्द्रियों से जानने योग्य वस्तुएं जल रही हैं। मस्तिष्क जल रहा है। विचार जल रहा है। सब वस्तुएं काम और क्रोध से जल रही हैं। हे भिक्षुको, इसे देख कर, एक बुद्धिमान और उत्तम शिष्य नेत्र से थक जाता है, प्रकाश्य वस्तुओं से थक जाता है; कर्ण, शब्द, सुगन्ध, दुर्गन्ध स्वाद, शरीर और मस्तिष्क से थक कर घृणा करने लगता है। थकित होकर वह अपने को काम और क्रोध से मुक्त करता है। जब मुक्त हो जाता है तब उसको जान पड़ता है कि उसका अर्थ सिद्ध हो गया। उसने इन्द्रियों का निग्रह और ब्रह्मचर्य्य से जीवन व्यतीत किया और पुनर्जन्म का बखेड़ा उसके लिये छूट गया।"

ऐसा कहा जाता है कि यह अग्नि-व्याख्यान, जो निर्वाण के अर्थ की कुञ्जी है, अग्निदाह लीला के देखने से ध्यान में उपस्थित हो आया। वे सारे जीवन को अग्नि को ज्वाला के समान मानते थे और इस व्याख्यान का सार कामाग्नि को बुताने का धर्म्म और उसके साथ ही सारे जीवन की अग्नि का बुताना है और भिक्षुकपने की उपयोगिता और ब्रह्मचर्य्य इस अभिप्राय के सिद्ध्यर्थ हैं।

खीष्ट ने भी पर्वत पर अपने शिष्यों के मध्य इस विषय पर व्याख्यान दिया था। उन्होंने कहा था—'वे ही धन्य हैं जो हृदय के शुद्ध हैं, क्योंकि वे ही ईश्वर को देखेंगे।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बुद्धदेव और उनके अनुयायी इसके उपरान्त राजगृह को गए । उन चेलों के बीच दो मनुष्य अग्र-श्रावक अर्थात् मुख्य चेले सारिपुत्र और मग्गलान थे जो आगे मर गए थे और ८० बड़े शिष्य में ५६ अग्र--गण्य जन थे जिन्हें महा-श्रावक कहते थे, जिनमें कश्यप (महा-कश्यप) उपाली और आनन्द (भतीजा) मुख्य थे और इनके अतिरिक्त अनुरुद्ध (दूसरे भ्रातृज) और कात्यायन थे। निस्सन्देह ८० भिक्षुकों के बीच पांच पहिले के बनारस वाले चेले भी आ गए हैं । पीछे से दो मुख्य स्त्रियां चेलिन (अग्र-श्रावक), जिन के नाम खेमा और उप्पलवन्ना (उत्पलवर्णा) थे, इन शिष्यों में मिलाई गई।

पीछे से प्रत्येक मुख्य चेले को "स्थविर" "आर्य्य-जन" वा महा-स्थविर "बड़ा आर्य्य-जन" कहने लगे । इस विषय पर भी ध्यान दो कि बिम्बिसार, मगध का राजा । और प्रसेनजीत (पसेनदी), कोशल के राजा गौतम-बुद्ध के गृहस्थ चेले थे और सदैव उनके सङ्घ की भलाई करते थे ।

थोड़े दिनों के उपरान्त और नियमानुसार बुद्धदेव के अनुयायी लोग भिक्षुकों की सम्प्रदाय में भरती होने लगे और उनकी रीति भांति के नियम बांधे गए । और निस्सन्देह बौद्धधर्म्म की सफलता इसी प्रकार के सङ्घ के नियम करने और सब को शरण देने के विचार के कारण ही हुई ।

गौतमबुद्ध के बुद्ध की दशा को प्राप्त करने और मरने के बीच लगभग ४५ वर्ष बीते । इस समय के बीच वे सदा शिक्षा देते रहे और अपने शिष्यों को साथ लेकर धर्म्म के लिये घूमते रहे। केवल वर्षा काल में ठहर जाते थे । उनके ठहरने की जगहों के ४५ नामों की सूची दी है ।

वे प्रायः श्रावस्ती में बहुत कर के रहते थे । वहां पर जेत-वन के मठ में, जिसे अनाथ-पिण्डीक ने दिया था उनका बहुत काल बीतता था । किन्तु श्रावस्ती से लेकर राजगृह लों, ३०० मील का प्रदेश उनके भ्रमण के अन्तर्गत ही था । राजगृह के निकट गिद्ध-कूट और वेलु-वन (बंसवारी) में प्रायः वे अपना काल यापन करते थे । किन्तु सदा सर्वदा, वर्षा ऋतु को छोड़

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कर, भ्रमण करना ही धर्म फैलाने का एक मुख्य उपाय था।

ऐसा कहा जाता है कि उनकी मृत्यु कुसीनगर (आजकल के कसया-जो गोरखपुर से ३५ मील पूर्व है और जो उस ज़िले का एक प्रसिद्ध सब-डिविज़न है) में, जो उन के जन्मस्थान कपिलवस्तु से ८० मील की दूरी पर है ८० वर्ष की अवस्था में खीष्ट के लगभग ४८० वर्ष पूर्व हुई।

ऐसा कहा जाता है कि बुद्धदेव की मृत्यु बहुत अधिक शूकर का मांस खाने से हुई। यह बात उनके पद के लिये बहुत ही छोटी है, अतएव ऐसा जान पड़ता है कि इस कथा को किसी ने मनमाने गढ़ लिया है लेकिन इस गढ़न्त से भी ऐसे मनुष्य को जो कहता है कि, "किसी जीवधारी को न मारो" जीव हिंसा का दोष नहीं लग सकता, क्योंकि यदि वह स्वयम् हिंसा का दोषी हो जाता तो अपने अनुयायियों के लिये एक बुरा आदर्श बनता।

जब बुद्धदेव को ज्ञान पड़ा कि अब उनका अन्त निकट है तब वे इस प्रकार कथन करने लगे–

"हे आनन्द, मैं अब वृद्ध हो गया और मेरी आयु बहुत हो गई, और मेरी (भव) यात्रा का अब अन्त होना चाहता है। मैं अस्सी वर्ष का हो गया, जो मेरे जीवन का पूर्ण समय निश्चित था और जैसे गाड़ी, जो पुरानी होने से घिस गई है बड़ी सावधानी ही से आगे को चलाई जा सकती है तैसे ही मेरा शरीर कठिनता से चलाया जा सकता है। केवल जब मैं ध्यान में निमग्न हो जाता हूं तभी मेरे शरीर को चैन मिलता है। भविष्य में आपही अपने प्रकाश बनो, आपही अपनी शरण हो, दूसरा शरण न खोजो, सत्य को अपने पंथ का अन्धकारमय जगत में दीपक मान कर दृढ़ता से उसीको ग्रहण किए रहो, सत्य को अपना शरण मान कर दृढ़ता से पकड़े रहो, किसी और को अपने अतिरिक्त अपना शरण न मानो। (महा-परिनिब्बान सुत्त)

अपने अन्तिम व्याख्यान के थोड़ी देर पीछे बुद्ध देव जो पहिले ही कठिन धारणा से निर्वाण प्राप्त कर चुके थे अर्थात् जिनकी कामना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की अग्नि बुझ गई थी धारणा की चार अवस्थाओं में गए और तब परिनिर्वाण का काल आया और जीवनाग्नि भी बुझ गई। दो साल के वृत्तों के बीच एक खाट पर दक्षिण ओर पैर कर के वे सुलाए गए। जो चित्रकारी, उनके मरण काल की बनाई गई है उसमें वे दहिने करवट मरने के समय दिखाए गए हैं और उनकी इस मूर्ति की बड़ी प्रतिष्ठा की जाती है।

कुसी नगर के बड़े लोगों ने चक्रवर्ती राजा के मरने पर जो क्रियाएं होती हैं उन क्रियाओं के साथ उन्हें जलाया-क्योंकि बुद्ध देव अपने को यही मानते थे। पुनः उनकी चिता की राख आठ राजाओं के बीच बांटी गई-जिन्हों ने उन्हें गड़वा कर उस पर स्तूप बनवाए। (बुद्ध-वंश)-

एक आख्यायिका में लिखा है कि जब बुद्धदेव मरे तब एक भूडोल आया। तब ब्रह्मा और इन्द्र प्रगट हुए और इन्द्र ने कहा, "जीवन के सारे तत्व क्षण-भङ्गुर हैं। जन्म और जरा उनकी प्रकृति हैं। वे उत्पन्न होती हैं और विलग विलग हो जाती हैं। तब यही सुख है कि पुनः जन्म न हो।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भूगर्भ विद्या ।

(बाबू ठाकुर प्रसाद लिखित ।)

मनुष्य के जीवन में खाने और पहिनने के सिवाय सब से अधिक आवश्यक वस्तु मनुष्य के लिये उसके रहने का स्थान अर्थात् घर है । जितने अच्छे और मज़बूत घर बनाए जाते हैं वे सब प्रायः पत्थरों ही के होते हैं । जब हम इन पत्थरों को देखते हैं तो ये नाना प्रकार और कई जाति के देखने में आते हैं । पत्थर पहाड़ों और खानों से निकाले जाते हैं । खानों में से नाना प्रकार के पदार्थ निकलते हैं जैसे पत्थर, खड़िया, रत्न, धातु इत्यादि । ये सब पदार्थ भूगर्भ ही से निकलते हैं । इन सब पदार्थों के अनेक प्रकार के रूप, रंग और बनावट होने से इन के भिन्न भिन्न नाम और जातियां हैं । यद्यपि ये सब भिन्न भिन्न पदार्थ हैं पर इनका उत्पत्तिस्थान भूगर्भ ही है ।

केवल पत्थर ही को लेकर देखें तो वे अनेक भांति के देखने में आते हैं, जैसे रेतीला पत्थर, संगमर्मर, संगमूसा, संगसीमाक, दूधिया, पत्थर-का-कोयला, स्लेट इत्यादि । इसमें सन्देह नहीं कि किसी काल में ये सब मुलायम द्रव्य ही रहे होंगे जो अब कठोर होकर शिला होगए हैं । ये द्रव्य कहां से आए, कैसे और कितने काल में शिला होगए और इनके अनेक रंग रूप और जातियां कैसे हुईं इस विषय का वर्णन और युक्तिसिद्ध कल्पना जिसमें हो उसे भूगर्भ विद्या कहते हैं ।

हम पहिले पत्थरों ही के विषय में विचार करते हैं । पत्थर कई रंग, रूप और जाति के होते हैं । जब इनको छांट छांट कर हम इनका "वर्ग विभाग" (Classification) करना चाहते हैं तो बड़ी कठिनता पड़ती है । यदि इनके रंगों के अनुसार इनको वर्ग-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विभाग करते हैं तो हम देखते हैं कि एक बलुआ-पत्थर (Sandstone) ही कई रंग का होता है, कोई मटमैला, कोई लाल, कोई श्यामइत्यादि। वास्तव में इनका विभाग (Division) रंग के अनुसार करना अनुचित है। इसी प्रकार कड़े और नरम पत्थर के अनुसार यदि हम इनका विभाग करने लगें तोभी ठीक नहीं होता क्योंकि एक ही पत्थर का टुकड़ा कहीं नरम और कहीं कठोर होता है। अतएव रंग और रूप, और नरमाई और कड़ाई के अनुसार वर्गविभाग करने में न तो कोई नियम ही बन सकता है और न यह विभाग ठीक हो सकता है। अब प्रश्न उठता है कि इनका विभाग किस नियम से किया जाय?

यदि हम किसी पुस्तकालय में बैठ कर पुस्तकों का विभाग करें तो उनके आकार, रूप और रंग के अनुसार उनका विभाग करना अनुचित होगा। पुस्तकालय में अनेक प्रकार की पुस्तकें होती हैं, कोई छोटी, कोई बड़ी, कोई छपी हुई, कोई हस्त-लिखित, कोई चित्रवाली, कोई बेचित्र की, कोई लाल रंग की, कोई अन्य रंग को, पर इन का विभाग इन के रंग, रूप, आकारादि के अनुसार नहीं किया जाता किन्तु उनके मूल-विषय के अनुसार उनका विभाग होता है। जैसे गणित विषय की जितनी पुस्तकें होंगी चाहे वे कसी आकार वा रूप की हों, चाहे वे सरल किंवा उच्च और कठिन गणित की हों परन्तु उन सब की 'गणित' विभाग में ही गणना की जायगी। इसी प्रकार पत्थरों के विभाग उनके रंग, रूप, कठोरता-मृदुता इत्यादि के अनुसार न करके यदि उनकी बनावट और उनके मूल-तत्व के अनुसार उनका वर्ग-विभाग करें तो उत्तम और ठीक होगा। इस नियम को ध्यान रख कर यदि उनके विभाग किये जांय तो उनके वर्गों की संख्या भी बहुत न बढ़ेगी।

समझने के लिये इस समय तीन प्रकार के पत्थर के टुकड़े लिए जाते हैं—

(१) बलुआ पत्थर का टुकड़ा (a piece of sandstone)
(२) खड़िया ... ... (a piece of chalk)
(३) ग्रानाइट ... (a pieceo fg ranite)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इनकी परीक्षा, इनके मूल तत्व और बनावट के अनुसार कर के नीचे लिखी है, जिससे मालूम होगा कि उक्त तीनों प्रकार के प्रस्तर खण्डों में क्या भेद है।

(१) बलुआ पत्थर।

बलुआ पत्थर मोटी वा महीन रेत का होता है। यदि बहुत महीन रेत का एक टुकड़ा हो तो इसकी परीक्षा सूक्ष्म-दर्शक (microscope) द्वारा करेंगे और मोटे रेत वा कण के पत्थर के टुकड़े की परीक्षा योंही कर सकते हैं। इन दोनों में सिवाय मोटे और महीन कण के कोई अधिक भेद नहीं पाया जाता। केवल रंगों का भेद होता है। पर यह रंग उनके वर्ग-विभाग करने में जैसा कि हम पहिले लिख आए हैं विशेष लाभदायक नहीं है। इनसे केवल शाखा भेद वा जाति भेद (kind) माना जा सकता है। वास्तव में ये सब बलुए पत्थर ही हैं चाहे वे किसी रंग वा आभा के हों।

(पहिला चित्र देखो)

अब इस पत्थर के एक टुकड़े को ध्यान पूर्वक देखने से पाया जाता है कि–

(१) यह टुकड़ा छोटे छोटे कणों के आपस में जुट जाने से बना है।

(२) ये कण जिनसे यह पत्थर बना है कुछ न कुछ गोल मटोल घिसे हुए हैं।

(३) यदि इसको खुरचें तो इसके कण पृथक पृथक हो जांयगे जो बालू सरीखे देखाई देंगे। यदि इस पत्थर का कुछ अंश खुरच-कर एक काग़ज़ पर इकट्ठा कर लें तो यह ठीक ऐसा ही देखाई देता है मानो गंगाजी की थोड़ी सी रेत लाकर किसी ने रख दी है।

(४) इस पत्थर को ध्यानपूर्वक देखने से स्पष्ट प्रतीत होता है कि इसके कण सरल पंक्ति में सटे हुए मानों समानान्तर रेखाएं बनाए हुए हैं।

(५) इन कणों को देखो तो कई प्रकार के देखने में आते

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हैं कोई छोटे, कोई बड़े, कोई श्वेत और कड़े, कोई कांच की नाईं बेरंग और कोई चांदी से चमकदार और बहुतेरे नरम रंग बिरंग के हैं।

(६) इन कणों को यदि एक गिलास पानी में घोल दें तो ये कण शीघ्र नीचे बैठ जाते हैं।

उक्त परीक्षा करने पर यदि प्रश्न किया जाय कि यह पाषाण खण्ड कैसे बना है तो अवश्य यही उत्तर होगा कि इन्हीं कणों के आपुस में चिमट कर कठोर हो जाने से यह पाषाण बना है। किसी पत्थर में तो ये कण ऐसे सटे होते हैं कि सहज ही अलग अलग हो जाते हैं और किसी में कठिनता से, पर प्रायः ये कण एक प्रकार के चिपकाने वाली वा श्लेषक (Cement) वस्तु से जुड़े रहते हैं जो पत्थर को अधिक कठोर बनाती है। इन्हीं द्रव्यों के कारण पत्थर में रंग आता है। ये द्रव्य लाल, पीले, हरे, बैंजनी व काले रंग के होते हैं।

इस परिक्षा से मालूम हुआ कि बलुआ पत्थर अन्य पत्थरों के घिसे हुए गोलप्राय कणों के एकत्रित होकर सट जाने और कठोर हो जाने से बना है।

(२) खड़िया।

खड़िया भी एक प्रकार का मुलायम पत्थर ही है। साधारण रूप से देखने में तो इस खड़िया की बनावट में कोई विशेषता नहीं प्रगट होती, केवल इतना जान पड़ता है कि यह स्वेत और ऐसे मुलायम घिस जाने वाले कणों से बनी है कि जो छूने ही से उंगलियों में लग जाते हैं और सूक्ष्म होने के कारण ये कण अलग अलग दिखाई नहीं देते। इनके देखने के लिये सूक्ष्मदर्शक यंत्र की सहायता लेनी पड़ती है। यदि कूंची से इसका कुछ अंश घिस डालें और धूल से जो कण निकलें उन्हें स्वच्छ और निर्मल जल में घोल दें तो कुछ देर में धीरे धीरे ये कण नीचे बैठ जायगे और जल ज्यों का त्यों फिर निर्मल हो जायगा। अब इस जल को सावधानी से गिरा दें जिसमें नीचे बैठे हुए कण न गिरें और तब इस तलछट को सूक्ष्मदर्शक यंत्र द्वारा देखें तो निम्न लिखित विशेषता पाई जाती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(दूसरा चित्र देखो)

(१) ये सब कण एक ही रंग के अर्थात् श्वेत हैं। पर कणों के आकार एक समान नहीं हैं, कोई गोल, कोई लम्बा, कोई बेडौल अर्थात् अनेक आकार के हैं।

(२) इस के कण न तो बलुए पत्थर के कणों से और न ग्राना-इट से मिलते हैं (जैसा आगे चलकर मालूम होगा)।

(३) इन कणों के रूप और आकार से पाया जाता है कि वे सीप, कौड़ी, घोंघे और मूंगों के भाग हैं। प्राय: ये कण एक प्रकार के क्षुद्र शम्बुक जन्तुओं के घोंघों से बने हैं जिसे अङ्गरेज़ी में फोरा-मिनिफेरा (Foraminifera) कहते हैं। उत्तम सूक्ष्मदर्शक यंत्र में ये क्षुद्र शम्बुक वा घोंघे स्पष्ट देखाई देते हैं।

(४) इन कणों के सटने में कोई क्रम नहीं है। कोई कण खड़ा ही चिपका हुआ है और कोई तिरछा। इन कणों की पंक्तियां भी एक सीध में नहीं हैं।

उक्त जांच और परीक्षा से विदित हुआ कि खड़िया जल-जन्तु अथवा किसी न किसी जीव के कवकड़ों वा हाड़ के कणों के इकट्ठा होकर सटजाने से बनी है।

(३) ग्रानाइट।

यह एक प्रकार का कड़ा पत्थर होता है। इसकी बनावट विलक्षण होती है। इसके एक टुकड़े को खूब तेज़ छूरी से ही खुरच सकते हैं। खुरचने पर जब इसके कणों की परीक्षा की जाती है तो उसका फल यह निकलता है—

(१) इसके कण घिसे हुए गोल नहीं हैं।

(२) इसके कण तीन भिन्न जातियों के हैं और इन तीनों के आकार और धर्म्म भी भिन्न भिन्न हैं अर्थात्—

(क) एक प्रकार के कण अभरक से चमकदार और नरम होते हैं जैसे कि बलुए पत्थरों में वा बालू में सितारे वत वा टिकुली वत चमकते देखाई देते हैं।

(ख) दूसरे प्रकार के कण चिकने, कड़े, पहलदार और चोखे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होते हैं जो कठिनता के साथ तेज़ धारदार छूरी से खुरचे जा सके हैं। इनको 'फ़ेनोपल'* (Felspar) कहते हैं।

(ग) तीसरे प्रकार के कण स्वच्छ और कांचवत चमकदार होते हैं। ये इतने कठोर होते हैं कि तेज़ सी तेज़ छूरी से खुरचना क्या उन पर चिन्ह भी नहीं बनाया जा सकता, इसको 'स्फटिक' (Quartz) कहते हैं। रेत के बहुधा कणों में यह पाया जाता है।

(३) ये स्फटिक कण (Crystals) आपुस में किसी विशेष क्रम से नहीं सटे रहते किन्तु टेढ़े मेढ़े बिना क्रम के ही आपुस में चिमटे रहते हैं।

(४) बनावट में कोई विशेष क्रम न होने के कारण बलुए पत्थर से इसकी विभिन्नता पाई जाती है।

उक्त बातों से (ग्रानाइट) गण्डोपल की परिभाषा यों कर सकते हैं कि यह ऐसा पत्थर है जिसकी बनावट बिना किसी विशेष क्रम के कठोर कलमी टुरों (Crystals) के सट जाने से होती है।

(तीसरा चित्र देखो)

जितने पत्थर हैं उनके मूल-तत्व और उनकी बनावट प्रायः इन्हीं तीन प्रकार की मिलेगी। पत्थरों की बनावट अधिकतर बलुए पत्थर से मिलती जुलती है। संक्षेप में इनकी परीक्षा करने का ढंग मालूम होगया पर जब हम उनके वर्गविभाग का नाम रखते हैं तो सब को बलुआ पत्थर ही कहना ठीक नहीं जान पड़ता, चाहे उनकी बनावट उससे मिलती जुलती क्यों न हो। यह उनका जातिविभाग कहला सकता है पर इनका वर्गविभाग ऐसा होना चाहिए जिसमें कोई भ्रम न हो और जातिधर्म सभी उसके अन्तर्गत आजावें। अतएव उक्त तीनों भिन्न बनावट और तत्व वाले पाषाण के तीन नाम नीचे लिखे जाते हैं।

* (Felspar) (फेल्स्पार) ज्वालामुखी पहाड़ों से गले हुए द्रव्य के समान निकलकर और बह बह कर जम जाता है। इस लिये यह द्रव पदार्थ ज्वालामुखी का 'फेन' कहा जा सकता है और 'उपल'=पत्थर इन दोनों शब्दों से 'फेनोपल' बनाया गया है। इसे 'फ़लोपल' भी कह सकते हैं, क्योंकि यह नोकदार, पहलदार होता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(१) गादीयशिला (Sedementary Rocks)
(२) तनूद्भवशिला (Organic Rocks)
(३) आग्नेयशिला (Igneous Rocks).

उक्त नामकरण के हेतु तत्तद विषय के वर्णन में दिए जांयगे। किसी क़िस्म का पत्थर हो पर हम लोग उसके बड़े बड़े टूकड़े वा भाग को 'शिला' वा 'चट्टान' ही कहते हैं। यहां स्मरण रहे कि भूगर्भ शास्त्र में बालू, मिट्टी, कीचड़, पत्थर का-कोयला इत्यादि भी कठोर होने पर शिला (Rocks) ही कहलाते हैं।

(१) गादीय शिला*। तलसंसक्त शिला

किसी गिलास में निर्मल जल लेकर यदि इसमें थोड़े गिट्टक वा कंकड़ियां डाल दें तो ये कंकड़ियां झट पट नीचे बैठ जांयगी और जब गिलास को हिलावेंगे तब वे जल के साथ कुछ उठ आवेंगी और ज्योंही जल स्थिर होने लगेगा वे नीचे बैठने लगेंगी। अन्त में सब नीचे बैठ जांयगी। यह 'कंकड़ीदार वा रोड़ेदार गाद' (Sedement of gravel) हुई। तलसंसक्त शर्करा

इसी प्रकार दूसरे गिलास के जल में बालू घोल दें तो यह बालू धीरे धीरे नीचे जमने लगेगा और थोड़ी देर में उसकी तह नीचे बैठ जायगी। यह 'बालू की गाद' (Sedement of Sand) तलसंसक्त बालुका हुई।

अब फिर तीसरे गिलास में मिट्टी घोल दें तो धीरे धीरे कुछ देर में यह मिट्टी नीचे बैठ जायगी और जल निर्मल होजायगा। यह मिट्टी की परत जो नीचे बैठ गई है 'मिट्टी की गाद' (Sedement of Mud) तलसंसक्त पंक है।

इन परीक्षाओं से ज्ञात हुआ कि गाद के कण-जितने ही मोटे और भारी होंगे उतनीही जल्दी नीचे बैठेंगे और जितने ही महीन होंगे उनके नीचे बैठने में उतनीही देर लगेगी अर्थात ज्यों ज्यों

* 'गादीय' शब्द गाद से बना है। गाद तलछत को कहते हैं जो जल वा किसी द्रव पदार्थ में की घुली हुई होती है और जल के निथर जाने पर नीचे बैठ जाया करती है। जो पत्थर गाद से बना हो उसे गादीय शिला कह सकते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जल में स्थिरता होती जायगी छोटे और महीन कण नीचे एकत्रित होने लगेंगे। इन्हीं तीन क्रमों से 'गादीय शिला' की बनावट होती है। इस लिये गादीय शिला तीन प्रकार की होती है—

(क) रोड़ेदार शिला (Conglomerate). गोलसंसक्त शर्करा
(ख) रेतीली शिला (Sandstone). गोलसंसक्त बालुका शिला
(ग) पङ्क शिला (Shale). " " पंक "

शिलाओं के तीन वर्ग-विभाग जो ऊपर लिखे जा चुके हैं उनमें से एक गादीय शिला ही तीन मुख्य जाति की है। अब यह देखना है कि ये सब कहां से और कैसे बने हैं।

(चौथा और पांचवां चित्र देखो)

रोड़े और बालु इत्यादि कहां से आते हैं?

इस प्रश्न का उत्तर हमको पूर्वरचित पहाड़ और नदियां भली भांति देती हैं। यह बात सभी लोग जानते हैं कि बरसात में नदियां और नाले बड़े वेग से बहते हैं और अन्य ऋतुओं में वेही नदियां धीमी और मन्दगामिनी हो जाती हैं। नदियों से अभी कुछ न पूछिए। आइए तनिक पहाड़ों की ओर चलें। पहाड़ों पर जाकर हम देखते हैं कि समस्त पहाड़ प्रायः एक प्राकार के पत्थरों के हैं। ऐसा बहुत कम देखने में आता है कि कहीं एक प्रकार की चट्टान है और कहीं अन्य प्रकार की। ध्यानपूर्वक देखने पर कहीं दरारें देखाई देती हैं, कहीं चट्टाने कटकर नोकदार कगर सी बन गई हैं, कहीं खड़ी चट्टानें ऐसी चिकनी हो गई हैं मानो किसी ने रगड़ कर उन्हें चिकना करदिया है। इसी प्रकार कहीं गड़हे और कहीं छोटे बड़े नाले हैं और इन नालों में रोड़े और पत्थरों की बटियाएं छितरी पड़ी हैं। किसी नाले में पानी बह रहा है और कोई सूखा ही है। इन पहाड़ों पर हरे भरे वृक्ष अपनी अलग ही शोभा देखा रहे हैं और कहीं कहीं पुराने वृक्षों के ठुंठ ही खड़े हैं।

इन्हीं पहाड़ों की सैर जब बरसात में करते हैं तो सूखे नालों को भी जल से भरा हुआ पाते हैं। यद्यपि ये नाले छोटे बड़े सभी प्रकार के हैं परन्तु सभों के प्रवाह में बड़ा वेग है। नाल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का प्रवाह इस बल और उद्वेग से बह रहा है मानों वह पहाड़ को बहा लेजाना चाहता है। इस धारा में जो कुछ पड़ा वह जल के संग बह जाता है। धारा के वेग में बड़ी छोटी बटियाएं वा रोड़े लुढ़कते फुड़कते, अन्य शिलाओं से टकराते, उन्हें काटते, छांटते और रगड़ते, और स्वयं भी टूटते फूटते और घिसते घिसाते बहे चले जाते हैं। इस रगड़ झगड़ से चट्टानों में कहीं नई कगरें बन जाती हैं और कहीं इनके कुछ भाग टूट कर नीचे गिरते और चूर चूर होते जल के साथ मिल कर बह जाते हैं। इसी प्रकार पेड़, पल्लव और जीवों के हाड़ भी जल के साथ चले जाते हैं। ये ही सब अन्त में बालू, मिट्टी इत्यादि बनजाते हैं।

इन्हीं नालों को जब पहाड़ से नीचे आकर देखते हैं तो उनमें उतना उद्वेग नहीं रहजाता और ज्यों ज्यों वे समतल भूमि की ओर जाते हैं उनका बल घटता ही जाता है। ये नाले किसी नदी वा बड़े सरोवर में जा मिलते हैं।

ज्यों ज्यों धारा प्रवाह मन्द होता जाता है भारी बटियाएं और रोड़े जल तल में रुकते जाते हैं। बालू और मिट्टी नदियों के प्रवाह से घुले मिले चले जाते हैं और ज्यों ज्यों नदी मन्द होती जाती है बालू और मिट्टी नीचे बैठते जाते हैं। बड़ी नदियां अपने किनारों पर के करारों को काटकर उनकी मिट्टी भी बहा लेजाती हैं और अन्त में अपने बोझ को समुद्र के उदर में डाल देती हैं। बरसात में इसी कारण से नदियों का जल मैला रहता है और बरसात के उपरान्त ज्यों ज्यों इनका प्रवाह मन्द होता जाता है इनका गाद नीचे बैठता जाता है।

देखो हरद्वार वा उसके ऊपर के देश में गंगा-जी के किनारों पर बड़े और छोटे रोड़े ही मिलते हैं। इसके नीचे मुरादाबाद, मेरठ इत्यादि में गंगा तट पर मोटे बालू की रेत मिलती है। काशी इत्यादि तक आते आते कुछ मोटे वा महीन बालू की रेत पड़ जाती है और अन्त में हुगली के तीर पर मिट्टी का कादा ही पाया जाता है। अब मालूम हुआ कि नदियों के द्वारा हर प्रकार की गाद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समुद्र में किंवा बड़े सरोवर में जमा होती है । ऐसा ही हर वर्ष होता रहता है ।

इसके सिवाय समुद्र के किनारों पर जो बड़े बड़े पहाड़ हैं उनकी भी यही दशा है । समुद्र की लहरों के साथ और विशेष कर बड़ी बड़ी आंधियों में समुद्रीय तरङ्गों के थपेड़ों के साथ किनारों पर के रोड़े आपुस में रगड़ते और चट्टानों पर पटखनी खाते, उन चट्टानों को तोड़ते फोड़ते और आप भी घिसते घिसाते, जल में घुल मिल कर दूर तक बह जाते हैं और धीरे धीरे समुद्र-तल पर बैठ जाया करते हैं ।

ऐसा सदाही होता रहता है । मीलों तक इसी प्रकार सदा गाद की तहें जमती रहती हैं । इसी प्रकार बड़े बड़े सरोवर भी भर भर कर समभूमि हो जाते हैं । इसमें सन्देह नहीं कि सहस्रों वर्ष में इतना होता है कि हम जान सकें परन्तु ऐसा सदाही होता रहता है । कुछ काल पहिले कलकत्ते का स्थान समुद्र तल में था। इसी प्रकार गाद के एकत्रित होते होते वहां का स्थान ऊंचा हो गया और अब वह भारतवर्ष का एक बड़ा शहर है ।

इन सब बातों से यह सिद्ध हुआ कि लाखों वर्ष में इन्हीं रोड़ों के ढेर इकट्ठा हो हो कर रोड़ेदार शिला, बालू से रेतीली और कादे से पंक शिलाएं बन जाती हैं । इसी सम्बन्ध में एक बात और भी स्मरण रखने की है कि रोड़े वहीं तक मिलते है जहां तक प्रवाह का वेग बहुत तीव्र रहता है। मोटे और महीन रेत कम वेग में भी एकत्रित हो जाया करते हैं और कादा तो अति मन्द प्रवाह किंवा स्थिर जल में नीचे बैठता है । इन बातों से हम ठीक ठीक अनुमान कर सकते हैं कि रोड़ेदार शिला जहां बनी होगी वहां तक प्रचण्ड जल प्रवाह रहा होगा और बलुए पत्थर की शिलाएं जहां हैं वहां प्रवाह मन्द न रहा होगा परन्तु पंक-शिला तो अवश्य ऐसे स्थान पर बनी होगी जहां जल स्थिर नहीं तो अति मन्द अवश्य रहा होगा ।

बालू इत्यादि का शिला हो जाना ।

अब यह देखना है कि यह सब गाद जो मृदुल है कठोर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शिला कैसे बन सकता है। यह बात इस उदाहरण से भली भांति समझ में आजायगी। थोड़ी सी तर मिट्टी वा रेत लेकर यदि उसे किसी बरतन में इस तरह से खूब दबावें कि उसका जल निकल जाय और यह गाद कुछ देर तक खूब दबी रहे तो यही गाद जो पहिले मृदुल थी अब अत्यन्त कठोर हो जायगी।

इस परीक्षा के सिद्धान्त को स्मरण रखकर फिर समुद्र वा सरोवर की ओर जो ध्यान देकर विचारें तो पाते हैं कि गाद की तहें जो एक दूसरे पर मीलों लम्बी और सहस्रों फुट ऊंची समुद्र तल में एकत्रित हो रही हैं उनका बोझ नीचे वाली तहों पर होगा जिसका सब लोग अनुमान कर सकते हैं। जब इस बोझ के दबाव (Pressure) से गादीय तहें जम जाती हैं और एक दूसरे के साथ सट कर कठोर हो जाती हैं तो यही पहाड़ और पत्थरीली शिलाएं कहलाती हैं। इसमें सन्देह नहीं कि इस कार्य्य में लाखों वर्ष व्यतीत हो जाते हैं पर इन गादीय शिलाओं के बनने का कारण यही हैं।

इन बातों के देखने से विदित होता है कि जो शिला वा पहाड़ हम देखते हैं वे इसी प्रकार कड़ोरों वर्ष पहिले के बने हैं जैसा कि उनके घिसे हुए कणों से प्रगट होता है। और ये शिला वा पहाड़ चाहे कितने ही कड़े और समुद्र से दूर हों पर वे किसी समय अवश्य जल के नीचे थे। यही नहीं वरंच यह भी सिद्ध होता है कि रोड़ेदार शिला छिछले जल में और बलुआ पत्थर वा पंक शिला गहरे जल में बने हैं।

यह भी स्मरण रहे कि नदियों के द्वारा लोहचून चूना इत्यादि बहुत से संयोजक पदार्थों (Cements) के कण भी गाद के संग बैठ जाते हैं अथवा जल के साथ छन छन कर गाद के बीच में रह जाया करते हैं। इस अन्तिम क्रिया को च्यवन क्रिया (Infiltration) कहते हैं। इनसे गाद के कण आपस में सट जाते हैं और शिलाओं का रंग भी इन्हीं पदार्थों के रंग के अनुसार होता है। गाद की तहें जो मोटी वा पतली जमा करती हैं उनको स्तर (Stratification) और इन स्तरों से बनी शिलाओं को प्रस्तर शिला (Stratified Rocks) कहते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गादीय शिलाओं के तीन प्रकार जो लिखे गए हैं उनके बनने का कारण और क्रम लिखा गया। अब इन शिलाओं की परीक्षा खूब ध्यानपूर्वक करने से कभी कभी इन शिलाओं में पेड़, पत्ते, जन्तु इत्यादि के स्पष्ट काले चिन्ह और आकार भी देखाई देते हैं और ये प्रायः कोयले के बने होते हैं। अब यह देखना है कि ये आकार क्या हैं?

(छठां और सातवां चित्र देखे)

ऊपर लिखा जा चुका है कि जल प्रवाह के वेग में जो कुछ पड़ता है वह उसके साथ बह जाता है। यदि किसी पेड़ की डाल पत्ते सहित किसी गाद में रुक गई और सड़ने गलने के पूर्व ही गाद की दूसरी तह के नीचे दब गई तो इन पत्तों के आकार उस मृदुल गाद की तह पर मुद्रित हो जांयगे और अधिक दबाव पड़ने से तो उनकी नसें तक उस तह में उभर आवेंगी। यही आकार काल पाकर भी ज्यों के त्यों बने रह जांयगे और शिला कठोर होती जायगी। पेड़ की डाल और पत्तियां कुछ काल में सड़ कर अथवा रासायनिक क्रिया से कोयला होकर रह जायंगी। इन आकारों को यदि खुरच लें और उसे जलादें तो थोड़ी सी राख और कुछ बालू के अंश जो खुरचने में निकले थे शेष रह जांयगे। यह राख अवश्य उन पत्तियों का अंश है जो काल पाकर कोयला हो गई हैं। इसी प्रकार झील अथवा समुद्र के जन्तुओं के घोंघे वा सीप जो गाद में दब कर मुद्रित हो गए थे इन शिलाओं में कभी कभी पाए जाते हैं। इनके अंश जलाने से चूना रह जाता है। यही कारण है कि पहाड़ों में पोर्सों गहरा खोदने पर भी ऐसे चिन्ह निकला करते हैं। गाद के अन्दर जो वृक्ष अथवा जन्तुओं के शेष-पिण्ड (remains) इत्यादि रह जाते हैं इस को **मध्यस्तर** (Inter-stratification) कहते हैं।

इन वृक्षों अथवा जन्तुओं के शेष-पिण्ड के आकारों से जाना जा सकता है कि ये शिलाएं बड़े सरोवर में बनी किंवा समुद्र में क्योंकि जो वृक्ष समुद्र तट पर होते हैं अथवा जो जन्तु समुद्र में रहते हैं उनमें से बहुत ऐसे हैं जो ऊपर की भूमि पर वा मीठे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पानी की झीलों में नहीं पाए जाते। इस से हम जान सकते हैं कि इन शिलाओं की उत्पत्ति कहां हुई।

पत्थर की खान वा प्रस्तराकर (Quarry) की देख भाल।

पहिले हम पाठकों को ऐसी खान में ले चलते हैं जिसकी बनावट सीधी सादी और जहां शिलाओं के स्तर क्षितिज-धरातल (horizontal plane) में हों।

(सातवां चित्र देखो)

इसको देखते ही आप कह देंगे कि नीचे की शिलाओं के स्तर (strata) सब से पुराने होंगे क्योंकि पहिले उन्हीं की तह जमी होगी और फिर उसके ऊपर के स्तर यथाक्रम जमा हुए होंगे और न्यून काल की शिलाएं सबसे ऊपर की स्तर वाली है क्योंकि इस की तह सबसे पीछे पड़ी होगी।

इस खान के देखने से आप लोगों को एक नई बात यह देखाई देगी कि इसमें कई खण्ड हैं जो एक दूसरे से कुछ जुदे परत वाले हैं और उनके रंग, रूप और बनावट में भी भेद है। इस के देखने से यह अनुमान होता है कि ये खण्ड एक काल में नहीं बने हैं किन्तु एक के पश्चात दूसरे बने होंगे। इस क्रम को उपर-स्थखण्डक्रम (Order of superposition) कहते हैं।

परीक्षा करने के लिये जब किसी स्थान को खोदते वा काटते हैं तो इसको भेदन-क्रिया (Section) कहते हैं। उक्त खान में भेदन क्रिया करके जब परीक्षा की जाती है तो कई विचित्र चिन्ह और बातें देखने में आती हैं। मान लो कि इस खान में एक शिला ऐसी मिली जिस पर लहरियेदार चिन्ह हैं और दूसरी शिला ऐसी मिली जिस पर 'माता के दाग' से छोटे छोटे गड़हे पड़े देखाई देते हैं। इनको देख कर विचार होता है कि ये चिन्ह क्या हैं और क्योंकर बने होंगे? इनसे क्या फल निकाला जा सकता है?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इन प्रश्नों पर विचार करने के लिये हमको फिर नदी तट पर जाना पड़ता है। नदी के किनारों पर जो गाद पड़ी है उस पर जल की तरङ्गों के चिन्ह ठीक लहरियेदार पड़े दिखाई देते हैं। जल की लहरें अपना आकार उस नरम गाद वा रेत में बनाती रहती हैं। ये लहरियेदार चिन्ह नित्य बिगड़ते और बनते रहते हैं। यदि किसी स्थान पर के लहर के आकार किसी कारण से विनष्ट न हों और कुछ दिन बाद उन पर नई तह गाद की जम जाय तो ये चिन्ह बनेही रहेंगे और गाद के साथ कठोर होजांयगे। इससे यह अनुमान होता है कि यह शिला जिसमें लहरियां हैं छिछले जल में किंवा जल के किनारे पर बनी होगी।

अब 'माता के दाग वाली' शिला का कारण खोजना है। समस्त रेत खोजने पर भी वैसे चिन्ह जल्दी देखने में नहीं आते। मान लिया जाय कि जिस समय हम खोज कर रहे हों कुछ पानी की बून्दें पड़ जांय तो अब जिन रेत की चट्टानों को हमने पहिले साफ़ पाया था उन पर अब बड़ी बून्दों के चिन्ह छोटे गड़हे सरीखे पड़े पाते हैं और जल बालू के अन्दर प्रवेश कर गया है। यदि येही गड़हे वायू अथवा अन्य किसी कारण से नष्ट न होजांय और इन पर नई परत रेत वा गाद की पड़ जाय तो येही चिन्ह बने रहजायगे, इसे देखकर हम विचार कर सकते हैं कि वह शिला जिसपर 'दिउलियां' सी पड़ी हैं सूखे में अर्थात् जल के बाहर की सतह है। इसकी उत्पत्ति अवश्य जल से बाहर के स्थान की है।

इसी प्रकार जन्तुओं के शेष-खण्ड के चिन्हों से पता लग सकता है कि इस शिला की उत्पत्ति जिसमें ये चिन्ह हैं कहां की है। यदि वह जन्तु ऐसा है कि जो समुद्र ही में पाया जाता है तो हम कह सकते हैं कि यह शिला समुद्र के भीतर वा उसके तट पर की है। कोई कोई जन्तु ऐसे हैं जो समुद्र के गहरे जल में रहते हैं कोई कम गहरे जल में होते हैं। इनसे भी हम जान सकते हैं कि शिला अधिक गहरे वा कम गहरे जल में उत्पन्न हुई है। किसी पहाड़ में यदि ऐसे जन्तु के चिन्ह पाए जांय जो मीठे जल में रहा करते हैं तो हम दृढ़ता पूर्वक कह सकते हैं कि ये शिलाएं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किसी बड़े सरोवर में उद्भूत हुई होंगी। चाहे अब वहां जल नाम मात्र को न हो।

यदि हिमालय पहाड़ में खान खोदी जाय और वहां ऐसे जीवों के आकार वा शेष-पिण्ड मिलें जिनके समुद्री जन्तु होने में कोई सन्देह न रहे तो हमको इस बात के कहने में संकोच न होगा कि किसी कालान्तर में ये पहाड़ समुद्र में बने होंगे, नहीं तो ये समुद्री जीव के शेष-पिण्ड वा उनके आकार-चिन्ह वहां कैसे मिलते। यदि इन खानों में ऐसी वस्तुएं पाई जांय जो समुद्र में अथवा समुद्र के निकट नहीं पाई जातीं तो अवश्य यह कहना पड़ेगा कि यह भाग किसी बड़े सरोवर में वा उसके किनारे पर बना होगा।

(२) तनूद्भव* शिला (Organic Rocks)

तनूद्भव शिला का अर्थ हुआ वह शिला जो जीव वा वृक्ष के शेष-पिण्ड से बनी हो। अब देखना है कि वृक्ष वा जीव के शेष-पिण्ड (Remains) से शिलाएं कैसे बनी होंगी। पहिले हम जीव जन्तु के शेष-पिण्ड से शिलाओं के बनने की रीति की जांच परताल करते हैं।

(क) जीव के शेष-पिण्ड से शिला बनना।

जो लोग समुद्र के तट देख आए हैं वे भली भांति जानते हैं कि समुद्र के किनारे मछुवे गढ़हे खोद देते हैं जिनमें समुद्र की लहरों के साथ भांति भांति के जन्तु, सीप, शंख, मूंगों की डालें आ आ कर रह जाती हैं। इससे हम समझ सकते हैं कि समुद्र में सीपवाले अर्थात् शाम्बुकी जन्तु अधिक रहते हैं। जब अमेरिका और बृटन के बीच में समुद्रीतार (cables) बिछाई गई थीं तब समुद्र तल की जांच परताल खूब की गई थी। इस जांच से बहुत सी बातें नई जानी गई थीं। इनमें से एक यह भी बात जानी

* तनूद्भव शब्द संस्कृत तनु=शरीर वा तन और उद्भव=उत्पन्न होना से बना है। तनु शब्द शरीर का वाची है। किसी जीव के शरीर को 'तनु' कह सकते हैं। इसी का अपभ्रंश हिन्दी में 'तन' है और इसी शब्द का अपभ्रंश 'तना' भी निस्सन्देह मालूम होता है जो वृक्ष इत्यादि के लिये प्रयोग किया जाता है जैसे 'पेड़ का तना'। अतएव 'तनु' शब्द जीव और वृक्ष दोनों के शेषपिण्ड के अर्थ में यहां प्रयोग किया गया है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गई कि किसी किसी स्थल में उक्त जन्तु बहुतायत से होते हैं और किसी जगह कम और ये सब एक विशेष गहराई में ही पाए जाते हैं। जहां कहीं ये जन्तु अधिकतर रहते हैं वहां उनके मरने पर उन के शेष-पिण्ड पड़े रह जाते हैं और इनके ऊपर उनकी सन्तान अपना डेरा जमाती हैं। इसी प्रकार इनके मरने पर इनका भी ढेर वहीं लग जाता है और कुछ काल में इन शेषपिण्डों का टीला बन जाता है। ये टीले, अपने ही बोझ से वा उन पर दूसरे पदार्थों की गाद जमने पर उनके बोझ से चूर चूर होकर और दबकर, कठिन शिला बन जाते हैं। येही शिलाएं चूने के पत्थर (Limestone) अथवा खड़िया (chalk) की शिलाएं कहलाती हैं।

यह बात सभी लोग जानते हैं कि सीप, शंख, कौड़ी इत्यादि जलाने से चूना हो जाती हैं जिससे पाया जाता है कि उनमें चूने का अंश अधिकतर है। उक्त शाम्बुकों का ढेर चारों ओर से दबकर और भूम्योदर की उष्णता पाकर अन्दर ही अन्दर चूना हो जाता है। इसी प्रकार जब उक्त जन्तु दूसरे स्थान पर चले जाते हैं तो वहां भी उनके ढेर की तह उक्त प्रकार से जमती रहती है और जब इन तहों पर कदाचित गाद की तह जमने लगे तो कालान्तर में ये शिलारूप धारण करलेंगी और अनेक प्रकार के कणों और पदार्थों से मिलकर ये कई तरह की शिला हो जांयगी। ये शिलाएं जन्तुओं के शरीर खण्ड से बनी हैं इसलिये इनकी तनूद्भव वर्ग में गणना करनी उचित हैं।

(आठवां चित्र देखो)

बड़े बड़े सरोवरों में भी घोंघों के ढेर लगकर ऐसी शिलाएं बना करती है।

(ख) वृक्षों के शेष-खण्ड की शिलाएं वा पत्थर के कोयले।

इस पृथिवी पर नित्य प्रति भूपरिवर्तन (Terrestrial changes) होतेही रहते हैं। इतिहासों से मालूम होता है कि अनेक बड़े बड़े देश समुद्र तल में मग्न हो गए तथा अनेक देशों में समुद्र तल की भूमि ऊपर निकल आई है भूकम्प से कभी कभी ऐसे घोर उपद्रव प्राचीन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

काल में हुए हैं कि जिनके कारण पृथिवी के बड़े बड़े भाग समुद्र में डूब गए और अफ्रिका ऐसे महाद्वीप समुद्र से बाहर निकल आए हैं। इन बातों का सबूत भली भांति मिल चुका है। अब भी कभी कभी भूकम्प द्वारा छोटे छोटे उपद्रव देखने में आते हैं। सन् १८१९ ई० में कच्छ देश में ऐसा भूडोल आया था कि जिससे 'भुज' नामक देश नष्ट हो गया और सुन्दरी नामक नगरी जलमग्न होगई, तथा अंजर का कोट भूमि में धस गया। इस भूकम्प का धक्का अहमदाबाद तक मालूम हुआ था जहां की एक बड़ी मसजिद गिर गई।

समझने के लिये उक्त उदाहरण काफ़ी हैं कि ऐसे ही परिवर्तनों के कारण अनेकानेक घने जंगल समुद्र में डूब गए और इन वृक्षों और लताओं पर गाद की तहें जमने लगीं। कभी कभी इन गादों की पतली तहों पर पुनः वृक्ष उत्पन्न हो आए और जंगल से घनिष्ट हो गए और यह जंगल पुनः जलमग्न हो गया और अन्य पदार्थों की गाद के नीचे दब कर रह गया। वृक्षों के तने जो दब गए वे ही कालान्तर में कोयला स्वरूप होगए। जैसे कि जङ्गल में लोग बन्द गड़हे में लकड़ियां जला कर कोयला बनाते हैं जिस से लकड़ियां राख नहीं होने पातीं कोयला बनकर ही रह जाती हैं। उसी प्रकार से ये दबे हुए जङ्गल भूम्यन्तर के ताप से कोयला हो जाते हैं और ऊपर के दबाव के कारण कठोर कोयले की शिला का रूप धारण कर लेते हैं।

इन कोयलों की तहों में वृक्षों की नसें, रेशे, और शाखाएं कोयले के स्वरूप में प्रायः पाई जाती हैं। इस कोयले के टुकड़ों की रासायन और सूक्ष्मदर्शक यंत्र द्वारा परीक्षा करने पर निश्चय होता है कि ये अवश्य वृक्ष के अंश हैं। पत्थर के कोयलों की तहों के नीचे की भूमि प्रायः पङ्क–गाद की होती है जिनमें वृक्षों की जड़ों के आकार मिलते हैं।

पत्थर के कोयले वृक्षों के ही बने होते हैं (और अब विज्ञान शास्त्र में भी वृक्ष जीवधारी माने जाते हैं) अतएव इनकी गणना तनूद्रव वर्ग में करना अनुचित नहीं है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गादीय-शिला और तनूद्भव शिला के बनने का क्रम लगभग एकहीं है परन्तु उनके मूल तत्व में बहुत बड़ा भेद है। अब आग्नेय शिला का वर्णन किया जाता है जिसके मूल तत्व और बनावट के क्रम में भी बड़ा अन्तर है।

(३) आग्नेय * शिला (Igneous Rocks)

आग्नेय शिलाएं इतनी अधिक नहीं पाई जाती हैं जितनी कि अन्य शिलाएं। इन शिलाओं की बनावट में एक विशेषता यह है कि इनमें अन्य शिलाओं की तरह स्तर नहीं होते। ये शिलाएं स्तरविहीन वा समपिण्डीकृत (unstratified or massive) होती हैं। इनका प्रादुर्भाव ज्वालामुखी पर्वतों द्वारा होता है।

ज्वालामुखी पहाड़ का वर्णन भूगोल विद्या में आप लोगों ने पढ़ा होगा। भारतवर्ष में बड़ा ज्वालामुखी पर्वत अब ऐसा कोई नहीं है जो सदा प्रज्वलित रहता हो। पर चटगांव और पेगू के पश्चिम भाग में जावा टापू तक ज्वालामुखी का होना पाया जाता है। इस समय जगत में सब से बड़ा ज्वालामुखी पर्वत इटली (*Italy*) देश में माउंट वेसूवियस (Mt. Vesuvius.) है। इन पर्वतों से ज्वाला क्यों निकलती है इसका वर्णन संक्षेप में यहां कर देना उचित जान पड़ता है।

विज्ञान शास्त्र से यह सिद्ध हो चुका है कि आदि सृष्टि में यह पृथ्वी अग्निवत् तपती हुई मानो अग्निपिण्ड ही थी जो धीरे धीरे ठंढी होते होते इस अवस्था को प्राप्त होगई है कि इस पर जीव बसने लगे। इस पृथ्वी का ऊपरी भाग तो ठंढा होगया है पर अभी इसके उदर में उत्कट ताप है। जैसे किसी प्रज्वलित अङ्गार को यदि ठंढा करदें तो भी कुछ देर तक उसके अन्दर अग्नि बनी रहती है। पृथ्वी के उदर में अब भी अग्नि है इसके प्रमाण मिलते हैं जो संक्षेप में लिखे जाते हैं।

* आग्नेय शब्द अग्नि से बना है जिसका अर्थ है अग्नि वाला अर्थात जिस की उत्पत्ति अग्नि के कारण हुई। पृथ्वी की आन्तरिक अग्नि से इनका बहुत कुछ सम्बन्ध है जैसा कि इनके विवर्ण में प्रगट होगा अतएव इनका वर्ग नाम आग्नेय शिला रक्खा गया है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(क) जब पृथ्वी में गहरी खान खोदते हैं, तब ज्यों ज्यों खान गहरी होती जाती है गरमी भी अधिक बढ़ती जाती है; गहरी खानों में यह उष्णता नित्य एकही बनी रहती है अर्थात् बाहरी ऋतुओं का कोई प्रभाव उस पर नहीं पड़ता। यह आन्तरिक ताप प्रति ५० वा ६० फुट गहराई में 1° (एक अंश) के हिसाब से बढ़ता ही जाता है यहां तक कि दो तीन मील की गहराई पर इतनी गर्मी है कि पानी खोलने लगता है और बीस वा पच्चीस मील अन्दर में कड़ी धातु भी गल जा सकती है, भूमध्य के ताप का तो क्या कहना है।

(ख) ज्वालामुखी पर्वत से ज्वाला और गले हुए पत्थर और अन्य पदार्थों का निकलना।

(ग) आइसलैण्ड (Iceland) में कभी कभी गरम जल का फौहारा किंवा जल-धारा-स्तम्भ (Geyser) का कई फुट ऊंचा निकलना।

(घ) अनेक स्थानों पर गरम सोतों का होना (भारतवर्ष में भी ऐसे बहुत से कुण्ड हैं जैसे मुंगेर में सीताकुण्ड बद्रिकाश्रम में कई ऐसे कुण्ड हैं)।

इन सब बातों से निश्चित होता है कि भूमध्य में निस्सन्देह उत्कट ताप है। इसी अग्नि का कुछ अंश जब किसी छिद्र द्वारा बाहर निकलता है तो उसको ज्वालामुखी पर्वत कहते हैं। इस ज्वाला के साथ कई प्रकार के द्रव्य निकला करते हैं इनमें से दो प्रकार के मुख्य द्रव्य हैं (१) पिघला हुआ एक प्रकार का द्रव्य जिसे (Lava) लावा कहते हैं और (२) रेत, पत्थर, राख, मिट्टी, इत्यादि खनिज पदार्थ।

(नवां चित्र देखो)

जब ज्वालामुखी पर्वत भभक उठता है तो उक्त पदार्थ आकाश में कई सौ फुट और कभी कभी कई मील ऊंचे उड़ उड़ कर चारों ओर दूर तक गिरा करते हैं। कभी कभी तो इनसे बड़े बड़े देश नष्ट होगए हैं। जब यह पर्वत दहकता है तो भूकम्प प्रायः होता है। सन् १८२२ ईस्वी में जब वेसुवियस का ज्वालामुखी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धधका था तब २० दिन तक उसमें से बहुत से द्रव्य निकल कर दूर दूर तक गिरते रहे थे जिनसे बड़े बड़े दून और गर्त भरगए। अन्त में यह जोर कम होगया। रोम का विख्यात देश ऐसे ही उपद्रव से नष्ट होगया। सन् १९०३ में इस ज्वालामुखी के उद्गार से टापू में कितनी हानि हुई यह आप लोगों ने समाचार पत्रों में पढ़ाही होगा। यह तो एक छोटा सा उपद्रव था; प्राचीन काल में बड़े बड़े घोर उपद्रवों का होना ज्वालामुखी के भयानक उत्क्षेप (Eruption) से पाया जाता है। अस्तु ज्वालामुखी पर्वतों से भिन्न भिन्न प्रकार के द्रव्य निकला करते हैं पर इनमें से दो द्रव्य मुख्य करके निकला करते हैं अर्थात् लावा (Lava) और भस्म। लावा नामक द्रव्य पिघला हुआ द्रव रूप में ज्वालामुख (Crater) से निकला करता है। कभी कभी यह बहुत पतला होने के कारण मीलों दूर तक बह जाता है और इससे बड़े बड़े गर्त और दून (valleys) भरजाते हैं पर प्रायः यह कुछ गाढ़ा होने के कारण दूर तक नहीं बह सकता और जल्दी ठंढा होकर जम जाता है। लावा का अंश जो ज्वाला में ऊंचे उड़ कर गिरता है और अन्य पदार्थों की तहों के नीचे दबजाता है वही मध्यस्तरित (Interstratified) अवस्था में मिलता है। कभी ऐसा भी होता है कि यह लावा बाहर नहीं निकलता किन्तु पर्वतों की दरारों (Fissures) और नलियों द्वारा उनके अन्दर ही अन्दर दूर तक बह कर जम जाता है। झांवां (Pumice) और संगे कलवा वा भैसा (Basalt) मुख्य करके लावा के अंश से ही बनते हैं। लावा बाहर निकलने पर ऊपर तो बहुत जल्दी ठंढा हो जाता है परन्तु उसके अन्दर बहुत दिनों तक (कभी कभी बरसों तक) ताप बना रहता है। मिट्टी और राख इत्यादि से मिलजुल जाने पर ज्वालामुखी भस्म (Volcanic ashes) को जली हुई राख न समझ लेना चाहिए वरंच इससे तात्पर्य उस रज (dust) और द्रव्य-खण्डों (Fragmental materials) से है जो ज्वालामुख से निकला करते हैं। ये द्रव्य-खण्ड बड़े बड़े ढोकों के समान और बहुत महीन धूल के समान अर्थात् भिन्न भिन्न परिमाण के होते हैं। यह ज्वालामुखी रज

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(Volcanic dust) एकत्रित होकर दृढ़ हो जाती है और उसमें छिद्र वा विवर हो जाते हैं। इसको ज्वालामुखी जटा (Valcanic tuff) कहते हैं। भूमि के अन्दर जो अग्निवत अतितप्त पदार्थ हैं वही ज्वालामुख द्वारा निकला करते हैं। इन्हींको आग्नेय शिला कहते हैं। जो तप्त शिलाएं पूर्वकाल में भूडोल के कारण बीच से उभड़ कर ऊपर आगई हैं वेही आग्नेय शिला प्रायः उन देशों में भी पाई जाती हैं जहां ज्वालामुखी का चिन्ह मात्र भी नहीं है। ये आग्नेय शिलाएं उसी समय की बनी हैं जब पृथवी अग्निपिण्ड से धीरे धीरे ठंडी होने लगी थी। इन शिलाओं के, ग्रानाइट, स्फटिक, झावां, अभ्रक रव इत्यादि अंशमात्र हैं।

जैसा ऊपर लिख आए हैं ग्रानाइट में फेलोपल (Felspar) और अभ्रक और स्फटिक के अंश होते हैं। यह ग्रानाइट ज्वालामुखी से बाहर निकले हुए ढेर में ही अधिक नहीं पाए जाते किन्तु पर्वतीय दरारों और छोटी छोटी कन्दराओं में भी पाए जाते हैं। जब ये ग्रानाइट उष्णता, जल, पाला इत्यादि के कारण विनाश होने लगते हैं तो फेलोपल के कण (जो बहुत काल में विघट्टन (decomposition) को प्राप्त होते हैं) इधर उधर लुढ़क कर रह जाते हैं। फिर इनके अंश, पोटाश और सिलिकेट सोडा (silicate soda) जल के साथ घुल मिलकर बह जाते हैं और सिलिकेट अलूमिनम (silicate of alumina) एकत्रित हो जाने पर चीनिया मिट्टी (china clay) बन जाते हैं। ग्रानाइट के शेष भाग अभ्रक और स्फटिक के कण बह बहाकर रेत में पाए जाते हैं।

अब आप लोगों ने अच्छी तरह समझ लिया कि इन शिलाओं का सम्बन्ध भूमध्यस्थित अग्नि से कितना है। अतएव इनको 'आग्नेय शिला' कहना अनुचित और न्यायविरुद्ध नहीं है।

(४) विकृत शिला (Metâmorphic Rocks)

ऊपर जो हम स्तरमय अथवा स्तरविहीन शिलाओं के विषय में लिख आए हैं उनके सिवाय एक प्रकार की शिलाएं और भी देखने में आती हैं जो यद्यपि स्तरमय शिला ही हैं पर उनका

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रूपान्तर हो जाने से वे परिणामी वा विकृत शिला कहलाती हैं। इनमें जीव-शेष-पिण्डों के चिन्ह भी अन्यथा भाव को प्राप्त हो जाते हैं। इसी प्रकार की शिलाओं में संगमर्मर स्लेट और नीस (gneiss) हैं। इस रूपान्तर के हेतु उष्णता जल और दबाव (pressure) हैं। स्मरण रहे कि आग्नेय शिला की बनावट पहलदार (जिसे 'कलमदार' कहते हैं) होती है और गादीय शिला कलमी (crystalline) नहीं होतीं। परीक्षा द्वारा देखा गया है कि बहुत से द्रव्य ऐसे होते हैं जो द्रव होकर जब फिर जमने लगते हैं तो वे एक न एक विशेष रूप धारण कर लेते हैं अर्थात् एक जाति के पदार्थ एक ही स्फटिकाकार स्वरूप में जमते हैं। इसी को कलम बनना वा स्फटिकीकरण (crystallization) कहते हैं। इसी धर्म के अनुसार ज्वालामुख से जो गले हुए द्रव्य बाहर निकल कर जमते हैं वे स्वभावतः अपना विशेष रूप धारण कर लेते हैं। शिलाएं स्फटिकाकार और अस्फटिकाकार दोनों तरह की होती हैं। इनका क्रम नीचे लिखे नक्शे से भली भांति समझ में आ जायगा।

स्फटिकाकार वा कलमी शिला	आग्नेय वर्ग—जैसे ग्रानाइट, भैसा पत्थर जलीय वर्ग—जैसे लवण, चूनप्रद पाषाण (Limstone) विकृत शिला वर्ग—जैसे संगमरमर, नीस पत्थर (Gneiss)
अस्फटिकाकार वा बिना कलम की शिला	आग्नेय वर्ग—जैसे ज्वालामुखी रज जलीय वर्ग—जैसे बलुआ पत्थर, पंक

यहां इतना और कहदेना आवश्यक है कि गादीय शिला और तनूद्भव शिला (Organic Rocks) प्रायः जल में ही बनती हैं इस लिये इन दोनों को जलीय शिला (Aqueous Rocks) भी कहते हैं।

इस भूमि पर जो कई प्रकार की मिट्टी मिलती है वह इन्हीं विविध प्रकार की शिलाओं के चूर (Loose) कणों से मिलजुल कर बनी हैं जिनसे वृक्ष इत्यादि का पोषण होता रहता है।

पर्वतों की शृंखला और अवस्था।

संक्षेप में मालूम हो गया कि भिन्न भिन्न वर्ग की शिला किस प्रकार और किन द्रव्यों से बनी हैं। प्रायः सभी पर्वत इन्हीं शिलाओं में से किसी न किसी शिला के ही होते हैं। गादीय शिला पहिले

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पहल अवश्य क्षितिजधरातल (horizontal plane) में तह पर तह जम कर बनी होंगी जैसा ऊपर सविस्तर वर्णन किया जा चुका है पर जब हम पर्वतों को देखते हैं तो उनकी चोटी वा ऊपरी भाग को जलपृष्ठ (water surface) से सहस्रों फुट ऊंचा पाते हैं। सभी पर्वतों का शिला-स्तर (strata) क्षितिजधरातल में नहीं है, वरंच कोई टेढ़ा है, कोई झुका, कोई खड़ा, कोई आकुंचित और कोई चटका वा फटा हुआ। इनका अवस्थान्तर और उलट पुलट कैसे हो गया? यह बात न तो अनुभव में आती और न मानी जासकती है कि समुद्र के नीचे धस जाने से पर्वत ऊपर रह गए हों वा जल में ही वे टेढ़े मेढ़े बने हों क्योंकि जल में जो कुछ गाद बैठती है वह समान ही स्तराकार बैठती है टेढ़ी मेढ़ी नहीं जमती। इस तरह यदि एक स्थान पर समुद्र घटता तो दूसरे देशों में भी वैसा ही परिवर्तन अवश्य देखने में आता परन्तु ऐसा परिवर्तन समुद्र में कहीं देखने में नहीं आता किन्तु भूमिभाग उभरता और धसता देखने में आता है। कभी कभी कोई भूमिभाग हठात् उभर आता वा धस जाता है। इसके अतिरिक्त किसी किसी देश में धीरे धीरे भूमि भाग ऊपर उभरता और धस्ता पाया जाता है। यह धसाव कुछ तो भूकम्प के कारण और प्रायः इस कारण से होता रहता है कि भूमध्य अग्नि ज्यों ज्यों धीमे धीमे मन्द और ठंढी होती जाती है भूपृष्ठ भी संकोच को प्राप्त होता जाता है। इस आकुंचन होने में जो भूमि पूरे और समान दबाव में नहीं पड़ती वही ऊपर को वा नीचे को खिसक जाती है। इस आकुंचन से वा अन्य किसी कारण से जब भूपार्श्व का दबाव किसी शिला वा पर्वत खण्ड पर चारों बग़ल से पड़ता है तो उन पर्वतों में जो उस समय तक अति कठोर नहीं हुए रहते सिकुड़न सी पड़ जाती है। जैसे किसी कपड़े की समान तहों को चारों बग़ल से दबावें तो उसमें सिकुड़न पड़ जाती है।

(दसवां चित्र देखो)

और जो पर्वत अति कठोर हो गए हैं वे दबाव से चटक कर फट जाते हैं। जो देश कि एक ओर से उभरता और दूसरे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ओर से धसता रहता है उसकी शिलाएं ढालुवां हो जाती हैं और उन पर जो नए गाद के स्तर जमते हैं वे ढालुवें होते हैं। थारेएटन साहब लिखते हैं कि कान्डिया (Candia) नामक टापू के पश्चिम और दक्खिन की ओर प्राचीन यूनानियों के समय के नौका और जलयान बान्धने के चिन्ह अब समुद्र से १६ फुट ऊंचे मिलते हैं और बोथिनिया खाड़ी (Bothinia gulf) और स्कैण्डिनेवियन प्रायद्वीप (Scandinavian peninsula) में सन् १८२० तक के मल्लाहों के बनाए हुए नौका बांधने के चिन्ह तथा पहाड़ों के किनारे अब तक मिलते हैं जो पहिले जल के किनारे थे। सन् १८३४ में सर चारल्स लायल (Sir Charles Lyall) ने जो उनको नापा तो उन्हें पहिले से ४ इंच ऊंचे पाया। इस हिसाब से वहां की भूमि प्रति शताब्दि में लगभग अढ़ाई फुट ऊंची उभरती मालूम होती है। इसी प्रकार स्वीडन के दक्खिन भाग में जो घर पहिले समुद्र तट से दूर बनाए गए थे वे अब भूमि के नीचे धीरे धीरे धसते जाने से समुद्र तट पर आ गए और निकट के घर डूब गए।

भूकम्प के कारण बहुत से नए देश ऊपर निकल आए और बहुत से समुद्र में मग्न हो गए। ऐसे ही परिवर्तनों से कोई शिला पर्वत बनकर टेढ़ी हो गई, किसी का नीचे वाला भाग ऊपर को आगया, कोई भाग खड़ा हो गया। पर्वतों के पलटा खा जाने से भूगर्भ की जांच में बहुत कुछ लाभ हुआ है क्योंकि खोदकर न तो कोई वहां जा सकता था और न वहां का पता चलता, खुदाई का व्यय और परिश्रम कितना बच गया इसको आप लोग खूब समझ सकते हैं।

(ग्यारहवां और बारहवां चित्र देखो)

कहीं कहीं पर्वतों का कोई खण्ड बहुत ऊपर उभर आया और शेष खण्ड टूटकर नीचे ही रह गया है जैसा कि इस चित्र से ज्ञात होता है। इसको भग्न (Faults) कहते हैं। जो पर्वत कि ऐसे हैं कि जिनके शिला-स्तर एक दूसरे पर क्रम से पड़े हैं वे एक रूपी वा संगत (Conformable) कहलाते हैं और जिनमें कुछ शिलास्तर खड़े हैं और उन पर दूसरे शिला प्रस्तर लेटे पड़े हैं ऐसी प्रस्तर-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शिलाओं को विरूपी वा असंगत प्रस्तर (unconformable) कहते हैं जिनसे यह समझा जाता है कि नीचे वाली शिला पहिले की बनी हैं और ऊपर की शिलाएं उनके पश्चात् की।

(तेरहवां चित्र देखो)

साधारण रूप से आपको विदित हो गया होगा कि पर्वत कैसे बनते हैं और उनका स्थानान्तर कैसे होता है। जो कुछ लिखा गया है वह इस विद्या का एक अंश मात्र है। बहुत से पर्वत ऐसे हैं कि उनके प्रस्तर तथा उनकी बनावट ऐसी मिली जुली होती हैं कि उनकी परीक्षा करने में बड़ी कठिनता पड़ती है। वहां रासायनिक क्रिया द्वारा बहुत कुछ जाना जा सकता है। इस विषय को छोड़ देना ही उचित जान पड़ता है क्योंकि हिन्दी में अभी तक रासायनिक शास्त्र सम्बन्धी कोई पुस्तक नहीं बनी है और न केवल हिन्दी जानने वाले इस विद्या के नियमों को जानते हैं। उनके लिये उक्त विषय पर लिखना एक प्रकार व्यर्थ ही है। जो कुछ ऊपर लिखा गया उतनाही अभी उनके लिये काफ़ी है। अब हम यह दिखाते हैं कि इस विद्या से क्या लाभ हैं।

भूगर्भ विद्या से लाभ।

ऐतिहासिक लेखकों के लिये जैसे किसी देश के पुराने सिक्के इमारतें शिलालेख, कुछ लिपि-खण्ड इत्यादि उस देश बासियों के जीवन और रहन सहन बताने में काम के हैं, ठीक उसी प्रकार यह विद्या सृष्टिक्रम का मानों इतिहास है। देखने में आता है कि हिमालय पहाड़ खोदने पर शिलाओं के उदर से समुद्री जन्तुओं और समुद्र तट के वृत्तों के आकार मिले हैं तो यह अनुमान ठीक है कि ये पर्वत अवश्य समुद्र में बने होंगे क्योंकि इन शिलाओं का प्रस्तराकार बनना और समुद्री जन्तुओं का उनकी तहों के अन्दर मिलना प्रगट करता है कि ये अवश्य समुद्र में बने हैं। यह अनुमान किया जा सकता हैं (यदि ये शिलाएं उलट न गई हों) कि इस पर्वत का तल सब से अधिक प्राचीन है। सहस्रों वर्ष में गाद एकत्रित होकर और लाखों वर्ष में कठोर होकर यह पाषाण रूप बनी होगी और पुनः कुछ काल के उपरान्त भूपरिवर्तन द्वारा यह पर्वत रूप में ऊपर उभर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आई होगी । इङ्गलैण्ड देश के पर्वतों में ३५०० फुट मोटी खड़िया की शिलाएं हैं और जैसा कि परीक्षा और जांच से मालूम हुआ है कि प्रति वर्ष समुद्र तल में $\frac{1}{5}$ इंच गाद जमा करती है इसी क्रम को मानकर जो हम गणित करते हैं तो ३५००×१२×५=२१०००० वर्ष में उक्त शिला की तह जमी होगी और इस में बहुत कुछ काल अर्थात् जितने काल में इस का रूपान्तर और स्थानान्तर हुआ होगा और जोड़ना पड़ेगा । वैज्ञानिकों ने अनुमान और गणित द्वारा जाना है कि इस पृथ्वी को इस अवस्था में आए हुए लगभग एक अरब से दस करोड़ वर्ष तक का काल व्यतीत हुआ होगा ।

जो कुछ हो वैज्ञानिक पंडितों ने भूसृष्टि के आदि से अवतार उसकी भूगर्भरचना के अनुसार तीन कल्प या चार अवधियां मुख्य मानी हैं । इनके सिवाय कोई कोई आदि जीवसृष्टि के पूर्व का काल भी अर्थात् वह समय जब इस भूगोल पर जिव जन्तु उत्पन्न नहीं हुए होंगे मानते हैं । निम्न लिखित नकशे से स्पष्ट हो जायगा कि भूमि के भिन्न भिन्न पटल हैं और वे अवश्य भिन्न भिन्न काल में बने होंगे।

(चौदहवां चित्र देखो)

जो कुछ हो ऊपर की सारणी (Table) में भूपटल (Crusts of the earth) के आनुमानिक खण्ड दिए हैं जिनसे आप लोगों को उसके भिन्न भिन्न प्रकार की रचना के अनुसार उन खण्डों के रचना क्रम मालूम हो जांयगे । इसमें सन्देह नहीं कि सभी जगह यह क्रम बराबर नहीं मिलेगा, बीच बीच की श्रेणियों का अभाव भी देखने में आवेगा तोभी बहुधा भूपटल में कुछ न कुछ क्रम मिलेहीगा । जैसे रोड़े और बालू के नीचे कई प्रकार की चिकनी मिट्टी (clays ; इस के नीचे खड़िया; इस के नीचे कई प्रकार के चूनाप्रद-पाषाण (Limestones) होते हैं जो अपने अंशीभूत (Component parts) के कारण शाम्बुकीय वा चूनाप्रद (Oolite) कहलाते हैं । इनके नीचे विशेष जाति के बलुआ पत्थर; इनके नीचे कोयलामय अथवा कर्दमय (Carboniferous) चूनाप्रद-पाषाण (Limestones), इनके नीचे जीन (old) लाल पत्थर जिसे दैवीन शिलैं (Devonian) भी कहते हैं, और इनके भी नीचे शिलिंध्री

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शिला वा शीशे शिला (silurian) पाई जाती हैं। चाहे कोई बीच का भाग कहीं न निकले पर जब कहीं निकलेगा तो उसका क्रम वही होगा जैसा ऊपर लिखा गया है, अर्थात् खड़िया जहां कहीं पाई जायगी बालू और रोड़े के नीचेही होगी, इसी प्रकार शाम्बुकीय शिला खड़िया के नीचे ही होगी, ऐसा न होगा कि यह ऊपर और खड़िया नीचे। मान लो कि किसी खान के खोदने में अन्दर जाकर ऐसा पटल निकल आवे जो कर्बमय पटल के नीचे का है तो हम जान लेंगे कि यहां पत्थर का कोयला नहीं है, यदि होता तो पहिलेही निकलता। देखो इस विद्या से कितना परिश्रम और कितना व्यय बचगया।

निखात (Fossils)

जीव, जन्तु किंवा वृक्ष इत्यादि के शेष-पिण्ड अथवा उनके चिन्ह केवल प्रस्तर-शिला (Stratified Rocks) में ही पाए जाते हैं। हम उपर लिख आए हैं कि जब गादीय शिला की द्रव सामग्री स्थापित होने लगती है तो उसके साथ जन्तुओं और वृक्षों के कठिन पिण्डों के जो गलगला कर चूर नहीं हो जाते वा घुल मिल नहीं जाते उनके आकार बने रहजाते हैं। यद्यपि उनके रूपान्तर होजाते हैं तौभी वे पहिचाने जा सकते हैं। पहिले लोग इन चिन्हों को प्रकृति का विचित्रकार्य (Freaks of nature) मानते थे परन्तु अब भूगर्भवेत्ताओं (Geologists) ने सिद्ध कर दिखाया है कि ये तद्रूप चिन्ह हैं। ये वस्तु वा चिन्ह जो निखात कहलाते हैं विशेष विशेष शिलाओं की थाक (Layers) में विशेष विशेष स्वरूप के ही पाए जाते हैं। बहुत से निखात ऐसे हैं जिनके स्वरूप के जन्तु अब नहीं उत्पन्न होते। जैसे मास्टोडन (Mastodan) नामक जीव के शेष-पिण्ड मिलते हैं पर ये जीव अब देखने में नहीं आते। इनका रूप बड़े हाथी की तरह और दांत बड़े लम्बे होते हैं। ये चिन्ह अर्द्धपटल में ही मिलते हैं। इसी प्रकार अमोनाइट (Ammonite) नामक जन्तु के चिन्ह ली माट्टी में ही मिलते हैं। इसका आकार घूमी हुई सींग की नाईं होता है जिनपर चित्र विचित्र आकार बने रहते हैं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(कदाचित यह वही है जिसे हम लोग शालियामशिला कहते हैं) यह जन्तु भी अब नहीं पाया जाता। इसी प्रकार बहुत से जन्तुओं के निखात मिलते हैं और ये निखात भूपटल के भिन्न विभाग में भिन्न रूप के पाए जाते हैं। दैवीर अवधि में मछलियों का होना बहुत पाया जाता है। कर्बमय रचना के समय में उभयजीवि (Amphibian) जन्तु पाए जाते हैं जो जल और वायु दोनों में रह सकते हैं जैसे मेंढक इत्यादि। इसी प्रकार मध्यजीव युग में बहुपदक वा सर्पक जन्तुओं की अधिकता रही। इसी लिये इस युग को कीट युग (Age of Reptiles) भी कहते हैं। इस युग के अन्त में क्षुद्र जन्तु कम होने लगे और स्तनपायी (Mammals) जीव उत्पन्न होने लगे, मनुष्य और उत्तम पशुओं की उत्पत्ति चतुर्थ कल्प-अवधि के पूर्व नहीं पाई जाती। विदित होता है कि हिमानी युग (Glacial preriod) के पश्चातही इनकी उत्पत्ति हुई और भूगर्भवेत्ता यही समय इनकी उत्पत्ति का स्थिर करते हैं। यह हिमानी युग कब तक रहा होगा इसका निर्णय नहीं किया जा सकता।

इसी प्रकार वृक्ष, लता इत्यादि के निखात भी भिन्न समय में भिन्न भिन्न पाए जाते हैं। अति प्राचीन काल के तरु निखात ऐसे हैं जिनमें पुष्प नहीं होते।

जो कुछ ऊपर लिखा गया है उससे स्पष्ट रूप से समझ में आगया होगा कि पत्थरों के मुख्य तीन वर्ग हैं और तीन वर्गों के अंशीभूत तत्वों (Component parts) के अनुसार इनके जातिभेद और नाम होते हैं। इस विद्या और शास्त्र का पूरा वर्णन इस छोटे से लेख में लिखना असम्भव है तौभी प्रधान और मुख्य विषय इस नूतन शास्त्र का लिखदिया गया है जिससे इस पृथिवी की प्रथम अवस्था और उसके अन्दर के पटल और उनका क्रम, इसकी रचना और इस पर बसने वाले जीवों का वृतांत भली भांति जान सकते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हिन्दी की ओर से अपील ।

[पण्डित जगदेव उपाध्याय लिखित ।]

बन्दि चरन परमेश बड़न कहं सीस नवाऊं ।
हिन्दी हित की कथा हितैषी जनन सुनाऊं ॥
हिन्दी भाषा परम शुद्ध भाषन के माहीं ।
लखि सुवेष आबाल वृद्ध बनिता कोउ नाहीं ॥
जो नहिं मोहित होयं लखैं रिझवारे गुन को ।
नहीं मिलै जेहि माहिं लेश दूषण अवगुन को ॥
सोइ हिन्दी नागरी बरन में लिखी जाति है ।
महिमा बरनन जासु नहीं बुधि में समाति है ॥
लिपि नागरी अहै सब लिपि की रानी ।
नहिं अत्युक्ति कहाइ कहौं याको महरानी ॥
सोइ महरानी बनन चहति सम्राज्ञी प्यारो ।
सब मिलि प्यारो ! आवो अब कछु युक्ति बिचारो ॥
समय बहुत उपयुक्त, बहै अनुकूल वायु है ।
उज्ज्वल यश फैलाइ लेहु, लघु बहुत आयु है ॥
हे बंगाली वीर ! अग्रणी सकल काम के ।
देशहितैषी, परम धीर, निधि गुन ललाम के ॥
सब समाज में अधिक बली तेरो समाज है ।
तव गुन सुन्दर माहिं कहूं समता न आज है ॥
यदि समाज–हित को प्यारो ! तुम कछुक बिचारो ।
चिन्ता निज अरु देश मात्र की यदि हिय धारो ॥
तो शुभ चिन्तक बनो, चलो, कछु स्वारथ त्यागो ।
भारत को कल्यान करन को टुक अनुरागो ॥
नहीं कठिन कोउ काम तनिक जो तुम चित लावो ।
आवो प्रिय हित देश करन को पैर बढ़ावो ॥
तनिक चित्त जो देहु सुलभ अतिहि यह काम है ।
लघु श्रम को फल किम देखो अतिही ललाम है ॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सकल देश कल्यान करन के कारन प्यारो।
लिपि नागरी प्रचार सकल भारत पर पारो॥
सब भाषा के ग्रन्थ छपैं याही लिपि माहीं।
सब याही लिपि लिखैं करैं यामैं नहिं नाहीं॥
सब भारत में यही एक लिपि घर घर राजै।
ऐक्य बढ़े-सब ठौर माहिं आनन्द विराजै॥
हे बंगाली बीर, ऐसही यतन विचारो।
नहीं तुम्हारे लिये कठिन यह तनिक पियारो॥
मित्र शारदा चरण भले आगे आये हैं।
भले योग में चले-भले गुन भरि लाये हैं॥
चलो उन्हें ही सब मिलि के अब हिम्मत देवो।
उनहीं में दै योग- चलो सुन्दर यश लेवो॥
सब बातन में तीव्रबुद्धि तुम कहलाते हो।
यहि कारज में देर लाय क्यों बहलाते हो॥
सोचो, तनिक उठाय नेत्र जो तुम देखोगे।
लाभ बहुत सर्वत्र एक लिपि में लेखोगे॥
खोलो अब निज आंख दृष्टि योरप पर डालो।
सब देशन की भाषा अरु लिपि देखो भालो॥
फ्रांस, जर्मनी, रूस, स्पेन, इटली सुदेश हैं।
स्वीडन और अनेक, माहिं योरप जु देश हैं॥
सब की भाषा भिन्न भिन्न, लिपि मगर एक है।
इतने ही नहिं देश, सुनो औरों अनेक हैं॥
जो लिपि योरप माहिं वही अमरीका में है।
मूल मंत्र में बात वही सब टीका में है॥
आस्ट्रेलिया में और और टापू समूह है।
लिपि एकै सब माहिं- नहीं फिर कछु प्रत्यूह है॥
मिल इसका प्रत्यक्ष-लाभ सब खूब लहे हैं।
ऐक्य बढ़ावन हेतु सबै मिलि मूल गहे हैं॥
सब भाषा अनयास पढ़ैं इक लिपि रहने से।
सब है प्रबल समान तहां इकता गहने से॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किसी बात में रहे जहां समता ए भाई।
समता तहां अवश्य होयगी-ठिक ठहराई॥
यदि समस्त भारत में भाई समता चाहो।
रू ब भारत में एक प्रबल आनन्द उमाहो॥
करि समाज बलवान सजीव बनावन चाहो।
तो नागरी प्रचार करन की रुचि अवगाहो॥
योरप के सब भिन्न भिन्न अरु दूर देश में।
एकै लिपि परचार अहै सब एक भेव में॥
तब तुमहीं तो कहो यहां क्या सम्भव नाहीं।
एकै लिपि परचार यहां सब भारत माहीं॥
जो लिपि भारत माहिं कहीं बरती जाती हैं।
देवनागरी साथ वही मिलती जाती है॥
बंगला तो बहु भांति रखै यहि लिपि से समता।
तब क्यों नहीं दिखाते हो प्यारे! अब ममता॥
हिन्दी भाषा नहीं अधिक कछु तुम से चाहै।
लिपि वर्तन की बात हिये में अति अवगाहै॥
देवनागरी माहिं सबै पुस्तक छपवाओ।
निज भाषा को रखो-नागरी लिपि बरताओ॥
कोई भाषा होय, नागरी लिपिही होवै।
इतने ही के हेतु- बिचारी तव मुख जोवै॥
एक सहायक होय जाहि सो प्रबल कहावै।
सुख सों दिवस बिताय सबै बिधि आनँद पावै॥
बोस कोटि से अधिक सदा जेहि बोलन हारे॥
ऐसी हिन्दी दुखित रहै! लज्जा! हे प्यारे॥
हे गुजराती और, मराठी सज्जन भैया।
सब मिलि करो उपाय छुटै दुख, हिन्दी मैया॥
बंगाली, मरहठा और गुजरात देश के।
यदि सब अंगीकार करैं यहि लिपि सुवेश के॥
तो तो शेष प्रदेश अवश्यहिं साथ चढ़ैहै।
दुख दारिद्र सब मेटि सदा आनन्द बढ़ैहै॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हे बंगाली वीर! बनो अग्रणी आय के।
तुम्हरोई यह काम कहीं नाहीं बनाय के॥
लिपि नागरी प्रचार सकल भारत कराय के।
हिन्दिहिं करि संतुष्ट लेहु यश सुख बढ़ाय के॥
पंडित दीनदयाल धर्म के पूरे पंडित।
बागजाल की शक्ति सदा सर्वत्र अखंडित॥
कृपा करो हे विप्र सकल भारत में धावो।
करि बचनामृत-वृष्टि महातम लिपि समझावो॥
व्यापक लिपि के लाभ सबन के मन में आवें।
करैं सकल बरताव नागरी, सुख सरसावें॥
ऐसहि करो उपाय-जहां कहिं लेक्चर देवो।
यह दुख देहु मिटाय, सुयश उज्ज्वल भरि लेवो॥
जहां कहीं तुम जाव वहीं नागरि गुन गावो।
सब के मन में बृहद लाभ भलि विधि बैठावो॥
तुम यदि चाहो विप्र-चलो, कारज ह्वै जैहैं।
रहि हैं नहिं दुखलेश, सुयश तेरो जग छैहैं॥
बड़े पुण्य को काम, धर्म भारी इसमें है।
इससे बढ़कर बड़ उपकार कहो किसमें है?॥
वीर मालवी! जीव सकल हिन्दू समाज के।
हम सब के अवलम्ब, शिरोमनि, बड़े काज के॥
अधिक नहीं प्यारे तुम से कछु कहबे की है।
एक बात में, योग तुम्हारे लहबे की है॥
कृपा करो चित देहु नागरी लिपि में आई।
व्यापक लिपि सर्वत्र इसे अब देहु बनाई॥
धीरे धीरे चलो करो यह कारज भारी।
हिन्दी भाषा दुखित विचारी! लेहु संभारी॥
हे उपकारी जीव! करो उपकार जरूरा।
सुख फैले संसार मांहिं होवे यश भूरी॥
जब लों हिन्दी, हिन्द, रहैगो हिन्दुन नामा।
तब लों यह यश ललित रहैगो अधिक ललामा॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ठाकुर कवि का जीवनचरित ।

[लाला भगवान दीन लिखित ।]

ठाकुर कवि के मद्धे शिवसिंह, मिस्टर ग्रियर्सन, और बाबू हरिश्चन्द्र जी ने संदेह तो किया परन्तु निश्चय करने का कष्ट किसी ने नहीं उठाया । कायस्थकविमाला नामक ग्रंथ के प्रस्तुत करने में जब मुझे कायस्थ कवियों की जीवनियों की खोज हुई तब ज्ञात हुआ कि ठाकुर उपनामधारी कई एक कवि हुए हैं जिनमें से तीन ठाकुर बहुत प्रख्यात हुए हैं । एक प्राचीन ठाकुर कवि असनी जिला फतेपुर निवासी जो संवत् १७०० के लगभग हुए । दूसरे नरहरिवंशी असनी निवासी ठाकुर कवि जिनके पिता का नाम ऋषिनाथ था और जिन्होंने संवत् १८८१ वैक्रमीय में बिहारी सतसई की टीका [देवकीनन्दन टीका] बनाई है । इन का बहुत कुछ वर्णन साहित्याचार्य पंडित अम्बिकादत्त व्यास ने अपने बिहारीबिहार नामक ग्रंथ में लिखा है । तीसरे बुंदेलखंडान्तर्गत जैतपुर निवासी ठाकुर कवि हुए जिनका जीवनचरित इस लेख में लिखा है । अब यह प्रश्न पैदा हो सकता है कि कौन कवित्त या सवैया किस ठाकुर का है । इसका उत्तर मेरी ओर से यह है । मैंने इन तीनों ठाकुरों की कविता बड़े ध्यान से पढ़ी है और जहां तक मेरी बुद्धि में आया यही निश्चय हुआ है कि दोनों असनी निवासी ठाकुरों की कविता बहुत मिलती जुलती पुराने ढंग की है । एक स्थान निवासी होने के कारण भाषा में भी बहुत कम अन्तर है । साहित्य के बंधनों से जकड़ी हुई, नायकाभेद, अलंकार, नखशिख, और षटऋतु के व्यूह के भीतर ही घूमकर रह जाने वाली है । उनकी भाषा में अन्तरवेदीय शब्द और बोल चाल के प्रचलित मुहावरे पाए जाते हैं जिनको अन्य देशीय कवि सहज रीति से प्रयोग में नहीं ला सकते । जैतपुरी ठाकुर की कविता में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बहुधा कोई न कोई लोकोक्ति अवश्य पाई जाती है और उनकी भाषा में ऐसे ऐसे बुंदेलखंडी शब्द और मुहावरे पाए जाते हैं कि अन्य देशीय कवि बिना कठिनता के उनका प्रयोग नहीं कर सकते। इसी कारण हाल में जो 'ठाकुरशतक' ग्रंथ भारतजीवन प्रेस, बनारस, में छपा है बहुत अशुद्ध है। थोड़ी थोड़ी कविता बानगी के ढंग पर हम आगे लिखते हैं और भाषाविद् सज्जनों से प्रार्थना करते हैं कि वे स्वयं न्याय करलें कि हमारा लिखना कहां तक ठीक है।

प्राचीन ठाकुर असनीवाले की कविता।

कोमलता कंज ते गुलाब तें सुगंध लै के चंद ते प्रकाश कीन्हों उदित उजेरो है। रूप रति आनन तें चातुरी सुजनान तें नीर नीवानन तें कौतुक निवेरो है। ठाकुर कहत या मसालो बिधि कारीगर रचना बिलोकि को न होत चित्त चेरो है। कंचन को रंग लै सवाद लै सुधा को बसुधा को सुख लूटि कै बनायो मुख तेरो है॥ १॥

भूल गईं खेल जो जो खेलती खिलौनन तें भूलि गईं बोलनि बतानि चंचलाई की। आवन लगी है लाज देखि मनभावन को भावन लगी है रीति भांति कविताई की। ठाकुर कहत जोर जोबन नकीब आय अदल बदल दई ठौर ठकुराई की। मदन महीप की अवाई लखि होन लागी अगल बगल सब फौज लरिकाई की॥ २॥

सजि सूहे दुकूलन बिज्जु छटासी अटान चढ़ी घटा जोवती हैं। सुचिती ह्वै सुनैं धुनि मोरन की रसमाते संयोग संजोवती हैं॥ कवि ठाकुर वे पिय दूरि बसैं हम आँसुन सों तन धोवती हैं। धनि वे धनि पावस की रतियां पति की छतियां लगि सोवती हैं॥३॥

न्योते गये घर के सिगरे सो बेरामी को व्याज कै आजु रही मैं। ठाकुर है बहिरी इक दासी सो राखी बरोठे बिचारि कै जी में॥ आये भले खिरकी मग ह्वै अस आइबो चाहत ही हुती ही मैं। आजु निसा भरि प्यारे निसा भरि कीजिये लालन केलि खुसी मैं॥ ४॥

बौरे रसालन की चढ़ि डारन कूकत क्वैलिया मौन गहै ना। ठाकुर कुंजन कुंजन गुंजत भौंरन भीर चुपैबो चहै ना॥ सीतल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मंद सुगंधित बीर समीर लगे तन धीर रहै ना। व्याकुल कीन्हो बसंत बनाय के जाय के कंत सो काेऊ कहै ना ॥ ५ ॥

असनी वाले दूसरे ठाकुर की कविता।

दो०—पुत्र सुकवि ऋषिनाथ को हों है ठाकुर नाम।
असनी बासो मैं कह्यो या लखि नृप गुणधाम ॥ १ ॥
जाहिर जग जयसाह नृप धीर बीर कछवाह।
दच्छ दच्छिणा देत जो नित प्रति पर्व अथाह ॥ २ ॥

कारे लाल करहे पलासन के पुंज तिन्हैं आपने झकोरन झुलावन लगी है री। ताही की समेटी त्रण पत्रन लपेटी धरा धाम ते अकाश धूर धावन लगी है री। ठाकुर कहत सुचि सोरभ प्रकासन सो आछी भांति रुचि उपजावन लगी है री। ताती सीरी बैहर वियाेग वा संयाेग वारी आवनि बसंत की जनावन लगी है री ॥ ३ ॥

प्रात झुकामुकि भेष छिपाय कै गागर लै घरते निकरी ती। जानि परी न कितेक अवार है जाय परी जहं होरी धरी ती। ठाकुर दाैरि परे मोहि देखि कै भागि बची री बड़ी सुघरी ती। बीर की सैां जाे किवार न देउं ताे मैं हाेरिहारन हाथ परी ती ॥ ४ ॥

आयो बसंत मिलो नहि कंत सो आनंद में तिय कैा लों भरैगी। नेठहू ज्वालन सो नरिहै तन कामिन काम सो कै लों लरैगी। ठाकुर जाे पै न आइहैं श्याम अराम काे काैन उपाय करैगी। खाय दरार रही छतिया यह बूंद परे अररान परैगी ॥ ५ ॥

जैतपुरी ठाकुर की कविता।

दियरानी जिठानी सबै जगतीं खड़की सुनिहैं न गहाे बहियां। हमैं सोवन देउ उत्तारत का हरि धीर धरो हिरदै महियां। कह ठाकुर क्यों उकताव लला इतनी सुनि लखियै सो पहियां। सब रैन धरी न बकाओ हमैं अबै सेर में पांनी कती नहियां ॥ १ ॥

घेर भयाे सिगरी नगरी हठि बैर भयाे हमरी बखरी में। बात रजागर सोच कहा जाे घटैगी जफा सो कहै तखरी में। ठाकुर कीरति का बरनैां सो अचानक भेंट गली संकरी में। मूसर चाेट की भीत कहा बजिकै जब मूंड दियाे आेखरी में ॥ २ ॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पावस में परदेस ते आनि मिले पिय औ मन भाई भई है।
दादुर मोर पपीहरा बोलत तापर आनि घटा उनई है। ठाकुर वे
सुखकारी सोहावनि दामिनि कौंध कितै धौं गई है। री अब तो
घनघोर घटा गरजौ बरसौ तुम्हें धूरि दई है ॥ ३ ॥

पिय प्यार करें जेहि पै सजनी तेहि की सब भांति निभा-
यत है। मन मान करौं तो परौं भ्रम में फिर पीछे परे पछतइयत है।
कवि ठाकुर कौन की कासों कहौं दिन देखि दसा बिसरइत है।
अपने अटके सुनु एरी भटू निज सौति के मायके जइयत है ॥ ४ ॥

वृन्दावन बृन्द अनेक छलीं तहं गूजरी नेह सों को अँग टोहै। प्रेम
की नाव भयो मन ज्यों अब जानि परी वलही जग जो है। ठाकुर
वे बृज ठाकुर हैं सुवनो न बनी उनको सब सोहै। मीर बड़े बड़े
जात बहे तहँ ढोलियै पार लगावत को है ॥ ५ ॥

प्रथम व द्वितीय असनी वाले ठाकुरों की कविता में बेरामी
(बीमारी), बरोटा (पौंर), बनायकै (बिलकुल) बैहर (पवन)
झुकामुकी (बड़े तड़के जब कोई पहचान नहीं सकै) किवाड़ देना
(कपाट बंद करना), दरार खाना (फट जाना) इत्यादि ऐसे शब्द
हैं जो अधिकतर अन्तरवेद में बोले जाते हैं। और उतायल
(जल्दी), तपरी (बनिज), धूर देना (चुनौती देना), बजोरै
(हठ करके) इत्यादि ऐसे शब्द हैं जो बुंदेलखण्डही में बोले
जाते हैं ॥

असनी वाले दोनों ठाकुर भट्ट जाति के थे। जैतपुरी ठाकुर
कायस्थ थे। इन्हीं कायस्थ ठाकुर की यह जीवनी है।

जीवनी।

आपका पूरा नाम ठाकुरदास था। श्रीवास्तव खरे कायस्थ
थे। पिता का नाम गुलाब राय था। जैसे राय गुलाब का प्रसून
सब गुलाब पुष्पों से अधिकतम सुगन्धित होता है वैसे ही ये गुलाब
राय जी के प्रसून (प्रख्यात सुवन) भी हुए। पिता के नाम को
सार्थक करने वाले पुत्र बिरले ही होते हैं। पिता के नाम को
सार्थक करने के अतिरिक्त इन्होंने अपने नाम को भी सार्थक किया

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है। भाषा रसिक सज्जनों में से कौन ऐसा होगा जो ठाकुर की कविता का आदर न करता हो। अतएव यदि हम इन्हें भाषा रसिकों का ठाकुर (बादशाह) कहें तो क्या अनुचित होगा। इनके पूर्वज काकोरी में रहते थे और इनके पितामह लाला खड्गराय जी अकबर के समय में आगरे की फौज में साठ हजार (६००००) सवार के अफसर थे। इनके पिता का व्याह बुंदेलखण्डान्तर्गत ओरछा निवासी राय राजा (जो उस समय महाराजा ओरछा के मुसाहिब थे) की पुत्री से हुआ। कहते हैं कि इस बारात में खड्गराय जी बारह हजार (१२०००) शाही सवार लाए थे। मुसाहब जी ने भी एक महीने तक बारात का परिपूर्ण आदर सत्कार किया था। इसी से ठाकुर का वंशविभव समझ लेना चाहिए। बहुत से लोग तर्क करेंगे कि लाला जी फौज के अफसर कैसे। इसका समाधान यह है कि उस समय के कायस्थ निरे मुंशी, मुसद्दी और बाबू जी ही न होते थे वरन् लेखनी राय होने के साथही साथ खड्गराय भी होने का दावा और दम रखते थे। अकबर के समय के पश्चात् और खड्गराय के मृत्युवश होने पर किसी कारणवश इनके पिता गुलाब राय जी अपनी सुसराल ओरछे ही में रहने लगे। ओरछे ही में संवत् १८२३ वैक्रमीय में ठाकुर का जन्म हुआ। उस समय के लोग गणित और कबिता को ही बुद्धिप्रकाशक समझते थे इस कारण उसी पुराने ढंग से ठाकुर को गणित में लीलावती और कबिता में अनेकार्थ, मानमंजरी, कविप्रिया, रामचन्द्रिकादि पढ़ाए गए। बुद्धिविकासनार्थ ठाकुर ने दो एक पुराणों के भाषानुवाद भी देख डाले और कुछ संस्कृत भी सीखी। यद्यपि हम यह नहीं कह सकते कि वे संस्कृत के पण्डित थे क्योंकि ऐसी बात उनकी कविता से प्रगट नहीं होती तथापि जितनी संस्कृत भाषा कविता सम्बन्ध में आवश्यक है उतनी वे अवश्य जानते थे। कुछ दिनों बाद इनके वंश के और लोग भी काकोरी छोड़कर बुंदेलखण्ड आए और जैतपुर विजावर में बसते गए।

भारतवर्ष में काकोरी ग्राम (जिला लखनऊ) सुबुद्धि-जन-जनकस्थल होने के कारण अब तक प्रसिद्ध है अतएव इस ग्राम निवास

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कायस्थ कुल में जो बच्चा पैदा हुआ वह बुद्धिमानी और चातुर्य का बीज अपने हृदय ही में रखता था। इस पर बुंदेलखण्ड की कविका-दृश्यमाला ने उसके मनोवेग को दुबाला कर दिया अतएव बचपनही से ठाकुर को कविता का चसका लगा।

लार्ड मेकाले का कथन है कि कोई मनुष्य उसी भाषा में विज्ञ हो सकता है जिसको वह बोलने पहिले लगा हो और जिसका व्याकरण उसने पीछे सीखा हो। इसी कथन के अनुसार ठाकुर का हाल था अर्थात् ठाकुर ने अपनी मातृभाषा बुंदेलखंडी भाषा को ही अपनी कविता में बरता। न तो केशवदास और तुलसीदास जी की तरह किताबी भाषा उन्होंने बरती, न पजनेश की तरह नई गढंत की, वरन अपने लिये एक विलक्षण ही भाषा अंगीकार की जैसी किसी दूसरे बुंदेलखंडी कवि को नहीं मिली। कविता में निपुण होकर ठाकुर ने जैतपुर में रहना अख्तियार किया। उस समय जैतपुर में महाराज केशरीसिंह जी राजा थे। इनकी बुद्धि और चतुराई को देख महाराज केशरीसिंह इनसे बहुत स्नेह रखने लगे और एक ग्राम परगना करैया में नानकार के तौर पर ठाकुर को देकर उन्होंने उसे अपना दरबार कबि अंगीकार किया। ठाकुर कभी कभी बिजावर में भी जाकर ठहरा करते जहां उनके वंश के लोग पहिले से बसते थे। उस समय बिजावर में जो राजा थे उनका भी नाम केशरीसिंह था। जैतपुर नरेश ने जो मान ठाकुर का किया था उसका हाल सुनकर महाराज बिजावर ने भी एक ग्राम जिसका नाम रीरा है नानकार में इन्हें दिया। इनके काकोरीय वंश के वंशधर लाला हरसेवक लाल अबतक बिजावर में मौजूद हैं और दरबार बिजावर के सरिश्तेदार हैं। ये महाशय कवि तो नहीं हैं परन्तु रियासती काम काज में बड़े चतुर और हिन्दी, उर्दू में बहुत योग्य पुरुष हैं।

सर पर पगड़ी, बदन पर खुली बाहों की मिरजई, कमर से कसी हुई एक ओर तरवार एक ओर बुंदेलखंडी हाथ भर लंबी पीतल की दावात, पांव में झब्बे दार बुंदेलखंडी जूता, यह उस समय के बुंदेलखंडी कायस्थों का फैशन था। इसी से ठाकुर का भी फोटो समझ लेना चाहिए। न उस समय फोटोग्राफी के यंत्र का

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चलन था, न उस समय का अब कोई मनुष्य मौजूद है जिससे ठाकुर की सूरत शकल का अनुहार पूछें परन्तु,

'देखन चाहौ मोहि जो मम कबिता लखि लेहु।'

के अनुसार हम ठाकुर के मनोगत भावों को उनकी कविता से समझ कर अनुमान कर सकते हैं कि ठाकुर कवि दूरदर्शी, देश, काल की चाल को समझने वाले, हँसमुख, सौन्दर्योपासक, ईश्वर पर भरोसा रखने वाले, चतुर और नम्र स्वभाव के मनुष्य थे। जैतपुर नरेश केशरीसिंह जी के देवलोक होने पर उनके पुत्र राजा परीछत नाबालिग थे। उनकी नाबालिगी के कारण राज्य काज में गड़ बड़ देख ठाकुर विजावर में रहने लगे परन्तु जब राजा परीछत सयाने हो कर राज्यसिंहासनासीन हुए तो उन्हों ने ठाकुर को फिर अपने दरबार में बुला लिया। इन्हीं महाराजा परीछत के समय में ठाकुर की प्रख्याति हुई। महाराज परीछत इनको अपने दरबार का रत्न समझते थे और नानकार के अतिरिक्त समय समय पर उपहार व पुरस्कार देकर इनका सत्कार करते थे। समयानुसार ठाकुर जी बुंदेलखंड के अन्य राजाओं के दरबार में भी जाया आया करते थे। बांदेवाले हिम्मत बहादुर गोसांई ठाकुर की कविता का बड़ा आदर करते थे और कभी कभी अपने दरबार कवि पद्माकर जी से उन्हें भिड़ा देते और फिर दोनों कवियों की बुद्धिमत्ता का तमाशा देखते।

विशेष बातें।

१—एक समय हिम्मत बहादुर के दर्बार में पद्माकर जी और ठाकुर दोनों मौजूद थे। उस समय छेड़ छाड़ की इच्छा से हिम्मत बहादुर ने पद्माकर जी से पूछा कि 'कहिए कबि जी लाला ठाकुर दास जी की कविता कैसी होती है'। पद्माकर ने कहा 'गोसाईं जी लाला साहेब की कविता तो अच्छी होती है परन्तु पद कुछ हलके से जंचते हैं'। ठाकुर ने तत्काल जवाब दिया कि 'इसी से तो हमारी कबिता उड़ी उड़ी फिरती है'। वाह रे गुरु! वास्तव में ऐसा ही है। भारतवर्ष के इस सिरे से उस सिरे तक, जिस सूबे में जहां कहीं हिन्दी भाषा रसिक जनों से पूछिए ठाकुर की कविता कुछ न कुछ अवश्य स्मरण होगी। इतनाही नहीं वरन् अन्य ग्रंथ-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कारों ने अपने अपने ग्रंथों में उचित स्थान पर इनकी कविता प्रमाण रूप से लिखी है। पद्माकर की कविता को अभी तक यह सौभाग्य नहीं प्राप्त हुआ।

कविता मर्मज्ञ लोग कवि और कविता की परिभाषाओं को लिख गए हैं कि कवि वह है जिसके चित पर प्राकृतिक भावों का अर्थात दुःख सुखादिक का प्रभाव विशेष रूप से पड़े और जैसा सुख दुःख वह स्वयं अनुभव करै ठीक वैसाही दूसरों को समझा देने की सामर्थ उसकी भाषा में हो। जिसके चित्त पर ऐसा प्रभाव पड़े वह कवि है और जिस कविता में यह सामर्थ्य हो वह कविता है। ऐसा स्वभाव ठाकुर का था और उनकी भाषा में वैसा सामर्थ्य भी है अतएव हम ठाकुर को सच्चा कवि और उनकी कविता को सच्ची कविता कहने में कभी संकोच नहीं कर सकते।

२- ठाकुर ने स्वयं यह बात कही है कि कही हुई बात को शब्दों के हेर फेर से फिर से दोहराना कविता नहीं है। वरन् सदैव अनूठी बात कहने का उद्योग करना ही कवि का काम है प्रमाण लीजिए।

सवैया।

मोतिन कैसी मनोहर माल गुहै तुक अच्छर जोरि बनावै। प्रेम को पंथ कथा हरि नाम की बात अनूठी बनाय सुनावै। ठाकुर सो कबि भावत मोहि जो राज सभा में बड़प्पन पावै। पंडित और प्रवीनन को जोइ चित्त हरै सो कवित्त कहावै।

जान पड़ता है कि ठाकुर ने अपने इसी सिद्धान्त पर स्थित रह कर अपने समकालीन अन्य कवियों की तरह कोई ग्रंथ नायक भेद या अलंकार का नहीं रचा वरन् वे सदा फुटकरही काव्य करते रहे।

ठाकुर की दूरदर्शिता और उनका देश काल का ज्ञान

३-जिस समय बांदा वाले हिम्मत बहादुर गोसाईं ने धोखा देकर महाराज परीछत को बांदे बोलाया और महाराज परीछत तैयार होकर कुछ दूर निकल गए उस समय ठाकुर जैतपुर में मौजूद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

न थे। किसी अन्य ग्राम को गए थे, थोड़ी देर के अनन्तर ठाकुर को महाराज साहब के चले जाने की खबर मिली। अपनी दूर-दर्शिता और देश काल के ज्ञान से तत्काल समझ गए कि महाराज जी वहां जाकर या तो मारे जांयगे या कैद होंगे (हिम्मत बहादुर ने अंगरेजों से यही वादा किया था)। बहुत काल से ठाकुर कवि महाराज परीछत का नमक खाते थे। फौरन घोड़े पर सवार हो मारामार श्रीनगर के निकट महाराज से जा मिले और घोड़े से उतरतेही उन्होंने यह सवैया पढ़ा-

सवैया।

कैसे सुचित भये निकसा विहंसा बिलसा हरि दै गल बांहीं।
ये छल छिद्रम की बतियां छलती छिन एक घरी पल मांहीं।
ठाकुर वे जुरि एक भई रचिहैं परपंच कछू ब्रज माहीं।
हाल चवाइन की दुहचाल सो लाल तुम्है या दिखात कि नाहीं।

महाराज साहेब उस समय दतुवन कर रहे थे मुसकुरा कर चुप हो रहे। ठाकुर ने दूसरा सवैया यह कहा।

सवैया।

निज मंत्र न औरन सों कहने अपने चित चोभ विचारने है।
पुनि नेक को नेक लटे को लटो यह रीति सदा उर धारने है।
कह ठाकुर प्यारे सुजान सुनो मन की उरझी निरवारने है।
चहुं ओर से चो चंद चार उठो सो विचार कै यार संभारने है।

महाराज परीछत समझ गए कि साक्षात सरस्वती देवी ही कवि जी के मुख पंकज पर बिराजमान होकर मुझे बांदा जाने से रोक रही हैं बस वहीं से लौट पड़े। तब हिम्मत बहादुर ने ठाकुर को बोला भेजा। पहिले से ही हिम्मत बहादुर ठाकुर की कविता का आदर करते थे अतएव ठाकुर तनक भी न डरे और साधारण स्वभाव से उसके यहां चले गए। हिम्मत बहादुर ने भरे दरबार ठाकुर पर अपना क्रोध प्रगट किया और कैद करने की धमकी दी। ठाकुर ने उसी समय यह कवित्त कहा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वेई नर निरलय निदान में सराहे जात सुख न अघात प्याला प्रेम को पिये रहैं। हरि रस चन्दन चढ़ाय अग अंगन में नीति को तिलक बेंदी जस की दिये रहैं। ठाकुर कहत मंजु कंज तें मृदुल मन मोहनी सरूप धारे हिम्मत हिये रहैं। भेंट भये समये कुसमये अचाहे चाहे ओरसी निबाहै आंखें एकसी किये रहैं।

हिम्मत बहादुर इस कबित्त के तर्थ को समझ तो गए पर क्रोध शान्त न होने के कारण फिर भी कुछ बदज़बानी कर बैठे। ठाकुर ने सरे दरबार अपनी तरवार म्यान से निकाल ली और कड़क कर यह कवित्त कहा।

सेवक सिपाही हम उन रजपूतन के दान युद्ध जुरिबे में नेक जे न मुरके। नीति देन वारे हैं मही के महिपालन को कवि उनहीं के जे सनेही सांचे उर के। ठाकुर कहत हम बैरी बेवकूफन के जालिम दमाद हैं अदानियां ससुर के। चोजन के चोर रस मौजन के पातसाह ठाकुर कहावत पै चाकर चतुर के।

जब हिम्मत बहादुर ने देखा कि कवि जी को क्रोध आगया और सरस्वती जी जिह्वा पर बिराजकर कविताधारा बहा रही है तब वह दबक रहा और अपने सहज स्वाभाविक छल से मुसकुरा कर बोला कि "बस बस कवि जी बस, हम केवल इतनाही देखना चाहते थे कि आप केवल कविही कवि हैं कि पूर्वजों की तरह आप में कुछ हिम्मत भी है"। इन बचनों ने ठाकुर की क्रोधाग्नि को कुछ कुछ शान्त कर दिया। उन्होंने तरवार म्यान में रखली और मुसकुराकर बोले "राजा साहब हिम्मत तो हमारे ऊपर सदैव काल से अनूप रूप से बलिहार होती रही है आज हमारी हिम्मत कैसे गिर जायगी"। इस पद के व्यंग भरे शब्दों ने हिम्मत बहादुर के चित्त को फड़का दिया, इसने अपने कटु वचनों की क्षमा मांगी और बहुत सा पारितोषिक देकर ठाकुर को बिदा किया। (पाठकों को ज्ञात होना चाहिए कि यह हिम्मत बहादुर जाति के गोसाईं थे असल नाम इनका अनूपगिरि था। राजा हिम्मत बहादुर शाही खिताब था)।

४-जिस समय ठाकुर कवि महाराज किशोर सिंह पन्ना नरेश के दरबार में गए उस समय राजश्री कुछ म्लानमुख थी, लोगों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का रंग ढंग बदला हुआ था, दरबारियों में परस्पर विरोध था, स्वार्थपरता की उन्नति हो रही थी। इन बातों को देख आपने जो कविता बनाई थी उसमें के दो एक सवैया ये हैं।

चाल न वा चरचा न वा चातुरी वा रस रीति न प्रीति को ठौर है। सांच घटो बढ़ो झूठ जहान में लोभ के लाने जहां तहां दौर है। ठाकुर वेई गोपाल वही हम वोही ववाव रहो इक ठौर है। मेरेइ देखत मेरी भटू सिगरो व्रज ह्वै गयो और को और है।

वे परवीन विचच्छन लोग बने पै समै कछु आन भये री। चीखे सवाद जहां अति मीठे सो सीखे सुभाय नयेई नयेरी। ठाकुर कौन सों का कहिये अब वे चित चाहवे वे समये री। वे दिन वे सुख वैसे उछाह सो वे सब वीर हेराय गये री।

इन्हीं महाराज किशोर सिंह की छोटी रानी जिन पर महाराजा जी विशेष प्रेम करते थे इतनी अधिक लज्जावती थीं कि एकान्त स्थल में भी महाराज साहेब के सामने कभी घूंघट न उठाती थीं। महाराज साहब चाहते थे कि कुछ देर तक तो भला घूंघट खोल कर हमसे प्रेमालाप किया करें परन्तु महारानी जी न मानती थीं। किसी समय महाराज जी ने बात चीत में यह हाल ठाकुर कवि को सुनाया। ठाकुर ने तुरन्त निम्न लिखित सवैया बनाकर महाराज साहब को दिया और कहा कि आज रात को आप स्वयं यह सवैया पढ़कर महारानी जी को सुनाइएगा।

यों तरसाइबो कौने बदो मन तो मिलिगो पै मिले जन जैसो। कौन दुराव रहो उनसों जिनके संग साथ करो सुख ऐसो। ठाकुर या निरधार सुनौ तुम्हें कौन सुभाव परो है अनैसो। प्राणप्रिया घट में बसि कै हँस कै फिर घूंघट घालिबो कैसो।

कहते हैं कि महारानी साहबा ने इस कबित्त के लिये ठाकुर को बहुत कुछ इनाम दिया था और उतनी अधिक लज्जा करनी भी छोड़ दी थी। महाराजा साहब के बैकुंठ बास होने पर यही महारानी जी सती हुईं थीं। पन्ना में इनका समाधिस्थल अब तक वर्तमान है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

५ - ठाकुर की सौन्दर्योपासना और हंमोडपन निम्न लिखित वार्ताओं से प्रगट होता है ।

(१) सौन्दर्योपासना ।

कहते हैं कि जिस समय ठाकुर विजावर में रहते थे उन दिनों एक अत्यन्त रूपवती सुनारिन भी वहां थी । उसके सौन्दर्य के आप बड़े उपासक थे । जिस दिन किसी कारण उसके दर्शन न पाते उस दिन बड़े उदास रहते । गली घाट जहां कहीं वह मिल जाती हाथ जोड़ कर दंडवत करते और एक कवित्त उसी समय उसकी रूप छटा पर बनाकर तैयार करते और जोर से पढ़ते ता कि वह सुन ले । इतने के अतिरिक्त कोई और अनुचित वासना उनके चित्त में न थी । कुछ दिन तक तो उस सुनारिन ने इनके इस कर्तव्य पर कुछ ध्यान न दिया परन्तु जब उसे ज्ञात हुआ कि कवि जी मेरे स्वरूप पर मोहित हैं तब वह स्वयं किसी न किसी तरह इनको अवश्य दर्शन देती और उस समय की रसमय कविता बड़े ध्यान से सुनती । एक समय वह बीमारी के कारण चार दिन तक मकान से बाहर न निकली । पांचवें दिन रात्रि को ठाकुर ने उसके मकान के पीछे वाली गली में चलते चलते यह सवैया कहा ।

गति मेरी यही निसवासर है चित तेरी गलीन के गाहने है ।
चित कीन्हों कठोर कहा इतनो अब तोहि नहीं यह चाहने है ।
कवि ठाकुर नेकु नहीं दरसी कपटीन को काह सराहने है ।
मन भावै सुजान सोई करियो हमें नेह को नातो निबाहने है ।

सुजान शब्द ने इस सवैया में जान डाल कर उसके रस को द्विगुणित कर दिया (कहते हैं उस स्त्री का नाम सुजान था) । इस रूप रस के प्यासे कवि की बाणी ने उसके हेतु औषधि का काम किया । उसी रात्रि भर में वह चंगी हो गई कि दूसरेहा दिन पानी भरने के मिस कुंए पर आकर ठाकुर कवि को उसने दर्शन दिए ।

दुनियां बड़ी विचित्र है । जो जैसा होता है बहुधा वह मनुष्य दूसरों को भी वैसाही समझता है । उस स्त्री के घर वालों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को कुछ संदेह सा हुआ और उन्होंने उस समय के बिजावर नरेश से कवि जी की कुछ शिकायत की। महाराज जी ने उन लोगों को समझा बुझा संतोष दे बिदा किया। उनके चले जाने पर ठाकुर कवि को बुलाया और पूछा कि इस मामले में कितनी सत्यता है। ठाकुर ने साफ कह दिया कि मैं उसके सौन्दर्य का उपासक हूं और अन्य बात से मुझे कुछ सम्बन्ध नहीं। मेरी इस बात के साक्षी नारायण हैं। महाराज जी को बिश्वास नहीं हुआ। दंड स्वरूप सात रोज़ तक अपनी निज ड्योढ़ी में नज़र कैद रहने की आज्ञा दी। कहते हैं जिस दिन यह आज्ञा दी गई और ठाकुर ड्योढ़ी से बाहर जाने से रोके गए अकस्मात उसके दूसरे दिन वह कुआँ जहां वह स्त्री पानी भरने जाया करती थी और जहां जाकर ठाकुर कवि उसके दर्शन किया करते थे सूख गया। अकस्मात कुंआं सूख जाने की चरचा सारे शहर में फैली। लोग कारण सोचने लगे। उस स्त्री ने अपने पति से कहा कि ठाकुर जी पर आपने निर्दोष संदेह करके उन्हें नज़र कैद कराया है इसी कारण यह कुंआं सूख गया यदि वे रिहा न किए जायंगे तो सात दिन में कुल शहर के कुंएं सूख जायंगे। पति ने समझा कि यह मेरी स्त्री स्वयं खोटी है इस बहाने अपने जार को रिहा कराना चाहती है। ऐसा बिचार उसने उसके कथन पर कुछ ध्यान न दिया। दूसरे दिन उस मोहल्ले भर के (जिस मोहल्ले में वह स्त्री रहती थी) कुल कुंएं सूख गए। तब तो उसके पति को बिश्वास आया, जाकर सब हाल महाराज को सुनाया। ठाकुर रिहा किए गए। दूसरेही दिन सब कुंएं ज्यों के त्यों जल से परिपूर्ण हो गए और ठाकुर की अमलता प्रमाणित हो गई। ठाकुर रूठकर बिजावर से चले गए और फिर बिजावर कभी नहीं गए। कहते हैं कि अपने सच्चे रूप रसिक के बियोग से सधवा होने पर भी उसी स्त्री ने मरते दम तक कभी शृंगार न किया।

(२) हँसोड़पन।

जैतपुर नरेश महाराज परीछत सायंकाल को एक स्थान पर बैठते जहां से सर्वसाधारण के आने जाने का रास्ता था। दर-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कारी लोग भी आ डटते, चुहल पुहल होती, ठाकुर कवि भी मौके मौके से अपनी सद्यः कविता सुनाकर महाराज को प्रसन्न करते। एक मंहाजन की बहू शौचादि क्रिया को उस रास्ते से आया जाया करती। परन्तु नव यौवना होने पर भी अन्य नवोढ़ाओं की तरह वह चपल न थी। बड़ी गंभीरता के साथ सिर निहुराये घूंघट काढ़े जाया आया करती। राजाओं के दरबारियों में सब प्रकार के मनुष्य होतेही हैं। उस युवती के रूप गुण और विद्या की प्रशंसा एक दरबारी की श्रवणेन्द्रिय तक पहुंच चुकी थी। अतएव उसके रूप देखने की उसे बड़ी उत्कण्ठा थी। यह बात महाराज परीछत को भी ज्ञात थी। एक दिन सबके सामने उस दरबारी ने ठाकुर से कहा कि कवि जी यदि अपनी कविता के बल से इस स्त्री की दृष्टि अपनी समाज की ओर आकर्षित कीजिए तो जानें कि आप सच्चे कवि हैं। दूसरे दिन जब वह स्त्री उस रास्ते से निकली तब ठाकुर ने यह सवैया उच्च स्वर से पढ़ा—

सवैया।

कांखन देखत ध्यान में बोलत नेह बढ़ाये निते आ निते जा।
चंदमुखी यह सोच बिहाय के मानी खुसी अभिमानी किते जा॥
ठाकुर छैल छबीले छिये कहुं सौतिन मांहि सुहाग जितेजा। दै जा दिखाईरी कै जा निहाल बिते जा वियोग चितै जा चितै जा॥

इस सवैया की विद्युत शक्ति ने उसे उस ओर दृष्टिपात करने के लिये विवश कर दिया। समाज की ओर देख कर मुसकुा गई और तत्काल अपना एक सुवर्ण कंकण उतार कर ठाकुर को कवित्वशक्ति का पुरस्कार देगई। घर जाकर सच्चा हाल उसने अपने ससुर से कह सुनाया। उसके ससुर ने कहा कि दोनों कंकण देदेती तब ठाकुर की कवित्वशक्ति का पूर्ण पुरस्कार होता। महाराज परीछत उस नव यौवना की यह उदारता देख भौके से रह गए। पीछे से ज्ञात हुआ कि वह स्त्री स्वयं भी कविता करती थी, विदुषी थी और "चितै जा चितै जा" के विप्सा प्रयोग पर रीझकर उसने ऐसा किया था। महाराज परीछत ने कई एक जनाने जेवर अपने तोशाखाने से निकलवाकर उस स्त्री को उपहार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रूप भेजवाया और कहला भेजा कि यह इनाम हम तुमको इस खुशी में देते हैं कि हमारी बस्ती में एक स्त्री भी कविता में निपुण है।

६-ठाकुर कवि यद्यपि कृष्णोपासक थे तथापि राम और कृष्ण को एक ही समझते थे। कहते हैं एक समय आप रोग ग्रसित हुए और वह रोग इतना बढ़ गया कि प्राण बचना कठिन जान पड़ा। महाराज परीक्षत ने अपने निज राजवैद्य को आज्ञा दी कि ठाकुर की चिकित्सा करो। वैद्यराज ने औषधि बनाई और कहा कि परसों शुभ दिन से औषधि सेवन करिएगा। ठाकुर रोग की पीड़ा से व्याकुल थे धीरज न धर सके और निम्न लिखित कवित्त कह के उसी दिन से औषधि सेवन करने लगे।

कवित्त।

राम मेरे पंडित अखंडित सुदिन सोधें राम मेरे गुरू जप मेरे राम नाम हैं। राम राम गावतहि राम राम ध्यावतहि राम राम सोचत कटत आठो जाम है। ठाकुर कहत सांची आन मोहि रामही की रामही से काम धन धाम मेरे राम हैं। राम मेरे वैद बिसराम मेरे राम सांचो राम मेरी औषधि जतन मेरे राम हैं।

कहते हैं कि औषधि सेवन तो करते जाते थे परन्तु इस कवित्त को हर समय पढ़ते ही रहते। औषधि के प्रभाव और राम की कृपा से एक अठवारे में रोग शांत होगया। नवें दिन वे अपने काम काज में लगे। इस चरित्र से साफ जान पड़ता है कि ठाकुर कवि राम और कृष्ण में भेद न मानते थे और ईश्वर पर पूर्ण भरोसा रखते थे।

७-जो मनुष्य ईश्वर के ईश्वरत्व पर इतना भरोसा रक्खैगा वह अवश्य नम्र होगा। अधिक प्रमाण अनावश्यक जान पड़ता है।

८-ठाकुर कवि चतुर थे इसका प्रमाण दैनाही वृथा है क्यों कि चतुराई तो कविताई की माई है। चतुर न होगा वह कविता क्या करैगा।

९-साधारण कहनि में उच्च सिद्धान्त की बात कहना कवि का मुख्य गुण है। यह गुण ठाकुर में बहुत अधिक था। देखिए

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बेपरवाही करने पर भी प्रेमपात्र के हृदयंगत भाव का भेद आपने किस अच्छे ढंग से खोला है ।

या निरमोहिनि रूप की रासि जो ऊपर ते उर आनति ह्वैहै। बारहि बार बिलोकि घरी घरी सूरति तो पहिचानति ह्वैहै ॥ ठाकुर या मन की परतीत है जो पै सनेह न मानति ह्वैहै । आवत हैं नित मेरे लिये इतनो तो बिशेष कै जानति ह्वैहै ॥

१०- आप सौंदर्योपासक अवश्य थे परन्तु यदि सौंदर्य के साथ साथ कोई अवगुण देखते तो तत्काल उसकी निंदा करते। एक धनवान पड़ोसी की लड़की जो रूपमाती थी और गौने के पश्चात् ससुराल से वापस आई थी दिन में कई बार घर से निकल पड़ोस की सखी सहेलियों से मिलने को जाया करती। आपको उसकी यह चंचलता असह्य हुई और निम्न लिखित सवैया सुनाकर उसे डांट बताई।

लहरैं उठै अंग उमंगन का मद जोबन के बहराती फिरै। बड़री अंखियान चितै तिरछे चित लोगन के लहराती फिरै॥ कह ठाकुर है अति ओप भरी निरखे न थिरै थहराती फिरै। सिर ओढ़े उढ़ौनी कसे छतियां फरिया फहरे फहराती फिरै॥

११-किसी रूपवती स्त्री की जिस छटा पर आपका चित्त प्रसन्न होता उस छटा का चित्र आप तत्काल अपने कविता-कैमेरा से खींच पबलिक में पेश करते। निम्न लिखित दो चार फोटो आपके सामने पेश हैं। आपही न्याय कीजिए कि ठाकुर की कविता की शक्ति कैसी थी।

काजर की रेख नैन बेंदा लिलार सोहै नैनन की कोर तें झकोर खूब है गई। करे ज्यों सिंगार सब भूषण अनेक रंग काम की उमंग में चोराय चितै लै गई॥ ठाकुर कहत प्रीति रीति ना बिचारी कछू जोबन के मान में गुमान कछु कै गई। घट छल छाय कै लटकि मुसकाय कै चटाक चित्त चोरि कै झटाक पट दै गई॥

रेसम को गुन, छीन छला कर, ऐंचि के तोरि सनेह रखावै। देह दयो अंगुरी कर बांध बरे मुरझाय कै रंग मचावै॥ दोहत सी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मन मोहत सी तन छोहत सी छवि भौंह चलावै। चंचल नैनन सैनन सों पटवा की बहू नटवा से नचावै ॥ २ ॥

बाहर लौं न कढ़े कबहूं कढ़ि देहरी लौं बिछिया झमकावै। अंचल ओट दै चोट करै अरु ओट अटारी के चंवल गावै ॥ एक पलौ बिसरै न कबौं अरु कोटि कला करि जी ललचावै। आंखिन आवै हिये लगि जावै पै प्यारो परोसिन हाथ न आवै ॥ ३ ॥

आवै चली गज चाल सों बाल बिसाल सरूप की रासि तुली सी। ओज मनोज की मौज भरी तन जानि परै सब भांति घुली सी ॥ ठाकुर को उपमा बरनै सब ओर निहारत एक रुली सी। राखै खुसी मन यारन के जजमानिनी बानिनी चंद मुखी सी ॥ ४ ॥

१२—त्योहारों और अन्य अन्य आनन्द के समयों पर जो कविता ठाकुर ने रची है बहुत उत्तम है ॥ अखती, फाग, बसंत, दशहरा हिंडोरा इत्यादि समयों की कविता बहुत सुंदर है। बानगी देखिए ॥

* अखती।

अखती रची राधिका मोहन सों बधू को हठि नाम लिवावती हैं। झहरावती भौंह झुकावती फेरि लिये कर लौद खिझावती हैं ॥ कहि ठाकुर काम गुरु के कहेते कहो जू कहो जू सुनावती हैं। रसरीति के प्रीति के प्रीतम को बिसरै मनो अंक पढ़ावती हैं।

लांबी लचकारी लौद लीन्हे हो गोपाल लाल सो न घालि दीजौ घाले घनो रसघट है। छी जो कैहै काहू व्रज बनिता नवेली अंग एंड़ की तिहारी कान्ह एकहु न सटहै ॥ ठाकुर कहत टेक एकहू न रैहै धनी संग में सहेली एक एक तें बिकट है। मेरे लगि जैहै तो दुहाई वृषभान जू की ऐसी लौद घालिहौं कि बोअर उपटहै ॥

---

* बैसाख शुक्ल ३ (अक्षय तृतिया) को बुंदेलखंड निवासी नर नारी सज बज कर नगर से बाहर वट पूजन को जाते हैं और एक दूसरे पर चमेली या गुलाब की छड़ी छानते हैं और मर्द से पत्नी का और स्त्री से पति का नाम लिखाते हैं— यह त्योहार अखती के नाम से प्रसिद्ध है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फाग ।

रंग सों म चि रहो रसफाग पुरी गलियां त्यों गुलाल उलीच में । जाय सकै न इतै न उतै सो घिरे नर नारि सनेह रगीच में॥ ठाकुर ऐसा उमाह मचो भयो कौतुक एक सखीन के बीच में। रंग भरो रसमातो गुवालि गोपालहिं लै गिरी केसर कीच में॥

बसंत ।

गावैं पिक बैनी मृग नैनिहू बजावैं बीन नाचै चन्द्रमुखी चारु चीर की चटक पै । कीरति कुमारी वृषभान की दुलारी राधे अटकी बिलोकि लोक लाज की अटक पै ॥ ठाकुर कहत चीर केसर के रंग रंगो अतर पगो सो मनमोहै पीत पट पै। देख तो देखात कैसो राजत रसीलो आज आली री बसंत बन माली के मुकट पै॥

दशहरा ।

धम धम धौंसन की धुनि धुनि लाजैं घन फहरैं निसान आपमान अंग ऐंठे हैं। केहरी करिंद हम हंस मूसा नादिया हू और सब बाहन उमाहन उमैठे हैं ॥ ठाकुर कहत सुर असुर समूह नर नारिन के जूह नंद मंदिर में पैठे हैं। आवो चलो लीजिये जू कीजिये जनम धन्य करुणा निधान कान्ह पान देन बैठे हैं ॥

हिंडोरा ।

बिंद्राबन युगुल किसोर परना के धाम स्याम अभिराम राधे और द्रग जोरे हैं। सावन की तीज तजबीज कै बसन सूहे पहिरे बिमल जामें सौरभ झकोरे हैं ॥ ठाकुर कहत देत दरस दयाल भये देखत देखैयन के लेत चित चोरे हैं। बोलती हैं मोरें होती घनन की घोरैं बीर दोनो गांठ जोरे आजु झूलत हिंडोरे हैं ॥

तात्पर्य यह कि जब हम इनका उस समय के अन्य कवियों से मुकाबिला करते हैं तब हम भाषा की सरलता, सरसता, बोल चाल, अनूठी उक्ति और साधारण कहनि में इन्ही को सब से बढ़ कर पाते हैं और बिबश होकर इन्हें उस समय का कविराज कहना पड़ता है ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संवत् १९८० के लगभग इनका देहान्त होना पाया जाता है। इनके भाई मानिक लाल की एक लड़की बिजावर में ला० हीरालाल को ब्याही थी जिनके प्रपौत्र नकसी गुलाब सिंह जी खासकलम अभी बिजावर में वर्तमान हैं। ठाकुर के पुत्र का नाम दरयाव सिंह था। ये भी कबि हुए। इनका उपनाम चातुर था। इनका भी जीवनचरित्र हमने तैयार कर लिया है समय आने पर प्रकाशित किया जायगा। चातुर के पुत्र शंकर प्रसाद हुए। ये भी कबि हुए। इनकी बिधवा स्त्री आज दिन बिजावर में वर्तमान है। पुत्र कोई नहीं। ठाकुर कबि का वंशवृक्ष जो हमको बिजावर निवासी लाला हरसेवक लाल से मिला है नीचे लिखा जाता है।

इस जीवनी के लिखने में ला० देवीप्रसाद जी हेडमास्टर, बिजावर ने हमें विशेष सहायता दी है अतएव हम उनको विशेष धन्यवाद देते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ठाकुर कवि का वंशवृक्ष ।

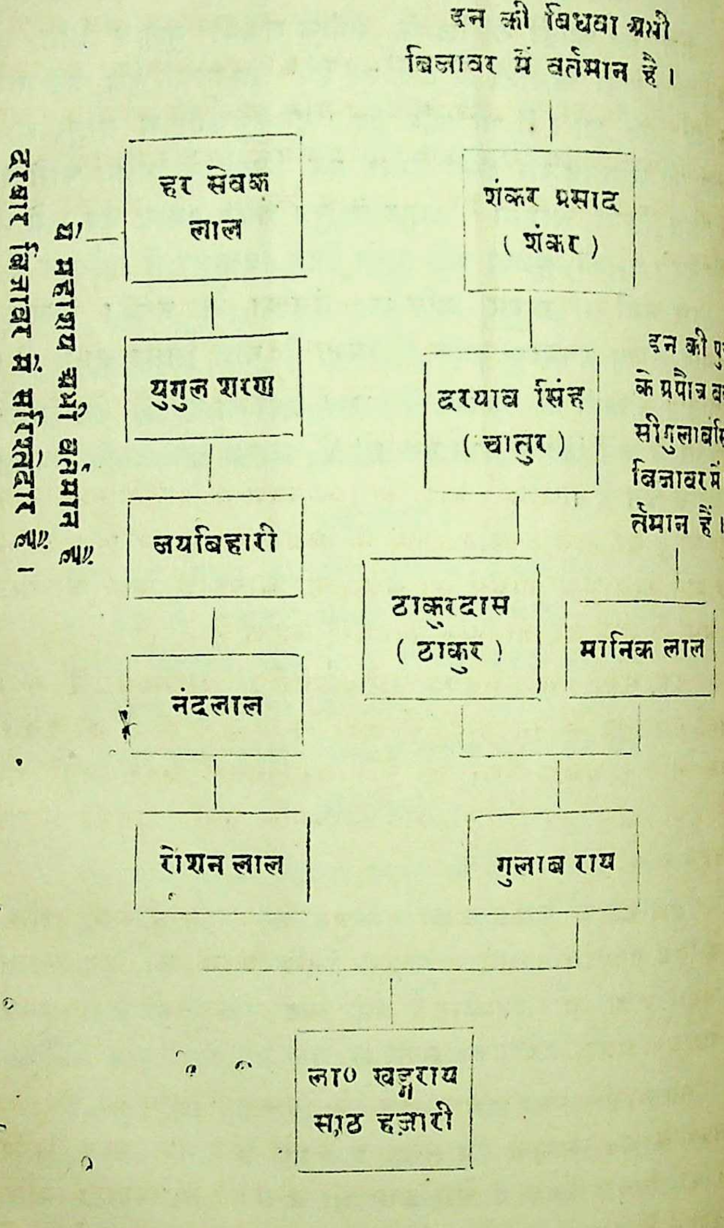

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारतवर्ष की सब भाषाओं के लिये एक लिपि।

शुक्रवार ता० २९ दिसम्बर १९०५ को सवेरे ८ बजे नागरी प्रचारिणी सभा की ओर से भारतवर्ष की सब भाषाओं के लिये एक लिपि के विषय में प्रामाणिक सम्मति एकत्रित करने के लिये सभाभवन के पश्चिम ओर एक शामियाने में एक साधारण सभा हुई थी जिसमें देश के हजारों बुद्धिमान विद्वान और धनाढ्य लोग एकत्रित थे।

इस सभा के सभापति, बरोदा के मिस्टर रमेशचन्द्र दत्त आई· सी· एस·, सी· आई· ई· का स्वागत बड़े हर्षपूर्वक देर तक तालिध्वनि द्वारा किया गया। उन्होंने निम्न लिखित वक्तृता के साथ इस सभा का कार्य आरम्भ किया—

"सज्जनो, आज का कार्य आरम्भ करने के पहिले मुझे आप लोगों को ½ घंटे तक ठहराए रखने के लिये क्षमा मांगनी है। परन्तु आज प्रात:काल मुझे कांग्रेस का बहुत ही आवश्यक कार्य था और इस सभा में मुझे देर हो जाने का यही कारण है।

"इस सभा का उद्देश्य सारे उत्तरीय भारतवर्ष में तथा पश्चमी भारतवर्ष के उन भागों में जहां कि संस्कृत भाषा का प्रचार है एक लिपि के प्रचार करने का है। यह विचार केवल यहां ही नहीं हुआ वरन् यह बहुत समय से बंगाल तथा पश्चमी भारत के बहुत से भागों में रहा है।

"मुझे स्मरण है कि बहुत वर्ष हुए कि बंगाल में सारे भारतवर्ष के लिये एक लिपि अर्थात् रोमन लिपि करने का कुछ लोगों का विचार हुआ था। निस्सन्देह यह विचार बहुतही हास्यजनक था और वह सफल नहीं हो सका।

"तब सज्जनो। यहां आप लोगों ने देवनागरी लिपि को उत्तरीय भारतवर्ष के सब संस्कृत बोलनेवाले लोगों की एक मात्र लिपि करने का विचार किया। और आप की सभा की जो रिपोर्टें प्रतिवर्ष छपी हैं और जिन्हें आप के मंत्री ने कृपा कर मुझे दिया है उनके देखने से विदित होता है कि गत बारह वर्षों में बहुतही उत्तम कार्य हुआ है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आप लोगों ने वास्तव में बहुत कुछ काम किया है और मैं सच्चे हृदय से विश्वास करता हूं कि आप लोगों के उद्देश्य की पूर्ति होने तक आप लोग निरन्तर ऐसाही उद्योग करते रहेंगे।

"सज्जनो किसी जाति के लिये एक नई लिपि का व्यवहार करना पहिले पहिल निस्सन्देह बहुत कठिन जान पड़ता है। बंगालियों के लिये नागरी अक्षरों में लिखना ऐसा कठिन जान पड़ता है कि वे लोग समझते हैं कि इसका अभ्यास उनका हो ही नहीं सकता। गुजरात, बरोदा तथा अन्य स्थानों में भी नागरी अक्षरों का प्रचार बहुत धीरे धीरे हो रहा है। परन्तु सज्जनो मैं आप लोगों को स्वयं अपने अनुभव से कहता हूं कि यदि आप एक बार इन अक्षरों को लिखने का दृढ़ संकल्प कर लें तो इनका अभ्यास कुछ भी कठिन नहीं है। बहुत वर्ष हुए जब मैं पहिले पहिल इंगलैंड में इण्डियन सिविल सर्विस के लिये गया था तो मैं नागरी का एक अक्षर भी नहीं लिख सकता था और जो थोड़ी बहुत संस्कृत मैं जानता था उसे बंगला अक्षरोंही में लिखता था। पर इस परीक्षा में बंगला अक्षर नहीं स्वीकार किए जाते थे और मैंने परीक्षा के विषयों में संस्कृत भी ली थी। इस कारण मुझे नागरी अक्षर भी सीखने पड़े और तीन ही मास के भीतर मैं नागरी उतनी ही जल्दी लिखने लगा जितनी जल्दी कि मैं बंगला अक्षर लिखता था।

"आज कल गुजरात में विशेषतः मैं उस राज का उल्लेख करता हूं जिसकी सेवा करने का मुझे सम्मान प्राप्त है, बरोदा में वर्षों से इस विषय पर बहुत कुछ ध्यान दिया गया है और बरोदा के लोगों ने नागरी अक्षरों के प्रचार के लिये पूर्ण उद्योग किया है। आप लोगों को विदित होगा कि हमारे बरोदा राज्य की ओर से एक गज़ेट निकलता है जिसे हम लोग "आज्ञा पत्रिका" कहते हैं और महाराजा की ओर से जो आज्ञाएं नियम आदि निकलते हैं वे सब इस पत्रिका में प्रति सप्ताह प्रकाशित होते हैं। इस आज्ञा पत्रिका के एक भाग में बरोदा के लिये जो कानून बनते हैं वे सब छपते हैं और महाराज की आज्ञा से ये सब कानून गुजराती भाषा में परन्तु देवनागरी अक्षरों में छापे जाते हैं। यदि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आप इस आज्ञा पत्रिका की प्रति सप्ताह की प्रतियां देखें तो आपको विदित होगा कि इस का पहिला भाग जिसमें साधारण आज्ञाएं रहती हैं गुजराती अक्षरों में छपता है और अन्तिम भाग जिसमें कानून छपते हैं नागरी अक्षरों में रहता है। बरोदा में कोई ऐसा कर्मचारी नहीं है जो देवनागरी अक्षरों को उतनीही सुगमता से न लिख पढ़ सकता हो जितना कि गुजराती अक्षरों को। इन बातों से यह विदित होगा कि यदि हम किसी भाषा को जानते हों और यदि हम उस भाषा को किसी भिन्न अक्षर में लिखने का संकल्प कर लें तो यह बहुत कठिन नहीं है।

"५० वर्ष पहिले जर्मनी में प्राय: सब पुस्तकें पुराने जर्मन अक्षरों में छपती थीं परन्तु अब जर्मन लोग यूरप के अन्य देश के लोगों से संसर्ग चाहते हैं और इस कारण लगभग पचीस वर्षों से वे लोग अपनी सब पुस्तकें साधारण रोमन अक्षरों में छापने लगे हैं। इससे उन लोगों की कोई कठिनाई नहीं बढ़ गई हैं। अत: उन लोगों ने जैसा जर्मनी में किया है वैसाही हमें भारतवर्ष में करना चाहिए। और सज्जनो यह स्मरण रखिए कि यह उद्योग उस बड़े उद्योग का केवल एक अंशमात्र है कि जिसके द्वारा हम भारतवासी परस्पर अपना सम्बन्ध बढ़ाया चाहते हैं। इस उद्योग का सामाजिक और साहित्य सम्बन्ध होने के साथही साथ राजनैतिक रूप भी है।

"यह सभा इस विषय में भर सक उद्योग करके हम लोगों का परस्पर सम्बन्ध बढ़ाया चाहती है और मैं आशा करता हूं कि समय पाकर इस उद्देश्य में सफलता होगी। सम्भव है कि हम लोग उस समय तक जीवित न रहें परन्तु यदि यह उद्योग जारी रहा तो एक समय ऐसा अवश्य आवेगा जब कि सारे उत्तरी भारतवर्ष में एकही लिपि हो जायगी। इसमें शीघ्रता करने का एक मार्ग यह है कि भिन्न भिन्न भाषाओं के जो बहुतही प्रचलित ग्रन्थ हैं वे नागरी अक्षरों में छापे जांय। इससे सम्भवत: कुछ समय तक तो इन पुस्तकों की बिक्री में कमी हो जायगी और उन्हें वे ही लोग खरीदेंगे जो कि नागरी अक्षर पढ़ सकते हैं परन्तु यदि बंकिमचन्द्र के ग्रन्थों के समान पुस्तकें नागरी अक्षरों में छापी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जाय तो समस्त बंगला पढ़ने वाले लोगों को शीघ्रही इन अक्षरों का अभ्यास हो जायगा।

"इन्ही थोड़ीसी बातों को कह कर अब मैं पं० बाल गङ्गाधर तिलक से प्रार्थना करता हूं कि वे आप लोगों के सम्मुख वक्तृता दें।"

पण्डित बाल गंगाधर तिलक बी॰ ए, एल॰ एल॰ बी॰ (पूना) ने जिनका स्वागत तालिध्वनि द्वारा किया गया, कहा।

"सज्जनो, सभापति महाशय ने आप लोगों को नागरी प्रचारिणी सभा का उद्देश्य समझा दिया है। मैं भी प्रसन्नता पूर्वक उसी विषय को कहता परन्तु केवल १½ घंटे के भीतर मेरे उपरान्त अभी १० महाशयों को वक्तृता देनी है। अतः मैं उस प्रसन्नता से वंचित हूं और जो थोड़ा सा समय मुझे प्राप्त है उसमें संक्षेप में मैं केवल उन्हीं बातों को कहूंगा जो कि मेरी सम्मति में सभा के कार्य करने में ध्यान रखने योग्य हैं।

"सबसे आवश्यक बात जिसे कि हमें स्मरण रखना चाहिये यह है कि यह उद्योग उत्तरी भारतवर्ष में केवल एक लिपि करनेही के लिये नहीं है, बरन वह समस्त भारतवर्ष में एक भाषा करने के वृहद उद्योग का केवल एक अंश है जो कि जातीय उद्योग कहा जा सकता है क्योंकि एक भाषा का होना जातित्व का एक मुख्य अंग है। केवल एक भाषाही से आप लोग अपने विचारों को दूसरे पर प्रगट कर सकते हैं और मनु ने ठीकही कहा कि सब बातें भाषाही के द्वारा समझी और की जाती हैं। इस कारण यदि आप लोग किसी जाति को एक में लाना चाहें तो उन्हें एक में रखने के लिये उन सब की एक भाषा होने से बढ़कर और कोई शक्ति नहीं है। और यही उद्देश्य सभा ने अपने सम्मुख रक्खा है।

"परन्तु इस उद्देश्य में सफलता कैसे हो? हमारा उद्देश्य केवल उत्तरी भारतवर्ष के लिये नहीं वरन् मैं तो कहूंगा कि समय पाकर दक्षिणी भारतवर्ष और मदरास को लेकर सारे भारतवर्ष के लिये एक भाषा करने का है। और जब हमारे उद्देश्य का विस्तार इतना बढ़ गया तो हमारी कठिनाइयां भी अधिक ज्ञात पड़ती हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पहिले पहल हमें उन कठिनाइयों का सामना करना पड़ेगा जो कि ऐतिहासिक कठिनाइयां कही जा सकती हैं। प्राचीन समय में आर्यों और अनार्यों और इधर के समय में हिन्दू और मुसलमानों की लड़ाइयों ने इस देश में हिन्दुओं की भाषा की एकता को नष्ट कर दिया है। उत्तरी भारतवर्ष के हिन्दू लोग जो भाषाएं बोलते हैं वे प्रायः आर्य भाषाएं हैं और उनकी उत्पत्ति संस्कृत से हुई है और दक्षिण में जो भाषाएं बोली जाती हैं उनकी उत्पत्ति द्राविड़ भाषा से हुई है। इन भाषाओं में भेद केवल उनके शब्दों में ही नहीं वरन उनके लिखने में भी है। इसके उपरान्त फिर हिन्दी और उर्दू का भेद है जिस पर कि इस प्रान्त में इतना ज़ोर दिया जाता है। हमारे देश की ओर लिखने के मोड़ी अक्षर भी हैं और वे उस बालबोध अर्थात् देवनागरी अक्षरों से भिन्न हैं जिनमें कि मराठी पुस्तकें साधारणतः छपती हैं।

"अतः फारसी अक्षरों के विषय में कुछ उद्योग करने के पहिले हमें दो बड़ी। आवश्यक बातों को एक में लाना है। हम कह चुके हैं कि यद्यपि भारतवर्ष में एक भाषा का करना हमारा अन्तिम उद्देश्य है परन्तु इसके लिये भी हमें उपरोक्त दोनों बातों को अर्थात् आर्य वा देवनागरी अक्षरों और द्रविड या तामिल अक्षरों को एक करना चाहिए। ध्यान रहे कि इसमें केवल अक्षरों का ही भेद नहीं है वरन द्रविड भाषा में कुछ ऐसे उच्चारण भी हैं जो कि दूसरी किसी भाषा में नहीं हैं।

"हम लोगों ने क्रमशः उद्योग करने का बिचार कर लिया है और हम पहिले पहल केवल आर्य भाषाओं वा संस्कृत से निकली हुई भाषाओं को ही लेंगे जैसा कि सभापति महाशय आप लोगों से कह चुके हैं। ये भाषाएं हिन्दी, बंगाली, गुजराती, मराठी और पंजाबी, इनकी और भी शाखाएं हैं परन्तु मैंने केवल मुख्य मुख्य भाषाओं के नाम लिए हैं। ये सब संस्कृत से उत्पन्न हुई हैं और वे जिन अक्षरों में लिखी जाती हैं वे भी भारतवर्ष के प्राचीन अक्षरों के रूपान्तर हैं। समय पाकर इन भाषाओं के जुदे जुदे व्याकरण, उच्चारण और अक्षर होगए परन्तु उनकी वर्णमाला अब तक भी प्रायः वैसी ही है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"नागरी-प्रचारिणी सभा का उद्देश्य यह है कि सब आर्य भाषाएं एक ही लिपि में लिखी जांय जिसमें जब कोई पुस्तक उस लिपि में छपे तो उसे सब आर्य भाषाओं के बोलने वाले लोग अधिक सुगमता से समझ सकें। मैं समझता हूं कि इस विषय में सब ही लोग सहमत होंगे और इसके लाभ को स्वीकार करेंगे, परन्तु कठिनता इस बात में है कि इन सब भाषाओं के लिये कौन सी लिपि सबसे उपयुक्त है। उदाहरण के लिये बंगाली लोग यह कह सकते हैं कि जिस लिपि में वे अपनी भाषा लिखते हैं वह गुजराती और मराठी लिपि से अधिक प्राचीन है और इस लिये सब भाषाओं के लिये बंगाली लिपि को ही चुनना चाहिए। फिर कुछ लोगों का ऐसा विचार है कि देवनागरी जैसी कि वह आज कल की छपी हुई पुस्तकों में देखी जाती है वही सब से प्राचीन लिपि है और इस कारण सब आर्य भाषाओं के लिये उसी को चुनना चाहिए।

"परन्तु मेरी सम्मति में यह विषय ऐसा नहीं है कि जिसे हम केवल ऐतिहासिक बातों पर निश्चय कर सकें। यदि आप लोग प्राचीन शिलालेखों को देखें तो आप को विदित होगा कि अशोक के समय से लेकर भिन्न भिन्न समयों में जिन अक्षरों का प्रचार था उनकी संख्या दस से कम नहीं है और उनमें खरोष्ठी या ब्राह्मी अक्षर सब से प्राचीन समझे जाते हैं। तब से सब अक्षरों में बहुत कुछ परिवर्तन हुआ है और हमारी आज कल की लिपियां उन्हीं प्राचीन लिपियों में से किसी न किसी का रूपान्तर हैं। अतः मेरी सम्मति में एक लिपि के विषय को केवल प्राचीनता के सिद्धान्त पर निश्चित करना ठीक नहीं है।

"इन सब कठिनाइयों से बचने के लिये एक समय यह प्रस्ताव किया गया था कि हम लोग रोमन लिपि का व्यवहार करें और इसका एक कारण यह दिखलाया गया था कि ऐसा करने से एशिया और योरोप दोनों की एक लिपि हो जायगी।

"महाशयो, यह प्रस्ताव मुझे बड़ा ही हास्यजनक जान पड़ता है। रोमन वर्णमाला और रोमन लिपि में बहुत सी त्रुटियां हैं और वह हम लोगों की भाषा के उच्चारण प्रगट करने के लिये

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बड़ी ही अनुपयुक्त है। अंगरेज़ी भाषा के व्याकरण भी उसे त्रुटियों से भरा हुआ बतलाते हैं। उसमें कहीं तो एकही अक्षर के तीन तीन वा चार चार उच्चारण हैं और कहीं एकही उच्चारण के प्रगट करने के लिये दो या तीन अक्षरों का व्यवहार करना पड़ता है। इसके सिवाय इस कठिनाई को देखिए कि रोमन लिपि में हमारी भाषा के उच्चारण बिना भिन्न भिन्न चिन्हों के नहीं प्रगट किए जा सकते और तब सब लोगों को इस प्रस्ताव का पागलपन विदित हो जायगा। अतः यदि हम सब के लिये किसी एक लिपि की आवश्यकता है तो वह रोमन लिपि से उत्तम होना चाहिए। संस्कृत जानने वाले योरप के विद्वानों ने भी कहा है कि देवनागरी योरप की सब लिपियों की अपेक्षा बहुत पूर्ण है। और जब हम लोगों के सम्मुख उनकी यह स्पष्ट सम्मति है तो भारतवर्ष की सब आर्य भाषाओं की एक लिपि के लिये किसी दूसरी वर्णमाला का आश्रय लेना मानो अपने ही हाथों अपने पैर में कुल्हाड़ी मारना है। केवल इतना ही नहीं वरन मेरी सम्मति में तो भारतवर्ष में उच्चारण और अक्षरों में जितना परिश्रम किया गया है, जो पूर्णरूप से पाणिनि के ग्रन्थों में देखा जाता है, वह संसार की किसी अन्य भाषा में नहीं पाया जाता है। हमारी भाषा में जो भिन्न भिन्न उच्चारण हैं उनके लिये देवनागरी वर्णमाला का सब से अधिक उपयुक्त होने का एक और भी कारण है। "सेक्रेड बुक्स आफ दी ईस्ट" नाम की ग्रन्थावली की प्रत्येक पुस्तक के अन्त में जो भिन्न भिन्न लिपियां दी हैं उन्हें यदि आप लोग मिलान करें तो आप लोगों को मेरे कहने पर विश्वास हो जायगा। हमारे यहां एक उच्चारण के लिये केवल एकही अक्षर और प्रत्येक अक्षर के लिये केवल एकही उच्चारण है। अतः हम लोगों को कौनसी लिपि काम में लानी चाहिए। इस विषय में मैं समझता हूं कि कोई मतभेद नहीं हो सकता। देवनागरी ही ऐसी लिपि है। अब प्रश्न यह है कि इस लिपि ने भिन्न भिन्न प्रान्तों में जो भिन्न भिन्न रूप धारण किए हैं उनमें से कौन सा रूप लिया जाय और मैं कह चुका हूं कि इस बात का निर्णय केवल प्राचीनता के सिद्धान्त पर नहीं किया जा सकता।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"लार्ड कर्ज़न के निर्धारित समय की नाईं हमें एक निर्धारित लिपि की आवश्यकता है। लार्ड कर्ज़न ने यदि निर्धारित समय की अपेक्षा जातीय सिद्धान्तों पर हमारे लिये निर्धारित लिपि देने का उद्योग किया होता तो वे हमारे सम्मान के अधिक योग्य होते परन्तु ऐसा नहीं हुआ। अतः हम लोगों को सब प्रान्तिक पक्षपात से रहित होकर इसे स्वयं करना चाहिए। बंगाली लोग स्वभावतः अपनी लिपि का अभिमान करते हैं। इसके लिये मैं उनकी निन्दा नहीं करता। फिर गुजरात वाले कहते हैं कि उनकी लिपि लिखने में सब से सुगम है क्योंकि उसमें अक्षरों के ऊपर आड़ी लकीर नहीं लिखनी पड़ती। और मरहठे लोग कह सकते हैं कि मराठी अक्षरों में ही संस्कृत लिखी जाती है और इस कारण समस्त भारतवर्ष की एक लिपि बनाने के लिये वही उपयुक्त है। मैं इन सब बातों को पूर्णतया समझता हूं परन्तु इस विषय का निर्णय करना हम लोगों के लिये आवश्यक है और उसके लिये काम काज की रीति पर विचार करना चाहिए। हम चाहे जिस लिपि को काम में लावें परन्तु वह लिखने में सुगम, देखने में सुन्दर और ऐसी होनी चाहिए जो शीघ्रता से लिखी जा सके। फिर उसके अक्षर ऐसे होने चाहिए कि वे भिन्न भिन्न आर्य भाषाओं के सब उच्चारणों को प्रगट कर सकें। केवल इतनाही नहीं वरन् उन्हें ऐसा बनाना चाहिए कि वे द्रविड़ भाषा के उच्चारणों को भी बिना चिन्हों के प्रगट कर सकें। प्रत्येक उच्चारण के लिये केवल एक ही अक्षर और प्रत्येक अक्षर का केवल एक उच्चारण होना चाहिए। पूर्ण लिपि से मेरा यही अभिप्राय है। और यदि हम सब मिल कर विचार करें तो आज कल की प्रचलित लिपियों के आधार पर एक ऐसी लिपि का निकालना कोई कठिन बात नहीं है। ऐसी लिपि को निश्चय करने में हमें इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि आज कल सब से अधिक प्रचार किस लिपि का है क्योंकि एक लिपि बनाए जाने के लिये ऐसे ही लिपि का अधिक स्वत्व है, यदि वह अन्य सब बातों में ठीक हो।

"इस कार्य के लिये सब आप लोग कमेटियां नियत करें और किसी एक लिपि को निश्चित करें तो मैं समझता हूं कि हम लोगों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को गवर्मेण्ट से प्रार्थना करनी पड़ेगी और प्रत्येक प्रान्त की पाठ्य पुस्तकों के कुछ पाठ इसी लिपि में छपवाने की आवश्यकता दिखलानी पड़ेगी जिसमें आगामी पीढ़ी के लोग बाल्यावस्था से ही इन अक्षरों से परिचित हो जांय। किसी नई लिपि का पढ़ना कोई कठिन काम नहीं है परन्तु पढ़ाई समाप्त हो जाने के उपरान्त किसी नई लिपि के पढ़ने में एक प्रकार की अरुचि होती है। यह अरुचि मेरी बतलाई हुई रीति से दूर हो सकती है और इस में गवर्मेण्ट हमारी सहायता कर सकती है। यह कोई राजनैतिक बात नहीं है, यद्यपि यों तो अन्त में सभी बातें राजनैतिक कही जा सकती हैं। जिस गवर्न्मेण्ट ने हमारे लिये निर्धारित समय और निर्धारित तौल और नाप निश्चित किया है वह हम लोगों की सब आर्य भाषाओं के लिये एक लिपि निश्चित करने में सहायता देने से मुंह न मोड़ेगी।

"जब एक लिपि स्थापित हो जायगी तो किसी एक आर्य भाषा में छपी हुई पुस्तकों का पढ़ना उन लोगों के लिये कठिन नहीं होगा जो कि उसी भाषा की भिन्न बोलियां बोलते हैं। मुझे स्वयं बंगला पुस्तकों के समझने में यही कठिनाई है कि मैं बंगला अक्षरों को नहीं पढ़ सकता। यदि बंगला पुस्तक देवनागरी अक्षर में छपी हो तो मैं उसे यदि पूरी तरह से नहीं तो उसका बहुत सा अंश समझ सकता हूं जिससेकि पुस्तक का सारांश समझ में आजायगा क्योंकि उनमें से आधे से अधिक शब्द तो संस्कृत के ही होते हैं। हम लोगों में शीघ्रता से योरप के नए नए विचार मिल रहे हैं और उनके लिये हम लोग संस्कृत की सहायता से नए नए शब्द गढ़ रहे हैं। इस कारण इस बात से भी हमें सारे भारतवर्ष के लिये एक भाषा प्राप्त करने में बहुत कुछ सहायता मिल सकती है। मुझे यह देख कर बड़ा हर्ष हुआ कि यह सभा हिन्दी वैज्ञानिक कोश बना कर इस विषय में बहुत कुछ कर रही है। मैं इस विषय में भी आप लोगों से कुछ निवेदन करता। परन्तु मेरे उपरान्त अन्य महाशयों का भी व्याख्यान होना है। इस कारण मैं समझता हूं कि आप लोगों की आज्ञा से मुझे अब बैठ जाना चाहिए।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रोफेसर एन० बी० रानाडे (बम्बई) ने जिनका स्वागत तालि-ध्वनि द्वारा किया गया कहा—

"सभापति महाशय तथा सभ्यगण, सभा के मंत्री के कथनानुसार आज मैं प्रोग्राम के दूसरे विषय पर अर्थात सभा ने इस देश की संस्कृत से उत्पन्न हुई सब भाषाओं के हित के लिये जो भाषा वैज्ञानिक कोश तयार किया है उसके विषय में आप लोगों से निवेदन करूंगा। भारतवर्ष की जातीय भाषासभा (जिस नाम से आज का अधिवेशन पुकारा जा सकता है) के इस अधिवेशन में हम लोगों को नागरीप्रचारिणी सभा ने गत बारह वर्षों तक इस विषय में जो उत्तम कार्य किया है उसके लिये उसके सभासदों को धन्यवाद देना चाहिए। प्रारम्भ में यह सभा एक वादविवाद की सभा थी जिसे कि लगभग बारह वर्ष हुए स्कूल के कुछ विद्यार्थियों ने स्थापित किया था और इस बारह वर्ष के थोड़े से समय में वही छोटी सी सभा जो कि पहिले पहल हिन्दी भाषा की उन्नति के लिये स्थापित हुई थी आज इतनी बड़ी सभा होगई है जिसका कि सुन्दर भवन आप लोग इस शामियाने के बाईं ओर देख रहे हैं।

"महाशयो यदि आप सोचें कि सारे भारतवर्ष में एक नागरी लिपि के करने और सारे भारतवर्ष के लिये एक भाषा वैज्ञानिक कोश बनाने में इस सभा ने कितना अच्छा काम किया है तो मुझे विश्वास है कि सारा देश सभा का उस प्रशंसनीय कार्य के लिये ऋणी बनेगा जो वह गत ५ उपयोगी वर्षों में जिस बीच में कि देश में जातीय उत्साह अधिक उत्पन्न हुआ है, करती रही है।

"सज्जनो, मैं अब हिन्दी वैज्ञानिक कोश के विषय में कुछ कहूंगा जिसका उल्लेख मिस्टर तिलक ने जो मेरे विद्याविषयक गुरु हैं इस प्रकार किया है कि भारत की अनेक जातियों को एक जातीयता के बन्धन में गठित करने के लिये उन्नति का एक स्पष्ट चिन्ह यह है कि समस्त भारतवर्ष की एक भाषा की जाय और यदि इतना हो सके तो कम से कम, उनकी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विज्ञानविषयक भाषा अवश्य ही एक होनी चाहिए। सन् १८५४ ई० की शिक्षा सम्बन्धी राजकीय आज्ञा में जिसे हम भारतवर्ष में शिक्षा का मैगनाचार्टा कह सकते हैं भारतवासियों को एक बड़ी आशा दिलाई गई थी कि इस देश के सर्व साधारण के मध्य योरोपीय विद्या तथा विज्ञान का प्रचार उनकी मातृभाषा ही द्वारा किया जायगा, किन्तु गत ५० वर्षों के बीच यह वचन अन्य अनेक वचनों की नाईं जो गवर्मेण्ट ने प्रजावर्ग को दिए, अभाग्यवश अपूर्णही रह गया। सर्कार अनेक सुभीतों के रहते हुए भी योरोपीय विद्या को यहां की भाषा द्वारा देश में फैलाने के विषय में जो कुछ नहीं कर सकी उसे यह सभा देशहितैषिता के परम उत्कृष्ट भावों से परिपूर्ण होकर अन्य उद्योगों द्वारा करना चाहती है और यह वैज्ञानिक कोश उस आशय की पूर्ति का एक मुख्य चिन्ह है। इस अवसर पर मैं प्रसन्नतापूर्वक घोषित करता हूं कि वैज्ञानिक कोश की तय्यारी के सदुद्योग में सभा को इस प्रान्त की गवर्मेण्ट तथा बंगाल, पंजाब और मध्य देश की गवर्मेण्टों की सहायता तथा सहानुभूति प्राप्त हुई है। इस विषय में सभा के परिश्रमों का फल ५ छोटी छोटी पुस्तकों में जिसे सभा ने वैज्ञानिक कोश के नाम से प्रकाशित किया है देख पड़ेगा। यद्यपि ये पुस्तकें संख्या में थोड़ी और आकार से आप लोगों के देखने में क्षीण हैं तथापि उनका मूल्य उनके सोने के बोझ से भी अधिक है। मेरा यह कथन उन्हीं लोगों को सच्चा जंचेगा जिन्होंने इस विषय पर कुछ ध्यान दिया है।

"इस समय सारे भारतवर्ष के सम्मुख एक बड़ा प्रश्न यह है कि योरप का विज्ञान किस प्रकार गरीबों को उनकी ही भाषा में प्राप्त हो सके। ५० वर्षों तक अंगरेज़ी की शिक्षा देकर हमारी गवर्मेण्ट कठिनता से १०० में एक भारतवासी को योरप के प्रारम्भिक विज्ञानों की शिक्षा दे सकी है। इस हिसाब से यदि योरप के उपयोगी विज्ञानों की शिक्षा ३० करोड़ भारतवासियों को देने का कार्य केवल गवर्मेण्ट पर छोड़ा जाय तो मैं समझता हूं कि योरप के विज्ञान की प्राप्ति के लिये यहां के लोगों को कई सौ वर्षों की आवश्यकता होगी। योरप के विज्ञानों के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जानने से इस देश के लोगों को जो लाभ होंगे उसके विषय में मैं यहां पर लम्बा, चौड़ा व्याख्यान नहीं देना चाहता। उनसे जो लाभ होंगे वे आप लोगों को भली भांति विदित हैं। आप लोग इस देश में अभी हाल के बहुत से नए उन्नतिशील कार्यालय देखते हैं। हमारे देश भाइयों को जो नई शिक्षा दी गई है, विज्ञान में उन्होंने जो नई शिक्षा प्राप्त की है यद्यपि वह बहुत थोड़े अंश में और बड़े स्थूलरूप से दी गई है तथापि उससे उन्हों ने जो थोड़ी बहुत उन्नति की है वह भी आप लोगों को विदित है। यदि आप लोग इसे मानते हैं कि विज्ञान की शिक्षा आपके देश वासियों को उनकी बुरी अवस्था और दरिद्रता को दूर करने के लिये एक बड़ी भारी कुंजी है तो आप लोगों का यह पहिला कर्तव्य है कि इस शिक्षा को दरिद्र से दरिद्र भारतवासी के घर तक उसकी मातृभाषा के द्वारा पहुचावें। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिये यहां की भाषा में नए वैज्ञानिक शब्दों की आवश्यकता है और वे वैज्ञानिक शब्द ऐसे होने चाहिएं जो कि बंगाल, संयुक्त-प्रदेश, गुजरात और महाराष्ट्र देश के लोगों को समान रीति से ग्राह्य हों।

"निस्सन्देह उन सब भाषाओं के लिये जिनकी उत्पत्ति संस्कृत से हुई है ऐसे वैज्ञानिक शब्दों का बनाना सहज और सम्भव है क्योंकि संस्कृत भाषा में बहुत बड़े अर्थ को बहुत थोड़े में प्रगट करने की शक्ति है।

"किसी जाति के सब से उत्तम बिचार उस जाति के केवल वैज्ञानिक मनुष्य के बिचार ही हैं। और इस सर्वोत्तम बिचार को जाति की साधारण सम्पत्ति बनाने के लिये उसे एक साधारण वैज्ञानिक भाषा में अर्थात् ऐसी भाषा में प्रगट करना चाहिए जिसे की सारा देश समझ सके।

"प्रथम वक्ता यह दिखला चुके हैं कि जातीय एकता को प्राप्त करने के लिये सारे देश में एक भाषा का करनाही निस्सन्देह सब से उत्तम मार्ग है। उसके अभाव में पहिला उद्योग एक लिपि का और फिर एक वैज्ञानिक शब्दों को करने का होना चाहिए। इन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दोनों बातों के लिये यह बहुत उत्तम होगा कि भिन्न भिन्न प्रान्तों के लोग अपने सब से उत्तम प्रतिनिधियों को इन विषयों पर विचार करने के लिये नागरीप्रचारिणी सभा में भेजें कि जो उनका सदा स्वागत करने के लिये तयार है।

"मैं समझता हूं कि सभा ने गत वर्ष दो बार अधिवेशन किए थे जो कि कई सप्ताह तक रहे और उनमें भिन्न भिन्न प्रान्तों के प्रतिनिधि इस बात के निश्चित करने के लिये बुलाए गए थे कि वैज्ञानिक शब्द किस रीति से किन सिद्धान्तों पर गढ़े जांय। इन अधिवेशनों में जो उत्तम कार्य हुआ है वह पांच छोटी छोटी पुस्तकों के रूप में प्रकाशित किया गया है।

"सज्जनो हमारी भाषा में वैज्ञानिक शब्दों के गढ़ने का यह विचार आज कुछ एक नई बात नहीं है और न यह विचार भारतवर्ष की केवल कुछ विशेष प्रान्तों में ही परिमित है। भारतवर्ष के प्राचीन इतिहास में जहां कहीं विदेशी विज्ञान को इस देश में प्रचलित करने के चिन्ह हमें मिलते हैं वहां यह स्पष्ट देख पड़ता है कि नए विचारों को इस देश की भाषा में लाने के लिये संस्कृत का आश्रय लिया गया था। इसके लिये नए संस्कृत के शब्द गढ़े गए थे। उदाहरण के लिये ज्योतिष में राशि के नामों को देखिए मेष=The Ram; वृषभ=The Bull; सिंह=The Lion; कन्या=The Virgin; तुला=The Balance; वृश्चिक= The Scorpion निस्सन्देह प्राचीन संस्कृत ग्रन्थो में कुछ ऐसे शब्द भी मिलते हैं जिनकी उत्पत्ति विदेशी भाषा से हुई है। परन्तु उनकी संख्या बहुत ही थोड़ी है। महाराष्ट्र देश में १७ वीं शताब्दी में महाराष्ट्र राज्य के स्थापित होने के उपरान्त इस राज्य के संस्थापक शिवाजी के सब से पहले कार्यों में से एक "राजव्योवहार कोश" की रचना है जिसमें कि महाराष्ट्र लोगों के हित के लिये उस समय महाराष्ट्र देश में जो आवश्यक फारसी के शब्द पचलित थे उनका अर्थ मराठी वा संस्कृत भाषा में दिया गया था। इधर हाल के समय में लगभग २० वा २५ वर्ष हुए कि ऐसाही उद्योग बंगाल में भी प्रारम्भ हुआ था परन्तु कुछ ऐसे कारणों से जो कि मुझे विदित नहीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हैं वह उद्योग कुसमय में सदा के लिये बन्द हो गया। बरोदा में जहां कि इस समय एक बड़े ही सुयोग्य राजा हैं इस कार्य के लिये अर्थात् मराठी में एक वैज्ञानिक कोश निश्चित करने के लिये एक विशेष विभाग खोला गया था। मुझे विदित हुआ है कि इस कार्य के लिये ३२ हज़ार रुपए की बड़ी रकम स्वीकृत हुई थी। परन्तु हमारे दुर्भाग्य वश यह विभाग भी कुसमय में बन्द होगया। अहमदाबाद में भी एक 'गुजराती ट्रेन्सलेशन सोसाइटी' है, और महाराष्ट्र में हम लोगों की डेक्कन वर्नाक्यूलर सुसाइटी है। आप लोगों की आज्ञा से मैं यह उल्लेख करने की आज्ञा मांगता हूं कि मेरे तुच्छ सम्पादन में डाक्टर एम० जी० देशमुख, मिस्टर बाल गंगाधर तिलक, प्रोफेसर टी० के० गज्जर, लफ्टेनेण्ट करनल के० आर० कीर्तिकर, सर भालचन्द्र कृष्ण भटवाडेकर, प्रोफेसर आर० एन० आपटे, आदि महानुभावों की नाईं बम्बई के विख्यात विद्वान लोगों की सहायता से एक अंगरेजी मराठी कोश महाराष्ट्र देश में निकल रहा है।

"मेरे तुच्छ ग्रन्थ की सहायता और सहानभूति करने वालों में बम्बई विश्वविद्यालय के वाइस चैंसेलर डाक्टर मेकिकन, कोल्हापूर के कर्नल० डब्ल्यू बी० फेरिस०, केप्टेन आर० सी० बर्क और कोल्हापूर के रेवरेण्ड ए० डरबी, बम्बई के एलफिन्सटन कालेज के प्रोफेसर ई० ए० उडहाउस और राजाराम कालेज के प्रिन्सिपल लूसी आदि महाशयों के समान लोग भी हैं। मेरे अंगरेज़ी मराठी कोश की प्रधान विशेषता उसके संस्कृत वैज्ञानिक शब्द हैं। इसी विशेषता के लिये हिन्दी की विख्यात सरस्वती पत्रिका के सम्पादक के प्रमाण पर मैं यह निवेदन करना चाहता हूं कि भारतवर्ष की और किसी भाषा के हित के लिये ऐसे किसी ग्रन्थ के बनाने का उद्योग नहीं किया गया है। मेरे तुच्छ ग्रन्थ की यही विशेषता है जिससे कि दक्षिण महाराष्ट्र देश के अग्रगण्य राजों महाराजों ने उसका आदर किया हैं। उनमें से प्रधान ये हैं। अर्थात् कोल्हापूर के महाराज मुधोल के सरदार और जामखिन्दी के सरदार। मुझे निश्चय है कि यदि सभा के मंत्री सभा पर इन महाराजों की सहानुभूति प्राप्त

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करेंगे तो उससे सभा के बहुमूल्य विद्याविषयक कार्य में उनकी सहायता मिलनी बहुत सहल होगी।

"सज्जनो बंगाल गुजरात, और महाराष्ट्र देश के इन प्रयत्नों के उल्लेख करने से मेरा अभिप्राय आप लोगों को यह दिखलाने का था कि ब्रिटिश राज्य के आगमन से इस देश में जो नये वैज्ञानिक बिचारों का प्रचार हुआ है उनको प्रगट करने के लिये इस देश की भाषा में वैज्ञानिक शब्द बनाने का प्रबल विचार सारे देश में है।

"मेरी सम्मति में जो ये जुदे जुदे उद्योग हुए हैं उन्हें अधिक उत्तम रीति से करना चाहिए। मैं समझता हूं कि ये सब उद्योग ना० प्र० सभा की प्रबन्धकारिणी सभा के प्रबन्ध में होने चाहिएं क्योंकि इस सभा ने इस विषय में विशेष उद्योग किया है। मेरी सम्मति में दूसरे प्रान्तों के जो विद्वान अपनी भाषा की उन्नति करने और उसे पूर्ण करने में हित लेते हैं उन्हें ना०प्र० सभा में पत्र व्यवहार द्वारा सम्मिलित होना चाहिए। सो यदि यह हो जाय और मैं समझता हूं कि इसे अवश्य करना चाहिए तो एक संगठित समाज के लाभ प्राप्त हो कर बहुत सा कार्य होगा। मेरी सम्मति में हमारे देश के इतिहास में अब वह समय आ गया है कि किसी एक उद्देश्य की प्राप्ति के लिये जुदे जुदे उद्योग न किए जाकर किसी एक समाज के द्वारा मिल कर उद्योग किया जाय। संगठित समाजों का अभाव हमारी जातीय दुर्बलता का कारण है। अतः हमारी जातीय उन्नति के भविष्यत प्रोग्राम में संगठित समाजों में हमारा प्रधान बल होना चाहिए।

"इस कारण, हे प्रिय भाइयो मैं आप सबसे बड़े शुद्ध हृदय से प्रार्थना करता हूं कि आप लोग हमारे देश के जितने प्रान्तों में सम्भव हो नागरी अक्षरों के प्रचार में और संस्कृत से उत्पन्न सब भाषाओं के हित के लिये भाषा में वैज्ञानिक शब्दों के निश्चित करने के आवश्यक कार्य में इस सभा को सहायता दें। यहां पर जो भाई उपस्थित हैं उनसे मेरी यह प्रार्थना है कि यदि सम्भव हो तो इस सभाभवन में इस बात के विचार करने के लिये एक प्रतिनिधि सभा करें कि इन दोनों उद्देश्यों की उन्नति

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के लिये क्या उद्योग किया जाय। मुझे निश्चय है कि हमारे बड़े उद्योगी मंत्री बाबू श्यामसुन्दर दास कृपा करके ऐसी एक सभा का प्रबन्ध करेंगे यदि उन्हें आज कल के अधिक कार्यों से इसके करने का अवकाश मिले।

"मैं बहुत संक्षेप में कहा चाहता हूं। सज्जनो बैठने के पहिले मुझे यह उत्कट आशा प्रगट करने दीजिए कि आप सब लोग अपने हृदय से इस सभा के उद्देश्यों में सहानुभूति प्रगट करेंगे। आप लोग चाहे जहां रहें और चाहे जो कुछ करें परन्तु इस सभा के हित को अपने हृदय से मत भूलिए।"

दीवान बहादुर अम्बालाल साकरलाल देसाई एम० ए०, एल० एल० बी० (अहमदाबाद) ने जिनका स्वागत तालिध्वनि द्वारा किया गया कहा–

"सभापति महाशय तथा सभासद गण, मैं गुजरात से आता हूं जो कि व्यापारियों की भूमि है अतः मैं अपनी बातों को संक्षेप में कहने में सावधानी रक्खूंगा।

"मुझे जो कुछ कहना था उसमें से बहुत सी बातें हमारे योग्य सभापति और हमारे योग्य महाराष्ट्र विद्वान मिस्टर बी० जी० तिलक पहलेही कह चुके हैं। इस कारण अब मैं इस विषय की कुछ कार्य में लाने योग्य बातों का वर्णन करूंगा।

"आज कल हम सब के हृदय में सब से बड़ी अभिलाषा और सबसे बड़ा उत्साह परस्पर अधिक सम्बन्ध और प्रीति उत्पन्न करने का है। भविष्यत में बहुत दिनों के उपरान्त हम सब लोग एकही बड़ी जाति हो जायगें अथवा नहीं, इस प्रश्न का निश्चय करना मैं भविष्यत ही पर छोड़ता हूं। परन्तु ऐसे विषयों पर उद्योग करने में कुछ हानि नहीं है जिससे कि दोनों ही उद्देश्य वा उनमें से कोई एक प्राप्त हो सकता है और इनमें से एक उद्देश्य सब भाषाओं के लिये एक लिपि का करना है।

"अब इस प्रश्न में दो बातें हैं (अ) लिखने की लिपि और (ब) छापे की लिपि। इस समय लिखने के लिपि का विचार छोड़ देना चाहिए। सौभाग्यवश गुजरात में पहिले जो पाठ्य पुस्तकें थीं उनके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पाठ नागरी और गुजराती दोनों ही अक्षरों में छपते थे और इस कारण जिन लोगों ने गुजरात के किसी स्कूल में शिक्षा पाई है वे नागरी अक्षरों को पढ़ सकते हैं।

"ऐसा सुनने में आता है कि अब जो नई पाठ्य पुस्तकें छपने वाली हैं उनमें नागरी अक्षर के पाठ नहीं रक्खे जायगें।

"यदि ऐसा हुआ तो बड़े दुर्भाग्य की बात है। सभा को प्राचीन प्रणाली न उठाये जाने के लिये एक प्रार्थनापत्र भेजना चाहिए। हमारे सभापति महाशय ने यह बहुत ही उत्तम प्रस्ताव किया है कि वास्तविक गुणवाली सब पुस्तकें नागरी अक्षरों में छापी जांय। मेरी सम्मति में कम से कम सब वैज्ञानिक ग्रन्थ यथा उद्भिद विद्या, रसायन शास्त्र, दर्शन शास्त्र, आदि के ग्रन्थ नागरी अक्षर में छपने चाहिएं। भाषा उनकी प्रत्येक प्रान्त की जुदी जुदी हो सकती है परन्तु अक्षर देवनागरी ही होने चाहिएं। और ऐसा करने में कोई हानि न होगी। विज्ञान पढ़ने वाले सब लोगों के लिये यह समझ लिया जाय कि वे नागरी अक्षर जानते हैं। यह नागरी अक्षर के प्रचार बढ़ाने का एक मार्ग है। उसका एक दूसरा मार्ग मेरे ध्यान में यह आता है कि व्यापार सम्बन्धी प्रत्येक विभाग के कागज़ पत्र नागरी अक्षरों में रक्खे जांय। अहमदाबाद के व्यापारियों ने ऐसा व्यवहार प्रारम्भ कर दिया है। उन लोगों के जो अढ़तिये कानपूर तथा उत्तरीय भारतवर्ष के अन्य नगरों में हैं उनसे वे नागरी अक्षरों में पत्र व्यवहार करते हैं। गुजरात से उत्तरीय भारतवर्ष में यात्रा करते हुए स्टेशनों के जो नाम नागरी अक्षरों में लिखे थे उनसे मुझे बहुत सहायता मिली।

"आज कल बहुत से लोग अपने विज्ञापन स्थानीय समाचार पत्रों में उर्दू अक्षरों में छपवाना चाहते हैं। उत्तरी भारतवर्ष में लोग चाहे उर्दू पढ़ सकते हों परन्तु यदि वे गुजरात वा दक्षिण में अपने विज्ञापन उर्दू अक्षरों में छपवावें तो उन्हें विरलाही कोई पढ़ सकेगा। मैं सब प्रान्त के व्यापारियों को यही सम्मति दूंगा कि वे अपने विज्ञापन नागरी अक्षरों में छपवावें। इससे उनके व्यापार में लाभ होगा क्योंकि नागरी अक्षरों में होने के कारण उनके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विज्ञापन के अधिक पढ़े जाने और उनके माल की अधिक बिक्री होने की सम्भावना है। उदाहरण के लिये हम लोग गुजरात में केशरंजन तैल का एक बंगला विज्ञापन नागरी अक्षरों में छपने के कारण पढ़तेही हैं।

"इसके सिवाय मैं एक और प्रस्ताव करूंगा और वह यह है कि उत्तरी भारतवर्ष से हिन्दी भाषा और नागरी अक्षरों में एक समाचार पत्र निकलना चाहिए।

"हमारे बम्बई में एक ऐसा पत्र अर्थात् वेङ्कटेश्वर पत्र है और वह बहुत कुछ कार्य कर रहा है। उसे सब श्रेणी के लोग और विशेषत: मारवाड़ी और कच्छी तथा नागरी जानने वाले बहुत से अन्य लोग पढ़ते हैं।

"महाशयो गुजरात में 'गुजरात वर्नाक्युलर सोसाइटी' नामकी एक सभा है जिसके सभापति होने का सौभाग्य मुझे इस वर्ष प्राप्त हुआ है। उस सभा से प्रतिवर्ष विज्ञान विषय में सुबोध ग्रन्थ छपते हैं और एक लिपि के विषय में यह सभा जो कुछ प्रस्ताव करेंगी उस पर मुझे निश्चय है कि हमारी सोसायटी बड़े आदर पूर्वक ध्यान देगी।

"महाशयो, बस इतना ही कहकर मैं अपने व्याख्यान को समाप्त करने की आज्ञा मागूंगा।"

बम्बई के सर भालचन्द्र कृष्ण ने जिनका स्वागत तालिध्वनि द्वारा किया गया कहा–

"सभापति महाशय तथा सभ्यगण, मैं इस अवसर पर नागरी प्रचारिणी सभा को बम्बई की ओर से हृदय से बधाई देता हूं। इन्होंने गत बारह वर्षों में बहुत अच्छा कार्य किया है और उन्हीं ने नागरी अक्षरों में जो वैज्ञानिक कोश तथा अन्य ग्रन्थ निकाले हैं वे वास्तव में प्रशंसनीय हैं।

"नागरी लिपि को स्वीकार करने के विषय में जितनी आवश्यक बातें थीं उन्हें हमारे योग्य सभापति और हमारे विद्वान मित्र मिस्टर तिलक और मेरे योग्य मित्र मिस्टर अम्बा लाल साकर लाल देसाई और मिस्टर रानाडे आदि लोगों से कह चुके हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"मैं समझता हूं कि हम हिन्दू लोग इस लिपि से बहुत प्राचीन समय से परिचित हैं।

"गत चार हज़ार वर्षों से हमारे चरक शुश्रुत आदि सब वैज्ञानिक ग्रन्थ और सब धार्मिक ग्रन्थ सदा इसी लिपि में लिखे जाते हैं।

"अब प्रश्न यह है कि हम लोग अपनी पुरानी बातों को भूल कर किसी दूसरी लिपि को ग्रहण करें अथवा अपने पुरुषाओं की रीति का अनुकरण करके सारे भारतवर्ष में एक लिपि और एक भाषा का प्रचार करें।

"उस समय भारतवर्ष में एक जाति थी और अब हमारे सब उद्योग भिन्न भिन्न प्रान्तों के सब लोगों को एक में मिलाने ही के विषय में होने चाहिएं।

"कांग्रेस का भी उद्देश्य यही है अतः हमें कांग्रेस का अनुकरण करना करना चाहिए और सारे भारतवर्ष में नागरी लिपि का प्रचार करना चाहिए। मैं समझता हूं कि यह कोई कठिन कार्य न होगा।

"अब हमें पूर्व व्याख्यान दाताओं के प्रस्ताव के अनुसार अनुभवी मनुष्यों की एक छोटी सी कमेटी नियत करनी चाहिए कि जो इस विषय में सब भांति से बिचार करे और मैं समझता हूं कि हम लोग थोड़े ही समय में हिन्दी को समस्त भारतवर्ष की भाषा और नागरी को उस भाषा के लिखने की लिपि बनाने में कृतकार्य होगें। परन्तु इसके करने में निस्सन्देह बहुत सी कठिनाइयां हैं।

"हमारे मदरास के मित्रों को (जिनमें से हमारे मित्र जो यहां उपस्थित हैं आप लोगों के सामने व्याख्यान देगें) इसलिये कठिनाई पड़ती है कि उनके अक्षर कुछ भिन्न हैं। उनके अक्षर भिन्न प्रकार से लिखे जाते हैं परन्तु जैसा कि मिस्टर तिलक ने कहा है अन्त में उनके ग्रहण करने में कोई कठिनाई न होगी। निस्सन्देह भिन्न भिन्न प्रान्तों में लिखने की भाषा एक होती है और बोलने की भाषा दूसरी। परन्तु मैं समझता हूं कि विशेषतः लिखने की भाषा में यह उद्योग अवश्य करना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चाहिए, और बहुत दृढ़ता से करना चाहिए। मैं ने सुना है कि कुछ वर्ष हुए कि नागरीप्रचारिणी सभा ने उस प्रसिद्ध नीतिज्ञ सर एएटनी मैकडानेल की कृपा से न्यायालय में नागरी लिपि और हिन्दी भाषा के प्रचार का उद्योग किया था परन्तु अब राज्य बदल गया है और अब उस विषय में उतना उत्साह और सहानुभूति नहीं दिखाई देती। परन्तु आप लोग जानते हैं कि यूरोपियन अफसर लोग केवल बसेरा करनेवाले पक्षियों की नाईं हैं। हमी लोग भारतवर्ष के वास्तविक निवासी हैं। अतः हमको उद्योग करना चाहिए और हमें निश्चय है कि समय पाकर हमारे उद्योग में सफलता होगी।

"कुछ समय हुआ कि बम्बई में शिक्षा विभाग के डाइरेक्टर ने हमारी मराठी भाषा की वर्णमाला में परिवर्तन करने का उद्योग किया था। उन्होंने एक छोटी सी कमेटी नियत की जिसने कि मराठी पढ़ने वाले सर्वसाधारण की सम्मति लिये बिना, मराठी की लिपि-प्रणाली में परिवर्तन करना निश्चित कर दिया और डाइरेक्टर ने यह आज्ञा दे दी की नई पाठ्य पुस्तकें इसी नवीन लिपि प्रणाली के अनुसार छापी जांय।

"हम लोगों ने इस विषय को उठाया और पहिले बुक कमेटी के सभापति के पास प्रार्थनापत्र भेजा, यद्यपि हम लोग जानते थे कि इससे कोई लाभ न होगा। तब हम लोगों ने शिक्षा विभाग के डाइरेक्टर से प्रार्थना की पर वहां से भी वही उत्तर मिला। फिर हम लोगों ने एक प्रार्थनापत्र तयार करके बम्बई की गवर्मेंट के पास भेजा। उसमें हम लोगों ने यह दिखलाया कि यह केवल भाषा ही का विषय नहीं है बरन यह राजनैतिक विषय है और मराठी भाषा की लिपिप्रणाली के विषय में जैसा कुछ किया गया है यदि वैसाही रह गया तो भाषा में पूरी तरह से उलट फेर हो जायगा और वह एक बड़े असन्तोष का कारण होगा। वहां इस विषय पर अधिक बुद्धिमानी से बिचार किया गया और आप लोगों को यह जान कर प्रसन्नता होगी कि गवर्मेंट ने तुरन्त हमारी प्रार्थना स्वीकार कर ली।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"मैं इस सभा को भी इसी उपाय का अवलम्बन करके यहां और अन्यत्र इस विषय में गवर्मेंट से प्रार्थना करने की सम्मति दूंगा और मुझे विश्वास है कि आप लोग निस्सन्देह गवर्मेंट की सहानुभूति प्राप्त करेंगे और अपने उद्योग में कृतकार्य होगें। और मेरी सम्मति में यह बहुत उत्तम होगा कि उसी भाषा में हमारे वैज्ञानिक ग्रन्थ भी बनें।

"धर्मसम्बन्धी ग्रन्थों के विषय में बहुत से ग्रन्थ जैसे तुलसी दास की रामायण आदि जिन्हें सब लोग सत्कार और पूजा के दृष्टि से देखते हैं इस भाषा में वर्तमान हैं।

"उस बड़ी भाषा को, जिसने कि मराठा और हिन्दू समस्त जाति का चित्त आकर्षित कर लिया है, रक्षित रखना चाहिए। उसे रक्षित रखकर सारे भारतवर्ष की भाषा बनाने का उद्योग करना चाहिए और मुझे आशा है कि इसमें नागरीप्रचारिणी सभा को एक दिन सफलता होगी। इन्हीं थोड़ी सी बातों को कह कर सभा को हृदय से धन्यवाद देता हूं कि उसने मुझे इस आवश्यक विषय पर अपने विचार प्रगट करने का अवसर दिया।"

कलकत्ते के प्रोफेसर क्षीरोद प्रसाद विद्याविनोद एम० ए० ने जिनका स्वागत तालिध्वनि द्वारा किया गया कहा—

"महाशयो, यदि मैं आज आप लोगों के सम्मुख अपनी ही भाषा में व्याख्यान देने का उद्योग करूं तो मुझे भय है कि बहुत से लोग मेरी बातें नहीं समझ सकेंगे। परन्तु मुझे आशा है कि एक दिन अवश्य ऐसा आवेगा कि जब अपनेही देशवासियों के सम्मुख व्याख्यान देने में किसी विदेशी भाषा का आश्रय लेने की आवश्यकता न पड़ेगी। यद्यपि हम लोग एक विदेशी भाषा अर्थात् अंगरेजी भाषा के अनुग्रहीत हैं क्योंकि उससे आज कल भारतवर्ष के बड़े बड़े बुद्धिमानों में एका होने की सहायता मिली है फिर भी हमें सारे देश के लोगों में एका उत्पन्न करने के लिये किसी एक भाषा की आवश्यकता है। इस प्रकार का एका हम लोगों में वैदिक काल में था परन्तु अब वह नहीं रहा है और हम लोग

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसे एक बार पुनः प्राप्त करने का उद्योग करते रहे हैं। परन्तु यह कैसे किया जायगा।

"अभी यह बात निस्सन्देह स्वप्नवत जान पड़ती होगी परन्तु यही स्वप्न मैं ने बरसों तक देखा है और जब मैं अपने योग्य सभापति के सदृश महानुभावों को, माननीय मिस्टर जस्टिस मित्र, मिस्टर तिलक और पं० मदन मोहन मालवीय सदृश लोगों को सारे भारतवर्ष के लिये एक लिपि का उद्योग करते हुए देखता हूं तो मुझे इस स्वप्न के सत्य होने की आशा होती है।

"महाशयो, जिस उद्देश्य को हम लोग प्राप्त किया चाहते हैं उसकी पहिली सीढ़ी सारे भारतवर्ष में एक लिपि का करना ही है। भारतवर्ष की भिन्न भिन्न आर्यभाषाओं के परस्पर के भेद इतने थोड़े हैं और उनमें इतनी अधिक समानता है कि यह देखकर आश्चर्य होता है कि इस समय एक प्रान्त के लोगों ने दूसरे प्रान्त की भाषाएं सीखने का उद्योग नहीं किया। इसका कारण मेरी सम्मति में भिन्न भिन्न प्रान्तों की लिपियों का भिन्न होना ही है। भिन्न लिपि ही पाठकों को कठिनता में डाल देती है और इसी कारण से वे उस भाषा को सीखने का वास्तविक उद्योग नहीं करते। परन्तु यदि वे एक बार इस कठिनाई को दूर कर दें तो उन्हें यह देखकर आश्चर्य होगा कि पहिले उन्हें जो भाषा विदेशी जान पड़ती थी वह वास्तव में उनकी मातृभाषा की बहिन ही है। सज्जनगण, मुझे विश्वास है बंगाली साधु भाषा में लिखी हुई किसी पुस्तक के १०० शब्दों में से ७५ शब्द बिना किसी की सहायता के किसी शिक्षित महाराष्ट्र वा पंजाबी की समझ में आ जायगे। संयुक्त प्रदेश के लोगों का तो कहना ही क्या है। शेष २५ शब्दों के जिनमें मुख्यतः कोई न कोई व्याकरण की विशेषता होगी, जानने में कोई बड़ी दूसरी कठिनता न होगी, क्योंकि भारतवर्ष की एक भाषा के व्याकरण से दूसरी भाषा के व्याकरण में बहुत अन्तर नहीं है।

'मैं यहां पर अपने ही एक ग्रन्थ से एक वा दो वाक्य उद्धृत करता हूं;—'यमुनाजलसम्पूर्णा अमृतरूपिणी भागीरथी पर कण्ठ-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हार, चिरतुषारधवलित हिमाचल यार शिरोभूषण चिरश्यामल-शस्यसम्पद यार अङ्गावरण, एक निविड़ कृष्ण कान्ति वनश्रीते यिनि कूटिल कुन्तला अनन्त प्रसारी नीलाम्बुराशिर शुभ्र तरंग फेन रेखा यार मेखला, से वङ्गेर किसेर अभाव चराचर? यार जले स्वर्ग, फले सुधा, शस्ये अनन्त देशेर अनन्त जीवेर प्राणदायिनि शक्ति, यार ललाट शशी सूर्य्य करोज्ज्वल यार प्रभाव मधुगन्ध कुसुम शीकराही से वङ्गेर जन्य आबार धनरत्न भिक्षा केन" ? यहां पर बहुत से ऐसे सज्जन उपस्थित हैं कि जिन्हों ने कदाचित कभी कोई बंगला पुस्तक नहीं पढ़ी है। मेरी उनसे प्रार्थना है कि वे कृपाकर देखें कि उपरोक्त वाक्यों का कितना कुछ अंश उनकी समझ में स्वयं आजाता है। वे लोग देखेंगे कि एकाध दो सर्वनाम और कुछ विभक्तियों को छोड़ कर उसमें कुछ भी ऐसा नहीं है जो उनकी समझ में न आसके।

"हमारे सुयोग्य सभापति ने बंगला में बहुत ही उत्तम पुस्तकें लिखी हैं और वे बङ्गाल में ग्रन्थ रचना के लिये उतने ही प्रसिद्ध हैं जितने कि राजनीति के लिये। परन्तु सज्जनगण, उन के ग्रन्थ जो भिन्न लिपि में लिखे जाते हैं उसके कारण बङ्गला न जानने वाले किसी मनुष्य ने उन्हें समझने का कोई उद्योग नहीं किया। इस बात से यह स्पष्ट है कि समस्त भारतवर्ष के लिये एक लिपि का होना कितना आवश्यक है।

"हमलोगों की बंगला लिपि नागरी लिपि से अधिक प्राचीन है परन्तु देवनागरी अक्षरों को सारे भारतवर्ष के लिये एक लिपि बनाने का जो उद्योग किया जाता है उससे इसमें किसी प्रकार दुःख नहीं होता, क्योंकि हमारी जातीय उन्नति हमारी भाषा की एकता पर निर्भर है और भाषा की एकता हमारी लिपि की एकता पर ही निर्भर है।

"सज्जनो, बस इतना ही कह कर मैं आपलोगों से आज्ञा लेता हूं।"

सलीम के मिस्टर राघवाचार्य बी० ए० ने जिनका स्वागत तालिध्वनि द्वारा किया गया कहा—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"सभापति महाशय तथा सज्जन गण, आप लोगों की आज्ञा लेकर मैं एक प्रस्ताव करने का साहस करूंगा। इस सभा के उद्देश्य जातीय भलाई से सम्बन्ध रखते हैं। मुझे ऐसा ज्ञान पड़ता है कि आज जो यहां पर वक्तृताएं हुई हैं उन्हों ने इस उद्देश्य को परिमित कर दिया है और मुझे यही दुःख है। मैं समझता हूं कि आप लोगों का उद्देश्य सारे भारतवर्ष की भाषाओं के लिये एक लिपि करने का है परन्तु ज्ञान पड़ता है कि आज के व्याख्यान देने वालों ने आप के इस उद्देश्य को उत्तरी और पश्चमी भारतवर्ष की भाषाओं के लिये ही परिमित रक्खा है। मैं समझता हूं कि यह बिचार ठीक नहीं है। मेरी समझ में यदि उत्तरी और पश्चमी भारतवर्ष की भाषाओं के लिये एक लिपि का होना सम्भव है तो इसी प्रस्ताव को बढ़ा कर उसमें दक्षिणी भारतवर्ष और लंका की भी भाषाओं को सम्मिलित कर लेना बहुत कठिन नहीं होगा। इस सम्बन्ध में इस प्रस्ताव पर भी विचार कर लेना चाहिए कि यदि हम लोग एक भाषा और उसके लिये पहिले पहल एक लिपि करना चाहते हैं तो वह लिपि योरप की क्यों न हो। मुझे कदाचित यह दिखलाने की आवश्यकता न होगी कि यह प्रस्ताव बिल्कुल असम्भव है। यदि भारतवर्ष जैसे बड़े देश में किसी समय एक भाषा हो सकती है तो वह योरप की कोई भाषा नहीं हो सकती। हमारे श्राद्ध तथा हमारी अन्य धार्मिक क्रियाओं के लिये कभी कोई योरप की भाषा नहीं हो सकेगी। हमारे मज़दूर आदि अपने कठिन परिश्रम का रोना कभी किसी युरोप की भाषा में नहीं रो सकेंगे। किसी योरोप की भाषा में भारतवर्ष के बिचार और वेदान्त पूरी तरह यथार्थ रीति से नहीं प्रगट किए जासकते हैं। तब यदि सारे भारतवर्ष के शिक्षित और अशिक्षित ऊँच और नीच सभी लोगों के लिये एक भाषा का होना सम्भव है तो वह भारतवर्ष की ही भाषा है और सम्भवतः वह हिन्दी ही होगी। भारतवर्ष की सब बोल चाल की भाषाओं के स्थान पर एक भाषा करने के लिये मेरी समझ में हिन्दी सब से उपयुक्त है। इसी भाषा को भारतवर्ष के अधिकांश लोग समझते हैं और वह उर्दू तथा अन्य कई भाषाओं से बहुत

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कुछ मिलती जुलती है। और संस्कृत के साथ जो उसका घनिष्ट सम्बन्ध है उस से यह निश्चय है कि प्रचार बढ़ाने के लिये वही सब से उत्तम और विज्ञान तथा आज कल की अन्य आवश्यकताओं के लिये वही सब से अधिक उपयुक्त है। और यह उचित ही है कि हमें ऐसा यत्न करना चाहिए कि वह हिन्दी जिस लिपि में लिखी जाती है वही सारे भारतवर्ष की लिपि बनाई जाय। योरप की लिपि से जो कि एक बारगी दोष से भरी हुई है हम लोगों का काम नहीं चलेगा। भारतवर्ष की मुख्य मुख्य लिपियों की बिशेषता यह है कि उन में प्रत्येक उच्चारण के लिये एकही अक्षर और प्रत्येक अक्षर के लिये केवल एकही उच्चारण है। परन्तु क्या हमें निश्चय है कि देवनागरी अक्षरों में कुछ भी दोष नहीं है? निस्सन्देह प्रत्येक बालक की माता अपने बालक को संसार में सब से सुन्दर समझती है चाहे वह कैसाही कुरूप क्यों न हो। यदि हम पक्षपात रहित होकर देवनागरी लिपि की जांच करें तो सम्भवतः हमें विदित होगा कि उसमें कुछ सुधार की आवश्यकता है। यहां कई वर्ष हुए कि सर एएटनी मेकडानेल के समय में न्यायालय तथा दफ़्रों में उर्दू के साथ साथ हिन्दी के प्रचार के विषय में जो विरोध हुआ था वह सब लोगों को विदित है। उसका एक कारण यह बतलाया गया था कि देवनागरी अक्षरों के लिखने में बहुत समय लगता है। मैं समझता हूं कि इस बात का उत्तर अभी तक नहीं दिया गया। और न देवनागरी लिपि देखने ही में सब से सुन्दर है। वह कोनो तथा आड़ी और बेड़ी लकीरों से भरी हुई है। यदि हम देवनागरी लिपि को सुन्दर गोल मटोल तेलगू लिपि के सामने रख कर देखें तो मेरे कथन की सत्यता आप लोगों को बिदित हो जायगी।

"मेरा प्रस्ताव है कि कुछ योग्य मनुष्यों की एक छोटी सी कमेटी नियत की जाय जो कि देवनागरी लिपि को सरल और यदि सम्भव हो तो सुन्दर भी बनाने के विषय में विचार करें। फिर यह संशोधित लिपि अन्त में धीरे धीरे सारे भारतवर्ष और लंका में प्रचलित हो जायगी। दक्षिणी भारतवर्ष तथा लंका में पांच

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भाषाएं हैं अर्थात् तामिल, तेलगू, कनारी मलयालम और सिंघाली। इनमें से अन्तिम चारों भाषाओं के लिये संशोधित देवनागरी के अक्षर बहुत सुगमता से काम में लाए जा सकते हैं। संघाली भाषा हिन्दी की नांई संस्कृत की एक शाखा समझी जाती है और तेलगू कनारी तथा मलयालम यद्यपि द्रविड भाषाएं हैं तथापि उनपर आर्य लोगों और संस्कृत भाषा का इतना प्रभाव पड़ा है कि वे आर्य-द्रविड भाषा कही जा सकती हैं। केवल शुद्ध तामिल भाषा में ही हिन्दी भाषा के कुछ अक्षर नहीं हैं और उनमें कुछ अक्षर ऐसे हैं जो कि हिन्दी भाषा में नहीं हैं। इस भाषा के लिये भी नागरी लिपि जहां तक उसे व्यवहार करना सम्भव है व्यवहार की जा सकती है। इसलिये मैं इस बात पर जोर दूंगा कि सभा देवनागरी लिपि को सुधारने और सुगम बनाने के विषय में विचार करे। यद्यपि इस प्रस्ताव को स्वीकार करने से हिन्दी बोलने वाले लोगों को कुछ सांकल्पिक विरोध होगा परन्तु इससे उसके सारे देश में प्रचलित होने में जो सांकल्पिक विरोध है वह बहुत कम हो जायगा।

"सज्जनो बस इतनाही कह कर अब मैं आप लोगों से आज्ञा मागूंगा।"

सभापति मिस्टर रमेशचन्द्र दत्त ने उस दिन के अधिवेशन का कार्य समाप्त करते हुए कहा—

"सज्जनगण, हममें से बहुतों को अभी दो ही घंटे में एक दूसरे बड़े अधिवेशन में उपस्थित होना है। अतः मैं समझता हूं कि यदि मैं अपने विचारों को जहां तक सम्भव हो थोड़े में प्रगट कर दूं तो इसके लिये आप लोग मुझे धन्यवाद देंगें।

"आज के व्याख्यानदाताओं से हम लोगों ने बड़े उपयोगी प्रस्ताव सुने हैं। उनके विषय में मैं कुछ कह कर आज का काम समाप्त करूंगा।

"मिस्टर तिलक ने देवनागरी लिपि का उल्लेख किया है और उन्होंने आप लोगों से जो कुछ कहा है वह ऐतिहासिक रीति पर ठीक है। देवनागरी भारतवर्ष की सब से प्राचीन लिपि नहीं है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यहां की सब से प्राचीन लिपि जिसके विषय में हम लोगों को कुछ ज्ञात है, वह है जो कि अशोक के खुदवाए हुए लेखों में देखी जाती है। आज कल की छपी हुई पुस्तकों में हम देवनागरी लिपि को जिस रूप में देखते हैं वह अशोक की लिपि का ही रूपान्तर है। मैं इस प्रश्न को नहीं उठाया चाहता कि अशोक की लिपि की उत्पत्ति किस प्रकार हुई। यह प्रश्न आज के विषय के बाहर होगा। मिस्टर तिलक ने यह एक बड़ा अच्छा प्रस्ताव किया है कि नागरी लिपि को धीरे धीरे स्कूली पुस्तकों में प्रचलित करना चाहिए और जहां तक सम्भव हो अन्य भांति से भी उसके प्रचार का उद्योग करना चाहिए। बहुत सी स्कूली किताबें हमारेही छापेखानों में छपती हैं और मुझे विश्वास है कि यदि हम उनमें धीरे धीरे नागरी लिपि का प्रवेश करें तो वे स्कूल की पाठ्य पुस्तकों से निकाल नहीं दी जांयगी। फिर उन्होंने कुछ अनुभवी मनुष्यों की कमेटी द्वारा एक सर्वमान्य लिपि स्थिर करने के लिये कहा है। सज्जनो मेरा तो यह विश्वास है कि सर्वमान्य लिपि आप से आप हो जायगी। यदि हम लोग हिन्दी अक्षरों के व्यवहार करने का संकल्प कर लें तो लिखते लिखते एक ऐसी लिपि स्वयंही बन जायगी जो कि लिखने में सुगम होगी। अनुभवी मनुष्यों की कमेटी यदि बैठ कर इस लिपि को सुधारे तो उसको लिखने में सुगम बनाने में उसकी आधी भी सफलता न होगी जितना कि लोगों के लिखते लिखते आप ही एक लिपि बन जाने से होगी। जब समस्त भारतबासी देवनागरी लिपि को लिखने लग जांयगे तो समय पाकर उसका एक ऐसा रूप बन जायगा जो कि आज कल की छापे की देवनागरी की अपेक्षा लिखने में कहीं सुगम होगा। मैं यह बात स्वयं अपने अनुभव से कहता हूं। मुझे जब संस्कृत लिखने की आवश्यकता पड़ती थी तो मैं उसे नागरी अक्षरों में लिखा करता था और नागरी अक्षर छापे के अक्षरों की अपेक्षा लिखने में बहुत सुगम होते थे। अतः मुझे इस बात पर बहुत ही अधिक विश्वास है।

"प्रोफेसर रानाडे ने वैज्ञानिक शब्दों को स्थिर करने के विषय में इस सभा ने जो उत्तम कार्य किया है उसका वर्णन किया है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और इसके पहिले भारतवर्ष के भिन्न भिन्न प्रान्तों में इस विषय में जो उद्योग हुआ है उसका भी उल्लेख किया है। मेरा सम्बन्ध बंगाल के साहित्य परिशद से बहुत वर्षों तक रहा है और उस परिषद का भी एक उद्देश्य वैज्ञानिक कोश बनाने का था। उस परिषद ने इस विषय में बहुत अच्छा कार्य किया है और इस सभा ने भी बहुत अच्छा काम किया है जैसा कि इस कोश के पांच प्रकाशित भागों से स्पष्ट है, मैं इन पुस्तकों को एक बार उड़ती नज़र से देख सका हूं और मुझे विश्वास है कि उनमें बहुत से शब्द बहुत ही उत्तम चुने गए हैं और वे केवल हिन्दी बोलने वालों के ही लिये नहीं वरन सारे भारतवर्ष के लिये उपयोगी होंगे। मैं बड़ी उत्कंठा से यह आशा करता हूं कि यह कार्य शीघ्र समाप्त हो जाय।

"दीवान बहादुर अम्बालाल ने कहा है कि उपन्यास और सर्वप्रिय ग्रन्थों के सिवाय विज्ञान के सब ग्रन्थ भी नागरी अक्षरों में छपने चाहिएं। मुझे इसमें कोई सन्देह नहीं है कि आप सब लोग इस प्रस्ताव को ठीक समझते होंगे और जहां तक सम्भव हो आज कल के बहुत से वैज्ञानिक ग्रन्थ नागरी अक्षर में छापे जा सकते हैं। उन्होंने यह भी एक बड़ा अच्छा प्रस्ताव किया है कि सब विज्ञापन देवनागरी अक्षरों में छपवाने चाहिएं, फारसी अक्षरों में नहीं। सज्जनो, इसमें कोई सन्देह नहीं कि विज्ञापन का देवनागरी अक्षरों में छपवाना भी भारतवर्ष के अन्य प्रान्तों में नागरी अक्षरों के प्रचार करने का एक मार्ग है। मुझे उनके इस कथन से बड़ा आश्चर्य हुआ कि बनारस से नागरी अक्षरों में हिन्दी का कोई अच्छा पत्र नहीं निकलता। भारतवर्ष के इस भाग में एक अच्छा हिन्दी का पत्र अवश्य होना चाहिए और जितनीही जल्दी ऐसे पत्र के निकालने का प्रबन्ध हो सके उतनाही अच्छा है।

"सर भालचन्द्र कृष्ण ने नागरी अक्षरों को व्यवहार करने के बहुत अच्छे प्रमाण बतलाए हैं और दक्षिण में मराठी लिपि में परिवर्तन करने का जो उद्योग किया गया था उसका उन्होंने बहुत हास्यजनक वृत्तान्त वर्णन किया है। यदि मुझे समय होता तो मैं आप को इससे भी अधिक हास्यजनक वृत्तान्त समस्त बंगाल को एक भाषा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के द्वारा संयुक्त करने का नहीं वरन उसके चारो विभागों की भाषाओं को अलग अलग करने के विषय में सुनाता। सज्जनो, यह भाषा के विचार से बंगाल का विभाग किया गया। उच्च कर्म्मचारियों ने यह सोचा कि बंगाल के भिन्न भिन्न विभागों में लोग जो भाषाएं बोलते हैं वे एक दूसरे से भिन्न हैं और वे उनमें से प्रत्येक भाग की भाषा को एक स्थिर रूप में कर देना चाहते थे। आप लोगों में से जो महाशय इङ्गलैण्ड का वृत्तान्त जानते हैं उन्हे विदित होगा कि यह बात वहां बिल्कुल उलटी हुई है। स्काटलैण्ड के हाईलेण्डर लोग और पश्चिमी आयरलैण्ड के निवासी अब तक भी गैलिक भाषाएं बोलते हैं। परन्तु वहां पर बृटिश गवर्मेण्ट का यह उद्योग है कि उस राज्य के दूर के देशों में भी अंग्रेजी भाषा का प्रचार हो जाय जिस में इस देश के समस्त लोगों में एका उत्पन्न हो। वहां भिन्न भिन्न प्रान्तों के लिये भिन्न भिन्न भाषाएं स्थिर करने का उद्योग नहीं किया जाता। इस के विपरीत अंग्रेजी में प्रारम्भिक शिक्षा को फैलाने के लिये उद्योग किया जाता है जिसमें सब लोगों की भाषा एक हो जाय। फिर सज्जनो मेरी समझ में नहीं आता कि यहां पर कर्मचारियों ने जो बंगाल में चार भाषाएं जुदी जुदी करने का यत्न किया है उसका क्या कारण है।

"प्रोफेसर क्षीरोदप्रसाद और अन्तिम व्याख्यान दाता दोनों ही ने सारे भारतवर्ष में एक भाषा करने के लिये हमें जो उद्योग करना चाहिए उसके विषय में बहुत उत्तम वक्तृताएं दी हैं। मुझे भी उन्हीं की नाईं आशा है। यदि हम लोग भी एकही लिपि का लिखना आरम्भ कर दें और एकही वैज्ञानिक परिभाषा से परिचित हो जांय तो बहुत है, वरन इतनाही हम कुछ समय में होने की आशा कर सकते हैं। वह समय अभी बहुत दूर है जब कि सारे भारतवर्ष के लोग एकही भाषा बोलने लगेंगे।

"सज्जनो हम लोग इस अधिवेशन के लिये इस सभा के बहुत ही अनुगृहीत हैं और मैं सच्चे हृदय से यह विश्वास करता हूं कि सभा ने जो उत्तम कार्य्य उठाया है उस में प्रति वर्ष सफलता होती जायगी और अन्त में उसका वृहद् उद्देश्य पूर्ण हो जायगा।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रेवेरेंड ई. ग्रीव्ज़ (नागरीप्रचारिणी सभा के उपसभापति) ने सभापति और व्याख्यानदाताओं को धन्यवाद दिए जाने का प्रस्ताव करते हुए कहा।

"महाशय, आप को तथा इन वक्ताओं को जो कि बहुत दूर दूर से हमारे साथ इस बड़े कार्य्य में सहानुभूति दिखलाने के लिये आए हैं धन्यवाद देने का सौभाग्य नागरीप्रचारिणी सभा के उपसभापति होने के कारण मुझे प्राप्त है।

"अब इस समय अपने विचारों को विस्तृत रूप से वर्णन करने का अवसर नहीं रह गया है परन्तु मुझे आशा है कि जो लोग मुझे बनारस में जानते हैं उन्हें यह विदित होगा कि मैं उन सब कार्यों में कितनी अधिक सहानुभूति रखता हूं जो कि लोगों में एका उत्पन्न करने के लिये किए जाते हैं।

"मैं भारतवर्ष में बहुत वर्षों तक रहा हूं और वे सब वर्ष मैं ने बनारस डिविजन में और अधिकतर काशी के नगर में व्यतीत किए हैं और मुझे ऐसे किसी कार्य्य में सम्मिलित होने में बड़ीही प्रसन्नता प्राप्त होती है जिस से कि केवल भिन्न भिन्न प्रान्त के भारतवासियों में ही नहीं वरन भारतबासियों और अंग्रेजों में भी एका उत्पन्न हो। किस प्रकार इस उद्देश्य की पूर्ति की जा सकती है यह प्रश्न केवल बड़ा कठिन ही नहीं वरन सम्भवतः अभी तक हमारी समझ के बाहर है। परन्तु महाशय यह सभा जो उपयोगी कार्य्य कर रही है वह आप पर विदित है और आपने उसे कृपा कर अपनाया है।

"भाषा की एकता के विषय में आपने इंग्लैण्ड, स्काटलैण्ड और वेल्स का उल्लेख किया है कि स्काटलैण्ड और वेल्स की भाषाएं किस प्रकार अंग्रेज़ी भाषा को अपना स्थान दे रही हैं। कार्नवाल इसका एक दूसरा उदाहरण है। कार्नवाल की एक जुदी ही भाषा थी परन्तु मेरी स्त्री की, जो कि कार्नवाल की रहने वाली है, होश में ही कार्नवाल भाषा का अन्तिम बोलने वाला मर गया।

"अब कार्नवाल की भाषा मृत हो गई है और गेलिक और वेल्स भाषाएं भी मृतप्राय: हो रही हैं और उनकी मृत्यु पर किसी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को दुःख नहीं होता । भाषाएं मृत होती ही हैं और उन की मृत्यु पर हमें आंसू बहाने की आवश्यकता नहीं है वरन हमें प्रसन्न होना चाहिए ।

"सारे भारतवर्ष की एक भाषा हो जायगी अथवा नहीं और यदि हो जायगी तो वह कौन सी भाषा होगी, इस भविष्यतवाणी के करने का साहस मैं नहीं कर सकता और यदि ऐसा होना है तो सम्भव है कि वह उन मार्गों के द्वारा हो जाय कि जिन के द्वारा आपके कथनानुसार हम उद्योग नहीं कर रहे हैं । कभी कभी डाक्टर लोग किसी रोगी की चिकित्सा करने के लिये मिलकर उपाय सोचते हैं और जब कि उस विषय में उनकी बुद्धि नहीं काम करती तो उधर रोगी स्वयं ही अच्छा होने लगता है । क्या यही बात हमारे विषय में नहीं हो सकती? क्या यह सत्य नहीं है कि जब कि हम लोग एक भाषा होने का केवल उपाय ही सोच रहे हैं तो इण्डियन नैशनल कांग्रेस ने इस विषय को बहुत कुछ निश्चित कर दिया है? उसने एक भाषा की नींव डाल दी है । परन्तु उस से आप यह न समझिए कि मैं भारतवर्ष की एक भाषा के लिये अंगरेजी भाषा का पक्ष कर रहा हूं चाहे इस भाषा में कितनेही लाभ क्यों न हों । मैं स्वयं हिन्दी का पक्षपाती हूं और मैं नागरी अक्षरों को बहुत उत्तम समझता हूं और यदि सारे भारतवर्ष के लिये एक हिन्दी भाषा हो जाय तो मैं उसको प्रसन्नता से स्वागत करूंगा । सज्जनो, मैं अपने सभापति तथा उन महाशयों के लिये बड़े शुद्ध हृदय से धन्यवाद का प्रस्ताव करता हूं जिन्होंने आज हम लोगों के सामने व्याख्यान दिए हैं ।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सूचीपत्र।

(१) राजपुताने में प्राचीन शोध—अंक-१-मुंशी देवी प्रसाद लिखित (१ से २० तक)
(२) फाहिस्रान और युअन च्वांग के सरल रेखा माप—पण्डित रामेश्वर प्रसाद त्रिपाठी लिखित (२१ से ६४ तक)
(३) शाक्यमुनि गौतमबुद्ध—पण्डित रामगरीब चौबे लिखित (६५ से ११६ तक)
(४) भूगर्भ विद्या—बाबू ठाकुर प्रसाद लिखित (११७ से १४४ तक)
(५) हिन्दी की ओर से अपील—पण्डित जगदेव उपाध्याय लिखित (१४५ से १४८ तक)
(६) ठाकुर कवि का जीवन चरित—लाला भगवानदीन लिखित (१४९ से १६८ तक)
(७) भारतवर्ष की सब भाषाओं के लिये एक लिपि—बाबू गोपाल दास द्वारा अनुवादित (१६९ से १९९ तक)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नागरीप्रचारिणी पत्रिका।

ग्यारहवां भाग।

ऋते ज्ञानान्न मुक्तिः
पुस्तक सं० ना० प्र० प०
आगत सं० 4(2)
तिथि०
गुरुकुल ग्रन्थालय काँगडी.

सम्पादक

श्रीराधाकृष्णदास।

काशी नागरीप्रचारिणी सभा द्वारा

प्रकाशित।

1907

PRINTED AT THE TARA PRINTIG WORKS, BENARES.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सूचीपत्र ।

(१) राजपुताने में प्राचीनशोध, अंक १ का अवशिष्ट मुंशी देवीप्रसाद लिखित । (१-३)

(२) राजपुताने में प्राचीनशोध, अंक २ - मुंशी देवीप्रसाद लिखित । (४-७८)

(३) अरबी भाषा में संस्कृत ग्रन्थ-मुंशी देवीप्रसाद लिखित । (७९-८४)

(४) अकबर के राजत्वकाल में हिन्दी-पण्डित सूर्य। नारायण दीक्षित बी०ए० लिखित । (८५-१७२)

(५) भाषातत्त्व -पण्डित रामावतार पाण्डेय एम०ए० लिखित । (१७३-१८१)

(६) रेडियम - बाबू दुर्गाप्रसाद बी० ए० लिखित- (१८२ - १८८)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नागरीप्रचारिणी पत्रिका।

ग्यारहवाँ भाग।

राजपूताने में प्राचीन शोध।

अंक १ का अवशिष्ट।

[मुंशी देवीप्रशाद लिखित।]

बूँदी का राजवंश।

——:o:——

ऊपर कई जगह बूँदी भूपों के नाम प्रसंगवस ऊपर नीचे आए हैं इससे यहाँ उन्हें क्रम से लिखे देते हैं।

१	रावदेवाजी	...	...	संवत्	१२९८
२	समरसिंहजी	...	...	,,	१३००
३	नापाजी	...	...	,,	१३३२
४	हामाजी	...	...	,,	१३४३
५	वरसिंहजी	...	...	,,	१३६३
६	वैरीसालजी	...	...	,,	१४१८
७	भाँडाजी	...	...	,,	१४६०

(१) भाँडाजी के समय तक संवत् सही नहीं जाने जाते कुछ भूल पाई जाती है जिसके यहाँ लिखने का समय नहीं है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

८	नारायणदासजी	...	...	,,	१५४४
९	सूरजमलजी	...	...	,,	१५८४
१०	सुरताजी	...	...	,,	१५८८
११	सुरजनजी	...	...	,,	१६११
१२	राव भोज	...	...	,,	१६३२
१३	राव रतन	...	...	,,	१६६४
१४	कुँवरगोपीनाथजी	...	...	,,	...[२]
१५	शत्रुशालजी	...	...	,,	१६८८
१६	भावसिंहजी	...	...	,,	१७१५
१७	अनिरुद्धसिंहजी	...	...	,,	१७३८
१८	बुधसिंहजी	...	...	,,	१७५२
१९	उमेदसिंहजी	...	...	,,	१८०५
२०	अजीत सिंहजी	...	...	,,	१८२७
२१	विष्णु सिंहजी	...	...	,,	१८३०
२२	महाराव राजाराम सिंह जी		...	,,	१८७८
२३	महाराव राजा श्रीरघुबीरसिंहजी		...	,,	१९४६

(२) यह गद्दी पर नहीं बैठे थे।

———:o:———

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पंचरत्नों का श्लोक।

——:o:——

यह श्लोक पहिले लिखा जा चुका है उस को नागरीप्रचारिणी सभा बनारस की त्रैमासिक पत्रिका भाग १० सं० १ में छपा हुआ देखकर बूँदी से पूज्य पंडित गंगासहाय जी के पुत्र हरिवल्लभ जी ने हम को लिखा कि इसका शुद्ध रूप इस प्रकार है।

आशानन्दो जीवनः सूर्य्यमल्लोऽप्यात्मारामोऽथो हमीदखांप्रवीण
भूभृद्रत्न त्वत्कृपापात्रे सभ्येष्वलोक्यंते पंचरत्नान्यमूनि।

और जयपुर से पंडित गोकुलचंद्रजी ज्योतिषयंत्रशालाधिकारी ने लिखा कि श्लोक जो छपा है अधूरा है मेरे १ प्रिय मित्र पं० मन्नालाल जी जयपुर राज्यान्तर्गत सवाईमाधवपुर निवासी ने मुझे यों सुनाया था।

आशानन्दो जीवनो ज्ञानभांडो दंडी चंडीदानजःसूर्य्यमल्लः
भूभृद्रत्नत्वत्सभायां हमीदखाँज्ञायंते पंचरत्नान्यमूनि।

वे ऐसा भी कहते थे कि हमीदखाँजी के नाम से विच्छित्ति होकर तीसरे चौथे दो चरणों में आजाने से यह फल हुआ कि वे उस दरबार से थोड़े दिनों में ही चले गए उक्त पंडित जी अच्छे कवि आशानंद जी के शिष्य थे।

——:o:——

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राजपुताने में प्राचीन शोध।

अंक २।

[मुंशी देवीप्रशाद लिखित।]

——:o:——

३२ वर्ष का अरसा हुआ कि हाड़ोती और टोंक के पोलिटिकेल एजेण्ट कप्तान डबल्यू. जे. डबल्यू. मेवर साहिब बहादुर ने, जिनको पुराने इतिहास जानने की बहुत लगन थी, टोंक के प्रसिद्ध पण्डित रामकर्ण जी को हाड़ोती (बूँदी कोटे) में प्राचीन शिलालेखों के पढ़ने और पुरानी बस्तियों के ऐतिहासिक वृत्तान्त लिखने के लिये भेजा था उन्होंने हाड़ोती में फिर कर पुराने लेखों को बड़ी मिहनत से पढ़ा और पुरानी बातें लोगों से पूछ पूछ कर लिखीं ये पंडित जी स्वयं भी इतिहासरसिक थे जिससे इस काम में दिल लगाकर परिश्रम पूर्वक सफलता प्राप्त की उन्होंने और उनके छोटे बेटे पंडित लक्ष्मीनारायण नेपाली ने अक्षरों के पढ़ने का भी अभ्यास कर लिया था जो बौद्धों के समय में लिखे जाते थे परन्तु साहिब के बीमार होजाने से यह काम पूरा न हुआ पंडित जी ने जो कुछ संग्रह किया था मैं ने पंडित जी के कहने और साहिब के हुक्म देने से उसको पहिले उर्दू में लिखा फिर अंग्रेज़ी में तरजुमा कराया यह १ बड़ा ग्रन्थ फुलिसकेप काग़ज़ के ६०० पृष्ठों का हो गया था जो डेढ़ महीने तक साहिब के हेडक्वार्टर केम्प देवली में रह कर तैयार किया था परन्तु वह हम लोगों के पास नहीं रहा साहिब अंग्रेज़ी तरजुमे के साथ उसको और शिलालेखों की नकलों को भी विलायत ले गए मैं ने उसका कुछ सारांश सूचीपत्र के तौर पर लिख लिया था वही इस क्षुद्र लेख का मूल है जो सर्व साधारण

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और विशेष करके इतिहास प्रेमियों के अर्पण किया जाता है आशा है कि गुण ग्राहक विद्वान् इसको पढ़कर मेवर साहित्य और पंडित जी का उपकार मानेंगे और मुझको तो मज़दूर मात्र समझेंगे जिसने स्वयं इतना ही काम किया है कि इस कोठे का थान उस कोठे में कर दिया है।

अफ़सोस है कि इस समय पंडित रामकर्ण जी संसार में नहीं हैं और उनके पुत्र लक्ष्मीनारायण जी भी जो इस शोध में उनके साथ रहे थे परलोक में जा बसे हैं उनके परिश्रम का कुछ अंश मेरे पास पड़ा था सो यह मैंने उनके स्मारक चिन्ह के स्वरूप सब के सामने उपस्थित कर दिया है मेरी सामर्थ्य इतनी ही थी अधिक होती तो और भी साहस करता क्योंकि वे मेरे परम मित्र, और पूज्य पुरोहित थे।

इस लेख में इतनी रियासतों के वृत्तान्त हैं। १ बूँदी, २ कोटा, ३ झालावाड़, ४ टोंक, ५ शाहपुरा।

——:o:——

राज्य कोटा

(१) कोटा।

जब देवाजी हाड़ा ने मीनों से बूँदी ली थी तो वहाँ से १० कोस पर चम्बल नदी के आस पास भील लोग पहाड़ों में रहते थे जिन्होंने देवाजी के मरने पर बलवा करके कई गाँव लूट लिए देवाजी के बेटे समरसिंहजी बूँदी से उनको दंड देनेके लिये चम्बल के परे गए कोटिया नामक एक गाँव के पास जहाँ कोटिया भील रहता था भीलों ने भेले होकर उनका सामना किया और १ बड़ी लड़ाई लड़कर भाग गए समरसिंहजी ने फ़तह पाकर वह गाँव अपने भाई जैतसिंह को दे दिया, जैतसिंह ने कोटिया भील को मारकर वहाँ संवत् १३२१ में १ शहर बसाया जो कोटिया की जगह कोटा कहलाने लगा और राव रतनजी के समय तक बूँदी के नीचे रहा।

राव रतनजी ने अपने छोटे कुँवर माधोसिंह को कोटा जागीर में दिया था। वह किसी बात पर अपने बाप से नाराज़ होकर जहाँ-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गीर बादशाह के पास चले गए और अच्छी ख़िदमत की जिससे राज़ी होकर बादशाह ने कोटे का पट्टा हाड़ोती के ३६० गावों से उसको लिख दिया उस दिन से कोटा अलग राज होगया। फिर शाहजहाँ ने माधोसिंहजी को और जागीरें देकर संवत् १६८८ में राव रतनजी के मरने पर २ हज़ारी जात १५०० सवारों का मनसब और राव का ख़िताब इनायत किया उस वक्त से कोटे का राज पीढ़ी २ में बढ़ता गया और अब तक माधोसिंहजी की गद्दी पर इतने महारावजी बैठ चुके हैं।

१ माधोसिंहजी संवत् १६८५	२ मुकुंदसिंहजी १६८६
३ जगतसिंहजी १७१४	४ किशोरसिंहजी १७२६
५ रामसिंहजी १७४२	६ महाराव भीमसिंहजी १७६४
७ अर्जुनसिंहजी १७७६	८ दुर्जनसिंहजी १७८०
९ अजीतसिंहजी १८१३	१० छत्रमालजी १८१६
११ गुमानसिंहजी १८२२	१२ उमेदसिंहजी १८२७
१३ किशोरसिंहजी १८७६	१४ रामसिंहजी १८८५ इनसे सरकार कंपनी ने राज का तीसरा भाग इनके कामदार राजराना मदनसिंह को जो जालिमसिंह झाला का पोता था, दिला दिया जिससे झालावाड़ की नई रियासत १८९५ में बनी।
१५ शत्रुसालसिंहजी १६२३	१६ महाराव उमेदसिंहजी सं० १६४६ इनको भाग्यबल से झालावाड़ के २ हिस्से अंगरेज़ी सरकार ने संवत् १६५५ में दिला दिए।

कोटे में कोई पुराना मंदिर या मकान बूँदी का राज होने के पहिले का नहीं है क़िला वगैरह सब स्थान कोटावालों के बनाए हुए हैं

—:o:—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(२) कणसवा

यह गाँव कोटे से २ कोस पूर्व दिशा में बाण गंगा के किनारे पर बसता है असली नाम कण्वाश्रम है क्योंकि प्राचीन समय में कण्व ऋषि ने यहाँ तपस्या की थी और १ पुराना मंदिर कर्णेश्वर महादेवजी का है जिसको यहाँ वाले विक्रम राजा के समकालीन राजा कर्ण का बनाया हुआ कहते हैं परन्तु प्रशस्ति से यह बात सही नहीं होती।

यह प्रशस्ति मंदिर की दाहिनी भीत में १ बड़े पत्थर पर खुदी है इसकी लिपि पुरानी और भाषा संस्कृत है कई पंक्तियों के कुछ कुछ अक्षर गए हुए हैं कुल पंक्तियाँ १७ हैं जिन में २५ श्लोक हैं इन श्लोकों में ऐतिहासिक आशय केवल इतना ही है कि मौर्यवंश में धवल राजा बड़ा प्रतापी हुआ उसका मित्र संकुक नाम १ राजा था।

संकुक की धर्मपत्नी देगिणी थी जिससे संकुक के राजा शिवगण हुआ उसने मालव राजा (विक्रम) के संवत् ७९५ के गत होने पर कण्वाश्रम में महादेवजी का मंदिर बनाया और धूप दीप के वास्ते सर्वांक और चोणिपद्रक नाम के दो ग्राम दिए प्रशस्ति का लिखने वाला गोमक कायस्थ का पुत्र रांपक था।

सर्वांक आदि ग्रामों का तो अब पता नहीं है धूप दीप का खर्च राज से मिलता है और यह कणसवा गाँव मथुरानाथजी के पुजारियों को जागीर में दिया हुआ है जिनका मंदिर कोटे में है।

दूसरा लेख इस मंदिर के सिरे दरवाज़े पर है जिसका यह साराँश है कि कातिक सुदि १५ मंगलवार संवत् १७५१ को राय द्वारिकादास के पुत्र चतुर्भुज और फ़तहचन्द ने महाराव किशोरसिंहजी के राज में इस मंदिर का जीर्णोद्धार कराया और परकोटा बनाया।

—:o:—

(३) चौमा।

चौमा नाम के ४ गाँव कोटे से ८ कोस पूर्व को बसते हैं जिनके बीच में १ पुराना शिखरबंध मंदिर चौमुखा महादेवजी का बना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है जिसको गुजरात के राजा गहलकर्ण का बनाया हुआ बताते हैं और बनाने की भी १ कथा कहते हैं जिसका सार यह है कि राजा कर्ण की १ रानी को गर्भ था परन्तु दूसरी रानियों ने १ सेवड़े से जादू करा दिया था जिससे बालक नहीं होता था राजा ने रानी को कुछ सेना सहित बाहर भेज दिया था जब वह यहाँ आई तो १ सिद्ध के वरदान से लड़का हुआ जिसका नाम राजा ने सिद्धराज जयसिंह रक्खा और उस सिद्ध के कहने से यहाँ यह मंदिर महादेवजी का बनाया इस मंदिर के दरवाज़े पर बायें हाथ को १ लेखभी उभरे हुए अक्षरों का खुदा है परन्तु पढ़ा नहीं गया। (१)

(४) आवाँ।

यह गाँव कोटे से १० कोस पर बसता है इसका असली नाम "एकचक्रापट्टन" बताते हैं और कहते हैं कि चन्द्रवंशी राजा अटल ने इसको बसाया था।

यहाँ १ पुराना शिखरबन्द मंदिर बद्रीनाथजी का है जो अर्जुन के बेटे अभिमन्यु का बनाया हुआ कहा जाता है इसमें ४ लेख हैं जिन में १ कार्तिक सुदि १५ संवत् १६६६ का है इसमें यह लिखा है कि महाराज श्री सालमसिंहजी कर्मसेन जी (२) राठोड़ के बेटे ने बद्रीनाथजी का मंदिर बनाया और १०० बीघे ज़मीन भेंट की। बाकी लेख इसके पीछे के हैं।

१ पुराना जैनमंदिर पार्श्वनाथजी का भी यहाँ है और भी कई मंदिर खंडित पड़े हैं जिनको भैंसाशाह के बनाए हुए कहते हैं।

---

(१) इस मंदिर की दक्षिण दिशा में दो खंभों के बीच में कुछ अवकाश है जिसके भीतर होकर मनुष्य निकलते हैं उसके लिये ऐसा प्रसिद्ध है कि जो वर्णशंकर होता है वह इसमें अटक जाता है सम्वत् १९२६ में हमारे १ मित्र ने स्वयं देखा कि मोटे मोटे शरीरवाले तो उसके भीतर होकर निकल गए और १ सेखावत राजपूत जो पासवान्या (राजपूताना में बिना ब्याहुता स्त्री को पासवान कहते हैं) था पतला शरीर होने पर भी उसमें अटक गया जिसकी बहुत हँसी हुई और लज्जित हुआ इसका कारण क्या था सो तो कुछ निश्चय नहीं हुआ परन्तु यह वृत्तान्त कौतूहल जनक अवश्य हुआ था।

(२) ये कर्मसेन राठोड़ जोधपुर के राव रायसिंहजी के पोते और उग्रसेनजी के बेटे थे उनके बेटे सालमसिंहजी की जागीर में रहा होगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भैंसाशाह ओसवाल जाति का एक बनिया था उसको चित्रावल नाम १ जड़ी मिल गई थी जिसमें यह गुण था कि जिस वस्तु में रख दे तो वह कभी कम नहीं होती बढ़तीही जाती थी उसके प्रताप से भैंसाशाह इतना धनाढ्य होगया था कि जब उसकी मा तीर्थयात्रा को गुजरात जाने लगी तो उसने १ बाल अपनी मूँछ का उसको देकर कहा कि जहाँ चाहो इसको गिरवी रखकर रुपया ले लेना परन्तु गुजरात में किसी ने रुपया नहीं दिया किन्तु बड़ी हँसी उड़ाई।

तब भैंसाशाह ने गुजरात में रुपया भेज भेजकर इतना बहुत तेल लेने का सौदा किया कि वहाँ के साहूकार कौल पर नहीं दे सके और करोड़ों रुपये टोटे के देकर भी अपनी साख नहीं रख सके निदान हमेशा के लिये धोती की लाँग खुली रखने का वचन देकर भैंसाशाह के जी छूटे सो अबतक भी गुजरात में लोग १ ही लाँग बाँधते।

भैंसाशाह का स्नेही रोड़ नाम १ बनजारा था उसके पास भी बहुत धन था दोनो ने सलाह करके अपना २ धन परोपकार में लगा दिया जिससे उनका नाम अमर होगया।

भैंसाशाह ने तो इस देश में जिसे अब हाड़ोती कहते हैं जगह २ मंदिर बनाए और रोड ने मेवाड़ में तालाब खुदाए फिर दोनो ने मिलकर १ शहर बसाया जिसका नाम भैंसरोड रक्खा।

कहते हैं कि आवाँ पहिले बड़ा शहर था इसमें ६०० बावड़ी और ६०० कुवे थे और ९०० ही कुँवर शिकार खेलने के वास्ते निकला करते थे जैसा कि इन दोहों में कहा गया है

नव सौ कुआ नव सौ वाय॥ नव सौ कुँवर अहेरा जाय॥१॥
और देश में ज्वार पीसाय॥ आवाँ रहे सो गेहूँ खाय॥२॥

फिर यहाँ पेमा नाम १ राजा हुआ वह बहुत भोला और ग़ाफ़िल था प्रजा की पुकार नहीं सुनताथा जिसको राजा के कारबारी खूब लूटते थे १ बेर कोई माली ८ पेठे भाड़े के गधे पर लाद कर आवाँ के बाज़ार में लाया ८ जनें लाग लेने को उसके पास आए और एक एक पेठा उठा लेगए पीछे से कोतवाल साहिब पधारे

२

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और माली के खाली गधे को देखकर पूछने लगे कि इस पर क्या लाया था उसने कहा कि ८ पेठे लाया था सो एक एक करके आठ लगवाल ले गए कोतवाल साहिब ने फ़रमाया कि नवें लगवाल हम हैं और वह गधा भी छीन लिया तब माली और कुम्हारने जिसका वह गधा था राजा की ड्योढ़ी पर जाकर बहुत हाय त्राहि की परन्तु वहाँ कौन सुनता था जहाँ " अंधी पीसे और कुत्ता खाय " की कहावत का प्रमाण मिल रहा था ।

जब विचारे रो पीटकर घर आए तो कुम्हारी ने जिसका नाम पोपाँ था कुम्हार से कहा कि कमाकर लायाहो सो दे तो यह बोला कि लाने को क्या था गधाही कोतवाल छीन लेगया और वह सब हाल कहा ॥

आठ पेठे नौ लगवाल ॥ गधे को लेगया कोतवाल ॥

पोपाँ ने कहा जहाँ यह अँधेर है वहाँ तो मैं सब ठीक करूँगी यह कहकर उसने रजपूतानियों का सा भेस लिया और १ भाड़े के गाड़े में बैठकर अपने गधे को जिसका नाम पदमा था रोती हुई राजा के रावले में चली गई और रानियों को धमकाकर कहनेलगी देखा तुम्हारा माजना तुम मुझे तो भूल ही गई हो मैं तुम्हारी भुआ हूँ और तुम्हारे बड़े बूढ़ों में से काका जी पदमसिंह जी मरगए हैं उनकी भी तुमने मुँहकाण नहीं की न राजा भद्दर हुआ यह कैसे अंधेर की बात है तुम सब बातों से गई गुजरी हो गईं तो क्या बड़े बूढ़ों की कान मरजाद भी छोड़ बैठी हो मुझसे तुम्हारी यह कपूती देखी और सही नहीं जाती है और इसीलिये तुम्हें समझाने को आई हूँ ॥

इस तरह से उसने रानियों के खूब लत्ते लिए और पदमसिंह का नाम ले ले कर ऐसी रोई कि रानियाँ भी सब उसके साथ रोने लगीं और रावले में बड़ा कुहराम मच गया इनका रोना सुन कर बाहर भी नौकर चाकर सब रोने लगे तबतो राजा भी घबरा कर रावले में आया और पूछने लगा क्या हुआ ॥

पोपाँ ने उसको भी बहुत लताड़ा और कहा कि काका जी पदमसिंह जी मरगए हैं और तुम्हें अभी खबर ही नहीं है भले राजा हुए ॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राजा में इतनी समझ कहाँ थी कि जो कुछ विचार करता और सच झूठ को समझता पद्मसिंह जी को अपना कोई बूढ़ा बड़ा समझकर वह भी पोपाँ की देखा देखी रोने लगा और भाई बेटों समेत भद्दर हो कर तापड़ पर बैठ गया।

पोपाँ ने यह देख कर समझ लिया कि अब मेरा कड़ा सब के ऊपर फिर गया आगे जो करूँगी वही होगा यह सोच कर सबको रोते से रक्खा और पद्मसिंह जी का एकादशाह द्वादशाह राजा से कराया और फिर कोतवाल को बुलवाकर फटकारा कि तुमने पद्मसिंह जी के मरने की ख़बर राजा को क्यों नहीं दी यह क़सूर लगाकर कोतवाली उससे छीन ली और अपने ख़ाविंद को बुलाकर दे दी इस तरह जो चाहा उसने किया सब उसका हुक्म उठाने लगे वह रावले में भुआ जी और राज में पोपाँ बाई कहलाने लगी राज का सब काम उसकी ज़बान से होने लगा पर वह अंत तो नीच जाति थी अंधाधुंध हुक्म देने लगी उसके समय में अंधेर होगया और लोग यह कहने लगे।

भटियारा घोड़ा चढ़े पंडित पाला जाय।
देखो पारखपेम की पोपाँ पैंड़ा खाय॥

इस पर भी वह निःशंक राज काज किए जाती थी गद्दी पर बैठ कर न्याय भी ख़ूब ख़ूब करती थी १ व्योपारी ने किसी बनिये से राई लेना की थी और साई दे दी थी बनिया औंधे पलडों से राई तोलने लगा तो व्योपारी बोला कि सीधे पलड़े में क्यों नहीं तोलता है बनियेने कहा कि यहाँ तो यही तोल है व्योपारी पोपाँ के पास पुकारता गया पोपाँ ने बनिये को बुलवाकर कहा कि इसका सीधा और तेरा औंधा दोनों गए तू खड़े पलड़े में राई दे।

व्योपारी बिचारा यह इनसाफ़ सुन कर रोता पीटता अपने घर गया।

ऐसेही १ और फ़रयादी को जिसकी स्त्री का गर्भ १ पटेलकी लात से गिर गया था यह हुक्म दिया कि तू अपनी औरत को पटेल के घर में रखदे जब उसके गर्भ रह जावे तो ले आना।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निदान ऐसे २ इनसाफ़ों से जब सब लोग बहुत ही दुखी और दरिद्री हो गए तो यह कड़खा कहकर वहाँ से निकल गए।

पोपाँ बाई पारसनाथ। घंटा हलाओ बद्रीनाथ॥

अर्थात् पोपाँ बाई रहो या पारसनाथ रहो बद्रीनाथ अपना घंटा आप हलाओ।

जब इस तरह शहर उजड़ गया तो पोपाँ भी दिवाली का सा दिया चाट कर निकल गई और राजा रानी भी सब अपने २ ठिकाने लगे।

फिर जब हूण राजा का राज इस देश में हुआ तो थावाँ फिर बसा।

---:o:---

(५) कणवास।

यह गाँव भी कोटे से ८ कोस पूर्व में अहरू नदी के किनारे के पास आबाद है कण्व ऋषि ने यहाँ भी किसी समय में तपस्या की थी जिस से इसका ऐसा नाम हुआ कर्णेश्वर महादेव का यहाँ भी पुराना मंदिर है जिस को भी राजा कर्ण का हीं बनाया हुआ बताते हैं।

अहरू नदी के ऊपर दूर तक आमों और इमलियों के झाड़ लगे हुए हैं जिन की ठंडी छाया में मुसाफ़िरों को बहुत आराम मिलता है और वहाँ के निवासी भी गरमी के दिन इस सुरम्य स्थान में सुखपूर्वक व्यतीत किया करते हैं इसीलिये किसी ने कणवास की प्रशंसा में एक नायिका की ज़बान से यह दोहा कहा है।

आँबा घणा जु आमल्याँ, अहरू बड़ा निवास॥
जो सुख चाहो साहबी, तो बास करो कणवास॥ १॥

---:o:---

(६) गढ़ गागरोण।

यह क़सबा कोटे से २० कोस पूर्व दक्षिण के कोने में काली सिंध नदी के ऊपर बसता है यहाँ वाले इस का असली नाम गर्गाश्र

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बताते हैं लेकिन् इस का असली नाम गर्गराट् है क्योंकि यह देश गर्ग ऋषि के नाम से बसा था और उसी समय में यहाँ एक गढ़ भी बना था जो अब खंडित पड़ा है और वर्तमान गढ़ पँवारों का बनाया हुआ है ये पँवार डोड शाखा के थे जिस से इस का नाम भी डोडगढ़(१) रक्खा गया था डोडों में हूगा नाम एक राजा हो गया है जिसका नाम इस प्रांत में बहुत प्रसिद्ध है अन्तिम राजा बीजल डोंड था जिसको खटकड़ के खीची राजा देवंशी की बहन गंगा व्याही थी गंगा ने अपने पति से नाराज़ होकर जिसकी कथा हम पहिले खटकड़ के वृत्तान्त में लिख आए हैं भाई को सुसराल का भेद बताया और देवंशी ने बीजल को मार कर डोडों का राज ले लिया और डोडगढ़ का नाम गंगा के नाम पर गढ़ गागरोण (गंगरमण) रख दिया ।

देवंशी की संतान में पीपा जी खीची बड़े भगवत भक्त हुए जिन्होंने साधुवृत्ति धारण करके राज अपने भाई अचला (२)जी को दे दिया अचला जी मंडू के(३) बादशाह से लड़ कर काम आए और गागरोन में बादशाही अमलदारी(४) होगई फिर गागरोन बादशाहों से कोटेवालों(५) को मिला सो अब तक उन के भुक्त भोग में है ।

---

(१) खीचियों के इतिहास में ढोलर गढ़ लिखा है ।

(२) खीचियों की वंशावली में पीपा जी को अचला जी का छोटा भाई लिखा है ।

(३) मालवे में जो एक स्वतंत्र राज्य मुसलमानों का था उसकी राजधानी माडा (मंडू) के क़िले में थी जो अब धार के राज्य में है मालवे के बादशाहों की तवारीख़ से जाना जाता है कि होशंगगोरी ने जो सन् ८०८ (संवत् १४६२) में बादशाह हुआ था सन् ८२६ संवत् १४८० में चढ़ाई करके गागरोन फ़तह किया था ।

(४) गागरोन में माडों वालों की अमलदारी सन् ९६८ (संवत् १६१८) तक रहीं बीच में कुछ वर्षों के लिये मेवाड़वालों का भी अमल हो गया था जब कि राना साँगा ने सुलतान महमूद मालवी को संवत् १५७५ में पकड़कर बहुत सा मुल्क उसका छीन लिया था ।

संवत् १६१८ में अकबर बादशाह ने मालवे पर चढ़ाई की उस समय गागरोन में मालवे के सुलतान बाज़ बहादुर का क़िलादार था उसने बादशाह को क़िला सौंप दिया और बादशाह वहाँ ख़्वालदीन नाम अपने एक नौकर को रखकर आगे बढ़े अकबर से लेकर शाहआलम तक गागरोन में बादशाही ख़ालिसा रहा फिर शाहआलम ने संवत् १७६५ में यह क़िला बूंदी के राय बुधसिंह को दे दिया ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गागरोन का क़िला कालीसिंध नदी से मिला हुआ एक पहाड़ी के ऊपर बना है उसकी दो बुर्जे तो नदी में ही हैं बाक़ी पहाड़ी पर है।

क़िले पर एक कोठरी में अचला जी की पूजा होती है और वहीं एक भीत में हथेली का छापा सिंदूर से बना हुआ है जिसे अचलाजी की रानी के हाथ का बताते हैं और कहते हैं कि जब वह अचला जी के साथ सती हुई थी तो यह छापा उसने तेल और सिंदूर का अपनी निशानी रखने के लिये बनाया था।

यह क़िला जो अब मौजूद है मुसलमानी राज्य होने के पीछे का बना हुआ मालूम होता है क्यों कि इस में जगह २ मंदिरों और मूर्तियों के पत्थर लगे हुए हैं शहर के पुराने स्थानों में एक दरगाह मीठेशाह की है जिसको हिंदू मुसलमान दोनों मानते हैं यहाँ के मुजावर ऐसा कहते हैं कि मीठेशाह का असली नाम हमीदुद्दीन था वे संवत् १३७१ में अपने गाँव "फतूह" से जो सिंध में है गागरोन में आकर रहे थे सब से मीठे बोलते थे इसलिये मीठेशाह कहलाने लगे संवत् १४१० में उनका देहान्त हुआ क़बर पर पहिले गुंबद बना फिर और मकान बने जो इस दरगाह में हैं।

दरगाह में हिन्दी और फ़ारसी के ४ लेख हैं जो वर्षों के अनुक्रम से नीचे लिखे जाते हैं।

(१) गुंबद का लेख हिन्दी में है जिसका यह आशय है कि सन् ७५३ (हिजरी) ज़िलहज के महीने (संवत् १४०६) में मियाँ मोअज्ज़म और वाज़िदुद्दीन क़ौम नेहली ने गुंबद बनाया।

(२) दालान का लेख भी हिंदी में है उसका यह सारांश है कि संवत् १६२३ माह वदि १२ सोमवार को महाराज श्रीरावत साँईदासजी ने गुंबद के आगे दालान बनाया।

(३) दरवाज़े के लेख का यह मतलब है कि संवत् १६८६ माह वदि ५ शुक्रवार सन् ९८७ अलवी ख़ाँ के बेटे ईसा ख़ाँ क़ौम टाँक

(५) कोटे की तवारीख़ से जाना जाता है कि महाराव भीमसिंह को मोहम्मदशाह बादशाह ने गागरोन, शेरगढ़, मऊमैदाना बारा और माँगरोल के परगने दिए थे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

थानेश्वर के रहनेवाले ने राव कल्याणमल बीकानेरी के बेटे सुलतान राठोड़ के अमल में यह दरवाज़ा बनाया।

(४) छत्री का लेख फ़ारसी में है इसमें यह लिखा है कि यह छत्री मियाँ अलवी ख़ाँ के बेटे ईसा ख़ाँ टाँक ने सुलतान राठोड़ राव कल्याणमल बीकानेरी के बेटे के अमल में बनाई मोहर्रम सन् ६६१ (१६४०)।

पहिला लेख तो खीचियों के ही राज का मालूम होता है क्योंकि गागरोन में मुसलमानों का अमल सन ७५३ संवत् १४०६ के पीछे हुआ है।

दूसरे लेख में जो रावत साँईदास का नाम है वह भैंसरोड का ठाकुर और रणथंभोर (१) का हाकिम राना उदेसिंह की तरफ़ से था जिसके २ वर्ष पीछे ही रणथंभोर अकबर ने ले लिया था।

साँईदास का नाम भैंसरोड़ की प्रजा में अमर होगया है जिस को वह कभी नहीं भूलेगी क्योंकि १ दिन साँईदास हाथी पर बैठा चला जाता था प्रजा ने पुकार की कि कामदार लोग बहुत छोटे २ बिसवों की डोरी से हमारे खेत मापकर हासिल लेते हैं जिससे हम को बहुत नुक़सान होता है साँईदास ने हाथी पर बैठे २ ही हाथ ऊँचा करके कहा कि तुम्हारे यहाँ इतने बिसवे की डोरी रहेगी प्रजा ने अरज़ की इसको माप दीजिए साँईदास ने ज़मीन से लेकर अपने ऊँचे हाथ तक रस्सी माप दी जिसके बराबर २० बिसवों की डोरी अब तक भैंसरोड़ के गावों में साईंदास के नाम के २० बिसवों के नाम से चलती है।

तीसरे और चौथे लेखों में बीकानेर के राव कल्याणमल के बेटे राठोड़ सुलतान का अमल लिखा है सो इससे पाया जाता है कि उन वर्षों में अकबर बादशाह की तरफ़ से गागरोन का परगना राठोड़ सुलतान की जागीर में दिया हुआ था।

---

(१) यह सब मुल्क जो अब हाड़ोती कहलाता है पहिले रणथंभोर के नीचे था। आइन अकबरी में भी सरकार रणथंभोर को हाड़ोती लिखा है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बस्ती के बाहर दक्षिण दिशा में जहाँ आहू नदी कालीसिंध में मिली है पीपाजी की छत्री है जिसके १ खंभे में लेख खुदा है उस से यह बात निकलती है कि भट्टार्क राघो अघोर मत का जीतनेवाला गागरोन में हुआ संवत् १४१६* यह अनमिल खंभा इस छत्री में दूसरी जगह का लाया हुआ मालूम होता है।

कालीसिंध के पार १ पहाड़ी के नीचे आमों की झाड़ी है जिसमें तोते बहुत रहते हैं हीरामन तोता जो बड़ा होता है और खूब बोलता है यहीं मिलता है उसेपकड़कर दिसावरों में बेचने को ले जाते हैं वह हीरामन तोता भी कि जिसके सिर गढ़ गागरोन के तुड़ाने का अपजस लगाया जाता है इसी जगह का था और मंडू के बादशाह को बेचा गया था वह वहाँ से छुट्टी लेकर अपनी जन्मभूमि देखने को आया था कुछ दिनों पीछे कई आदमी उस वृक्ष को कि जिसमें उसके अंडे बच्चे थे काटने लगे उसने उनको बादशाह की दुहाई दी और राजा के पास जाकर भी पुकार की मगर किसी ने नहीं सुनी बल्कि बादशाह की दुहाई से बुरा मानकर उसके अंडे बच्चे भी फिकवा दिए तब वह बादशाह के पास गया और सब हाल कहा बादशाह ने उसी वक्त चढ़ाई करदी और गागरोन अचलाजी खींची से छीन लिया अचलाजी मारे गए।

यह कथा तो यहाँ घर २ में सुनी जाती है परन्तु उस प्रकार की बातें करनेवाले अब देखने में नहीं आते।

——:o:——

मऊ।

यह कोटे से २५ कोस पूर्व में है और मऊमेदाना कहलाता है पहिले मऊ और मेदाने के २ परगने अलग २ कोटे के राज में थे मगर संवत् १८६४ से मेदाने का परगना झालावाड़ (१) के राज्य में चला गया है और मऊ उजड़ा पड़ा है इसका यह इतिहास है

(२) अंगरेजी सरकार ने कोटे के राज से तीसरा हिस्सा वहाँ के कामदार झाला मदनसिंह को दिलाकर झालावाड़ का नया राज बनाया था वही अब थोड़ा सा कायम रखकर बाकी हिस्सा फिर कोटेवालों को दिला दिया जिसके साथ मेदाने का परगना भी फिर कोटे में आगया है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कि पहिले तो डोडों के भोग में था फिर खीचियों के पास रहा और जब मँडू के बादशाह ने अचलजी को मारा तो मऊ का परगना उनके भाई चाचूजी के पास रहने दिया क्योंकि वह लड़ाई में अपने भाई का साथी नहीं हुआ था चाचूजी की औलाद में महाराज नाम मऊ का राजा था उसके पास १ अच्छा घोड़ा नैनसुख नाम था जिसको उसके भानजे राठोड़ पृथ्वीराज ने जो रणछोड़ गाँव का जागीरदार था माँगा और नहीं देने पर महाराज को मारकर मऊ में कबज़ा कर लिया महाराज का बेटा चंदकुँवर अकबर बादशाह के पास पुकारू गया बादशाहने उज्जैन के सूबेदार बहादुर बेग को हुक्म भेजा वह पृथ्वीराज पर चढ़ कर गया परन्तु लड़ाई में खेत कर गया परन्तु लड़ाई में खेत रहा बादशाह ने यह सुन कर आमेर के राजा मानसिंह को लिखा राजा ने कराड़ खाँ को भेजा पृथ्वी-राज उससे हारा और भाग कर मनोहर थाने के पास मारा गया मऊ में चंद्रकुँवर का अमल होगया मगर उसका बेटा रायसल सरकशी करके बादशाही फ़ौज से लड़ा और काम आया इस पर बादशाह ने मऊ का परगना ख़ालसे कर लिया और कई बर्षों पीछे बूँदी के राव राजा बुध सिंह को दे दिया राव राजा कोटे के महाराव भीम सिंह से लड़े और हारे तब महाराव ने संवत १७८५ में बादशाह से यह परगना अपने नाम लिखाया मगर इधर खीची इसके वास्ते खैंचतान करते थे और बूँदी वाले दावेदार थे इस लिये जितने कुछ गाँव इस परगने के महाराव भीमसिंह के अमल दखल में होगए थे उनको तो उन्होंने अपने दूसरे परगनों में मिला लिया और मऊ को उजाड़ कर श्री नाथ जी की भेंट कर दिया जिससे दावेदारों का दुख मिट गया।

मऊ के बाहर उजार नदी के ऊपर १ पुल बँधा है जिस पर यह लेख खुदा है कि औरंगज़ेब आलमगीर बादशाह ग़ाज़ी के समय में संवत १७३१ सन १०८५ असाढ सुदी ३ को क़सबे मऊ में बादशाही ओहदेदार मिरज़ा अबूतालिबने कमाल मोहम्मद की शामलातमें पुल बनाया जो कोई इसकी मरम्मत करावे तो बेगार में न करावै सरकार से रुपया देकर बनवा दे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ताराज।

कोटे से २८ कोस पूर्व में ताराज नाम १ क़सबा है उससे २ कोस दक्षिण को पहाड़ों में छापी नदी के दाहिने किनारे जहाँ बहुत वृक्ष और शेर बघेरों के रहने के वन हैं १ टेकरी पर वंबक महादेव जी का चौतरा है जिसपर लोग ७ सीढ़ियाँ चढ़ कर पहुँचते हैं और तालियाँ बजा २ कर कहते हैं।

वंबक देव पानी पावे। आया लोग तिसाया जावे॥

उसी वक़्त पहाड़ के कराड़े से जो चबूतरे पर झुका हुआ है और जिससे हमेशा पानी रिसा करता है बूँदे टपकने लगती हैं और थोड़ी देर पीछे बंद हो जाती हैं।

पंडित रामकर्ण जी कहते थे कि जब मैं वहाँ गया था तो ११ जगह से पानी चूता था मैंने उसे गिन कर साथ वालों से कहा कि अब तुम तालियाँ बजा कर उसी तरह से कहो जब उन्होंने वैसा किया तो २० जगह से पानी की बूँदें गिरने लगीं और कुछ देर में बंद होगईं।

शेरगढ़।

कोटे से २५ कोस दक्खिन को परवन नदी के तीर पर पहाड़ के पास पक्के परकोटे में एक पुराना शहर बसता है जिसका नाम अब तो शेरगढ़ है मगर पहिले कोशवर्द्धन दुर्ग था जो यहाँ के पुराने शिलालेखों में लिखा है और पहाड़ का नाम भी कोशवर्द्धन ही है।

ये शिलालेख इतिहास में बहुत उपयोगी हैं सबसे पुराना संवत् ८४७ का है जो बरखेड़ी दरवाज़े के बाहर एक बुर्ज के आलय में नई तिवारी के नीचे लगा है इसकी लिपि पुरानी नागरी और भाषा संस्कृत है श्लोक २० और पंक्तियाँ भी २० ही हैं परन्तु ऐतिहासिक विषय केवल इतना ही है कि बिन्दुनाग का पुत्र पद्मनाग और उसका पुत्र सर्वनाग हुआ जिसकी स्त्री का नाम श्री था उसका पुत्र देवदत्त हुआ जो किसी राजा का सामंत था देवदत्त ने संवत् ८४७ माघ सुदी ६ को कोशवर्द्धन ने पहाड़ की पूर्व दिशा में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बुद्ध का एक मंदिर और विहार (मठ) बनाया शाक्य वंशी जज्जक ने ये श्लोक बनाए और चनक ने (१) खोदे।

शहर में एक मंदिर लक्ष्मीनाथ जी का है इसमें कई पुराने शिला-लेख हैं जिनका सारांश वर्षों के क्रम से नीचे लिखा जाता है।

(१) निज मंदिर के द्वार पर दर्शन करते हुए बायें हाथ को पड़ी मात्रा के अक्षरों में यह लिखा है।

संवत् १०७४ बैसाख सुदि ३ शनि-नरसिंह, गोवर्ध, और घरलोत, ने भट्टार्क निगंक जी के पावों में लगाने के लिये धेले २ भर घी रोज़ देना किया।

(२) संवत् १०७४ माघ सुदि १२ श्री सोमनाथ के मंदिर में दीपक के वास्ते ठाकुर देवस्वामी ने तेल और दूकान पीछे दमड़ी रोज लगा दी और जब सूर्य राशि बदलें तो २ सूर दिए जावें।

(३) संवत् १०७५ वैशाख सुदि ३ श्री सोमनाथ महादेव जी के दीप धूप का ख़र्च चलने के लिये "वृंग" ने ५ बैल दिए।

(४) मंदिर की आठवीं सीढ़ी के ऊपर भीत के आलय में पड़ी मात्रा के पाली अक्षरों और संस्कृत श्लोकों का एक बड़ा लेख लगा है जिस का यह सारांश है। "भट्टार्क महाराजाधिराज वाकपति देव का पुत्र भट्टार्क महाराजाधिराज सिद्धराज देव श्री महादेव जी की स्तुति करके कहता है कि हे राजपुरुषो ब्राह्मणो और देश के लोगो हमारी बात पर ध्यान रख कर सुनो कि हम ने जो पत्नी सहित महादेव जी की भक्ति धारण की है उसका कारण हम तुम को सुनाते हैं कि

---

(१) इस उपयोगी शिलालेख से इस देश (राजपूताने) में नाग वंशियों का राजा और बौद्ध मत का प्रचार होना पाया जाता है परन्तु वह मंदिर और विहार अब यहां नहीं हैं न जाने कब नष्ट होगए उनके पत्थर अवश्य कोट में लगे हैं जिनमें से एक पत्थर इस शिलालेख का भी है कोट बनाने वालों ने वास्तव में यह बड़ी कृपा की है कि इसको तोड़ा फोड़ा नहीं और सावधानी से ऐसी जगह लगा दिया कि जहाँ सब विघ्नों से बचा हुआ ११०० वर्ष का पुराना वृतांत बता रहा है जो आज यह न होता तो इन नागवंशी बौद्ध राजों को कौन जान सकता जिनका कभी यहाँ राज रहाथा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह संसार सर्वथा मिथ्या है और राज श्री ऐसी क्षणभंगुर है जैसे बादलों के दल वायु के वेग से दम भर में नष्ट हो जाते हैं ऐसा ही यहाँ के भोजनों का भी स्वाद है जितने समय तक ओस की बिन्दु कुशाग्र पर रहती है उतना ही मनुष्य जीवन भी है धन पल भर भी नहीं रहता हाँ धर्म ऐसा पदार्थ है जो परलोक तक साथ जाता है जो नर ऐसी अनित्य संपत्ति को पाकर धर्म नहीं करता वह अंत में पछताने के सिवाय और कुछ फल नहीं पाता हमने जो संसार और संसार के पदार्थों की यह गति देखी तो यह निश्चय किया कि जहाँ तक चंद्र सूर्य पृथ्वी और समुद्र रहें श्रद्धापूर्वक भगवत भक्ति ही करनी चाहिये और इसी हेतु से हम आज चैत शुदि १४ को "दमबक" पर्व का स्नान कर के यह "कार्यासकग्राम" चारों ओर की सीमा और तृण वृक्षादि सहित जो उस में है कोश-वर्द्धन दुर्गवाले सोमनाथ महादेव को भेट करते हैं और इसके सिवाय जो सोने चाँदी के पदार्थ बनाए गए हैं वे भी संकल्प कर के देते हैं तुम को चाहिये कि जो हम ने दिया है वह तुम महादेव जी को दिया करो तुम्हारी संतान भी इस वचन को निभावे और उन राजों को भी जो हमारी संतान के पीछे हों उचित है कि हमारे दिए हुए दत्त को अखंडित रक्खें क्योंकि जिन्हों ने जो भूमि दी है उसका पुण्य जीवन पर्यंत तो उनको मिला है फिर जैसे २ यह पृथ्वी उन के उत्तराधिकारियों को प्राप्त हुई है वैसे ही उन की दी हुई भूमि का पुण्य भी उन्हीं को पहुँचा है इस प्रकार अगले राजों ने औरों के दिए हुए दत्त को अपने वाक्य के समान निभाया है और जो कोई अपनी या और की दी हुई वस्तु को छीनता है उसका कुछ यश नहीं होता इसी लिये श्री रामचन्द्र जी अपने विख्यात और उदार वंश के राजों तथा अन्य पृथ्वीपालों को जो यहाँ हों कहते हैं कि मेरी दी हुई भूमि का पालन करें इस बिजली के झपके और पानी के बुलबुले के समान संपत्ति पाने का लाभ यही है कि औरों को दे तथा औरों की दी हुई की रक्षा करें राजाओं को यह धर्म सदा ही पालना चाहिये चाहे कैसा ही समय हो संवत् ११ (आगे के अंक पत्थर पर से जाते रहे हैं)।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(५) देशी अक्षरों में सम्वत् १५२६ भादों सुदी १५ महाराज श्री जसकरण देव पंचोली ने मंदिर की मरम्मत कराई।

इन लेखों से मालूम होता है कि संवत् ११०० के पीछे मुसलमानी राज होने पर यह मंदिर सोमनाथ महादेवजी का खंडित होगया था फिर लोगों ने मरम्मत करके इसमें लक्ष्मीनाथजी की मूर्ति विराजमान करदी।

क़िले की खिड़की के पास रस्ते से बाये हाथ को एक जैन मंदिर मिलता है जिसके चौक में कई बड़ी २ मूर्तियाँ रक्खी हैं जिनके लेखों से यह बात जानी गई कि श्रीपाल और गुणपाल मालवे में आए श्रीपाल के बेटे देवपाल ने कोशवर्द्धन पहाड़ के पास शांतकेश्वर नाम ३ रत्न विराजमान किए वैशाख सुदी २ संवत् ११६१ को प्रतिष्ठा कराई।

यहीं एक पत्थर सती का ज़मीन में गड़ा है जिसपर यह लेख है।

संवत् १००२ पोष सुदी ५ को सुन्दर बल्लू पर सती हुई।

यहाँ क़िला पहाड़ पर है जिसको बाला क़िला कहते हैं इसमें दुर्गाबुर्ज के पास दुर्गाजी की मूर्ति है उसके समीप एक खंडित पत्थर पड़ा है जिसपर यह लेख है।

सम्वत् ११६२ चैत सुदी ७ को बलदेव के बेटे राई ने जैनमंदिर में बड़ा उत्सव किया।

यहाँ पहिले कोई जैनमंदिर रहा होगा।

इसी बाला क़िले में एक हवेली है जिसमें टोंक के नवाब अमीरख़ां के क़बीले अंग्रेजों से संधि होने के पहिले रहते थे और नवाब वज़ीरुद्दौला संवत् १८६२ में यहीं पैदा हुए थे।

बरसात में जब परवन नदी चढ़ती है तो क़िले और शहर के बीच में आना जाना बंद हो जाता है।

पुराना इतिहास ठीक २ तो मालूम नहीं हुआ प्रन्तु लेखों से जाना जाता है कि नागवंशियों के पीछे पँवारों का राज हुआ होगा और यहाँ के लोग कहते भी हैं कि पहिले डोड़ शाखा के पँवार राज करते थे बारूजी खीँची ने हररांज़ डोड़ को मार कर यह क़िला लिया उन से मुसलमानों ने जीता शेरशाह बादशाह ने क़िले का नाम शेरगढ़

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रखा फिर फर्रुखसियर बादशाह ने कोटे के महाराव भीमसिंहजी को दिया जब से इस राज्य के नीचे है महाराव भीमसिंह ने मऊ को उजाड़ कर शेरगढ़ बसाया फिर झाला जालिमसिंह ने किले को सजाया और उसके अंदर बहुत से महल और मकान भी बनाए।

——:o:——

मोठपुर ।

यह क़सबा कोटे से २५ कोस पूर्व में है इसके नीचे कई गाँव हैं जिनमें अफ़ीम बहुत उपजती है साँठे (गन्ने) भी खूब ऊगते हैं और गुड़मार नाम एक बूटी होती है जिससे साँप और अफ़ीम का विष उतर जाता है उसको चबाकर गुड़ खावें तो मीठा नहीं लगता इसीलिये उसका गुड़मार नाम हुआ क्योंकि वह गुड़ के मिठास को मार देती है।

यहाँ एक तालाब शक्तसागर नाम है जिसको धारूजी खींची ने खुदाना शुरू किया था और पूरा उनके बेटे शक्तू ने किया।

पासही खीचियों का छार बाग़ है उसमें एक बावली है जिसके कीर्तिस्तंभ में यह आशय है।

संवत् १५५७ शाके १४२२ अगहण बदि ५ सोमराज श्रीधीरादेव उसका बेटा शक्तूदेव, शक्तूदेव का भाई कूँभादेव उसका बेटा श्री वर्मादेव जिसकी रानी ऊभादे रावत साँगा की बेटी ने बावड़ी बनाई।

छार बाग़ में जो लेख हैं उनका सारांश वर्षों के क्रम से नीचे लिखा जाता है।

१ सम्वत् १५५० शाके १४१५ असाढ़ सुदि १० सोमवार को राजाधिराज श्री धारादेव खीँची जायलवाल के साथ धीराँदे बागड़ानी और सूरतदे कछवाही सती हुई।

२ सम्वत् १५५५ शाके १४२० सावन बदि १० शनिवार को मोठपुर का राजा श्रीकूँभादेव धीरादेव खीँची जायलवाल का बेटा देवलोक हुआ जिसके साथ एक रानी कछवाही एक छाजावती और २ सोलंखिणी सती हुई।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३ सम्वत् १५६३ शाके १४२७ मगसर बदि १३ राजा शक्तसिंहदेव खीरादेव का बेटा जात खीँची देवलोक हुआ उसके साथ २ रानियाँ सती हुईं।

४ सम्वत् १५७२ शाके १४३७ ज्येष्ठ सुदि १२ बृहस्पतिवार को शक्तूदेव के बेटे कर्मचंद के साथ २ सीसोदणी रानियाँ सती हुईं।

५ सम्वत् १५८० शाके १४४५ बैशाख बदि ११ शनिवार को राज श्रीराव के साथ बाई करमा पड़िहार और गहलोतनी सती हुई।

:o:

कूँडी।

कोटे से २६ कोस पूर्व गाँव कूँडी में कई छोटे २ शिलालेख पुराने नागरी अक्षरों के हैं मगर टूटे फूटे और बिगड़े हुए हैं एक टूटी छत्री के लेख में श्रीमहाराजधिराज परम भट्टार्क मानसिंह देव बलिसिंह देव के बेटे का नाम है।

ऐसेही एक दूसरे लेख में सोमनाथ महादेवजी का कुछ वृत्तांत है पर साल संवत् नहीं है।

:o:

नाहरगढ़।

यह क़सबा कोटे से ३० कोस पूर्व में है और ३८ गाँव इससे लगते हैं नाहरगढ़ राठोड़ों का बसाया हुआ है यहा पहिले भोजपुरा और मोहनपुरा वगैरः ४ गाँव बसते थे और क़सबे डोब के खींची राजा का राज था उसकी बहन रामनगर इलाक़े राघोगढ़ के एक राठौड़ को ब्याही थी उसके ४ बेटे नाहरसिंह शेरसिंह साहिबसिंह और किशोरसिंह हुए जो अपने मामा के पास आए और उसने इनको ४ गाँव दिए इनहों ने इन गावों के बीच में एक क़िला बनाना चाहा मामा ने मना किया तो नहीं माना तब उसने (१) बादशाह से अर्ज़ करके इनको क़िले बनाने की मनाई करादी तब ये भी बादशाह की हजूर में गए और मुसलमान होकर क़िला बनाने को परवानगी ले आए।

(१) यह बादशाह औरंगज़ेब था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बादशाह ने नाहरसिंह का नाम तो नाहरदिल शेरसिंह का शेरदिल साहिबसिंह का साहिबदिल और किशोरसिंह का किशवर दिल रक्खा था।

नाहरदिल बड़ा था इसलिये उस क़सबे और क़िले का नाम जो यहाँ बनाया गया था नाहरगढ़ हुआ फिर नाहरदिल ने मऊ में राजघाट के ऊपर मसजिद बनाई और कुतुबदिल ने नाहरगढ़ में कुतुबसागर तालाब पक्का बँधाया।

आख़िर राघोगढ़ के खीँची राजा (०) जयसिंह ने इन पर चढ़ाई की गाँव पचला बड़े में चारों भाई लड़कर काम आए इनकी औलाद में से अकेला नेकनाम बचा वही नाहरगढ़ का मालिक रहा उसने "रतलाल नाम" तलाब की पाल तोड़कर पानी निकाल दिया जिसके बिगड़ जाने से बीमारी फैला करती थी।

अखीर में नेकनाम हाडों के हाथ से मारा गया और क़िले में कोटे के महाराव भीमसिंह जी का अमल हो गया उन्होंने क़िले की मरम्मत कराकर पक्का परकोटा बनाया।

यह क़िला चौकोर है और बुर्जें अठपहिलू हैं।

जब ज़ालिमसिंह झाला ने शेरगढ़ का क़िला नव्वाब अमीर ख़ां जी को कबीलों के रखने के वास्ते दिया था तो नाहरगढ़ भी राखी बाँधकर उनकी बेगम को दिया था मगर फिर ले लिया।

क़िले के दरवाज़े में जाते हुए बाईं हाथ की बुर्ज में बाहर की तरफ़ एक लेख फ़ारसी भाषा का है जिसमें यह खुदा है।

जमादिउल्सानी सन् १०९० (१) के आधे महीने शनिवार को आलमगीर बादशाह के समय में नाहरदिल के बेटे कुतुबुलदीन क़ौम राठौड़ ने यह क़िला नाहरगढ़ का बनाया।

बाज़ार के कोतवाली के आगे कई लेख खुदे हैं जिन में से एक ज्येष्ठ वदि ६ संवत् १७८२ को महाराज श्री नव्वाब नाहरदिल के हुक्म से अउत (लावारिस) के माल के बंदोबस्त के लिये खोदा गया है।

---

(१) इस नाम में कुछ संदेह है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सन्दर्भ ग्रन्थ REFERENCE BOOK

वहीं एक पत्थर पर संवत् १७६३ कातिक सुदि ५ को महाराव श्री दुर्जन साल के राज में यह बात खोदी गई है कि जो कोई अफ़ीम खाकर मर जावे तो अपने जी से जावे कोई झगड़ा न करे।

——:o:——

आसलपुर।

कोटे से २७ और शेरगढ़ से २॥ कोस पर एक विकट जंगल में बरनी नदी के किनारे पर यह पुराना शहर ऊजड़ पड़ा है इस को भीलों ने बसाया था पक्का परकोटा और चौपड़ का बाज़ार था मगर अब सब स्थान ढहे पड़े हैं बूँदी के राव रतन के समय में (१) भोजा भील यहाँ राज करता था उस के पास ७०० तीरन्दाज़ भील थे एक बेर किसी बात पर तकरार होकर बूँदी की फ़ौज आसलपुर पर चढ़ आई तो भीलों ने उसे मार भगाई और उनके कड़कैत ने यह कड़का कह कर प्रसिद्ध किया।

बूँदी तो डाबर (२) भई। भोजा भया दिवान (३)।
राव रतन के राम हैं। भोजा के भगवान॥

यह सुन कर राव रतन को बहुत रोष चढ़ा और भोजा पर चढ़ाई करना चाहा मगर वज़ीरों ने कहा कि भील सामने आकर नहीं लड़ेंगे पहाड़ों में चले जावेंगे इन को तो दग़ा से मारना चाहिये।

राव ने यह बात मान कर भीलों से सफ़ाई कर ली और कई दिन पीछे उनके गाँव में जाकर उन को गोठ दी जब वे कंकाली देवी के पास आकर इकट्ठे होगए तो चारों तरफ़ से हल्ला करके सब को मार डाला और शहर को लूटकर ढा दिया सो आज तक ढहा पड़ा है।

बरनी नदी के दाहिने किनारे पर कपिल मुनि का आश्रम है वहाँ पहाड़ से पानी गिरता है उसको कपिलधारा कहते हैं इस आश्रम में कई मूर्तियाँ टूटी फूटी रक्खी हैं आदमी कोई नहीं रहता है।

---

(१) संवत् १७३४ (२) छोटी तलाई। (३) बूँदी के राव दीवान भी कहलाते हैं

सन्दर्भ ग्रन्थ REFERENCE BOOK

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कपिल मुनि के आश्रम का मकान पीछे से नाहरगढ़ के क़िले-दार (हाकिम) शेख़ मोहसन ने बनायाहै जो कोटे की तरफ़ से था कपिल मुनि का मेला बसंतपंचमी का होता था।

यहाँ जंगल में चिरौंजी, सागवान, बहेड़ा, मरोड़ फली, शीशम, मूसली काली धोली, अमलतास, सफ़ेद कदम, काली जमलासी (जिसकी लकड़ी से बंदूक़ का कुंदा बनाते हैं) बीजा, (जिसकी ढोलक बनती है) सेमल, सतावर, और जटाशंकरी वग़ैरः कई प्रकार के वृक्ष होते हैं।

——:o:——

भँवरगढ़।

कोटे से ३० कोस पूर्व में है इसको संवत् ११५५ में चौधरी माधव और हंसराज ने बसाया था जो गौड़ जाति के ब्राह्मण थे उस समय यहाँ नरवर के राजा की अमलदारी थी फिर जब बहुत वर्षों के पीछे खंडेराव सनाढ्य जो नरवर के राजों का आबदार (पानेरी) था शाहाबाद का जागीरदार हुआ तो यह गाँव भी उसके नीचे आगया उसकी चौथी पीढ़ी में मेघसिंह था जिसका एक पट्टा भँवरगढ़ के पटेल के पास है जो भादों बदी ६ संवत् १८२१ का लिखा हुआ है।

फिर कोटे के कामदार राजराना ज़ालिमसिंह ने शाहाबाद का परगना मेघसिंह के बेटे से छीन लिया सो तो संवत् १८६४ में झालावाड़ के नीचे चला गया और यह गाँव कोटे में रह गया।

यहाँ सती के १ पत्थर में संवत् १२६२ खुदे हैं जिससे इस गाँव का संवत् ११५५ में बसना सही जाना जाता है।

इस गाँव में एक तालाब का नाम ग़ैबी है क्योंकि कालूराम पटेल की बहू ने घर वालों से पोशीदा बनाया था।

——:o:——

बलास।

कोटे से ३० कोस पूर्व पहाड़ों और जंगलों में बलास नदी के तीर पर बलास नाम एक पुराना शहर उजड़ा पड़ा है जिसमें चूने पत्थरों के ढेर और सागवान के झाड़ों के सिवाय कहीं आदमी की सूरत

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नज़र नहीं आती बड़े बूढ़े लोग कहते हैं कि यह शहर खीचियों के राज में खूब बस्ता था आख़री राजा यहाँ का मलेसी जी खीची था उसकी बेटी ऊदलदे बहुत सुंदर और स्वरूपवान थी बादशाह तक उसके बखान होने लगे थे बादशाह ने मलेसी को बेटी भेजने का हुक्म लिखा मगर उसने नहीं माना तब बादशाह ने दरिया खाँ के साथ फ़ौज भेजी मलेसी ने जगह जगह घाटों और नाकों का ज़ाबता कर रक्खा था जिससे दरिया ख़ाँ ने बहुत दिनों तक बलास पर पहुँचने का रास्ता न पाया आख़िर १ दिन सरजन नाम भील ने जो १ घाटी का चौकीदार था दरिया ख़ाँ को रास्ता दे दिया ज्योंही वह शहर के पास पहुँचा हाहाकार मच गया ऊदलदे बाई जो अपनी सहेलियों के साथ बलास नदी के १ दह पर निःशंक झूला झूल रही थी मुसलमानों के आने की ख़बर सुनकर उस दह में कूद पड़ी उस के साथ जितनी लड़कियाँ थीं वे भी गिर कर डूब मरीं उस दिन से उस दह को कन्यादह कहने लगे हैं ऐसे ही बनियों की औरतें भी एक और दह में गिरकर मर गई थीं जिसे विराणी-दह कहते हैं ।

राजा मलेसी यह हाल देखकर अपनी सब फ़ौज के साथ दरिया ख़ाँ के ऊपर गया और ऐसा जी तोड़ कर लड़ा कि सब साथियों समेत मारा गया ।

दरिया ख़ाँ ने फ़तह पाकर ऐसी लूटमार की कि बस्ती का नाम निशान न छोड़ा मकान सब गिरा दिया और शहर को उजाड़ कर चला गया जब से अब तक उजड़ा ही पड़ा है ।

खंडरों में मंदिरों के खंडर बहुत क़ीमती पत्थरों के हैं जिनके बनाने में असंख्य द्रव्य लगा होगा एक मंदिर के ४ खंभे सात सात गज़ के लंबे खड़े हैं जिन में बहुत बढ़िया कोरनी की गई है जोड़ कहीं नहीं हैं ।

किसी किसी पत्थर में छोटे छोटे लेख पुराने नागरी अक्षरों के भी हैं ।

कन्यादह के ऊपर एक जैनमंदिर गिरा पड़ा है जिसकी एक भीत पर देवनागरी लिपि में यह खुदा है ।

संवत् १११६ माह सुदि ८ शनिवार धरणीधर दहलण—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जैनमंदिर के खंडरों में ७ हाथ लंबा एक कीर्त्तिस्तंभ खड़ा है जिसके ऊपर संवत् १२०७ माघ वदि १२ और पंडित शालाकचंद्र के चेले विजयचंद्र का नाम खुदा है।

इसी के पास एक दूसरे जैनमंदिर के कीर्त्तिस्तंभ में एक संस्कृत लेख खुदा है जिसका यह आशय है कि संवत् ११११ श्री नरवर्म देव राजा के राज में पंडित श्रीदेव के चेले गणदेव ने अपने धर्म की विधि से यह कीर्त्तिस्तंभ थापा और मंदिर में २४ जैनमूर्तियाँ विराजमान कीं।

बलास नदी के किनारे पर दूर तक मोंगरे की झाड़ी चली गई है गरमियों में खूब फूल खिलते हैं मुसाफ़िर सुगंध से छक जाते हैं।

गाँव बलास।

अब यह गाँव बलास क़सबे बलास के खंडरों से कुछ दूर बलास नदी के दाहिने किनारे पर बस्ता है जिस में जाट लोग रहते हैं।

यहाँ एक लेख है जिसका यह आशय है।

संवत् १६७४ बैशाख सुदि १ महाराज श्रीकुँवरदेव जी के हुक्म से शत्रुसालपुर बसा विद्यमान ठाकुर लखमीदास भोमिया।

क़सबा अटरू।

कोटे से २४ कोस पूर्व को पारबती नदी के किनारे यह क़सबा बस्ता है पारबती नदी क़सबे आशटे इलाक़े भूपाल से आती है और कई कोस आगे जाकर चम्बल में मिल जाती है यहाँ चाँवल ज़ियादा निपजते हैं और बालकों को एक बीमारी होती है जिस से गला रुक कर तमाम बदन में गाठें गाठें पड़ जाती हैं इस का इलाज यह है कि लोहे के तकले तपाकर उनसे दाग़ देते हैं जिन के चिह्न उमर भर लोगों के बदन पर रहते हैं।

अटरू के बाजार में एक जैनमंदिर भैंसासाह का बनाया हुआ है जिसमें मूर्ति पर संवत् ५०८ चैत सुदि ५ मँगलवार खुदा है।

क़सबे के बाहर एक खंडित मंदिर के कीर्तिस्तंभ में सँवत् १३१८ और राज श्रीजयसिंहदेव लिखा है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कानूगोयों के खेत में एक पत्थर खड़ा है जिसमें यह लेख खुदा है।

संवत् १३१६ महाराज श्री जयसिंह देव के राज में मोती ब्राह्मण को खेत दिया जो कोई छीने उसकी माँ से गधा संग करे।

दूसरे खेत में एक पत्थर पर गधे की और औरत की मूर्ति के नीचे यह लेख खुदा है संवत् १३४१ आसोज सुदि १५ को १७ गाँव महँगकालेश्वर महादेवजी के भेट किए जो कोई छीने तो उसकी माँ को गधा...

क़सबे के बाहर पश्चिम की तरफ़ एक बड़ा ढेर पत्थरों का पहाड़ी के बराबर पड़ा है यह एक मंदिर का खंडर है जिस को श्रीकृष्णजी के पोते अनिरुद्ध जी का बनाया बताते हैं और यह इतना ऊँचा था कि जब गिरा तो १२। १२ कोस के जानवर चमक गए थे पत्थरों में चूना नहीं लगाया गया था ताँबे की पातियों से जड़े थे जिन्हें लोग निकाल ले गए इस मंदिर के खंभे बहुत लंबे हैं और उन पर कौरनी भी खूब की गई है हाड़ोती में ऐसा कोई दूसरा मंदिर नहीं था।

(१) इसको हाड़ोती में गाधेगाल (गधे की गाली) कहते हैं।

क़सबे से १॥ कोस उत्तर अँडीरी नदी के टापू में १ पत्थर गड़ा है जिसमें सम्वत् १३२३ चैत बदि ३० को भदूदूजी राजा का कई ब्राह्मणों को ज़मीन देना खुदा है छीननेवाले की वही गधे की गाली लिखी है।

अटरू से २ कोस पूर्व में पारवती सुखा और अँडीरी ये ३ नदियाँ आती हैं अफ़ीम बहुत पैदा होती है।

बाराँ।

यह कोटे से पूर्व २० कोस १५०० घरों की बस्ती का क़सबा है कहते हैं कि नाथावत सोलंखियों ने १२ गाँव उजाड़ कर यह क़सबा बसाया था जिससे बाराँ नाम हुआ और जब मुसलमान ने बलास को बिगाड़ा तो वहाँ के आदमी भागकर यहाँ आ बसे थे।

बाराँ में व्यौपार खूब होता है चूँदड़ियों की पगड़ियाँ खूब

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बाँधी और छापी जाती हैं जो भादों के महीने में महारावजी अपने नौकरों को बाँटा करते हैं।

सम्वत् १५३० में यहाँ मालवे के बादशाह ग़यासुद्दीन ख़िलजी का राज था।

झालावाड़ नं ३।

यह रयासत कोटे के राज से तीसरा विभाग कट कर बनी थी राजराना ज़ालिम सिंह कोटे के कामदार थे उन्हों ने अँगरेज़ी सरकार को पिँडारों की लड़ाई में बहुत मदद दी थी और अहद-नामे में यह बात लिखा ली थी कि कोटे की रयासत महाराव उमेद सिंह जी के घराने में और कामदारी ज़ालिम सिंह जी के घराने में पीढ़ी दर पीढ़ी रहेगी।

ज़ालिम सिंह के पीछे महाराव राम सिंह जी और ज़ालिम सिंह जी के पोते मदनसिंह से नहीं बनी इसलिये अँगरेज़ी सरकार ने कामदारी के बदले तीसरा हिस्सा कोटे के राज का मदन सिंह के दिला कर अलग रईस बना दिया।

यह नई रयासत झालावाड़ के नाम से मशहूर हुई और गद्दी झालरापाटण में जमी जब से अब तक इतने रईस हो चुके हैं।

१ महाराज राना मदन सिंह माधो सिंह के बेटे ज़ालिम सिंह के पोते सम्वत् १८९५।

२ पृथ्वी सिंह सम्वत् १९०२।

३ ज़ालिम सिंह १९३२ इन्हों ने अँगरेज़ी सरकार की उदूल हुक्मी की जिसपर सम्वत् १९५५ में गद्दी से उतारे गए और झालावाड़ से २ हिस्से का मुल्क कोटे के महाराव उमेद सिंह जी को पीछा दिलाया गया।

४ भवानी सिंह जी संवत् १९५५ से झालावाड़ के तीसरे हिस्से के रईस हैं।

शहर पाटण।

पाटण का असली नाम कनकपुर पट्टण बताया जाता है। यहाँ का राजा भान था उसकी रानी कनकावली और बेटी हंसावली

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

थी। हंसावली की अजब कथा कही जाती है जिसका सारांश यह है कि समुद्र के किसी टापू में हंस का एक जोड़ा रहता था एक दिन हंस तो बाहर चुगने को गया था पीछे आग लग गई जिसमें हंसनी बच्चों सहित जल गई हंस ने आकर जो यह दुर्घटना देखी तो मोह और शोक के मारे वह भी उसी आग में जल गया।

फिर हंस तो उज्जैन के राजा का कुँवर हुआ और हंसनी इस नगरी में राजा भान के घर जन्मी उसका नाम भी हंसावली रखा गया।

हंसावली को अगले जन्म की बात याद रह गई थी जिस से उसने यह जान कर कि स्त्री तो पुरुष के संग जल जाती है पुरुष स्त्री के साथ नहीं जलता; जन्म भर कुँवारी रहने और पुरुष का संग नहीं करने का व्रत धारण कर लिया था—मा बाप जब विवाह की बात चलाते थे तो नट जाती थी।

यह बात फैलते फैलते उज्जैन में भी जा पहुँची थी वहाँ का कुँवर एक रात सपने में इस राजकुमारी से मिलने का सुख लूट रहा था कि उसके मंत्री धृष्टबुद्धि ने अकस्मात् उसको जगा दिया इस पर वह बिगड़ कर बोला कि तू ने मेरा मज़ा बिगाड़ दिया मैं सपने में उसी अनमिल कामिनी से मिल रहा था।

मंत्री ने कहा कि आप धीरे रहें मैं ऐसा उपाय करूँगा कि वह प्रत्यक्ष ही आपको मिल जायगी यह कहकर वह उज्जैन से चल कर पाटण में आया और भेद लगाने से मालूम हुआ कि हंसावली तो मर्द का मुँह भी नहीं देखती है बाहर भी केवल हरसी देवी के दर्शन को निकलती है सो आधी रात को जा कर जलदी से लौट आती है चौकी पहरा भी स्त्रियों का ही साथ रहता है।

धृष्टबुद्धि रात को मंदिर में जा कर देवी के पीछे छुप रहा जब हंसावली आकर पूजन करने लगी तो बोली बदल कर बोला कि तू कुँवारी हत्यारी मेरी पूजा के योग्य नहीं है आज से पीछे विवाह करे बिन यहाँ मत आना अभी तो तेरा मुँह देखे पाप लगता है

हंसावली ने हाथ जोड़ कर कहा माता मर्द कठोर होता है उस का संग अच्छा नहीं और इस प्रसंग में अपने पूर्व जन्म की कथा सब कह डाला जिस से धृष्टबुद्धि ने भेद पाकर उसी गंभीर स्वर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

से कहा नहीं नहीं उस हंस की तरफ़ नाहक़ तुझको वहम हो रहा है उसने तो तेरे साथ पूरी प्रीति बरती थी कल चितेरा इस बसती में आवेगा तू उस से अपने भवन में चितराम कराना उस से तेरे चित्त की शान्ति हो जावेगी।

यह सुन कर राजकुमारी तो अपने घर गई पीछे से धृष्टबुद्धि भी वहाँ से निकल कर डेरे पर आया और चितेरा बन कर नगर में चितराम करता हुआ राजकुमारी की ड्यौढ़ी पर पहुँचा उसने तसवीरें देखने को अंदर मँगाई उनमें एक तसवीर ऐसी भी थी कि समुद्र के एक टापू में आग लगी हुई है और एक हंसनी बच्चों सहित जली पड़ी है पीछे से हंस भी आकर उसी आग में जल रहा है नीचे दो शहरों के नक़शे हैं एक पर उज्जैन और दूसरे पर पट्टण लिखा है उज्जैन में वहाँ के राजकुमार की और पट्टण में इस राजकुमारी का चित्र यथार्थ रूप से खिचा हुआ है।

राजकुमारी ने अपनी तसवीर पहचान कर चितेरे से हाल पुछ-वाया तो उसके कहने से हंस की तरफ़ का संदेह नहीं मिटा किंतु उसी राजकुमार से विवाह करने का मन में उत्साह भी हुआ।

तब तो वही चितेरा मध्यस्थ बना और शीघ्रही दोनो का जोड़ा मिल गया कहते हैं कि हंसराज और वच्छराज इन्हीं के कुँवर थे जिनके नाम से वच्छ बारस का त्यौहार भादों के महीने में होता है और बेटे की माँ गाय बच्छे का पूजन करती है।

पाटन के पुराने मंदिर।

यहाँ के बहुत पुराने मंदिरों में से १ महादेवजी का मंदिर था जिसका और तो कुछ पता निशान नहीं रहा है केवल एक पत्थर प्रशस्ति का राज की कचहरी में लगा है जो पुरानी नागरी लिपि में है उसका ऐतिहासिक सारांश इतना ही है कि राजा दुर्गगण के राज्य समय 'देव' नामक पुरुष के भाई व्यूपक ने महादेव का मंदिर बसंत ऋतु संवत् ७४६ में बनाया भट्ट शिवगुप्त ने यह प्रशस्ति बनाई और अच्युत के पुत्र वामन सूत्रधार ने पत्थर पर खोदा।

वर्तमान मंदिरों में पद्मनाभ जी का संगीन और शिखरबंद बड़ा मंदिर जो बाज़ार में है पुराना है इसका जीर्णोद्धार ज्येष्ठ सुदी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१ शनिवार संवत् १८७१ शाके १७३७ को महाराव राजा उमेद सिंह जी, कुँवर किशोर सिंह जी के राज और झाला ज़ालिम सिंह की कामदारी में हुआ था यहाँ के पुजारी कहते हैं कि इस मंदिर को हूण जाति के राजा रेखा ने बनाया था।

यही मंदिर सात सहेलियों का भी कहलाता है और इसका कारण वे लोग यह बतलाते हैं कि उस राजा की बेटी की ७ सहेलियाँ थीं जिन्होंने इस का डोरा फेरा था अर्थात् प्रतिष्ठा की थी।

ऐसा ही एक जैन मंदिर पार्श्वनाथ जी का भी पाटण में पुराना है जो बादशाहों के दंगों में भी खण्डित नहीं हुआ इस से इस का बड़ा चमत्कार समझा जाता है इसकी मूर्त्तियों में ११४५ तक के पुराने संवत खुदे हैं और भंडार के पास पड़े हुए एक पत्थर में यह लेख खुदा है।

संवत् १८५४ में भट्टार्क नरभूषण जी ने ग्वालियर से पाटण के इस मंदिर में आकर चौमासा किया और मंदिर की कुछ जीविका न देखकर पंचों से एक माणी (१) धान पर आधा पैसा धूप दीप के वास्ते चल्लू करा दिया।

पुरानी सतियाँ।

इस जैन मंदिर के आगे भैसासाह के मोहल्ले में पाटणी जाति के महाजनों की २ सतियों के शिलालेख संवत् १५०६ कातिक सुदि १० और संवत् १५३६ आसोज सुदि १ खुदे हैं जिन की पूजन को उन के वंशज गाँव गठोत वग़ैरः से आया करते हैं।

चन्द्रभागा नदी।

यह नदी पाटण के पास बहती है इस का दूसरा नाम पौकरना महानदी है इस के किनारों पर कई पुराने मंदिर और सतियों के चबूतरे तथा छत्रियाँ हैं जिन में मुख्य मुख्य ये हैं।

(१) १२ मण धान की १ माणी होती है।

५

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शीतलेश्वरजी का मंदिर ।

यह पुराना तो है पर इस में प्राचीन सम्वत् मिती का कोई लेख नहीं है एक खंभे में पुरानी चाल के कई नाम इस प्रकार से खुदे हैं ।

१ वावट प्रणमति-	२ माम्या प्रणमति-
३ धामव प्रणमति-	४ यावट प्रणमति-
५ ठीका प्रणमति-	६ कवला प्रणमति-
७ सवापर प्रणमति-	८ सूत्रधार सिवकात वीत्राण प्रणमति

इस मंदिर की घड़ाई पुरानी हिन्दुस्तानी चाल की है कारीगरी वहुत अच्छी है देखने लायक़ है इसमें जो असली मूर्ति थी उसको धा भाई जसकरण ने ले जाकर किशोरपुर दरवाज़े (कोटे) के मंदिर में पधरा दी है ।

इसके पास गोपालजी के नवीन मंदिर में एक पत्थर पर यह लेख खुदा है ।

महाराव उमेदसिंहजी कुँवर किशोरसिंहजी राजराना ज़ालिमसिंहजी (के समय में) आषाढ़ सुदि ९ बुधवार सम्वत् १८७० को शाह शंभूराम दलजीराम ने गोपालजी का मंदिर बनाया ।

हरसीदेवी ।

इसी नदी पर सीतलेश्वर महादेव जी के पास हरसी देवी का भी मंदिर है उसमें कई टूटी फूटी मूर्तियाँ रक्खी हैं जो आदमी के वरावर ऊँची हैं । इन मंदिरों के बनानेवालों का नाम और समय कुछ नहीं जाना गया ।

दसमा औडणी का तालाव

हरसी देवी के पास ही यह नामी तलाव भी है इसका ठेट नाम तो दतियासागर बताते हैं मगर अब दसमा औडणी का तलाव कहलाता है दसमा औडणी शेरगढ़ के राजा हरराज डोड की बेटी कही जाती है यह किसी कारण विशेष से औडों (बेलदारों) के गाँव में जो अब शेरगढ और पाटण के बीच में एक पहाड़ के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नीचे उजड़ा पड़ा है पली थी उसने बेलदारों को धर्म कर्म से हीन देखकर पहिले तो यह बात कही थी कि तु लोग स्नान करके रोटी खाया करो फिर और भी कई बातें सभ्यता की सिखाई थीं जिसकी कृतज्ञता में उन्हों ने यह तालाब खोदकर, वा इसका जीर्णोद्धार करके उसके नाम से अंकित कर दिया।

जोहासा नाला और सुलेमानी दाने।

चन्द्रभागा के तट पर पानी का एक नाला जोहासा नाम बहता है वहां ज़मीन में से सुलेमानी दाने बहुधा निकला करते हैं जिसका कारण लोग ऐसा बताते हैं कि पहिले यहाँ जोहरी लोग बहुत बसते थे उन्हीं के माल में के रहे हुए ये दाने भी हैं कोई कोई यों भी कहते हैं कि यहाँ एक करामाती फ़क़ीर भजन किया करता था उसके वास्ते रोज़ एक माला सुलेमानी दानों की आकाश से उतरती थी वह नई माला पाकर पुरानी माला फेंक देता था ये दाने उन्हीं मालाओं में के ज़मीन में दबे रह गए हैं।

कुछ दिनों पहिले एक मुसलमान इन दानों को ढूंढ कर बेचा करता था।

रातादेई या रातादेवी।

पाटण से ५ कोस गाँव असनावर बसता है उससे १॥ कोस पहाड़ों में रातादेवी का मन्दिर है वहाँ के पुजारी कहते हैं कि जिस रत (रक्त) दन्तिका देवी का वर्णन मार्कण्डेय पुराण में है वही यह है मगर इस प्रान्त के लोग इसको अचलाजी खीची की बहन बताते हैं पुजारी कहते हैं कि अचलाजी खीची की बहन की मूर्ति भी इसी मन्दिर में रतदन्तिका के बराबर दहनी तरफ़ को है।

निज मन्दिर तो अचलाजी का बनाया हुआ था जिनकी पूजा पीछे को भीत में होती है और आगे का सभा मण्डप ज़ालिमसिंह झाला ने बनाया है।

इस प्रान्त में इस देवी की बड़ी मानता है आस पास के लोग पूजन दर्शन तथा अपनी बोलारी (?) के बलिदान और भेट चढ़ाने के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लिये हमेशा आया करते हैं राज की तरफ से ब्राह्मणों की बरणी बैठी रहती है।

कुछ वर्ष पहिले गाँव गोपपुर के एक बारहटे ने सरस कविता बनाने की कामना से अपनी जीभ काटकर रक्तदन्तिका को चढ़ा दी थी और ४ दिन तक यहाँ पड़ा रहा था पाँचवें दिन उसकी जीभ जैसी थी वैसी ही हो गई और वह कविता भी अच्छी बनाने लगा था उससे पहिले एक ढोली की जीभ भी इसी तरह जुड़ गई थी इस चमत्कार का यहाँ बहुत बखान हुआ करता है।

आन्तरी।

जिस स्थान पर रातादेई का मन्दिर है उसको आंतरी कहते हैं जो भूमि दो पहाड़ों में हो उसको हाड़ोती में आन्तरी बोलते हैं यहाँ भी दो पहाड़ हैं मन्दिर की दहनी दिशा के पहाड़ का नाम बाँडा है वह गागरोन के पहाड़ का जो यहाँ तक चलौ आया है एक टुकड़ा है और बाईं ओर के पहाड़ को महदीलावसर की कराड़ी कहते हैं क्योंकि इसके नीचे महदीलावसर नाम गाँव बसता है।

मानसरोवर।

इसी आंतरी में रातादेई माता के आगे मानसरोवर नाम एक अच्छा तलाव है जिस में सफ़ेद और गुलाबी रंग के कमल फूलते हैं पानी बारों महीने भरा रहता है।

इस तलाव की पाल बाँडा पहाड़ से लेकर दूसरे पहाड़ तक बहुत पक्की और मज़बूत बनी है जिसमें, बड़े बड़े पत्थर लगे हैं।

कहते हैं कि खीचियों से पहिले मऊ में मानराज नाम कोई राजा हुआ था उसने यह मानसरोवर तलाब बँधाया था।

पुराने लेख।

तलाव मानसरोवर पर कई पुराने शिलालेख छात्रियों और चबूतरों में हैं जिनका कुछ वृत्तान्त नीचे लिखा जाता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक चबूतरे पर चरण पादुका का चिन्ह और यह लेख है "चरण पादुका नाथकी" मगर लोग उसको अचला जी खीची का स्थान मानते हैं।

दूसरे चबूतरे पर १ पुरुष घोड़े पर सवार और दो स्त्रियाँ आगे खुदी हैं नीचे यह लिखा है।

सम्वत् १५५० माह सुदी ६ राजश्री राघव सुत गंगादास जी का सती सहित देवलोक हुआ।

तीसरी. छत्री में सम्वत् १५७८ पौष सुदी ११ सोमवार श्री राव.........गागुरणी के धणी एक सवार और ५ सती।

चौथा. सम्वत् १५४७ शाके १४१२ महाराजधिराज पृथ्वीपाल पुत्र सेवाजी महाराज की रानी साँगादे ने सत किया।

पाँचवा. सम्वत् १५४५ भादों सुदी १ सोमवार राज श्री गोगा-देव जी बराला सुत-सती ऊमादे को भाणी सीदापुत्री, (२) सती सदी लाखा पुत्री सहगमन किया।

छठा. सम्वत् १५४७ पौष सुदी १४ बुधवार राज श्री करमादेव जी गोगासुत-सती भोली मोहर हाली खेमावत की (बेटी) सोबँखी श्रीभान (की) पुत्री सहगमन किया।

सातवाँ. संवत् १५६५ असाढ़ सुदी १२ राज श्री हरदेवजी...

आठवाँ. सम्वत् १५६८ मगसर बदी २ सोमवार श्रीसेवासुत नरभेराम।

इन लेखों से जाना जाता है कि यहाँ खीची राजों और सरदारों के स्मशान थे।

पावड़्या भैरव।

मानसरोवर तलाव से आगे मंदिरों के मार्ग में १ चबूतरे पर पावड़्या भैरव की नंगी मूर्त्ति खड़ी है और हाथ में १ मस्तक है कहते हैं कि पहिले इन भैरव जी का यह चमत्कार था कि जिसको ज़रूरत होती वह एक दिन पहिले यहाँ आकर कह जाता था कि मुझे इतना रुपया चाहिये दूसरे दिन उसको अपने घर में उतनेही रुपये मिल जाते थे परन्तु इक़रार पर रुपये नहीं पहुचते तो ग़रीब तो छोड़ दिए जाते और अमीर से दबाकर ले लिए जाते थे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गाँव सरियापुर ।

रानी देवी से दक्षिण को पहाड़ में सरियापुर नाम १ छोटा सा गाँव है पहिले यहाँ सरिया नगर नाम शहर बसता था उस समय के दो मंदिर अभी तक मौजूद हैं।

१ मंदिर तो महादेवजी का शिखरबंद है जिसके अंदर दहने हाथ की भीत में ये अक्षर खुदे हैं।

संवत् १४१६ कातिक वदी १ सोमवार अश्वनी नक्षत्रे...(आगे नहीं पढ़ा गया)

दूसरा जैन मंदिर है जिसमें की ३ मूर्त्तियों में संवत् १२८१ और १ पर संवत् १३३७ खुदे हैं।

रानी तलाब।

मानसरोवर से आधकोस पर पूर्व दिशा में रानीतलाब है इस को मानं राजा की रानी का बँधाया हुआ बताते हैं।

साहकंदीलाव।

रानीतलाव से आगे पाव कोस पूर्व में साहकंदीलाव तलाव मानसरोवर से दूना है इसको पाटण के बासी कंदीला नाम एक साह (साहूकार) ने बनाया था।

सोठी रानी और भोल्या डूम

कंदीलाव तलाव पर सोठी रानी और भोल्या डूम (ढोली) के रहने के महल खंडर हुए पड़े हैं इसकी भी १ कथा है जिसका सारांश यह है कि लाखाजी नाम किसी राजा की रानी भोल्या डूम साथ चली आई थी यहाँ विकट जंगल और पहाड़ देख कर रही थी किसी कवि ने सच कहा है।

दोहा॥

विद्या बनिता बेलि नृप ये नहिँ जात गिनंत॥
जो जाहीके सँग रहै । ताही ते लिपटंत ॥१॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

त्रियानगरी ।

मानसरोवर की पाल से आध तथा पौन कोस तक पहाड़ की तलहटी में एक पुरानी बसती के खंडर पड़े हैं जिसका नाम यहाँ वाले त्रियानगरी बताते हैं ।

इन खंडरों में महादेव, देवी, और जैन के ३ मंदिर अभी तक साबित हैं ।

उँजार नदी ।

त्रिया नगरी से आध कोस पर उँजार नदी बहती है इस के दहिनी तट पर खीची राजों के बनाए हुए महल और मंदिर टूटे फूटे पड़े हैं ।

उँजार नदी बाईं तर्फ़ के डूगरों को फाड़ कर निकली है इसकी यह एक कथा कही जाती है जिसे संक्षेप रूप से नीचे लिखते हैं ।

गाँव खोरपुरा परगने झालावाड़ में पानी नहीं था दूसरे गाँव से आता था मगर १ करामातिन गूजरी रोज़ अपनी बकरियों को पानी पिला लाती थी उसके सुसरे को बड़ा अचंभा था कि बहू रोज़मर्रा कहाँ का पानी बकरियों को पिला लाया करती है निदान १ दिन वहां छुप कर गया तो क्या देखता है कि बहू नँगी होकर एक कूँडी में बैठ गई उसके बैठते ही कूँड़ी में से पानी बहने लगा जब बकरियाँ पीकर धाय गईं तो वह उस कूँडी में से उठकर कपड़े पहन्ने लगी उस वक़्त उसकी नज़र सुसरे पर पड़ी तो शर्म के मारे पानी पानी हो गई और नदी बन कर बहने लगी । (१)

यह देख कर उस बुड्ढे खुर्राँट को भी ग़ैरत आई और वह भी खाल (नाला) बन कर बहने लगा कहीं उससे अलग और कहीं मिला जुला ग़रज़ कि दोनों साथ साथ पहाड़ों को फोड़ते हुए हाड़ोती (कोटे) के गाँव धोलिया तले के नीचे परवन नदी में जुदे जुदे जा गिरते हैं ।

(१) हिन्दुस्तान की छोटी बड़ी नदियों के लिये कुछ ऐसी ही कथाएं बनी हुई हैं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चापलदे माता ।

उँजार नदी के बायें किनारे १ पहाड़ी पर चाँपल माता की पूजा होती है यह किसी चारण की बेटी थी और अपने माँ बाप के घर से सुसराल को जाती थी जंगल में बहली का १ बैल थक गया तो इसने १ सिंह को पकड़कर उसकी जगह जोत लिया मैदाने का राजा बालजी खीची यह अद्भुत समाचार सुनकर देखने को आया और चापलदे के सरूप से मोहित होकर घर ले जाने लगा उसने खीचियों के राज्य भृष्ट होने का सराप देकर ज़ोर से १ हाँक मारी जिसकी दहल से पहाड़ फट गया और वह उसमें समा गई ।

मैदाना ।

यह मैदाना शहर जो उँजार नदी के बायें तट पर बसता था अब उजाड़ पड़ा है क़िले और उसके २८ बुर्जों के टूटे फूटे खंडर दूर तक दिखाई देते हैं क़िले का बड़ा दरवाज़ा पहाड़ के गूंघट में अब तक अकेला खड़ा है उसको हथियापोल कहते हैं क़िले के नीचे पहाड़ की पठार में मेदाना के खीची राजों के महल और मकान डहे पड़े हैं ।

सात सला की पहाड़ी ।

ये पहाड़ी पाटण से उत्तर को है इसपर ७ सला (स्तंभ) खड़े हैं जिससे इसका ऐसा नाम हुआ है ये स्तंभ कब और किसने खड़े किए थे और क्यों किए थे इस बात का कुछ पता यहाँ वाले नहीं बता सकते हैं पर यहाँ और भी कई स्तंभ देहगोप कहलाते हैं और देहगोप बौद्धों की समाधिस्थान का नाम था जिससे जाना जाता है कि ये सातों बड़े स्तम्भ बौद्धों के समय के हैं इन देहगोपों का कुछ वर्णन नीचे लिखा जाता है ।

देहगोप ।

देहगोप न मालूम यहाँ इस पहाड़ी पर कितने थे अब तो उनके १८ तथा २० स्तंभ टूटे और साबित खड़े हैं इन स्तम्भों में ऊपर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के सिरे पर चारों तर्फ ४ मूर्तियाँ पद्म सन लगाए गोद में हाथ रक्खे हुए खुदी हैं और नीचे के चबूतरे पर से साँप ऊपर को चढ़ते हुए बने हैं।

——:o:——

जैनी सिद्धों की मूर्तियाँ।

इसी पहाड़ी पर जैनी सिद्धों की पुरानी मूर्तियाँ भी हैं उन पर सम्वत् मिती भी खुदी है और वे इस क्रम से हैं।

१ फागुण सुदी १ दीतवार सम्वत् १०६६।
२ सावण सुदी ११ शनिवार सम्वत् ११०१।
३ सम्वत् ११६६।
४ कातिक वदी १० सम्वत् ११७०।
५ सम्वत् १२६६।

——:o:——

१ पुराना शहर।

यहाँ भी तालाब के पर १ पुरानी बस्ती के खंडर दूर तक पड़े हैं जो शायद बौद्धों के राज में बसती हो आशा है कि इन खंडरों और इनके ऊपर की पहाड़ी में विशेष शोध करने से ज़रूर कुछ सामग्री प्राचीन इतिहास की मिलेगी झालरापाटन के विद्यमान विद्वान राजराना साहिब को इस ओर ध्यान देना चाहिये।

——:o:——

गाँव सारथल।

यह गाँव पाटण से १५ कोस राठोड जाति के जागीरदार विजय सिंह की जागीर का पाट स्थान है इसका पुराना नाम कुन्तलपुर बताते हैं जिसको किसी समय अवंतिकापुरी भी कहते थे कुंतल राजा का बेटा चन्द्रहास्य यहीं राज करता था जिसकी कथा महाभारत में है।

——:o:——

कुंतलपुर वा अवन्तिकापुरी के खंडर।

सारथल की वर्तमान बस्ती से कुछ दूर इस पुरानी नगरी के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

खंडर नाम मात्र दिखाई देते हैं जिनमें कई खंडित मंदिरों के स्तंभ और सतियों के पत्थर बहुत पड़े हैं।

किसी मंदिर का १ स्तंभ खड़ा रह गया है जिस पर "(१) संवत् १ और देवपाल ...... राख्याशिव प्रणमती" खुदा है। ऐसे ही संवत् १६ और १७७ सतियों के पत्थरों में पढ़े जाते हैं परन्तु अक्षर पुराने होने से जाते रहे हैं।

१ मंदिर गणपति का टूटा पड़ा है उस में भी कुछ पुराने अक्षर हैं जो घिस जाने से पढ़े नहीं जाते।

——:o:——

तवारीख़ परगने टोंक वा टूँक।

दिल्ली के राजा तुँवर तुंगपाल के राज में जो अपने मूल पुरुष अनंगपाल से नवीं पीढ़ी में था उसके काका क्षेमपाल ने (२) ढूँढाड़ देश में आकर सम्वत् १००३ में टोंकड़ा नाम गाँव बनास नदी के पास बसाया था वही पूर्व रूप टोंक का था तंवरों के पीछे चोहानों का राज हुआ तो उस समय टोंकड़ा परगने पीपलू के नीचे रहा जो अब टोंक के नीचे है क्योंकि टोंक परगना है और पीपलू गाँव है।

जब महाराजा पृथ्वीराज चोहान दिल्ली के सिंहासन पर विराजमान हुए तो उन्होंने पीपलू का परगना अपने सावंत (सेनापति)

---

(१) नहीं मालूम यह कौन संवत् है शायद गुप्त हो क्योंकि गुप्तों का राज भी मालव के इन निकटवर्ती प्रान्तों में बहुत रहा है।

(२) जयपुर के राज को ढूँडार कहते हैं ढूँड १ नदी का नाम है जो हतरोई के पहाड़ से निकल कर जयपुर के पास बहती है उस पर से यह नाम उसके पास की भूमि का हुआ है पहिले ढूँडार की सीमा कहाँ तक थी यह ठीक मालूम नहीं पर अब तो उस धरती को कि जिसमें टोंक का परगना है, नागरचाल कहते हैं नागरचाल का नाम, नगर के ऊपर से पड़ा है जो १ पुराना शहर टोंक से १२ कोस दक्खिन दिशा में है नागरचाल में टोंक, उजियारा, नगर नेणवा, रामपुरा वग़ैरः कई परगने बनास नदी के पूर्व में हैं टोंक और रामपुरे में नव्वाब का, उजियारा और नगर में, जयपुर का, और नेणवे में बूँदी का राज है, इनमें नगर और नेणवा बहुत पुराने खेड़े हैं नागरचाल की और ढूँढाड़ की बोली में भी भेद है नागरचाल के परे हाड़ोती अर्थात् बूँदी और कोटे का राज है हाड़ोती की बोली कुछ और ही है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चामुण्डराय को बख़श दिया और चामुण्डराय ने अपने बेटे सोनपाल के नाम पर टाँकड़े से २ कोस सोनवा नाम गाँव बसाया।

महाराजा पृथ्वीराज के पीछे दिल्ली और अजमेर के बड़े राज तो चोहानों से छूट गए परन्तु टोंकड़े के पास छोटे २ राज उनके छुटभाइयों के खेराड़ और टोडे में रहे।

टोडे के राव गोयलवाल जाति के चोहान थे उन्हों ने टाँकड़े में भी अपना अधिकार कर लिया था।

जब टोडे में राव सांतू राज करता था तो सोलंखियों ने अजमेर की तर्फ़ से आकर उसका राज्य ले लिया।

सोलंखियों का राज पहिले गुजरात में था फिर जब दिल्ली के बादशाह अलाउद्दीन ख़िलजी ने गुजरात जीतकर उनको वहाँ से निकाला तो एहड़ देव और बेहड़ देव नाम २ सोलंखी राजकुमार अजमेर के इलाके में आए और रामसर के पास बेहडा नाम गाँव बसाकर रहने लगे उनके बेटे पोते पास पड़ोस के रजवाड़ों में इस मतलब से फिरा करते थे कि जो कहीं पोल देखें तो घुस जावें जब टोडे में उनको ऐसी पोल मिली तो अपने पाटवी राव रूणपाल को लेकर टोडे के पहाड़ों में गए और यह कहने लगे कि हमारी कुलदेवी हम से रूठकर इन पहाड़ों में आगई हैं उसको ढूँढने आए हैं।

एक दिन वे अपने घोड़े कपड़े और हथियार डेरे पर छोड़कर जंगल और नदी में घूमने को गए थे पीछे से सांतू और पांचू दोनों भाई वहाँ आ निकले और वह सब सामान बटोर कर घोड़ों सहित टोड़े में ले गए।

इन्हों ने लौटकर जो डेरे पर कुछ न पाया तो सांतू से कहलाया कि हमारे घोड़े कपड़े और हथियार भेज दो सांतू ने जवाब दिया कि राजपूत को अपने घोड़े और हथियार सूने नहीं छोड़ने चाहिये अब हमको गोठ दो तो तुम्हारे घोड़े कपड़े पीछे मिलें इन्हों ने मंज़ूर करके जब गोठ की तैयारी की तो चोहानों ने घोड़े कपड़े और हथियार भेज दिए पीछे आप भी गोठ जीमने को आए तब सोलंखियों ने उनको नशे में चूर करके तलवारों से काट डाला और टोंक टोडे में अमल कर लिया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फिर सोलंखियों में एक सातलदेव हुआ जिसके भाई सुरजन देव का नाम सम्वत् १४५६ के एक शिलालेख में है।

सातल का बेटा सेढूँ, और सेढूँ, का डूँगरसिंह हुआ जिससे बादशाह दिल्ली के १ बाग़ी पठान 'लल्लन' नाम ने टोडो छीन लिया मगर डूँगरसिंह ने अपने सुसरे चीतोड़ के राना रायमल, और मामा गागरोन के राव पीपा जी खीची की मदद से 'लल्लन' पठान को मारकर टोडे में फिर अपना अमल किया और टोंकड़े में कोट के नाम से क़िला बनाकर छोटे बेटे जोगाजी को दे दिया बड़ा बेटा रतनसिंह था वह टोडे का राव हुआ।

जोगाजी ने बस्ती और इमारत बढ़ा कर टोंकड़े को टोंक बनाया उसके बेटे मानकजी ने अपनी अरदली के सवारों और पैदलों के खड़े रहने के वास्ते कोट के आगे की पथरीली ज़मीन को साफ़ और सम चौरस कराकर चौक निकाला जिसे अब मानकचौक कहते हैं।

रतन सिंह के पीछे सूरसेन, पृथ्वीराज, राव(१)रामचंद्र, पुरुषोत्तम, कल्याण, भगवानदास, और जगन्नाथ बारी बारी से टोडे के राव हुए।

राव जगन्नाथ का कुँवर कल्याण अकबर बादशाह की चाकरी में रहता था उसकी बहन की सगाई आमेर के महाराजा मानसिंह से हुई थी एक दिन महाराजा ने कुँवर के अँगरखे में कालोंछ, लगी देखकर हँसी से कहा "सोलंकी के कालो लागो" कुँवर ने जवाब दिया कि मेरा यह काला (धब्बा) तो धोने से छूट सकता है लेकिन तुम्हारे जो काला लगा है वह तो किसी तरह भी नहीं छूट सकता।

---

(१) टोडे में 'चक्रावाय' नाम एक पुरानी बावड़ी है जिसको चकिया पुरोहित ने ११ लाख रुपये लगा कर संवत् १६०४ में बनाई थी जिस की प्रशस्ति में उस समय के राजाओं और बादशाहों के ये नाम लिखे हैं।

१ टोडे के राजा सूरसेन, पृथ्वीराज, राव रामचंद्र,

२ दिल्ली के बादशाह-शेरशाह, सलीमशाह।

३ कूंभलमेर के राणा-राज श्रीसंग्रामरत्न-उदै.सह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मानसिंह ने इस बात से दिल में बुरा मानकर अकबर बादशाह से कहा बादशाह ने कल्याण सिंह से डोला माँगा उसने अर्ज़ की कि मेरे तो एक ही बहन थी उसकी सगाई राजा मानसिंह से कर दी है बादशाह ने कहा कि मानसिंह कुछ नहीं कहेगा उसे तुम हम को दे दो उस ने कहा अच्छा तो मैं अपने बाप से सलाह कर लूँ बादशाह ने उसे छुट्टी दे दी वह टोडे आया और बाप से सब हाल कहा तब राव जगन्नाथ ने ब्याह के बहाने से बहुत सा रुपया बादशाह से मँगाया और लड़ाई का सामान करके क़िला सजाया बादशाह ने यह ख़बर पाकर मानसिंह के साथ फ़ौज भेजी मानसिंह ने सोलंखियों को बहुत समझाया कि हुक्म उठा लो लड़ो मत, मगर उन्होंने नहीं माना लड़े और हारे टोडा और टोंक (१) दोनों उनसे छूट गए।

राव जगन्नाथ परगने (२) झिलाय में जाकर रहा जहाँ बस्सी नाम गाँव में उसकी सन्तान (३) अब तक रहती है और कुछ लोग टोंक (४) में भी हैं। बादशाह की तरफ़ से टोंक में मोमन मनसूर हाकिम हुआ उसके मरने पर उसका बाप हाकिम हो कर आया उसने अपने बेटे की क़बर टोंक में बनाई। जिसके पास नव्वाब मुहम्मद-अलीख़ाँ ने कोट तुड़ाकर एक नया दरवाज़ा निकाला है।

टोंक में (५) बादशाही अमल होने के ६ वर्ष पीछे अकबर बादशाह का (६) इन्तक़ाल हुआ था जब शाहजहाँ बादशाह हुए तो उन्होंने राजा रायसिंह सीसोदिया को टोंक और टोडा दोनों दे दिए

(१) आईन अकबरी में, टोंक और टोडा २ अलग अलग परगने सरकार रणथंभोर सूबे अजमेर में लिखे हैं।

(२) झिलाय अब जयपुर के नीचे है।

(३) बस्सी में कुछ दिनों पहिले गोपालसिंह टोडे के सोलंखियों का पाटवी राव था।

(४) टोंक के कोट में जो सोलंखी रहते हैं वे अपने को रोव रामचंद्र की संतान में बताते हैं इससे जाना जाता है राव जोगा की औलाद वहाँ नहीं रही।

(५) वंशभास्कर में लिखा है कि 'अकबर बादशाह' ने राव जगन्नाथ से टोडा संवत् १६५२ में छीना था।

(६) संवत् १६६१।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्योंकि राजा का बाप महाराजा भीम जो राना अमर सिंह का बेटा था शाहजहाँ की तरफ़ से उनके बाप जहाँगीर बादशाह की फ़ौज से लड़ कर काम आया था।

रायसिंह के पीछे उसके बेटे पोते राज करते रहे मगर उनके समय में पोल बहुत बरत गई थी इसलिये औरंगज़ेब बादशाह ने मिरज़ा राजा जयसिंह को बन्दोबस्त करने का हुक्म दिया उन्होंने धीरे धीरे अपना दख़ल बढ़ा लिया और रायसिंह की औलाद को संवत् १७४१ में निकाल बाहर किया तब बादशाही हाकिम टोंक और टोंडे में बैठ गए।

संवत् १७५१ में नव्वाब 'मुजाहिद ख़ाँ' टोंक का हाकिम और बहादुर ख़ाँ कोतवाल था दोनों का नाम टोंक के चबूतरे में एक पत्थर पर खुदा है।

संवत् १७५३ में शाहज़ादे मुअज्ज़म ने औरंगज़ेब से सिफ़ारिश कर के टोंक का परगना बूँदी के राव राजा बुधसिंह की जागीर में दिला दिया राव राजा पीछे से शराब बहुत पीने लगे थे और उनकी शादी जयपुर के महाराजा सवाई जयसिंह जी की बहन से हुई थी नशे में उस से कुछ तकरार हो गई जिस पर महाराजा ने टोंक और बूँदी राव राजा बुधसिंह से छीन लिया और टोंक में आकर सोलंखियों के यहाँ शादी की फिर टोंक का कोट भी बनाया उनके २ बेटे ईश्वरी सिंह और माधव सिंह थे माधव सिंह की मा राना अमरसिंह की बेटी थी शादी करते वक़्त महाराजा ने रानाजी के भानजे को राज देने का इक़रार किया था जब माधवसिंह पैदा हुए थे तो रानी उनको लेकर उदेपुर में चली गई थी इस लिये संवत् १८०० में महाराजा सवाई जयसिंह का देहांत होने पर ईश्वरी सिंह गद्दी पर बैठ गए और सलूमर के राव की बेटी से शादी कर ली जो उदेपुर का बड़ा जागीरदार था रानाजी ने माधव सिंह को जयपुर की गद्दी पर बैठाने के लिये फ़ौज भेजी मगर ईश्वरीसिंह ने उसे लड़ कर भगा दी क्योंकि सलूमर के राव की तरफ़दारी से अक्सर सरदारों ने लड़ाई में दिल नहीं लगाया था माधवसिंह ने फिर जयपुर के मुसाहिब खत्री केशोदास के बेटों की मिलावट से जिनके बाप को ईश्वरी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सिंह ने मरवा डाला था चढ़ाई की और टोंक वग़ैरः परगनों मे जो बनास नदी के परे थे अमल कर लिया टोंक के गाँव शिवपुरी में एक मंदिर महादेवजी का है जिसकी प्रशस्ति से मालूम होता है कि संवत् १८०३ में माधव सिंह का राज टोंक में था।

तीसरी वेर माधवसिंह ने फिर मल्हार राव हुलकर की मदद से जयपुर के ऊपर चढ़ाई की महाराजा ईश्वरी सिंह ने लाचारी से ज़हर का प्याला पी कर जान दे दी और माधवसिंह ने जयपुर की राजगादी पर बैठ कर मल्हार राव हुलकर को ४ परगने दिए जिन में १ टोंक भी था।

संवत् १८१० में जब मल्हार राव हुलकर दक्खन को चले गए तो महाराजा ने टोंक में अमल कर के भोमगढ़ का क़िला बनाया और भोमियों को सौंप दिया।

संवत् १८१३ में हुलकर ने आकर फिर अमल कर लिया बहुत से भोमिये उनका मुक़ाबिला करके मारे गए।

संवत् १८२३ में महाराजा हुलकर का और १८२४ में महाराजा माधवसिंह का देहांत हो गया जयपुर में पहिले महाराजा पृथ्वी-सिंह और प्रतापसिंह गद्दी पर बैठे मल्हार राव के जानशीन तुक्कूजी हुलकर हुए टोंक में क़बज़ा कभी जयपुर वालों का हो जाता था और कभी हुलकरों का रहता था निदान महाराजा जस-वंत राव हुलकर ने संवत् १८६३ में यह परगना नव्वाब अमीर ख़ां को दे दिया।

——:o:——

शहर टोँक या टूँक।

तँवरों का राज

क्षेमपाल के महल

नोकदार पहाड़ी को राजपूताने में टूँक कहते हैं इस शहर के पास पूर्व को १ एक नोक दार पहाड़ी है उसके नीचे दिल्ली के राजा तुँवर तुंगपाल का काका क्षेमपाल संवत् १००३ में अपने भतीजे से रूठकर आ रहा था उसके रहने से जो बस्ती बसी वह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

टूँकड़ा कहलाई कई वर्ष पीछे राजा तुंगपाल ने (१) ख्वाजा रामसिंह को ढूंढ़ाड़ देश के बंदोबस्त पर भेजा उसने यहाँ छावनी डाल कर राजा से क्षेमपाल की सफ़ाई करा दी और वह दिल्ली को चला गया टूँकड़े में जहाँ उसके महल बने थे वहाँ अब तमोलियों का बास बसता है।

उसके रथवानों और गाड़ीवानों की औलाद के अहीर अब तक टोंक में रहते हैं।

——:o:——

क्षेमपाल की बावड़ी।

क्षेमपालने १ बावड़ी भी बनाई थी वह अब तक मौजूद है और खारी बावड़ी कहलाती है।

ख्वाजा की बावड़ी।

एक बावड़ी ख्वाजा रामसिंह ने बनाई थी वह भंमबोर दरवाज़े के बाहर है और ख्वाजा की बावड़ी कहलाती है।

चोहानों का राज ।

तँवरों के पीछे चोहानों का राज हुआ था मगर उनके समय का कोई निवाण टोंक में नहीं है।

मुसलमानों का राज।

टीला तिवाड़ी की बावड़ी

चोहानों के पीछे मुसलमानों का राज हुआ उस समय में ब्राह्मण लोग टोंक के पटेल थे शहर के बाहर पश्चिम को बहीर

---

(१) ख्वाजा फ़ारसी शब्द है मुसलमानी राज में वज़ीरों को ख्वाजा कहते थे ख्वाजा का अर्थ सरदार और अमीर का है बादशाहों की ज़नानी ड्योढ़ी के दरोग़ा जो नपुन्सक (शंड) होते थे ख्वाजासरा (घर का मालिक) कहलाते थे उसी पर से अब भी उन लोगों को रजवाड़ों में खोजा कहते हैं पर यह आश्चर्य है कि सं० १००३ में जब कि दिल्ली में हिन्दुओं का राज था रामसिंह कैसे ख्वाजा कहलाने लगे थे साँभर इलाक़े मारवाड़ में माथुर कायस्थों का १ घराना ही खोजा कहलाता है वे लोग कहते हैं कि खोजा की पदवी हम को बादशाहों से मिली हुई है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नाम मोहल्ले के पास १ बावड़ी टीला तिवाड़ी के नाम से मशहूर है जिसके पास मकराने के सफ़ेद पत्थर पर १ लेख खुदा है उसमें लिखा है कि संवत् १३३० वैशाख सुदि १२ शुक्रवार को टीला तिवाड़ी शंकर ब्राह्मण शाह (१) गयासुद्दीन बलवान (बलबन) के राज में धाम प्राप्त हो गया।

—:o:—

सोलंखियों का राज।

सूरजलाव और बाईलाव तालाव

राव सुरजन सोलंखी ने अहीरों के बास के पास अपने रहने को कच्चे मकान बनाए थे और सूरजलाव तालाव खुदाया था उसकी बाई (लड़की) चीतोड़ के राना को व्याही थी उसने टोंक से कुछ दूर पूर्व दिशा में अन्नपूरणा देवी की पहाड़ी के नीचे बाईलाव तालाव अपने नाम का खुदाया था जिस को अब बाईयाँ कहते है।

—:o:—

पहाड़ी बावड़ी।

टीला तिवाड़ी की बावड़ी से उत्तर को पहाड़ी की बावड़ी है जिस में खुदी हुई संस्कृत गद्य पद्य की प्रशस्ति से जाना जाता है कि संवत् १४९८ वैशाख सुदि ५ भोमवार को सोलंखी राव सातल, सुरजन, और बनवीर, के राज में रामसुख सरावगी अजमेरा गोती ने मुसाफ़िरों और गाय बैलों के सुख के लिये बाग़ीचा बनाकर यह बावड़ी मीठे पानी की बनाई।

—:o:—

सातोलाव।

शहर के बाहर उत्तर को सातोलाव तालाव राव सातल का

(१) सुलतान् ग़यासुद्दीन बलवन सम्वत् १३२२ से सं० १३४४ तक दिल्ली के तख़्त पर विद्यमान रहा था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बनाया है जिसको चतुर्भुज जी का तालाब भी कहते हैं क्योंकि उसके ऊपर चतुर्भुज जी का मंदिर है।

——:o:——

राव सातल का चबूतरा।

इसी सातो लाव पर राव सातल का चबूतरा भी है जिस पर सती का पत्थर खड़ा है उसमें लिखा है कि राव सातल माह बदि १० संवत् १५३१ को शांत हुआ उसका बेटा बनवीर था।

——:o:——

राव जोगा की इमारतें।

राव जोगा जब गद्दी पर बैठा तो उसने टोंक में अपने वास्ते पक्के महल बनाए उनके गिर्द पहाड़ के नीचे कोट, और कोट में कुवाँ, बनाया और सिया की टेकरी पर चोबुर्जा क़िला और वाराही देवी का मंदिर बनाया टोंक की बस्ती भी बढ़ाई कोतवाली चोतरे के पास जो पुराना दरवाज़ा बना है वह भी राव जोगा के समय का है उस समय शहर पश्चिम को यहीं तक बस्ता था।

टोंक के बाहर १२ खेड़े थे जिनके रहने वाले लूट मार किया करते थे राव जोगा ने उन खेड़ों को उजाड़ कर वहाँ की रैयत को टोंक मे बसा दिया।

राव जोगा का मुसाहिब राधो महेसरी था उसने राधो लाब तालाब शहर के बाहर दक्खिन को बनाया था जिसके पास अलीगंज बसने से अलीगंज का तालाब कहलाने लगा है।

राव जोगा के पुरोहित सांडा ने पश्चिम में सांडा तालाब बनाया था वह अब कच्चा बंदा कहलाता है।

सच तो यह है कि राव जोगा ने ही टोंकड़े को टोंक बनाया और उनकी खुशी में अपने भाटों और बड़वों को (१) ७०० घोड़े बाँटे जिसकी साक्षी का यह दोहा अब तक भाट बड़वे और सोलंखी राजपूत पढ़ा करते हैं।

---

(१) ये ७०० घोड़े जिस झरोखे में बैठ कर राव जोगा ने दिए थे उसमें कोई सोलंखी नहीं बैठता है क्योंकि राव यह कह मरा था कि जिसमें ७०० घोड़े देने की सामर्थ हो वह इस झरोखे में बैठे. यह झरोखा टोंक के कोट में है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जस कारण जोगे दिया कर कर चालक चाव ।
घर घर घोड़ा बखसिया टूंक नगर के राव ॥ १ ॥

यह राव सम्वत् १५७५ में मरा था ।

——:o:——

मानकचौक ।

राव जोगा के कुँवर मानक ने महलों के सामने ज़मीन बराबर कराकर चौक निकाला था जिसको मानक चौक कहते हैं ।

मानक चौक में सरावगियों के ४ शिखरबन्द मन्दिर बहुत अच्छी छटा के बने हैं जिससे उस चौक की शोभा बढ़ गई है मगर उन मन्दिरों में कोई लेख नहीं खुदा है ।

——:o:——

मुग़लों का राज ।

अकबर बादशाह के वक्त में पहिला हाकिम मोमनमनसूर आया उसकी क़बर टोंक के फूटे दरवाज़े के पास है बरसात के दिनों में यहाँ ख़ूब हरियाली हो जाती थी और बृहस्पतिवार को रंडियों का नाच हुआ करता था चादर और मिठाई राज से चढ़ाई जाती थी मगर नव्वाब अमीरख़ाँ के बेटे नव्वाब वज़ीरुद्दौला ने ये बातें बंद करा दी ।

नव्वाब महम्मदख़ाँ औरंगज़ेब के वक्त में हाकिम था कोतवाली चौतरे के पास पुराने दरवाज़े पर एक लेख हिन्दी फ़ारसी में खुदा है जिसमें लिखा है कि सम्वत् १७५१ माह बदी ९ दीतवार सन् ११०८ हिजरी २३ जमादिउलअव्वल को नव्वाब महम्मदख़ाँ ने बहादुरख़ाँ कोतवाल चौधरी गोरधन दास तथा कानूगोयों की सलाह और रैयत की पुकार से, लड़का पैदा होने की मुबारकबाद में जो ४ टके चौधरियों क़ानूगोयों के दस्तूर के कोतवाली में लिए जाते थे और २ टके से १० टके तक और ऊपर ख़र्च होजाते थे, वे सब माफ़ कर दिए मुसलमान ले तो ख़ुदा की और हिन्दू ले तो गाय की क़सम है ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मायले चतुर्भुज जी का मन्दिर ।

शहर में चतुर्भुज जी का राजमन्दिर सोलंखियों का बनाया हुआ था उसको औरंगज़ेब ने गिराकर जुमा मसजिद बनवा दी मगर जब राव बुधसिंह हाड़ा का राज हुआ तो उन्होंने दूसरी जगह चतुर्भुजजी का मँदिर बनाया जो अब तक मौजूद है ।

ऐसे ही गोरेबाबा, कालेबाबा, वग़ैरः के कई मन्दिर हिन्दुओं के और कई सरावगियों के पुराने बने हैं मगर उनमें प्रशस्तियाँ न होने से साल सम्वत् उनके बनने के मालूम नहीं होते ।

——:०:——

जुमा मसजिद ।

शहर में एक पुरानी जुमा मसजिद औरंगज़ेब के राज की बनी हुई है ।

——:०:——

शहर के बाहर

पचकुइयाँ ।

उत्तर को ५ पक्के कुँवे पास २ बहुत अच्छे झाड़ों के झुंड में बने हैं इन में १ राव बुधसिंह हाड़ा बूँदीवाले का बनाया हुआ है यह ठौर देखने योग्य है ।

——:०:——

बारले चतुर्भुज जी का मंदिर ।

यह भी उत्तर को पचकुइयाँ से कुछ दूर पूर्व में है जब टोंक में जयपुर के महाराजा माधवसिंहजी का अमल हुआ था तो आसोज बदि २ सम्वत् १८०७ को मातोलाव तालाब की पाल में से चतुर्भुज जी की मूर्ति गड़ी हुई निकली थी हाकिम ने जयपुर से मंजूरी मगाकर १ बड़ा मन्दिर बनाया और उसमें वह मूर्ति विराजमान की, फिर फागण बदी २ सम्वत् १८५१ में कृपालसिंह ने जो महाराजा तुक्काजी हुलकर की तरफ़ से हाकिम था पंचों से सलाह करके १ मेला चतुर्भुज जी के नाम से जारी किया जो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पहिले तो वैशाख वदी ११ से वैशाख सुदी ३ तक ८ दिन रहता था मगर फिर ज़रूरत देखकर सुदी सातम तक १२ दिन का कर दिया और माल का महसूल भी माफ़ करके ग़रीबों के वास्ते सदाव्रत जारी किया।

यह मेला बड़ा नामी था लाखों रुपये का व्योपार होता था मगर नव्वाब मोहम्मद अली ख़ाँ ने मतद्वेष से मौकूफ़ कर दिया और अलीगंज में नया मेला लगाया मगर वहाँ भी न लगा।

——:o:——

माधोजी का स्थल।

पूर्व में मानकलाव के पास माधोजी का स्थल बहुत मशहूर स्थान है यहाँ माधोजी बैरागी जो गलता (१) के महन्तों के चेले थे जयपुर से आकर तपस्या करने लगे थे उनसे पहिले मियाँ ग़नी भी औरंगज़ेब बादशाह की नौकरी और घरबार छोड़कर यहीं आ बैठे थे दोनों में खूब मेल मिलाप रहा माधोजी के पीछे यह स्थल बना माधोजी की ११ वीं पीढी में अब रघुवर दास महंत हैं वहीं मियाँ ग़नीशाह का तकिया है।

——:o:——

मानकलाव।

स्थल के पीछे मानक सोलंखी का खुदाया हुआ तलाव मानकलाव है इस पर सोलंखियों की सतियों के स्थान हैं पर उन में कोई ऐसा लेख नहीं है जो इतिहास में काम आवे।

——:o:——

अँधेरिया बाग़।

मानकलाव से आगे रसिया की टेकरी के नीचे अँधेरिया बाग़ राव जोगा का बनाया हुआ था इसमें इतने घने रूख थे कि सदा अँधेरा ही रहता था एक समय किसी बादशाह का हाथी

(१) गलता जयपुर से कुछ दूर एक सुरम्य स्थान है जहाँ रामानन्दी सम्प्रदाय के बैरागियों और जयपुर के महाराजों का गुरुद्वारा है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इसमें घुस गया था तो मशालें जलाकर उसको ढूँढ़ा था इस बाग़ में १२ कुँवे थे जिन में से ४ तो अब भी हैं।

—:o:—

रसियों की टेकरी।

यह पूर्व में है और दूर से दिखती है इस पर एक छत्री रसिक बिहारी नाम एक कायस्थ ने बनाई थी उस पर बिजली गिरी और वह गिर पड़ी तब सम्वत् १८५७ में अम्बाजी पंडित ने जो महाराजा हुलकर की तर्फ़ से टोंक का हाकिम था फिर से उसे बनवा दी टोंक में दयाराम नाम एक आशिक़ मिज़ाज (रसिक) कायस्थ रहता था जो रस शृंगार और नायका भेद के दोहे कवित्त तथा छन्द पढ़ता हुआ फिरा करता था उसको एक स्त्री से प्रेम था जिसके देखने को इस छत्री में जा बैठता इससे यह रसिया की छत्री कहलाने लगी और फिर टेकरी का नाम भी रसिया की टेकरी और रसिया की पहाड़ी होगया।

बरसात के दिनों में इस पर चढ़ने से शहर, पहाड़, जंगल, और तालाबों का जोबन खूब नज़र आता है छत्री के पास १ चोबुर्जा और दो तीन टाके भी हैं।

—:o:—

अन्नपूर्णा की पहाड़ी।

यह एक और पहाड़ी रसिया की छत्री और शहर के बीच में है इसको धोलेराव की डूँगरी भी कहते हैं क्योंकि यहाँ पहिले धोलेराव की पूजा होती थी फिर मेड़तवाल कायस्थों ने इस पर सम्वत् १८१६ में अन्नपूर्णा देवी का मंदिर बनाना शुरू किया था जो सम्वत् १८६६ में सम्पूर्ण हुआ इसके पास (१) काशी विश्वनाथ, धोलेराव भैरव, मनसा पूर्ण गणेश, और हनूमानजी के मन्दिर भी हैं।

(१) नव्वाब मोहम्मद अलीख़ाँ ने इस पहाड़ी पर बारूद का संग्रह करके इन देवताओं की पूजन बन्द कर दी थी जिसके वास्ते यह बहाना निकाला था कि जो धूप दीप और आरती की जावेगी तो मेगज़ीन में आग लग जावेगी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बम्बा की देवी।

शहर के बाहर दक्षिण दिशा में भी कई अच्छे २ निवान और (१) देवस्थान थे जिनमें से बम्बा देवी का मंदिर एक बाग़ में है बम्बा की माता की सफ़ेद मूर्ति बहुत सुन्दर बनी है जिसके बाबत् एक मुसलमान ग्रन्थकार ने लिखा है कि मानो यह एक परी है जो हुस्न के ग़ुरूर से बात नहीं करती।

——:o:——

नव्वाब अमीर ख़ाँ का अमल।

नव्वाब अमीर खां ने जिनको यहाँ वाले "मीरख़ाँजी" कहते हैं भोमगढ़ के क़िले में और उसके पास अच्छे २ महल बनाए नज़र बाग़ लगाया अमीरगंज बसाया उनके बेटे नव्वाब वज़ीर-उद्दोला ने वज़ीर गंज बसा कर क़ाफ़ले की मसजिद बनाई।

नव्वाब वज़ीरुद्दोला के बेटे नव्वाब मोहम्मद अलीख़ां ने वज़ीर गंज के आगे अली गंज बसा कर टोंक से दक्षिण को भोम गढ़ तक बराबर बस्ती कर दी।

हाल के नव्वाब मोहम्मद इब्राहीम अली ख़ाँ साहिब और उनके नायब और काका साहिबज़ादा उबैदुल्लाह ख़ाँ साहिब तथा दूसरे साहिबज़ादों ने इन नई बस्तियों में और उनके आसपास कोठियाँ बाग़ और बँगले बनाकर अपनी राजधानी की खूब शोभा बढ़ाई है।

——:o:——

गाँव चँदलाई।

चंदला जाट ने संवत् १०२७ से कुछ पहिले यह गाँव बसाया था और एक तालाब भी अपनी बेटी भालाँ के नाम पर खुदाया था जिसके कीर्तिस्तंभ में एक लेख है उससे मालूम होता है कि चंदला पटेल ने वैशाख सुदि १५ संवत् १०२७ को इस तालाब की प्रतिष्ठा की थी।

(१) इन में से ३ अच्छे २ मन्दिर जो राधोलाव तालाब पर थे नव्वाब मोहम्मद अलीख़ाँ ने सड़क निकालने के बहाने से गिरा दिए थे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पहिले सोलंखियों का कबज़ा रहा फिर नरूका जाति के कछवाहा राजपूतों ने उनसे छीन लिया नव्वाब अमीर ख़ाँ के हुक्म से महमूद ख़ाँ में नरूकों से लेकर ख़ालसे किया।

—:o:—

शिवपुरी।

टोंक से २ कोस बनास नदी के ऊपर राजा शिवदास का बसाया यह शिवपुरी गाँव है जब मारवाड़ के राजा नाहरराव पड़िहार ने पुष्करजी में से रेत निकलवाई थी तब उसकार ख़ाँ दरोग़ा एक गूजर था उसकी औलाद यहाँ के पटेल हैं।

यहाँ महादेव जी का एक शिखरबंद मंदिर एक रात की कमाई में बना हुआ कहलाता है हमीर नाम एक खत्री था एक दिन उससे किसी फ़क़ीर ने कहा कि यहाँ रात को बादशाही लशकर आकर पड़ेगा तो तू मिठाई बनाकर ले जाना और जिस भाव चाहे बेच देना उसने ऐसाही किया बहुत फ़ायदा हुआ रुपये अशरफ़ी के ढेर लग गए फिर फ़क़ीर के कहने से यह मंदिर बनाया और बावड़ी खुदाई जो अब तक मौजूद हैं।

शिवरात्री को शिवपुरी में मेला होता है टोंक के बहुत लोग जाते हैं आते हुए तांगों को खूब दौड़ाते हैं।

—:o:—

बगड़ी।

टोंक से ४ कोस उत्तर को गाँव बगड़ी है (१) राना रायमल की अमलदारी में आबाद हुआ है उस समय टोंक में राज तो सोलंखियों का था मगर अमलदारी चीतोड़ के रानाओं की थी अर्थात् सोलंखी उनके आधीन थे जब राना विक्रमाजीत के पीछे उदैपुर वालों का अमल उठ गया तो आमेर के राजों का कबज़ा गाँव बगड़ी वगैरः में होगया जो सुरतानोत कछवाहों को जागीर में मिला पर जब सम्वत् १६९६ में शाहजहाँ बादशाह के हुक्म से इस ज़िले में राजा रायसिंह सीसोदिया

(१) राना रायमल सम्वत् १५३० से १५६६ तक चीतोड़ की गद्दी पर विद्यमान थे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का अमल हुआ तो उसने बगड़ी वग़ैरः सब गाँव सुरतानोंत कछवाहों के जो बनास नदी के उत्तर में थे अपने मूल पुरुष महाराना साँगाजी की अमलदारी के समझ कर छीन लिए और सुरतानोतों के वास्ते कुछ जीविका कर दी रायसिंह के पीछे बन्दोबस्त न रहने से खैराड़ के मीने लूट मार करने लगे थे इस लिये बादशाहों ने कभी तो राव राजा बुधसिंह से, कभी महाराजा जयसिंह से इधर का बन्दोबस्त कराया महाराजा के समय में सुरतानोतों के गाँव फिर उनको मिल गए सम्वत् १७५२ में ठाकुर झिलाय के छोटे भाई राजावत विजयसिंह ने सुरतानोंतों को निकाल कर बगड़ी में पहाड़ पर पक्का क़िला बनाया जिसका नाम विजयगढ़ रक्खा लोग गाँव को भी विजयगढ़ कहने लगे जो पहाड़ के चौफ़ेर बसता था एक दिन ठकुरानी ने कहा कि गाँव को विजयगढ़ क्यों कहते हैं यह मेरी समझ में नहीं आता ठाकुर ने कहा फिर क्या नाम होना चाहिये ठकुरानी ने अपने हात की बँगड़ी दिखाकर कहा कि यह गाँव पहाड़ पर मेरी इस बँगड़ी की भाँति बसा है इसलिये ऐसाही कोई नाम होना चाहिये ठाकुर ने बगड़ी नाम रख दिया वही बिगड़ कर अब बगड़ी कहलाता है।

६६ वर्ष पीछे सम्वत् १८४८ में महाराजा तुक्कूजी हुल्कर ने झिलाय के ठाकुर बहादुर सिंह से सलाह करके विजयसिंह के पोते ज़ोरावर सिंह से बगड़ी लेली फिर जब जयपुर वालों की अमलदारी हुई तो यह गाँव सिरस के ठाकुर जोरावर सिंह की जागीर में दिया गया सिरस वालों ने नव्वाब की अमलदारी होने पर ७ वर्ष तक मामले का रुपया नहीं भरा जिससे (१) महमूदख़ाँ ने ३ बेर तो बगड़ी को घेर २ कर ४५०००) लिए और चौथी बेर सम्वत् १८७६ के फागण में यह गाँव ही सिरस के ठाकुरों से छीन लिया।

——:o:——

जोँला।

यह भी टोंक से ४ कोस उत्तर में है यहाँ पहिले आमेर के राजा

(१) महमूदख़ाँ नव्वाब मीरख़ाँ जो सेनापति थे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(१) जोणसी ने जोणलाव तालाब बनाया और फिर यह गाँव बसाया जिससे जोँला नाम हुआ और दूदावत राजपूतोँ की जागीर मेँ दिया गया उनसे दासाजी नरूका ने छीन लिया।

नरूका लोग भी आमेर के छुटभाई हैँ राजा (२) उदेकरन के ८ बेटोँ मेँ से १ वरसिंह था उसका महराज, और महराज का नरू हुआ नरू आमेर के राजा से रूठकर चीतोड़ मेँ रानाजी के पास चला गया रानाजी ने उसको १ लाख २५ हज़ार की जागीर परगने (३) जहाज़पुर मेँ दी नरू के २ बेटे लाला और दासा हुए जिन्होँ ने कुछ फ़ौज़ से आमेर के राज मेँ चढ़ाई करके साँभर तक अमल कर लिया आमेर के राजा से (४) और उनसे गाँव पजून मेँ लड़ाई होकर सुलह होगई राजा ने लाला को माचेड़ी का परगना दिया और दासा को कुछ नहीँ दिया इसलिये वह लूट मार करता रहा।

दिल्ली के बादशाह ने यह हाल सुनकर दासा को बुलाया और लूट मार करने का जवाब पूछा तो उसने रोटी माँगी बादशाह ने निवाई और बनेटे वग़ैरः कई परगने ज़ागीर मेँ देकर एक घोड़ा और तीसरे तख़्त के राजा का ख़िताब भी दिया और कुछ फ़ौज भी एक नव्वाब की अफ़सरी मेँ उसके साथ की जिसकी मदद से उसने जोँला वग़ैरः गावोँ मेँ अमल कर लिया।

दासा की गद्दी पर कर्मचन्द बैठा उसके १२ बेटोँ मेँ से बड़ा सेसमल था वह बाप के पीछे राव हुआ और बादशाह की बन्दगी मेँ रहने लगा एक बेर छुट्टी से ज़ियादा दिन घर मेँ रह गया तो बादशाह ने ख़फ़ा होकर बुलाया और एक ऐसे घर मेँ ठहराया जिसमेँ भूत रहता था सेसमल को इसकी कुछ ख़बर न थी इसलिये रात को जब वहाँ सभा जुड़ी तो यह भी उस

(१) राजा जोँणसी सम्वत् १३७४ से १४२३ तक आमेर के राजसिंहासन पर विराजमान रहे ये ऐसा जयपुर की वंशावली मेँ लिखा है।

(२) राजा उदेकरण सम्वत् १४२३ से १४४४ तक।

(३) मेवाड़ देश का १ परगना।

(४) राजा चन्द्रसेन जो सम्वत् १५२४ से १५५६ तक विद्यमान थे ५ निवाई इसी घोड़े की जागीर मेँ दी गई थी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में चला गया भूत ने जो राजों के से क़ीमती कपड़े पहिने हुए बैठा था सेसमल का बड़ा आदर सतकार किया और कहा मैं भी राजपूत हूँ पर कुछ मुद्दत से प्रेत होगया हूँ तुम मेरा गया श्राद्ध करा दो तो मैं तुमको बहुत सा धन बता दूँ सेसमल ने मंजूर किया तब प्रेत ने उसको धन बता दिया।

सेसमल ने उस धन से क़सबे निवाई में गढ़, कुंड, मंदिर, बाग़, छत्री, और कई निवान बनाए और भोग बिलास में पड़ कर भूत के वचन को भूल गया तब एक रात को वही प्रेत आया और सेसमल को जगा कर कहने लगा कि तू भी मर कर प्रेत होगा और यह तेरा राज पाट सब नष्ट हो जावेगा।

इस सराप की बिधि इस तरह से मिली कि सेसमल के बेटा कानजी को गुलेल चलाने की बड़ी लत थी वह हर रोज़ हाथी के मस्तक पर गुल्ले मारा करता था जो महल के नीचे बँधा रहता था।

एक दिन कानजी गरमियों में महल के झरोखे पर सो रहा था हाथी की वहाँ नज़र पहुँची मगर सूँड नहीं पहुँची तब एक गन्ना उठाकर उसके पत्ते कानजी के बालों में बल दे दे कर लपेटे और इस तरह उसको खैंच कर नीचे गिराया और पावों से कुचल डाला कानजी का एक बेटा उग्रसिंह था सेसमल ने उसको अपने जगह बैठाया।

झिलाय का ठाकुर संग्राम सिंह उग्रसिंह की मौसी का बेटा था वह इस प्रसंग से आकर उस बादशाही (१) घोड़े को माँग ले गया और उस पर दूल्हे को चढ़ाकर तोरण मारने भेजा जब दूल्हा उतरा तो (२) चारण घोड़े पर चढ़ गया फिर उसको नेग का रुपया देकर उतारा और घोड़ा निवाई में भेजा मगर उग्रसिंह ने यह कहकर लौटा दिया कि चारण के बैठे

(१) यह घोड़ा वही है जो रासा को मिला था ऐसा समझना असम्भव है हाँ घोड़ा बदलता रहा होगा जब एक मरा तो दूसरा आया होगा।

(२) राजपूतों में चारणों का यह नेग लगता है कि जिस घोडे पर बैठ कर तोरण मारे वह उनको पोलपात (नेगी) चारण ले लेता है जो मांग घोड़े पर बैठकर तोरण मारते हैं तो चारण को उसको नेग देकर घोड़ा उससे वापस ले लेते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जाने से हमारे काम का नहीं रहा फिर संग्रामसिंह उस घोड़े को लेकर दिल्ली में गया तो बादशाही नकीबों ने पहिचान लिया कि यह तो सरकारी घोड़ा है और बादशाह से अर्ज़ की बादशाह ने फ़रमाया कि इस घोड़े की जागीर में जो गाँव निवाई है वह भी हमने इस ठाकुर को दिया उस दिन से निवाई जाती रही और जोंला वग़ैरः गाँव भी झिलाय के राजावत ठाकुरों ने नरूकों से ले लिए इस पर राजावतों और नरूकों में बहुत सी लड़ाइयाँ हुई लदाना, फागी, मोजमाबाद, और उनियारा, जो नरूकों के पुराने गाँव थे वे ही उग्रसिंह के पास रह गए और वह निवाई छोड़ कर उनियारे में रहने लगा।

महाराजा ईश्वरीसिंह और माधोसिंह की लड़ाइयों में और सब जागीरदार तो माधोसिंह से मिल गए राजावत और नरू के ईश्वरीसिंह के पक्ष में रहे इसलिये माधोसिंह ने फ़तह पाने के पीछे जोंले की गढ़ी और निवाई का क़िला "सेजगढ़" झिलाय-वालों से छीन लिया और उनियारे को जड़ पेड़ से उखेड़ कर गधों का हल फिरा दिया राजावतों और नरूकों को जयपुर के राज से निकाल बाहर किया तब उनियारे का राव राजा सरदार सिंह और माचेडी का राव राजा प्रतापसिंह दोनों भरतपुर में चले गए जब वहाँ के राजा जवाहरसिंह जाट ने जयपुर पर (१) चढ़ाई की तो उससे बिदा होकर जयपुर में आ गए और राज की फ़ौज के शामिल होकर जाटों से लड़े फ़तह होने पर उनके क़सूर माफ़ होगए और जागीरें फिर से मिल गई प्रताप सिंह तो (२) अलवर का राव राजा हुआ और सरदारसिंह उनियारे को फिर बसा कर वहाँ रहने लगा।

गाँव जोंले के बाहर उत्तर को एक पत्थर पर मर्द औरतों की मूर्तियाँ खुदी हैं उनके नीचे पुराने नागरी अक्षर और संस्कृत भाषा का लेख खुदा है जिसका यह मतलब है कि सम्वत् ११६३ असाढ़ सुदी ५ को यह स्थान निर्माण हुआ।

---

(१) यह चढाई सम्वत् १८२४ में हुई थी।
(२) अलवर भरतपुरवालों का था प्रतापसिंह ने भरतपुर वालों की हार होतेही जाकर उसमें अपना अमल करलिया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पिराँणा ।

टोंक से ५ कोस उत्तर में पहाड़ के नीचे गाँव पिराँणा बसता है पहिले यहाँ जाटों के कई घर थे जो पहाड़ की आड़ पाकर लूट मार किया करते थे या माल का चौथा हिस्सा लेकर लोगों को जाने देते थे एक बेर अकबर या जहाँगीर बादशाह की कुछ बेगमें उधर से निकलीं जाटों ने रस्ता रोक कर उन से भी अपना कर ले लिया बेगमों ने बादशाह से शिकायत की बादशाह ने मलूकखाँ को भेजा वह रणथंभोर के पास गाँव शेरपुर में आकर ठहर गया और जाटों के डोम को मिलाकर उससे उनकी ग़फ़लत का वक्त पूछा उसने कहा कि भादों बदी १२ को जिसे बच्छबारस कहते हैं ये लोग गाँव के बाहर झूले डालकर निःशंक झूलते हैं और अलगोजे बजा २ कर खुशी करते हैं अब के जब उस दिन सब लोग जमा होजावेंगे तो मैं ढोल बजा दूँगा तुम आ जाना ।

मलूकखाँ ने कहा कि "जो तू ऐसा करेगा तो मैं तेरा बड़ा दरजा करूँगा" डोम ने लालच में आकर उस दिन ऐसाही किया मलूकखाँ ढोल बजता सुनकर चढ़ गया और जाटों को मारकर उनका धन माल सब लूट लाया फिर ढोली को हाथी पर चढ़ाकर कहा ले अब तो तेरा बड़ा दरजा हुआ अब तुझको नमकहरामी की सज़ा भी मिलना चाहिये यह कहकर मार तीरों के उसको छेद डाला और लोगों से कहा कि जो अपने मालिक से दग़ा करे उसकी यह सज़ा है।

उन जाटों के चौधरी जीवन और रायमल थे ये तो मारे गए उनकी औरतें पेट से थीं जब उनके लड़के हुए तो लड़कों के नाम भी जीवन, और रायमल, रक्खे गए। रायमल तो साँगानेर के पास एक गाँव बसाकर वहाँ जा रहा जीवन ने अपने बाप दादों के खेड़ों के पास गाँव बसाया उसका नाम "पुराना" रक्खा जो अब पिराना कहलाता है।

यहाँ सतियों के पत्थरों में सम्वत् १४७८ तक के लेख हैं।

——:o:——

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हतोना ।

टोँक से ४॥ कोस पूर्व और उत्तर के कोने मेँ हतोना गाँव बसता है कहते हैँ कि पहिले राजा इन्द्रसिंह चौहान ने यहाँ "हस्तनापुर" नाम एक बड़ा शहर सम्वत् ६०४ मेँ बसाया था चौहानोँ के पीछे कछवाहोँ का राज हुआ और राजा कुन्तल ने जो सम्वत १३३३ मेँ आमेर की गद्दी पर बैठा था अपने १३ बेटोँ मेँ से भाकरसी को इस हस्तनापुर मेँ क़िलेदार रक्खा फिर राजा कुन्तल का तो देवती के बंद मेँ डूबकर मरना और (१) अलाउद्दीन खिलजी का चीतोड़ पर चढ़ना हुआ जब उसके डेरे हस्तनापुर मेँ हुए तो किसी बात पर तकरार होकर शहर लुट कर उजड़ गया और रैयत निकल कर दूसरे गावोँ मेँ चली गई फिर गूजरोँ ने आकर हस्तनापुर की जगह यह हतोना गाँव बसाया ।

———:o:———

मँडावर ।

टोँक से ५ कोस 'बनास' नदी पर जहाँ यह गाँव बसता है वहाँ पहिले मंडोवर नाम एक नगर उज्जैन के महाराजा विक्रमादित्य के मामा शिव महाराज ने बसाया था शिवमहाराज को कोई चोहान बताते हैँ और कहते हैँ कि जयपुर के राज मेँ सिवाड़ नाम गाँव भी एक बड़ा ठिकाना 'राजावत' कछवाहोँ का है उसी शिवमहाराज का बसाया हुआ है ।

———:o:———

कारोला ।

यह गाँव टोँक से ३॥ कोस पर पहाड़ियोँ मेँ बसता है यहाँ जोगियोँ के मठ हैँ सुजाननाथ जोगी गाँव हतोने मेँ तपस्या

(१) अलाउद्दीन ने चीतोड़ पर चढाई सन् ७०२ हि० सम्वत् १३५९ मेँ की थी और कुन्तल के बेटे जोणसी का सम्वत् १३७४ मेँ आमेर की गद्दी पर बैठना जयपुर की वंशावली से हम पहिले लिखे आए है जिससे राजा कुन्तल का सम्वत् १३७४ मेँ मरना सिद्ध होता है न जाने यह १५ वर्ष का अन्तर राजा कुन्तल की मृत्यु मेँ किस तरह से है ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करते थे उनके चेले दरयाईनाथ गाँव दादिये में धूनी तापते और दूध पीते थे दूसरे चेले चतुरनाथ यहाँ रहते थे उनकी तारीफ़ दिल्ली के तुँवर राजा ने सुनकर जोगियों वाली पहाड़ी का ताम्रपत्र लिख भेजा जो विद्यमान है उसका यह सारांश है कि ५ पहाड़ों के बीच में जो भूमि नदी की है वैशाख सुदी १४ सम्वत् १०४६ चतुरनाथ को (१) दी गई।

चतुरनाथ के चेले कालूनाथ भी करामाती हुए इनकी यह करामात मशहूर है कि सम्वत् १०८० के पीछे (२) बादशाही फ़ौज इधर आई थी अफ़सर को प्यास लगी तो इनकी कुटी देखकर पानी के वास्ते आया इन्होंने उसको एक तूँबा देकर छोटा सा कुआ बना दिया जिससे सब लशकर ने पानी पी लिया अफ़सर ने इस बात से इनको सिद्ध तो समझा मगर इनके बैल देखकर उसकी नीयत बदल गई और लशकर के वास्ते उन बैलों को माँगा इन्होंने कहा कल दूँगा।

दूसरे दिन अफ़सर ने देखा कि एक एक बैल के साथ एक एक शेर भी है इससे डरकर वह चुप चाप चला गया।

कालूनाथ ने कालूलाव तालाब खुदाया है सम्वत् १११० में दिल्ली का बादशाह (३) भी इधर आया और कालूनाथ से मिला उसने ४००० बीघे ज़मीन का पट्टा और १ दुशाला इनको दिया इन्हों ने उसको धूनी में डाल दिया बादशाह यह देखकर नाराज़ होने लगा तो धूनी की राख हटाकर बहुत से दुशाले निकाले और बादशाह से कहा कि अपना दुशाला पहिचान कर ले ले बादशाह लज्जित होकर चल दिया।

कालूनाथ के पीछे प्रभानाथ और खेत्रनाथ अच्छे जोगी हुए हैं।

यहाँ कुछ जोगी घरबारी भी हैं (४) सम्वत् १३५४ में जब

(१) खेद की बात है कि इस ताम्रपत्र की पूरी नक़ल हमको नहीं मिली जिससे राजा का नाम और दूसरा उपयोगी आशय जाना नहीं जाता।

(२) यह तंवरों की बादशाही थी।

(३) तम्बर जाति का राजा।

(४) सही सम्वत् १३५८ है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुलतान अलाउद्दीन ख़िलजी ने रणथंभोर का क़िला तोड़ा था तो ज्ञानसिंह, दरियाई सिंह, और कल्यानसिंह जो इन्द्रसिंह के घराने से थे यहाँ आकर इन जोगियों के चेले हो गए थे यह सुनकर ज्ञानसिंह की ठुकरानी भी आई जोगियों ने उसको जोगन करके ज्ञाननाथ से कह दिया कि इसके पास रहाकर उससे यह घरबारी जोगी हुए।

——:o:——

बंभोर।

टोँक से २ कोस पूर्व में है असल नाम ब्रह्मपुर था क्योंकि ब्राह्मणों का बसाया हुआ गाँव था पर अब तो गूजर रहते हैं नवाब की अमलदारी से पहिले बँभोर और धुआँ २४ गावों से उनियारे के राव राजा के पास ३४००) सालियाने में इस्तमरार थे मगर कई साल तक यह रक़म वसूल न हुई तो राव राजा भीमसिंह ने यह बात ठहराई कि चढा २ रुपया तो हम भर देंगे आगे को सरकार टोँक गाँव ख़ालसे कर ले मगर भोम और हमारा हवाला बहाल रहे इस पर टोँक से बँभोर में तालुक़ेदार भेजा गया जिसको रावराजा भीमसिंह के पीछे रावराजा फ़तहसिंह ने मरवा डाला नवाब अमीरख़ाँ जी ने महमूदख़ाँ को भेजकर गढ़ी ख़ाली करा ली लड़ाई में पाँच सात आदमी दोनों तरफ़ के मारे गए चैत सुदी ५ सम्वत् १८८७ को बँभोर में नव्वाब साहिब का झंडा खड़ा होगया।

——:o:——

अरनियाँ खाती।

यह गाँव टोँक से ६ कोस पूर्व और दक्षिण के कोन में सोलंखियों के वक्त से आबाद है यहाँ सती के १ पत्थर पर लिखा है कि सम्वत् १४८७ पोस बदी ११ सोमवार को राज श्रीवीरमदेव का बड़ा बेटा साँवलदेव शान्त हुआ उसकी स्त्री भानदेवी सती हुई।

——:o:——

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साकना ।

साकना गाँव टोंक से ७ कोस दक्षिण मे है यहा कई शिखरबन्द मन्दिर हैं जिन में १ सतनाथजी का है जिसकी प्रशस्ति में लिखा है कि सम्वत् १६३७ जेठ वदी १ शनि श्री मूल जैनधर्म्म १ सरस्वती गच्छ है इस गच्छ में कुंदकुंदा गुरु हुआ उसके वंश में भट्टार्क श्रीप्रभाचंद, उसका चेला धर्मचन्द, उसका चेला श्रीललितकीर्ति उसका चेला श्रीभवकीर्ति सरजपुर में हुआ सोलंखियों में महाराजाधिराज रावत श्रीनाथ उसका बेटा राव श्रीमहेश दास उसका श्रीमान सिंह ऐसेही कई नाम और भी हैं। जिनसे जाना जाता है कि उस समय यहाँ सोलंखियों का राज था।

गाँव के पास पूर्व को अकबर नाम एक तलाव है जिसको अकबर बादशाह ने चीतोड़ तोड़ने के पीछे (१) रणथंभोर को जाते हुए बनाया था इसीलिये इसका नाम अकबर हुआ है।

——:o:——

धुआँ ।

यह टोंक से ७ कोस दक्षिण में बस्ता है पहिले खेरापुर नाम था धन्ना जाट पटेल गोती जो बड़ा भगवत् भक्त हुआ है वह यहीं रहता था एक बेर कई अतिथि आ गए घर में कुछ नहीं था इसलिये भाग कर पहाड़ की खोह में जा छुपा फिर एक आदमी उसकी शकल का आया और घरवालों से रसोई का सामान अतीतों को दिला गया जब वे लोग रसोई करने लगे तो वही आदमी धन्ना के पास गया और पूछने लगा कि यहाँ क्यों बैठा है धन्ना ने कहा कि अतीतों की रसोई नहीं बन आई उसने कहा कि अतीत तो रसोई कर रहे हैं तेरे घरवालों ने उनको सब सामग्री दे दी तू बाहर निकल कर देख तो सही कि अतीतों की रसोई का धुआँ चारो तर्फ़ फैला हुआ है।

(१) घरू हलों से खेती कराने के कारख़ाने को राजपूताने में हवाला कहते हैं।

(२) अकबर बादशाह रणथंभोर पर सम्वत् १६२५ में गए थे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धन्ना ने निकल कर देखा तो धुआँ ही धुआँ हो रहा था फिर तो वह यह कहता हुआ कि अरे धुआँ होगया धुआँ होगया पहाड़ से उतरा उस दिन से इस गाँव का नाम धुआँ होगया इसका सविस्तर वृत्तांत भक्तमाल में है ।

फिर धन्ना ने अपने खेत की उपज अतीतों के वास्ते संकल्प करदी उसके बेटे पोते भी नहीं लेते थे और राज में भी पहिले तो वह खेत नहीं लटता था मगर अब लाट लेते हैं ।

धुआँ में ज्ञाननाथ जोगी बड़े करामाती हुए जब अल्लाउद्दीन बादशाह देश को जीतता हुआ यहाँ आया तो एक सूखे बड़ को ईंधन के लिये काटने का हुक्म दिया जिसके नीचे में महापुरुष समाधि लगाए बैठे थे जब बादशाही नौकर उसको काटने लगे तो इन्होंने उठकर १ पत्थर उस बड़ के मारा और कहा हरा हो जा, सो तुझ को काटे नहीं उसी दम वह सूखा बड़ हरा होगया बादशाह ने सुनकर बड़ा अचम्भा किया और ज्ञान नाथ को बुलाकर कुछ भूमि इस गाँव की दी जो अब तक बहाल है वह कुवी, वह बड़, और उस में वह पत्थर का निशान भी मौजूद है ।

सोनुआ ।

यह पुराना गाँव टोंक से २ कोस दक्षिण में है इसको सम्वत १२२५ में पृथ्वीराज चौहान के सामंत चाहड़देव के बेटे सोनपाल ने बसाया था सोनतलाई नाड़ी खुदाई थी और सोनपालेश्वर महादेवजी का मन्दिर भी बनाया था यह इलाक़ा उसके बाप की जागीर में था ।

सोनपालेश्वरजी के मन्दिर को हाली देवरा भी कहते हैं उसमें अचिन्तधन (१) जोगी का नाम खुदा है और २ लेख

(१) अचिन्तधन जोगी और जितरावल जोगी ये दोनों जोगी राजपूताना गुजरात आदि में बहुत फिरे थे-जहाँ जहाँ ये गए वहाँ के मन्दिरों में इन्होंने अपने नाम खुदवाए हैं अनेक मन्दिरों में इनके नाम खुदे हुए पाए गए हैं ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नाम खुदा है और २ लेख भी हैं एक का मतलब तो यह है कि संवत् १२४४ जेठ वदी १२ को पृथ्वीराज चोहान के राज में सूग्मा पृथ्वीपाल चाहड़ देव के पुत्र सोनपाल ने सोनपालेश्वर महादेव की प्रतिष्ठा की।

दूसरा लेख मंदिर के भीतर बाँई तर्फ़ काले पत्थर पर खुदा है उस में यह लिखा है कि संवत् १४५६ शाके १३३४ वैसाख सुदि १० बृहस्पतिवार को सातलदेव सोलंखी के राज में सोनवा गाँव में सोनपालेश्वर महादेवजी का मंदिर फिर से बना।

यहाँ १ कुएँ में कायस्थों की कुलदेवी की पूजा होती है जिस को मैड़ते से चुरा कर ले आए थे और इस कुए में डाल दी थी कुए के पासही १ साल है जिसके थंभे में यह लेख खुदा है कि संवत् १३५५ सावन सुदि ४ गुरूवार को सब कायस्थ पंचों ने मिल कर श्रीवरवासन माता जी की साल तैयार की।

दूसरा लेख भीतर की दीवार में है उसका यह आशय है। संवत् १७०५ शाके १५७० सावन वदी ८ चंद्रवार को राजा रायसिंह के राज और दिल्ली के बादशाह शाहजहाँ के समय में कायस्थ गूजर मल साँवल दास, मोहन दास, सादूल, अमरसिंह, और रूप सिंह, भियाँ वंशी (१) गोत मेड़तवाल, सोनवे के रहनेवालों ने यह मकान बनाया।

---

(१) भियाँ वंशी कायस्थ मारवाड़ में बहुत हैं और भिवानी कहलाते हैं मेड़तवाल भी उन्हीं की एक शाखा है जो मेडते में रहने वाले भिवानियों से चली है अब भी कोई २ भिवानी कायस्थ मारवाड़ से सोनवे अपनी कुल देवी की जात देने को जाते हैं भिवानी माथुर जाति के कायस्थ हैं अपने मूळ पुरुष भियाँ जी के नाम से भिवानी कहलाते हैं इन की कथा ऐसी सुनी जाती है कि भियाँ जी के बाप दादे पृथ्वीराज चोहान का काम करते थे तुरकानी होने पर भियाँजी अपनी कुल देवी बरवासन माता को लेकर दिल्ली से भागे थे सुवा व्यास साथ था सोनवे में आकर माताजी को कुए में डाल दिया और सुवा व्यास ने भियाँजी को जनेऊ पहिनाकर तुरकों से जो मारने के लिये पीछे २ आते थे कह दिया कि यह तो ब्राह्मण है मेरा लड़का है और उनकी तसल्ली के लिये साथ भी खा लिया तब वे वापस चले गए भियाँजी और सुवा व्यास नागोर में आकर रहे गूजरमल वगैरः के नाम जो ऊपर के शिलालेख में हैं भिवानियों के कुरसीनामों में भी हमने लिखे देखे हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महदवास ।

टोंक से ४ कोस पर यह भी १ पुराना गाँव है सेसा नाम १ ब्राह्मण गाँव फूलीफली से कुटुंब सहित यहाँ आया और रात को रहा तड़के जब चलने लगा तो उसकी १ गाय जिसका नाम महदी था ब्या गई उसने शुभ समझ कर यह गाँव उस गाय के नाम पर बसाया।

सेसा सिद्ध पुरुष था उसने ३ गाँव में ४ बड़े शिखरबंद मंदिर बनाए हैं १ डोडवाड़ी में, दूसरा उनियारे में चतुरभुज जी का, तीसरा भी उसी गाँव में केशवरायजी का, और चौथा गाँव लांबे में तालाब की पालपर-यह भी चतुरभुज जी का है।

एक बेर अकबर बादशाह की सवारी उस तालाब की पाल पर उतरी थी दूसरी पाल पर सेसा तप कर रहा था बादशाह ने बुलाया तो जिस कपड़े पर बैठा था उसी को पानी पर बिछाकर तालाब से पार उतरा और बादशाह के पास गया बादशाह ने इस करामात से खुश होकर ८१ बीघे ज़मीन इनाम में दी उसको अब तक उसकी संतान भोगती है।

महदवास में बाग़, मसजिद, मंदिर, तालाब बावड़ी, सबही कुछ हैं सतियों के लेखों में १ पुराना लेख भादों सुदि ४ गुरुवार संवत १३८८ का है।

———:o:———

गाँव संडीला ।

टोंक से ४ कोस पर बहुत पुराना गाँव है बरसात में ज़मीन खोदने से छोटे २ सुलेमानी (१) दाने अकसर निकल आते हैं कभी २ कोई लाश भी ज़मीन में से निकलती है जिसका ढाँचा आजकल के आदमियों से दूना ऊँचा होता है और हड्डियाँ भी लंबी चौड़ी होती है आबख़ोरे कूडियो और लोटे भी बहुत दलदार मज़बूत और काच तथा फिटकड़ी के टुकड़े भी निकल आते हैं इस गाँव को उजड़े हुए ४०० वर्ष से सिवाय अरसा हुआ है ऐसा यहाँ वाले कहते हैं।

(१) सुलेमानी याने नर्बदेश्वर जैसे काले रंग के होते हैं मुसलमान फ़क़ीर उनकी माला पहिना करते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नानेर ।

यह गाँव टोंक से ५ कोस पश्चिम और दक्षिण के कोने में बसता है इस गाँव को नगर (१) के राजा नंद ने बसाया था और नदनेर नाम रक्खा था इस राजा का भाई मुचकन्द नगवे (२) में राज करता था उसका कामदार १ नाई था जिसकी मूर्ति अब नगर में है और तमाम हिन्दुस्तान के नाई उसकी पूजा करने को आते हैं

——:o:——

डोड़वाड़ी ।

गाँव डोडवाड़ी टोंक से ३ कोस दक्षिण और पश्चिम के कोने में बसता है बरसात में अकसर सुलेमानी दाने गोल पैसे जिन में चाँदी मिली होती है और मिट्टी के आबख़ोरे निकला करते हैं और कभी २ लाशें भी निकला करती हैं नव्वाब वज़ीरुद्दौला (३) के राज में एक लाश निकली थी तो नव्वाब साहिब उस के देखने को यहाँ पधारे थे ।

इस गाँव में मंदिर सेसा ब्राह्मण का बनाया हुआ खंडर पड़ा है यह ब्राह्मण करामाती था जब एक बेर अकबर बादशाह अजमेर से लौटते हुए टोडे के रास्ते से बनथली और सनथली के जंगल में

---

(१) नगर अब उनियारे के नीचे है ।

(२) नेगवा बूंदी वालों के पास है ।

(३) नव्वाब वज़ीरुद्दौला साहिब के राज में संवत् १९२० के क़रीब सिराज अहमद ने जो नव्वाब के गुरु बने हुए थे यहां एक मंदिर गिरा दिया था जिस से नाराज़ हो कर बहुत से लोग इस गाँव के अजमेर और आबू तक अंगरेज़ों के पास पुकारु गए थे ।

मुसलमानी राज चाहे कैसाही अच्छा रहा हो परन्तु मंदिरों के वास्ते तो वह बुरा ही था नव्वाब वज़ीरुद्दौला बहुत अच्छे रईस थे तो भी उन्हों ने हुक्म दे रक्खा था कि हिंदूलोग न तो नया मंदिर बनाएँ और न पुरानों की मरम्मत करें सो ३० वर्ष तक किसी मंदिर के पावभर भी चूना नहीं लगा था फिर मोहम्मद अली ख़ाँ नव्वाब हुए तो उन्हों ने कई मंदिर तो गिरवा दिए और लावे के १७ ठाकुरों को बुला कर धोखे से मरवा डाला था जिस पेर संवत् १९२५ में गद्दी पर से उतारे गए और टोंक में अजंटी बैठ गई तब अजंटों के हुक्म से पुराने मंदिरों की मरम्मत हुई और कुछ नये मंदिर भी बने ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हाथियोँ का शिकार खेलने के वास्ते पधारे थे गाँव लाँबा इलाके उनियारे में सेसा से मिल कर बहुत प्रसन्न हुए थे उसको रुपया और ज़मीन हमेशा के वास्ते दी थी ।

सेसा ने जो मंदिर इस गाँव में बनवाया था वह ५ शिखर का था मगर औरंगज़ेब बादशाह ने उस को गिरवा दिया उस के बहुत से पत्थर तो महमूद ख़ाँ ने टोंक में मँगवा कर जुमा मसजिद और कचेड़ी में लगा दिए और बाकी थे उन से इसी गाँव में एक तिवारी एक तलाई और नाले का बंद बनाया गया है।

:o:

नयाटीला ।

नया टीला टोँक से ६ कोस उत्तर पश्चिम के कोने में है कहते हैं कि ७७५ वर्ष पहिले एक नाई ने इस गाँव को बसाया था जिससे इस का नाम नाईटोला रखा गया था वही बिगड़ कर नया टीला हो गया है ।

इस में सतियोँ के लेख संवत् १३७९ तक के पुराने हैं एक संस्कृत लेख बहुत सुंदर अक्षरों का है जिससे जाना जाता है कि पहिले दईया राजपूत यहाँ राज करते थे ।

:o:

चोगाई ।

टोँक से ६ कोस उत्तर पश्चिम के कोने में यह गाँव बस्ता है पहिले खारोल बहुत रहते थे १ सती के पत्थर में लिखा है कि संवत् ११५४ कातिक सुदि १४ बुधबार को मेघा जी के साथ नाथी सोलंखनी सती हुई ।

:o:

पीपलू ।

यह गाँव भी टोँक से ५ कोस उत्तर पश्चिम के कोने में ही बस्ता है ४०० घरों की बसती है इस को पीपा नाम एक सेठने बसाया था ।

पीपा बड़ा सेठ था और उस ने गाँव बसा कर एक मंदिर भी चतुरभुज जी का बनाया था जिस की प्रतिष्ठा में दूर २ के ब्राह्मण

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को बुलाकर जिमाया था और एक एक मोहर पाँच पाँच तोले की देकर विदा किया था।

इस मंदिर के ३ शिखर थे और इस के मुक़ाबिले का दूसरा मंदिर हिन्दुस्थान में नहीं था पर औरंगज़ेब ने शिखर तुड़ा कर बिगाड़ दिया इस में एक लेख है जिस से जाना जाता है कि यह मंदिर देव श्री सोम नाथ के पड़पोते गोपाल ने संवत् ११०७ में बनाया था (इस लेख में तो पीपा का नाम नहीं है)।

यहाँ एक तालाव है जिस में हमेशा पानी भरा रहता है और कमल फूलते हैं इस तालाव को भी पीपा सेठ का ही बनाया हुआ कहते हैं और नाम भी इस का पीपोलाव है। पीपलू में पहिले दहिया राजपूतों का राज था और वही यहाँ के भोमिये भी थे।

———:o:———

लाँक।

लाँक यह बहुत पुराना गाँव है असली नाम लंका है किसी राजा ने रामचन्द्र जी के लंका फ़तह करने की यादगारी (राम लीला) में यहाँ लंका बनाई थी उसी के प्रसंग से यह गाँव बसा और लक नाम हुआ इस में भी कुए खोदने से पुरानी लाशें और हड्डियें निकलती हैं ६ वर्ष (अब से ४० वर्ष) पहिले पश्चिम दिशा में एक पत्थर के नीचे से एक लाश निकली थी जो इस समय के आदमियों के डील डौल से दूनी थी वरसात में सुलेमानी दाने और गोल पैसे १। मासे और ४॥ मासे के अकसर निकल आते हैं यह गाँव कई बेर बसा और कई बेर उजड़ा है।

———:o———

परगने गूँगोर।

गूँगोर का परगना टोँक से... कोस पूर्व को खीचीवाड़े में,है खीचियों ने इसे हुलकर को नालबन्दी में दे दिया था महाराज

(१) गूँगोर को खीची राजा गोगाजी ने सं० १४०० के क़रीब बसाया था फिर जब उनकी १५ वीं पीढ़ी में राजा लालसिंह ने राघोगढ़ बसाया तो गूँगोर राघोगढ का परगना होगया और मालवे में हुलकर का जोर होने पर नालबंदी में दे दिया गया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जसवन्तराव हुलकर से नव्वाब मीरख़ाँ जी को जागीर में मिला जब से टोंकवालों के क़बजे में है यहाँ एक क़िला भी है जिसमें खीचियों के महल हैं कहते हैं कि इन महलों में अब तक रानियों के सिर धोने के मसाले की सुगन्ध आती है।

——:o:——

आमटी।

क़िले से पूर्व दिशा में पार नदी बहती है उसके किनारे और पहाड़ के नीचे की ज़मीन को आमेटी कहते हैं यहाँ महाराज (१) विक्रमाजीत खीची का चबूतरा है जिसकी छत्री के थम्भे घड़े घड़ाये तैय्यार पड़े हैं परन्तु हुलकरों का अमल होजाने और (२) राजा बलवन्तसिंहजी का क़बज़ा उठ जाने से छत्री नहीं बन सकी।

इस चौतरे का यह प्रभाव है कि जिसको साँप काटता है उसके गले में महाराज (३) धीरसिंहजी खीची के नाम की चिन्दी बाँध देते हैं जिससे ज़हर नहीं चढ़ता है फिर उसको इस चौतरे पर लाते हैं और गाँव में से नन्दराम ब्राह्मण को बुलाते

(१) खीचियों के बंशावली से मालूम होता है कि राघोगढ़ के राजा धीरतसिंह के बेटे गजसिंह और विक्रमाजीत थे विक्रमाजीत जैपुर महाराज सवाई जयसिंह की सहायता से सम्वत् १७६६ में अपने बड़े भाई गजसिंह को निकाल कर गद्द के मालिक हो गए थे।

(२) बलवंतसिंह बलभद्रसिंह के बेटे और बिक्रमाजीत के पोते थे इनके परपोते राजा जयमंडपसिंह अब राघोगढ़ के राजा हैं।

(३) धीरसिंह वा धीरतसिंहजी को १ नाग ने यह बरदान दिया था कि साँप का ज़हर तुम्हारे नाम की चिंदी बाँधने से नहीं चढ़ेगा सो यह बात अबतक भी सुनी जाती है कि जिसको उस प्रांत में साँप काटता है उसी वक्त पगड़ी फाड़कर धीरतसिंह के नाम की चिन्दी बाधते हैं उसको ज़हर नहीं चढ़ता फिर वह राजा के पास जाता है और उनके हुक्म से चिन्दी तोड़ दी जाती है तब जहर चढ़जाता है और वह बेहोश होकर गिर पड़ता है राजा अपने रुमाल को बल देते जाते और साँप से कहते जाते हैं कि इस को छोड़ दे जो साँप छोड़ देता है तो दोनों बच जाते हैं नहीं तो राजा बल देते २ रूमाल को चीर डालते हैं फिर वह आदमी तो अच्छा होकर अपने घर जाता है और साँप राजा के महल के नीचे मिरा हुआ मिलता है॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है जो (१) जायल के खीचियों के मन्दिरों का पुजारी है वह आकर चिन्दी खोलता है तब उस आदमी को ज़हर चढ़ जाता है नन्दराम साँप को बकराकर उसे अच्छा कर देता है और किसी से कुछ नहीं लेता है इसके दादा परदादा को खीची राजों ने पुन्यार्थ ज़मीनें दी थीं जो अब ज़ब्त हैं और जिनके इतने ताँबापत्र उसके पास हैं।

नं०	नाम राजा	नाम ब्राह्मण	ज़मीनबीघा	सम्वत्
१	महाराज शालिवाहनदेव	लक्ष्मीधर	२५१	संवत १६१४ माघ बदी ३० सोमवार
२	महाराज किशनसिंह	मुरलीधर	६१	संवत् १७०३ माघ सुदी १५
३ *	महाराज छत्रसाह	दलपतराय	८०	संवत् १७०४ कार्तिक सुदी १५
४ *	महाराज भगवन्त सिंह	भट्ट पीतांबर	८५	संवत् १७१७ असाढ़ सुदी ५ मु. खाताखेड़ी
५ *	महाराज किशन सिंह	दलपतराय	२५१	संवत १७२५ बैशाख सुदी १५
६	महाराज किशोर सिंह	मुरलीधर	८१	संवत् १७३६ बैशाख सुदी १२ मु० मऊ
७	महाराज विजय सिंह	मुरलीधर	३६	संवत् १७४१ माघ बदी ३० चन्द्रवार

छारबाग़।

जब गूँगोर में खीची राजों का राज था उस समय का यह छारबाग़ यहाँ है इसमें राजों को दाग़ देते थे उनके छत्री चौंतरे बने हैं आम के पेड़ लगे हैं आसपास पक्का चौमीता है

(१) जायल मारवाड में परगने नागौर का एक गाँव है जहाँ से उठकर खीची राजपूत मालवे वग़ैरः मुलकों में गए हैं।

* इन तीनों ताँबापत्र के बाबत ऐसा कहा जाता है कि बूँदीवालों का राज खीचीवाड़े के पाटस्थान मऊ में हो गया था उस वक्त के हैं।

१०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नवरात्री में राघोगढ़ मकसूदनगढ़ और गढ़े से पुरोहित पुजापे लेकर आते हैं नन्दराम यहाँ का पुजारी है इसको तीनों जगह से ३) महीना और पहाड़ के नाके की राहदारी का महसूल मिलता है।

चौतरों और छत्रियों में सले अर्थात् सतियों के पत्थर हैं जिनमें रावों और सतियों की मूरतें नाम और मिती संवत खुदे हैं ये इतिहास में बहुत उपयोगी हैं इसलिये इनकी नकल वर्षों के अनुक्रम से नीचे लिखी जाती है।

१ संवत् १४१० माघ वदी १० बुधवार गूँगोर राजाधिराज श्री खीची चहुवाण कुँवर किसनासिंह देव तस्य सती बहू तंवरि कल्याण दे जी।

२ संवत १५६८ द्वितीय वैशाख सुदी ८ बुधराजा श्रीधीका दे (शायद गोगदे) खीची हीरा दे सती।

३ संवत् १५६० माघ सुदी १ बुध (आगे पढ़ा नहीं गया)।

४ संवत् १६७५ अगहन वदी ६ सोमवार महाराजाधिराज श्रीराजा (१) सालवाहन जी गूँगोर के।

५ संवत् १७०४ शाके १५५६ वैशाख वदी ८ राम सिंह (और अक्षर पढे नहीं गए) सतियाँ ५ हैं।

६ संवत् १७०७ आसोज वदी १ सोमवार सती महाराजाधिराज महाराज श्री गरीब दास जी (२)।

७ संवत् १७१२ कातिक सुदी ६ रवौ महाराज श्री छत्रसाही तस्य रानी श्री रागेड़ी (आगे अक्षर बिगड़े हुए हैं ४ रानियों की मूर्तियें हैं।

८ सम्वत् १७१७ पोस वदी ७ महाराज श्री दीपसिंहजी (सतियां२)

९ सम्वत् १७२४ चैत वदी ४ वृहस्पति वार राज श्रीरामसिंहजी (आगे अक्षर पढ़े नहीं गए)।

१० सम्वत् १७३७ शाके १६०२ मगसर वदी ७ ता दिन देवलोक हुआ महाराज श्रीसालवाहनजी (आगे के अक्षर और नाम

(१) सालवाहनजी की राजधानी मउ में थी जब वहाँ बादशाही मदद से हाड़ा दुरजन का दखल होगयातो वह गूँगोर में आ रहे थे।

(२) गरीबदासजी सालवाहन के पोते थे और दीपसाह के बेटे थे इनको गूँगोर गद्दी पर शाहजहाँ बादशाह ने बैठाया था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गए हुए हैं यह सालवाहनजी के किसी बेटे पोते का चौतरा है)

११ सम्वत् १७५० शाके १६१५ माह सुदी १ खीची चाहुवाण महाराज श्री गरीब दास जी तत्पुत्र महाराज लालसिंह जी तत्पुत्र महाराज श्रीकुँवर बखतसिंहजी बहू श्रीराठौड़ीजी अलेकदार जी खवास बीदाँजी।

१२ सम्वत् १७५४ शाके १७२० माह सुदी १५ दीतवार खीची चहुवाण महाराज श्रीदीपसाहजी तत्पुत्र महाराज श्रीगरीब दासजी तत्पुत्र महाराज श्रीलालसिंहजी बहूजी राठोड़ राजकँवरीजी १ बहूजी राठोड़ बखतकुँवरीजी २ बहूजी सैंगरी बृज कँवरीजी ३ खवास रामकली ४ बारीजी ५ बरगोजी ६ पाचअचनीजी ७......८ रोक की मानस (१) ६ कंजकलीजी १० चमेलीजी ११।

१३ सम्वत् १७७१ शाके १६३६ आसोज सुदी ११ शुक्रवार महाराजाधिराज गरीबदासजी तत्पुत्र महाराजाधिराज श्रीविजयसिंहजी तत्पुत्र महाराजाधिराज श्रीकोकसिंहजी (२) महासती महाराज श्री बहूजी सोलंखनीजी सरूप कँवरी बेटी जोगीदास की १ महासती महाराज श्रीसँगरणी प्रेमकुँवरी बेटी ठाकुर मधुकररायजी की २ महासती महाराज श्रीचूडावतणीजी हरीकँवरीजी बेटी ठाकुर अदोतसिंहजी की ३ महासती खँवासणी रोती ४ खवासणी सदरी बासीनारयो मिती बैशाख सुदी ११ बृहस्पति वार सम्वत् १८०५ (यह पिछली मिती शायद प्रतिष्ठा की है)।

१४ सम्वत् १७८१ बैशाख सुदी ९ सोमवार खीची चहुवाण महाराज श्रीकिशनसिंहजी तत्पुत्र महाराज करनसाह तत्पुत्र महाराज श्रीरामसिंहजी बहू जी श्रीनाथावतणी परम कँवरजी

शाहपुरा नं० ५

उदैपुर के महाराना अमरसिंहजी के तीसरे बेटे सूरजमल के कुँवर सुजानसिंह को शाहजहाँ बादशाह ने अजमेर के ज़िले में

(१) (रोक की मानस अर्थात् बाहर आने से रोकी हुई दासी)।
(२) ये भी राजा शालिबाहन के पोते और भोपतसिंह के बेटे थे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

से फूलिया का परगना संवत् १६८४ में दिया था वहाँ उन्हों ने संवत् १६८६ में शाहपुरा नाम एक शहर बसा कर अपना राजस्थान बाँधा उस समय से अब तक इतने रईस हो चुके हैं।

१ सुजानसिंहजी-संवत् १७१५ में ५ पुत्रों सहित दाराशिकोह की तर्फ़ से औरंगज़ेब के साथ जंग करके फ़तहाबाद में काम आए।

२ भारतसिंहजी-इन को शाहआलम बहादुरशाह ने संवत् १७६४ में राजा का ख़िताब दिया।

३ उमेदसिंहजी-संवत् १८२५ में महाराणा अरिसीजी की तर्फ़ से उज्जैन में माधोजी सिंधिया से लड़ कर काम आए।

४ रणसिंहजी कुंवर उदोतसिंहजी के बेटे दादा की जगह बैठे।

५ भीमसिंहजी-

६ अमरसिंहजी-इन को महाराणा भीमसिंहजी ने राजाधिराज की पदवी दी।

७ माधोसिंहजी-

८ जगतसिंहजी-

६ लछमणसिंहजी-गाँव कनेछण से गोद आए।

१० नाहरसिंहजी-वर्त्तमान राजाधिराज संवत् १६२७ में धनोप से गोद आए इन के दो कुँवर उम्मेदसिंहजी सरदारसिंहजी, और एक भँवरशत्रुंजयजी हैं।

धनोप

यह एक पुराना शहर शाहपुरे से ८ कोस उत्तर दिशा में है पहिले बड़ा शहर था चारों तर्फ़ मकानों और मंदिरों के बहुत से खंडर पड़े हैं और ज़मीन खोदने से भी मकानों की नीवें और मूर्त्तें निकलती हैं कहते हैं कि इस को धुँधमार नाम एक राजा ने बसाया था।

संवत् १६३० के लगभग ज़मीन में से कई जैन मूरतियाँ निकली थीं जो देवली की छावनी में कप्तान मेवर साहिब ने मँगा ली थीं और उन्हीं के साथ २ शिलालेख भी पुराने नागरी अक्षरों के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निकले थे जिनको पंडित रामकर्णजी ने पढ़ा था परन्तु अब उन लेखों का पता नहीं है कि कहाँ गए।

वे शिलालेख (१) राष्ट्रकूट राजों के समय के थे।

एक तो कई जगह से टूट फूट गया था जिससे पूरा मतलब मालूम न हुआ आदि में ऊँन मोगास्त्याय, और बीच में श्रीवर्द्धमान तथा दंतिवर्म्मा के बेटे बुधराज का नाम पढ़ा गया साल संवत् भी जाता रहा था।

(२) लेख पूरा १७ श्लोकों का था वह पढ़ा गया उसमें महादेवजी की स्तुति के पीछे यह लिखा था कि राष्ट्रकूट वंश में भल्लील राजा हुआ जिसकी सेवा अनेक नरेश करते थे उसका बेटा दंतिवर्म्मा था दंतिवर्म्मा के दो बेटे बुद्धराज और गोविंद थे।

दंतिवर्म्मा ने महादेवजी का ऊँचा और सफ़ेद मंदिर बावड़ी बगीचे सहित बनाया था परन्तु वह उसके मरे पीछे गिर पड़ा था श्रीनन्नभट्टार्क ने उसको खंडित और मूर्ति को अपूज्य देख बुद्धराज से कहा और बुद्धराज ने उसका जीर्णोद्धार कर दिया संवत् १०६३ पौष सुदि ५ सौरे।

राष्ट्रकूटों का राजा यहाँ से कब गया इसका पता नहीं है राष्ट्रकूट भी एक प्रकार के प्राचीन राठोड़ थे और शाहपुरेवालों के हाथ भी धनोप राठोडों से ही आया है। पिछले राठोडों का मूल पुरुष रामचंद्र राठोड़ था और वह जोधपुर के प्रतापी राव मालदेव जी के छुटभाइयों में से था जब राव जी का अमल अजमेर में था तो उन्हों ने धनोप रामचंद्र को दे दिया था।

राव जी का एक ब्याह बूँदी में भी हुआ था वे जब बूँदी में गए थे तो रामचंद्र भी साथ था और उस समय इसका भी ब्याह वहीं हुआ था इसलिये इसने राव जी से अर्ज़ की थी कि मेरे पास

---

(१) राष्ट्रकूटों का दक्षिण और गुजरात में तो बहुत वर्षों तक राज रहना वहाँ के शिलालेखों और ताम्रपत्रों से सिद्ध हुआ मगर राजपूताने में अभीतक दोही स्थानों में उनके समय के लेख पाए गए हैं १ धनोप में २ बीजापुर (मारवाड़) में इन लेखों से जाना जाता है कि सम्वत् ११०० के पहिले से उनका राज मारवाड़ और मेवाड़ के प्रान्तों में भी रह चुका है बीजापुर के लेख को हम मारवाड़ के प्राचीन शोध में छापेंगे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

न तो खाने को कुछ है और न रहने को जगह है इसी पर यह प्राचीन राजधानी राष्ट्रकूटों की इसको मिलगई थी।

फिर जब ६० वर्ष पीछे रानावत सुजान सिंह को इस प्रांत में जागीर मिली तो उनके बेटे पोते इन राठोड़ों से धनोप हथिया लेने की धुन में रहा करते थे निदान रानावत भारतसिंहजी ने इनके यहाँ शादी की और एक बेर फिर धनोप में आए और रात को गढ में सोते २ पेट दुखने का बहाना कर के हाय शिह करने लगे तब उनके आदमी जो बाहर थे अंदर घुस गए और राठोड़ों को निकाल कर गढ़ दाब बैठे धनोप के गढ़ में कल्यान राय जीका पुराना मंदिर है उसके एक थंभे में सम्वत् ११११ का एक बिगड़ा हुआ संस्कृत लेख खुदा है।

धनोप के पास एक पहाड़ी है जिस पर धनोप राय देवी का मंदिर है वहाँ के पुजारी कहते हैं कि वह मंदिर इतना पुराना है कि चितोड़ के रावल समर सिंह और कन्नौज के राजा जयचंद जी यहाँ पूजन करने को आएथे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अरबी भाषा में संस्कृत ग्रन्थ।

[मुन्शी देवीप्रसाद लिखित]

---o---

हमारे यहाँ के विद्वानों के समाज में कभी २ यह चर्चा चला करती है कि अकबर बादशाह की आज्ञा से कुछ संस्कृत ग्रन्थ फ़ारसी भाषा में लिखे गए थे अरबी भाषा में लिखे जाने की बात कभी नहीं सुनने में आती थी परन्तु मुसलमानों की तवारीख़ देखने से जाना जाता है कि अकबर से बहुत पहिले मुसलमानों ने भारतवर्ष के विद्वानों को अपने देश अरब में बुलाकर संस्कृत के अच्छे २ ग्रन्थों का अनुवाद कराया था जिन का ब्योरा लिखने से पहिले हम कुछ पूर्वरूप मुसलमानों की विद्या व्यवस्था का दिखाया चाहते हैं।

मुसलमानों में इतनी तवारीख़ हैं कि खोज करने वालों को उन में से अपने मतलब की हर एक बात का पता लग जाता है।

१३०० वर्ष पहिले जब मुसलमानी मत का नाम भी नहीं था, अरब देश में कविता के सिवाय दूसरी विद्याओं का प्रचार बहुत ही कम था और पढ़े लिखे लोग भी गिन्ती के ही थे।

मुसलमानों के पैग़म्बर मोहम्मद साहिब ही कुछ लिखे पढ़े नहीं थे जिससे आज तक उम्मी (निराक्षर) कहलाते हैं उन के समय तक मुल्क भर में केवल १७ आदमी लिखना पढ़ना जानते थे।

मुसलमानों के हिजरी सन् का प्रारम्भ सावन सुदी ३ संवत् ६७६ को हुआ उसके २५ या ३० वर्ष पीछे से मुसलमानों में पुस्तकें लिखने का प्रचार हुआ और उससे ३० वर्ष पीछे पुस्तकें बनाने की प्रथा चली पहिला ग्रन्थकर्ता अतैये का बेटा हसन था जो सन् ६० या ६१ हिजरी (संवत् ७३७) में रूम की लड़ाई में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

काम आ गया उसके ५ ग्रन्थों के नाम इब्रउलनदीम ने अपने पुस्तक में लिखे हैं ।

पैग़म्बर के पीछे जो लोग उनकी गद्दी पर बैठे वे ख़लीफ़ा कहलाते थे पाँचवें ख़लीफ़ा अमीर मुआविया के हुक्म से शर्यो जरीमी के बेटे उबेद ने दुनियाँ की अनेक जातियों का इतिहास बनाया हिकम के बेटे अबाना ने अरब देश की तवारीख़ और अमीर मुआविया की जीवनी और ईसाई वैद्य इब्रअसाल ने यूनानी भाषा के वैद्यक ग्रन्थों का अनुवाद अरबी में किया।

इब्र जरीह ने जो सन् १५० हिजरी में मरा था सन् १०० हिजरी के पीछे हदीस (पैग़म्बर की वाणी) का संग्रह किया।

फिर इमाम मालिक ने जो सन् १७६ हिजरी में शान्त हुआ था मुसलमानी धर्म्मशास्त्र की पहिली किताब "मुवता" नाम बनाई।

इस तरह अमीर मुआविया और उस के उत्तराधिकारियों के समय में जो बनी उमैया जाति के ख़लीफ़ा कहलाते थे अरबी भाषा में स्वतंत्र ग्रन्थ भी बनने लगे थे और भाषाओं के उपयोगी ग्रन्थों का तरजुमा होना भी शुरु हुआ था।

बनी उमैया के पीछे सन् १३७ में अब्बासी जाति के ख़लीफ़ाओं का उदय हुआ जिनमें ख़लीफ़ा हारूनरशीद और मामून रशीद बड़े ही गुणग्राही और विद्यारसिक थे उन के समय में अरबी भाषा नाना प्रकार के भूषणों से भूषित हो गई थी जिसका एक अमूल्य आभूषण संस्कृत ग्रन्थों का अनुवाद भी था।

अब्बासी ख़लीफ़ाओं ने अपनी सुविख्यात राजधानी बग़दाद में एक बड़ा कारख़ाना परभाषाओं की पुस्तकों के उलथा कराने का खोल दिया था जिस का नाम बैतुलहिकमत (विद्या भवन) था और देश के विद्वानों को बुला कर उस में रक्खा था और अरबी भाषा के बड़े २ पण्डितों को इन विद्वानों की विद्या के ग्रन्थों को पढ़कर और समझकर अपनी भाषा में लिख लेने के काम पर लगाया था सो उनके इस उद्देश्य से सैकड़ों हज़ारों रूमी, यूनानी, मिश्री, सुरयानी, इबरानी, ईरानी, और संस्कृत भाषाओं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के ग्रन्थों का उल्था अरबी में हो गया था जिन में से देववाणी संस्कृत का प्रभाव अरबों पर ऐसा पड़ा था कि बहुत दूर होने पर भी उन्हों ने विपुल द्रव्य व्यय करके हिन्दुस्तानी पंडितों को भी अपने देश में बुलाया और अपने यहाँ के होनहार विद्यार्थियों को भी विद्या सीखने के लिए भारत में भेजा था मनसूर ख़लीफ़ों के दीवान ख़ालिद बिने जाफ़र ने काश्मीर जाकर संस्कृत पढ़ी थी और ख़ालिद बरमकी के बेटे "याहा" ने अपना एक एजेन्ट ही हिन्दुस्तान में रख दिया था जो हिन्दुओं की विद्या और कला कौतुक सम्बन्धी पुस्तकों को ढूंढ २ कर अरबी में आप भी तरजुमा करता था और अरब के सरदारों को भी तरजुमा करने का उत्तेजन देता था।

तवारीख़ में उन ग्रन्थों के नाम भी लिखे हैं जिन का भाषान्तर संस्कृत से अरबी में हुआ था परन्तु अरबी लिपि में संस्कृत शब्दों के सही न लिखे जाने से उनका रूप ऐसा बिगड़ गया है कि अब वे संस्कृत नहीं जान पड़ते।

यह सम्भव है कि ठेठ में तो नाम सही ही लिखे गए होंगे जिन के सही पढ़े जाने के लिये भी कुछ संकेत कर दिए होंगे जैसे कि आईन अकबरी में संस्कृत शब्दों के लिए किए गए हैं परन्तु सैकड़ों वर्षों तक नक़ल दर नक़ल होने में ग़लतियाँ होती रहने, और अब्बासी ख़लीफ़ों के पीछे मुसल्मानों में संस्कृत का प्रचार न रहने से यह रूपान्तर होगया है।

और ऐसा होना सम्भव भी है देवनागरी लिपि इतनी विशुद्ध है तो भी मुसल्मानों के नाम जो राजतरंगिणी में लिखे हैं वैसेही अशुद्ध हो गए हैं।

कुछ हो वे नाम इस प्रकार के हैं।

बुध की किताब।

बूयास्थ।

यूयास्थ।

बलाहर।

अदबुल हिन्द।

सिंधबाद बड़ा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सिंधवाद छोटा
हाबल।
आदम के उतरने का वृत्तान्त हिन्दू मत के अनुसार।
तरक (तर्क)।
दबक।
हिन्दी खेल चाल।
सावीरम।
लड़ाई और तिरने की किताब।
तदबीर, शानाक (चाणक्य) हिन्दी की किताब।
आथर।
वैद्या।
ज़जरूल हिन्द।
सख़ी।
बख़ील।
सकरसदी।
किताबुल अदब।
कलेजा (कुलैला) दमना (कर्कट दमनक)।

ग्रन्थकारों के नाम।

सिसा-हिन्दुस्तान का सुविख्यात विद्वान था अरबी में इसके बहुधा ग्रन्थ लिखे गए इसने एक ख़ास किताब में समेरेज़म की लिखी थी उसका भी तरजुमा इब्नुलनदीम ने किया था।

१ कंका (गंगा)
२ जोदर।
३ संझल।
४ नहक।
५ राजा।
६ सक्का।
७ दाहर धीर।
८ आँकू।
९ जंकल।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१० अरीकल ।
११ जबहर ।
१२ अंदी (आनन्दी) ।
१३ जवारी ।

ये उन पण्डितों के नाम हैं जो हिन्दुस्तान से बग़दाद में चले गए थे और वहाँ प्रतिष्ठापूर्वक रहते थे ।

१ मनका ।
२ शाली ।
३ भल्ला
४ मारकमर
५ सिंघवार

इससे एक अवसर पर अबुल अश अब ने पूछा कि हिन्दू में व्युत्पन्नता की क्या व्याख्या है तो भल्ला ने उस को इस विद्या की एक पुस्तक दी जिस को उस ने बड़ी रुचि से पढ़ी और तुरंत उसका तरज़ुमा अरबी में होगया ।

६ हकीम धनधन, यह बग़दाद के मेडिकल अस्पताल का आला अफ़सर था ।

कलेला दमन ।

संस्कृत पुस्तकों में, कलेलादमना अरबों को बहुत पसंद आई उन्हों ने उसके कई तरजुमें अरबी भाषा की गद्य और पद्य में किए ।

गद्य में पहिला तरज़ुमा मकना के बेटे अबदुल्लाह का, और दूसरा मरीद असवद का है मरीद असवद को मुतवक्किल खलीफ़ा ने ख़ास इसी काम के लिए ईरान से बुलाया था ।

इन के पीछे अरब के कवियों ने इस ग्रन्थ को पद्य के साँचे में ढालकर अपनी काव्यरचना की प्रतिभा दिखाई जिस में अबान बिने अब्दुल हमीद रकाशी, अलीबिने दाऊद, और बशर-बिने मोतमद का नाम इस काम के वास्ते ज़ियादा मशहूर है ।

अरबी कलेलेदमना के तरज़ुमे यूरप के कई ज़बानों में भी हुए हैं जिन से इस संस्कृत ग्रन्थ का नाम अरबों की बदौलत सब नई पुरानी दुनिया में रोशन हो गया है ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संस्कृत ग्रन्थों के अरबी तरजुमों से एक समय मुसल्मानों में संस्कृत सीखने का इतना कुछ उत्साह उत्पन्न हो गया था कि वे अरब, ईरान, और तुरान से काशी और काश्मीर में आकर बरसों रहते थे और शास्त्रों को पढ़कर उन के सारांश अपने देश वालों के वास्ते लिख ले जाते थे हम को कई ऐसे विद्वान मुसल्मानों के नाम भी मालूम हैं जिन को फिर कभी एक उचित लेख में लिखेंगे-अभी तो इस लेख को भारत के सुयोग्य पंडितों से यह प्रार्थना करके समाप्त करते हैं कि जिन ग्रन्थों और ग्रन्थकारों के नाम अरब के इतिहासवेत्ताओं ने लिखे हैं उन के शुद्ध रूप निश्चय करने और यथार्थ पता लगाने का यथासाध्य प्रयत्न करें और उस में सफलता प्राप्त होने पर समाचारपत्रों के द्वारा सर्व साधारण को सूचित कर दें। यदि वे मूल ग्रन्थ न मिलें तो उन के अरबी उल्थे भी जो मिल सकें तो वे ही उनके प्रतिनिधि होने का काम दे सकेंगे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अकबर के राजत्व काल में हिन्दी ।

(पण्डित सूर्यनारायण दीक्षित बी० ए० लिखित ।)

हिन्दी की उत्पत्ति ।

—:o:—

हिन्दी भाषा की जननी सौरसेनी प्राकृत है। संस्कृत भाषा से पाली द्वारा प्राकृत भाषा की उत्पत्ति हुई। सौरसेनी, अर्द्ध मागधी और मागधी यह तीन प्राकृत के प्रधान भाग हैं। पहिली संयुक्त प्रदेश आगरा और अवध के पश्चिम भागों में, दूसरी पूर्वीय, और तीसरी विहार की ओर बोली जाती थी। यद्यपि हिन्दी उपरोक्त प्राकृत के तीनों भागों से उत्पन्न हुई तथापि उसमें क्रियाओं के रूप और व्याकरण के नियम अधिकतर सौरसेनी प्राकृत ही से लिए गए हैं।

भाषा का शनैः शनैः रूपपरिवर्तन ।

भाषा भी प्रकृति की अन्य पद्धतियों की भाँति धीरे धीरे ही अपना रूप बदलती है एकदम से उस में कोई रूपान्तर होता नहीं पर हाँ काल पाकर उसमें इतना अधिक परिवर्तन होजाता है कि बहुत ध्यान देकर देखने से पूर्व रूप से सम्बन्ध समझ में आता है वाक्य रचना की प्रणाली तक बिलकुल बदल जाती है। मुहावरों का क्या कहना वह तो रोज़ही बदला करते हैं। शब्द भी समय की रगड़ से घिस घिस कर ऐसे हो जाते हैं कि उनके पूर्व रूप का बतलाना प्रायः कठिन हो जाता है। "भाषा धारा में बहते हुए वाक्यों की तुलना उन पत्थर के टुकड़ों से होसकती है कि जो किसी पहाड़ी नदी की धारा में पड़ कर बहने लगते हैं। पहिले तो वह धार दार और चौखूटे होते हैं पर ज्यों २ नदी की धारा आगे को बढ़ती जाती है त्यों २ उनकी नोकें घिसती जाती हैं" यहाँ तक कि कुछ दूर बढ़कर 'गोल मोल' शालिग्राम की बटिया हो जाते हैं।" हिन्दी ने भी योंही रूप परिवर्तन किया-प्राकृत से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चन्दबरदाई की हिन्दी हुई उससे बिगड़ते २ (या बनते २) आज कल की हिन्दी हो गई। आज कल की हिन्दी और प्राकृत में इतना भेद है कि वह एक पृथक भाषा सी मालूम पड़ती है। परन्तु चन्द के समय की हिन्दी*और प्राकृत में इतना भेद नहीं था उस समय की हिन्दी को प्राकृत की बच्ची कहना कोई कठिन बात नहीं है प्रायः हर एक भाषा में यह पाया जाता है कि आदि में उसमें पद्यही की सृष्टि होती है।

हिन्दी भाषा में सबसे पहिले पद्य की सृष्टि।

छोटा बालक अपनी प्रसन्नता को गा २ कर प्रकट करता है चढ़ती जवानी में चित्त में उठती हुई उमङ्गों को मनुष्य पद्य-द्वाराही प्रकाशित करता है। जो व्यक्ति जीवन में सत्य है यहाँ पर वही व्यक्ति समुदाय के जीवन में भी सत्य है। एक जाति विशेष अपनी प्रथम कवित्व प्रतिभा को पद्यही में स्फुटित करती है। इसालिये क्या आश्चर्य यदि हर एक भाषा में सब से प्रथम पद्य ही की सृष्टि हो। पद्य-सृष्टि के बाद कालान्तर में गद्य की भी रचना होने लगती है। परन्तु हमारी प्राचीन भाषा संस्कृत में गद्य की ओर अधिक ध्यान नहीं दिया गया, कादम्बरी आदि कथाओं और सूत्रग्रन्थों को छोड़ कर बहुत कम गद्य पुस्तकें संस्कृत में पाई जाती हैं इस ध्यान न देने के कारण, कतिपय महाशयों के मत में यह है कि गद्य लिखना बड़ा सहल है इसलिये ऐसे सहल कामों का करना हमारे पूर्वजों ने अपने गौरव के विरुद्ध समझा परन्तु यह कारण ठीक नहीं मालूम पड़ता क्योंकि गद्य लिखना कोई सहल बात नहीं है कारलाइल और रसकिन की गद्यरचना को कौन सहल काम बतलाएगा? गद्य में भी काव्य लिखा जा सकता है और जितनी कठिनाई काव्य को समुचित शब्दों द्वारा प्रकाश करने के लिये पद्य में होती है उतनी

---

* मेरी समझ में चन्द की हिन्दी एक प्रान्त के एक जाति विशेष की भाषा है। आज भी राजपूताने के भाट इसी भाषा में कविता करते हैं। इससे भाषा के परिवर्तन का पता ठीक नहीं लगता यही दशा पद्मावत और इन्द्रावत के भाषा में है जिसमें तीन सौ वर्ष का अन्तर है। सम्पादक पत्रिका।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ही-यदि उससे बढ़कर नहीं-गद्य में होती है। वास्तविक कारण यह मालूम पड़ता है कि प्राचीन काल में प्रचलित शिक्षण मीमांसा के अनुसार जो कुछ पढ़ा जाय उसको कण्ठस्थ करलेने की रीति थी छंदों का कण्ठ करलेना गद्य को कण्ठ करलेने से बहुत सहल है इसलिये सँस्कृत भाषा की वे पुस्तकें भी कि जिनको गद्य में लिखना उचित था (ज्योतिष और गणित आदि की पुस्तकें) छन्द ही में लिखी जाने लगीं।

अकबर के समय का हिन्दी गद्य।

हिन्दी के लिखने वालों ने भी उसी परिपाटी का अनुसरण किया-इसका परिणाम यह हुआ कि हिन्दी के पद्य की तो खूब उन्नति होती रही परन्तु गद्य की सदा अवनति ही रही-यहाँ तक कि अकबर के समय में जब कि पद्य की भाषा इतनी प्रौढ़ और सुन्दर होती थी हिन्दी गद्य में कोई एक वाक्य भी अच्छा नहीं लिख सकता था-उदाहरण के लिए तुलसीदास का लिखा हुआ एक पंचनामा देखिए-यह पञ्चनामा नागरी प्रचारिणी सभा द्वारा सम्पादित रामचरितमानस में, तुलसीदास के जीवन चरित्र में छपा है तुलसीदास लिखते हैं :—

'संवत् १६६६ समए कुआर सुदि तेरसी वार शुभ दीने लिषीतं पत्र अनंदराम तथा कन्हई के अंश बिभाग पुर्वमु आगे जे आग्य दुनहु जने मागा जे आग्य भै शे प्रमान माना दुनहु जने बिदित तफसीलु अंश टोडर मलुके माह जे बिभाग पदु होत' *

अब गद्य की इस भाषा को तुलसीदास ही की लिखी हुई रामचरितमानस की भाषा से मिलाइए !!! कितना भेद है, कहाँ वह सुघरता और कहां यह भद्दापन इसी प्रकार गद्य की ओर ऐसी उपेक्षा से वह अपनी, आरम्भिक दशा ही में पड़ा रहा और पद्य की ओर इतना ध्यान देने से वह दिनोंदिन प्रौढ़ होता गया-गद्य को लोग इतना भूल गए कि जब उन्नीसवीं शताब्दी के आदि में लल्लूलाल

* यह भाषा गोसाईं जी की नहीं है यह वादी प्रतिवादी की भाषा है पं० सं०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और पण्डित सदल मिश्र ने गद्य में कई पुस्तकों की रचना की तो लोगों ने समझा कि एक बिलकुल ही नई भाषा की सृष्टि हुई है।

हिन्दी के आदि कवि।

निदान हिन्दी में सबसे प्रथम पद्य ही की सृष्टि हुई और सन् १८०० ई० तक हिन्दी की पुस्तकें अधिकतर (१) पद्यही में लिखी जाती रहीं-आजकल पृथ्वीराज रायसे के रचयिता चन्द बरदाई और जागनिक कवि ही हिन्दी पद्य के आदि कवि माने जाते हैं परन्तु शिवसिंह अपने शिवसिंह सरोज की भूमिका में लिखते हैं कि "चन्द कवि से आगे बहुतेरे अच्छे २ कवीश्वर हो गुजरे हैं... किताब राजिस्तान में हमको अवंतीपुरी के प्राचीन एक इतिहास में लिखा मिला कि सम्वत् सात सौ सत्तर में राजा मान अवंतीपुरी के राजा भोज के पिता काव्यशास्त्र में महानिपुणथे-उन्होंने संस्कृत अलङ्कार विद्या को पुष्य नामे एक बन्दिजन को पढ़ाया पुष्य कवि ने संस्कृत अलङ्कार को भाषा दोहरों में वर्णन किया उसी समय से भाषा काव्य की जड़ पड़ी औकुछ आश्चर्य नहीं है कि उन्हीं दिनों किसी किसी कवि लोगों ने नायका भेद इत्यादि में भाषा ग्रन्थ बनाए हों परन्तु राजा भोज के समय में संस्कृत विद्या के अधिक प्रचार होने के कारण भाषा यथावत उन्नति को प्राप्त न हुई होवे संवत् ८१२ में राउत खुमान सिंह गुहलौत सिसौदिया महराजे चित्तौर गढ़ भाषा काव्य के बड़े अधिकारी हुए सम्वत् ६०० में खुमान रायसा नाम ग्रन्थ भाषा में अपने नाम नाना छन्दों में बनाया तेहि पीछे सम्बत ११२४ (?) में चन्द कवीश्वर ने पृथ्वीराज रायसो भाषा में बनाना प्रारम्भ किया......इन्हीं दिनों (१) जगनिक और केदार कवीश्वरों ने चंदेलों और गोरियों के प्रबन्ध भाषा में रचे" पर पुष्य आदि कवियों के ग्रन्थ आज कल प्रायः अप्राप्य हैं इसलिये चन्द और जगनिक

(१) 'अधिकतर' क्योंकि सन् १८०० ई० से पहिले की लिखी हुई दो एक हिन्दी गद्य की पुस्तकें मिलती हैं परन्तु वे भद्दी ब्रजभाषा में लिखी हुई हैं इसलिये उनकी गणना गद्य साहित्य में नहीं होसक्ती।

(१) कहते हैं कि इसी कवि ने सब से पहिले हिन्दी भाषा में आल्हा छन्द की रचना की।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को हिन्दी का आदि कवि समझना कुछ असंगत नहीं-इन के बाद फिर भाषापद्य दिन २ धीरे २ उन्नत होता गया।

——:o:——

हिन्दी पद्य की उन्नति

"सम्वत् १२२० में कुमारपाल खीची महाराजे अनहलवारा के नाम एक ग्रन्थ भाषा में कुमारपाल चरित्र नाम बनाया गया जिस में महाराज कुमारपाल के जीवन चरित्र और वंशावली वर्णन हुई है संवत् १३५७ में चन्द कवीश्वर वंशोद्भव सारंगधर वंदीजन (ने) जो काव्यविद्या में महान पण्डित था हमीररायसा और हमीर काव्य (१) ये दो ग्रन्थ भाषा में बनाए......संवत् १४५७ में महाराना कुम्भकरण चित्तौर गढ़ के राना ने गीत-गोविन्द को संस्कृत से भाषा करि नाना छन्दों को प्रगट किया उन की रानी (१) मीराँबाई ने कवि लोगों का ऐसा मान किया कि उस समय भाषा काव्य बनाने का हिन्दुस्तात में बड़ा चरचा होगया......संवत् १५०० में भाषाकाव्य सारे हिन्दुस्तान में ऐसा फैला कि गाँव २ घर २ कवि हो गए" (शिवसिंह सरोज) निदान भोज के समय से लेकर ईसा की सोलहवीं शताब्दि के आदि तक हिन्दी कविता की बराबर धीरे २ उन्नति होती रही परन्तु सोलहवीं सदी के मध्य में अर्थात् अकबर के शासन काल में हिन्दी कविता की बहुत ही उन्नति हुई इतने दिनों से जो कविता कली बढ़रही थी वह एकदम से खिल गई खिलकर चतुर्दिक् सौरभ सञ्चार करने वाले सुन्दर फूल में परिणत हो गई॥

——:o:——

(१) मीराँबाई का विवाह मेवाड़ के सुप्रसिद्ध राणा साँगा (संग्राम सिंह) के कुँवर भोजराज से हुआ था जो कि कुँवरपने ही में मीराँ को विधवा बना गए थे। कर्नल टाड ने राणा कुम्भकरण के मन्दिर के पास मीराँबाई का मन्दिर देख कर भ्रम से मीराँ जी को राणा कुम्भ की स्त्री लिख कर बड़ा गड़ बड़ मचा दिया था परन्तु इतिहास से वह बार्ता सर्वथा भ्रमपूर्ण सिद्ध हो गई"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अकबर के समय में हिन्दी की आशातीत उन्नति के कारण

अकबर के समय में इस एकायक होने वाली हिन्दी की उन्नति के कारण ढूँढ़ने के लिये बहुत दूर नहीं जाना पड़ेगा कुछ ही विचार से इस के कारण मालूम हो जायँगे।

——:o:——

प्रधान कारण शान्ति सुख

अकबर के पहिले किसी मुसलमान सम्राट के शासन काल में भारतवर्ष ने इतना शान्ति सुख नहीं भोगा उसके पहिले मुसलमान बादशाह प्रायः लुटइरे ही रहे—आए लूटा और अपने घर का रास्ता लिया कुतबुद्दीन से लेकर जिन्हों ने यहाँ बैठ कर राज्य भी किया उन को प्रजा के सुख और शान्ति की कुछ पर्वाह ही न थी अपने ऐशोआराम में दिन काटते थे आसपास के राज्यों को लूटकर अपना घर भरते थे या और अन्य अधिक बहादुर लुटेरों द्वारा स्वयं लूटे जाते थे उन को, कहना चाहिये कि, इसका ध्यानही नहीं था कि भारत का राज्य हमारेही वंशधरों के हाथ में रहे यदि ऐसा होता तो वे प्रजाके सुख और शान्ति का भी कुछ ख्याल रखते क्योंकि राज्य को दृढ़ बनाने के लिये प्रजा के सुख और शान्ति से बढ़ कर और कोई दूसरी नींव है ही नहीं उन्हें केवल अपने स्वार्थ और इन्द्रिय सुख से काम था निदान ऐसे बादशाहों और उनकी शासन प्रणालियों से उत्पन्न हुई रोज़मर्रा की लड़ाइयों और ख़ून ख़राबियों से हिन्दू और भारतीय मुसलमान दोनों उकता गए थे दोनों ही चाहते थे कि किसी प्रकार शान्ति स्थापित हो और हमलोग उसका सुख भोगें अकबर का भारत के राज्यासन पर आना यथा समय हुआ एक तो स्वयं हिन्दू और मुसलमान प्रजा शान्ति के लिये ऊब रही थी और दूसरे अकबर भी शान्ति प्रिय सम्राट था और दोनों जातियों ने मिलकर उसे शान्ति स्थापन में मदद दी मुग़लों में सबसे प्रथम अकबर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के पितामह बाबर ने भारतवर्ष पर चढ़ाई की, यहाँ आकर बहुत सा देश उसने जीत लिया परन्तु उसमें देश जीतने ही की शक्ति और बुद्धि थी, राज्य स्थापन करने और उसके सम्यक् शासनकी नहीं उसके बाद उसका पुत्र हुमायूँ शासन करने लगा परन्तु वह एक बड़ा कमज़ोर बादशाह था उसे भी शासन करने का ढंग नहीं मालूम था जो गुण बाबर में थे उनका भी उसमें अभाव था इसलिये उसके काल में भी भारतवर्ष में मुग़लराज दृढ़ न हो सका परन्तु अकबर में उसके पितामह के सारे गुण मौजूद थे और उसके दोषों का अभाव था इसलिये उसने मुग़ल राज्य को दृढ़ करने में सफलता पाई. सन् १५५६ ई० में अकबर राज्यासन पर बैठा उस समय वह निरा बालक ही था। राज्य का भार बैरम ख़ाँ के सुपुर्द था स्वयं अकबर उसके हाथ में था बैरम खाँ में राजनैतिक दक्षता बहुत थी परन्तु उसके न्याय में क्रूरता और कुटिलता का बड़ा भारी अंश था उसका स्वभाव बड़ा उद्धत और सन्देही था न्यायपरायण और दयालु अकबर को यह बात अच्छी नहीं लगी अपने राज्यासन् पर बैठने के थोड़े ही दिनों बाद उसने राज्य की 'बागडोर' अपने हाथ में लेली पहिले तो बैरम ख़ाँ ने कुछ उपद्रव मचाया परन्तु अन्त को उसे अकबर की शरन आना पड़ा और अकबर ने उसके अपराधों को क्षमा कर दिया और उसे मक्का की ओर बिदा किया परन्तु बैरम ख़ाँ रास्ते ही में (गुजरात के निकट) एक मुसलमान के हाथ मार डाला गया इस घातक के पिता का बैरम ख़ाँ ने एक युद्ध में अपने हाथों वध किया था बालक बादशाह को कमज़ोर जान देश भर में लोगों ने उपद्रव मचा दिया जिधर देखिए उधर उपद्रव का झंडा फहराने लगा सारे देश में अराजकता फैल गई उस पर 'तुर्रा' यह कि जो सेनापति उपद्रवियों को शान्त करने के लिये भेज़े जाते उनमें के अक्सर उपद्रव को तो शान्त कर देते परन्तु स्वयं मालिक बन बैठते और अकबर के शासन की कुछ पर्वाह न करते परन्तु साहसी अकबर इन बातों की उपेक्षा करनेवाला नहीं था उसने स्वयं एक २ बाग़ी को परास्त किया और देश में शान्ति स्थापित की इस समय से अकबर के मरणकाल पर्यन्त एकाधबार को छोड़

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कर इस प्रान्त की शान्ति भङ्ग हुई नहीं हाँ अकबर के अन्तिम दिनों में उसके पुत्र युवराज सलीम (बादशाह जहाँगीर) के बखेड़ा उठाने पर देश में कुछ गड़बड़ ज़रूर हुआ परन्तु वह थोड़े ही दिनों के लिये था यों तो अकबर सदाही अन्य देशों पर चढ़ाइयाँ किया ही करता था कभी बंगाल और उड़ीसा के पठानों से छिड़ जाती थी कभी काश्मीर और काबुल पर चढ़ाई होती थी जिसमें कि सहस्त्रों मनुष्यों की जान जाती थी परन्तु अकबर के शासन काल भर इस प्रान्त में अधिकतर शान्ति ही रही ॥

इस शान्ति का फल उस समय में हिन्दी की उन्नति होना है।

:o:

देश में शान्ति होने से काव्य और साहित्य की उन्नति होती है।

प्रकृति का यह नियम है कि जब मनुष्य को अपने जानोमाल की ओर से निश्चिन्तता हो जाती है जब उसे शारीरिक आवश्यकताओं की खोज और बखेड़ों से अवकाश मिलता है तब उसे उन बातों की ओर ध्यान लगाने का समय होता है जिनका कि मनुष्य जीवन की दैनिक आवश्यकताओं से अति घनिष्ट सम्बन्ध नहीं है जब बाबू साहब खाना खा चुकते हैं तभी तख्त़ पर डट पान चबाते और हुक्के़ का धुआँ उड़ाते हैं या नाच और राग का आनन्द लेते हैं ठीक है 'जब मन चङ्गा तो कठोती में गङ्गा' और 'पेट भरे पर राग अलापना' परन्तु जब जान के 'लाले' पड़े होते हैं, जब दिन रात पेट भरने ही की फ़िक्र लगी रहती है तो राग और रागिनी नहीं सूझते नाच और रङ्ग नहीं भाता व्यक्ति जीवन में सत्य यही नियम जाति के या समाज के जीवन में भी सत्य है जब देश में उपद्रव फैला होता है अराजकता छाई होती है जान और माल का स्थायित्व नहीं होता है तो वाणिज्य व्यापार, दर्शन और विज्ञान, साहित्य और कविता, की चाल रुक जाती है। विरुद्ध इसके जब शान्ति का समय आता है तो इन सबों की खूब वृद्धि होती है इसका उदाहरण सभी देशों के इतिहासों में मिलता है एलीज़िबेथ के समय के अंग्रेजी साहित्य का इतिहास इसका एक अच्छा उदाहरण है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अकबर के नाम के साथ २ इङ्गलैण्ड की महारानी एलीज़िबेथ का नाम याद आजाता है इन्हों ने अकबर ही के समय में इङ्गलैण्ड में राज्य किया था अकबर का शासनकाल सन् १५५६ से १६०५ ई० तक है। महाराणी एलीज़िबेथ ने भी सन् १५५८ (?) से सन् १६०३ ई० तक राज्य किया था॥ अशान्ति के दिनों के उपरान्त अकबर के शान्तिमय शासन काल का उदय हुआ था। एलीज़िबेथ का राज्यकाल भी अङ्गरेज़ों के लिये मेरी के अशान्तिमय दिनों के बाद शान्ति सुख अनुभव करने का समय था॥ अकबर प्रजा प्रिय, शान्तिप्रिय, न्यायपरायण और दयालु राजा था। रानी एलीज़िबेथ में भी यह सब गुण विद्यमान थे। एलीज़िबेथ के समय में अङ्गरेज़ी साहित्य ने आशातीत उन्नति की उसी के समय में शेक्सपियर और बेन जान्सन आदि इङ्गलैण्ड के महाकवि और बेकन ऐसे गद्य लेखक हुए पुरानी अङ्गरेज़ी और आज कल की अँग्रेज़ी के बीच में एलीज़िबेथ के समय की अँग्रेज़ी सीमारूप से स्थित है एलीज़िबेथ ही के समय में पुरानी अँग्रेज़ी ने पलटा खाया और आज कल की अँग्रेज़ी होने की ओर झुकपड़ी। अँग्रेज़ी काव्य की उस समय में क्या उन्नति हुई इसके विषय में तो कहना ही क्या है क्योंकि उस समय में शेक्सपियर और स्पेन्सर का उत्पन्न होनाही अँग्रेज़ी काव्य की महान उन्नति का प्रमाण है। इसके अतिरिक्त अँग्रेज़ी भाषा में वैज्ञानिक साहित्य और दार्शनिक साहित्य की भी नीव उन्हीं दिनों पड़ी। आज कल अँग्रेज़ी की जिस महान् उन्नति को हम देख रहे हैं, उसके अङ्कुर एलीज़िबेथ ही के समय में उगे थे। इसी प्रकार अकबर के समय में यहाँ हिन्दी की बड़ी उन्नति हुई।

:o:

अकबर के समय में हिन्दी की उन्नति के कारण

साधारण विद्या सम्बन्धी और वाणिज्य सम्बन्धी उन्नतियाँ के इस महान कारण को छोड़कर विशेषतः हिन्दी की उन्नति के अप्रधान परन्तु महत्व में पहिले कारण के बराबर और भी अनेक कारण थे। उनमें से कुछ का यहाँ उल्लेख कर देना उचित मालूम होता है।

:o:

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कवियों का जीवन निर्वाह

कवियों के लिये कविता द्वारा जीवन निर्वाह करने को प्रायः दो ही मार्ग होते हैं एक तो किसी बड़े आदमी का आश्रय लेकर पड़ रहना और दूसरे सर्व साधारण को ही अपना आश्रयदाता (मुरब्बी) बना लेना। भारत के कवि पहिलेही मार्ग का अनुसरण करते चले आए हैं। हाँ आजकल आश्रयदाताओं की कमी से हमारे कवियों को उस मार्ग से कुछ थोड़ा बहुत विचलित होना पड़ा है और वह दूसरे मार्ग की ओर झुकते हुए से मालूम पड़ते हैं। और शायद वह समय बहुत दूर नहीं है जब कि हमारे यहाँ के कवि भी इङ्गलैण्ड के अधिकांश कवियों की भाँति दूसरे मार्ग पर चलते हुए दिखलाई देंगे और व्यक्तियों का सहारा छोड़ व्यक्ति-समुदाय, समाज का, सर्व साधारण का आश्रय लेंगे। परन्तु अभी तो हमारे यहाँ का समाज इस योग्य है ही नहीं कि सत्कवियों को आश्रय दे और उनका आदर करे। बड़े आदमियों को साहित्य में रुचि नहीं कि कवियों का सत्कार करें और सर्वसाधारण में इतना विद्या का प्रचार नहीं कि कवि अपनी पुस्तकों की विक्री से अपनी जीविका पैदा करले। शायद यही कारण है कि आज कल हमारे समाज में अच्छे कवि उत्पन्न होते नहीं उपरोक्त कवि वृत्ति के दोनों मार्ग अपने २ दोषों से रहित नहीं हैं। किसी एक मनुष्य के आश्रय में रहने वाले कवि को अपने प्रभु की प्रसन्नता के लिये बहुधा जानबूझ कर असत्कविता करनी पड़ती है। और अपने प्रभु की तारीफ़ में राग अलापने पड़ते हैं इसी प्रकार सर्वसाधारण को अपना मुरब्बी बनाने वाले कवि को कभी कभी सर्वसाधारण की रुचि के अनुसार, जोकि सर्वदाही बदला करती है काव्य करने को बाध्य होना पड़ता है, परन्तु इन दोनों प्रणालियों में देश के लाभ की दृष्टि से दूसरी प्रणाली अच्छी है क्योंकि इस प्रणाली से जीवन निर्वाह करनेवाले कवि का कविता से उस समय की सामाजिक अवस्था का पूरा २ पता लगता है

———:०:०:०:———

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अकबर के समय में दाताओं की बहुतायत होने के कारण कवियों को जीवन निर्वाह में सुगमता थी।

भारत में राजा और महाराजागण सनातन काल से कवियों को आश्रय देते और उनका मान करते चले आए हैं अकबर के समय में ऐसे मुरब्बियों का नम्बर बहुत बढ़ा हुआ था ये लोग कवियों का आदर और मान खूब करते थे कवियों का उत्साह बढ़ाते थे और कविता की उन्नति होती थी स्वयं अकबर बादशाह को हिन्दी कविता करने का शौक़ था जहाँगीर ने तो अपनी किताब में लिखा है कि अकबर कुछ पढ़ा लिखा नहीं था परन्तु अन्य इतिहासों से पता लगता है कि यदि अकबर पण्डित नहीं तो एक अच्छा पढ़ा लिखा मनुष्य था कहते हैं "कि अकबर शाह संस्कृत महाभारत को एक रात आप ही उलथा कराने बैठे और सुल्तान मोहम्मद थानेसरी औ खुद मौलाना बदायूनी औ शेख़ फ़ैज़ी ने जहाँ जहाँ कुछ आशय छोड़ दिया था उसे फिर तर्जुमा होने का हुकुम दिया।"

अकबर स्वयं कुछ पढ़े लिखे होने के सिवाय कवियों का बहुत आदर और सत्कार किया करता था उसके दर्बार में गंग कवि और नरहरि आदि बहुत मान पाते थे जब स्वयं सम्राट कवियों का मान करता था तो कवियों को मुरब्बियों की कमी नहीं थी अकबर के दर्बार के उमरा और पदाधिकारी कविसम्मान के लिये सदा तैयार रहते थे अकबर के दर्बारियों में से अधिकांश तो स्वयं ही हिन्दी के प्रेमी थे पञ्जाबी खत्री राजा टोडरमल अकबर राज्य के स्तम्भ स्वरूप थे राजा टोडरमल खुद हिन्दी में छन्द रचा करते थे गणित विद्या की पुस्तकें छन्द में लिखी थीं इनकी बनाई हुई नीति पर हिन्दी कविता प्रसिद्ध है कहते हैं कि वणिक प्रिया नामक एक वाणिज्य सम्बन्धी पुस्तक भी इन्हीं ने बनाई थी उसमें वाणिज्य के गुर लिखे हैं यथा:-'सकल वस्तु पैदा करें, नोन गाँठ सों खाय। याको मारो बानिया, जरामूर सों जाय' फिर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भला जो स्वयं कवि था वह कवियों का आदर क्यों न करता। राजा मानसिंह राजपूताना प्रान्त से आए थे जहाँ कि हिन्दी कविता का बड़ा आदर होता था ये भी कविता के प्रेमी और कवियों के आश्रयदाता थे कालपी प्रान्त (हमीरपुर) के रहनेवाले महेश दास नामक कनौजिया ब्राह्मण को राजा मानसिंह ही ने अकबर के दर्बार तक पहुँचाया था यही महेश दास राजा बीरबल के नाम से मशहूर हुए इनका सम्बन्ध अकबर के राज्य के इतिहास से अति घनिष्ट है इनके द्वारा भी अकबर के दर्बार से बहुत हिन्दी कवियों को आदर मिला इन्हों ने स्वयं एक छप्पय बनाने पर कवि गंग को एक लाख रुपया इनाम दिया थाँ कालपी बुन्देलखण्ड का द्वार स्वरूप है बुन्देलखण्ड भी ब्रजमण्डल की भाँति अपनी हिन्दी कविता के लिये प्रसिद्ध है फिर भला उस प्रान्त के रहनेवाले बीरबल के हिन्दी प्रेमी होने में आश्चर्य ही क्या है इसी प्रकार और भी हिन्दू दर्बार हिन्दी के प्रेमी और हिन्दी कवियों के आश्रयदाता थे अकबर का दर्बार हिन्दुओं से भरा हुआ था ये हिन्दी के प्रेमी थे इनकी देखा-देखी मुसलमान दर्बारिगण भी हिन्दू कवियों को आश्रय देते थे हिन्दुओं के संसर्ग से उन्हें भी हिन्दी कविता का 'चसका' पड़ गया ,था अकसर तो उनमें के स्वयं भी हिन्दी में कविता करने लगे थे ख़ानख़ाना (रहीम) की कविता हिन्दी साहित्य के साथ २ बहुत दिनों जीती रहेगी। फ़ैज़ी, अबुलफज़ल और रहीम ये सब हिन्दुओं ही की भाँति हिन्दी कविता की उन्नति के महान सहायक हुए जब बादशाह से लेकर दर्बारीगण तक हिन्दी कविता के प्रेमी थे तो क्यों न "अकबर के समय में घर २ हिन्दी कविता करने का चरचा हो जाता।"

——:o:——

अकबर के समय में हिन्दी की उन्नति का एक भौगोलिक कारण।

अकबर की राजधानी आगरे में थी आगरा ब्रज में है ब्रज-भाषा एक बड़ी मधुर, हिन्दी की प्रधान भाषा है। अकबर के दर्बार में हिन्दी ही अधिकतर बोली जाती होगी ब्रज में राज-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धानी होना उस समय हिन्दी की उन्नति होने का एक भौगोलिक कारण कहा जासक्ता है यदि अकबर की राजधानी किसी और प्रान्त में होती तो शायद उसी प्रान्त की भाषा की बड़ी उन्नति उस काल में होती।

राजपूताने के भाटों की गाई हुई विरदावली हिन्दी भाषा के साहित्य की आदि हुई चन्द बरदाई और जगनिक पहिले भाट हुए उनके बाद शारंगधर आदि अनेक कवि पाँच सदियों तक होते गए यह हिन्दी भाषा काव्य की पहिली धार बही।

धर्म संबंधी कारण।

"इधर गङ्गा की वादी में वैष्णव धर्म ने ज़ोर पकड़ा। इसके प्रधान प्रचारक सन् १४०० ई० के लगभग रामानन्द हुए। उनसे भी बढ़कर उनके चेले कबीरदास हुए। उन्हों ने वैष्णव धर्म में एक नया जोश पैदा कर दिया। इस जोश की शारीरिक मूर्त्ति स्वरूप हिन्दी भाषा कविता की दूसरी धारा प्रवाहित हुई।

इस के साथ ही साथ राधाकृष्ण की भक्ति और उसके साहित्य का वर्धन हुआ राधाकृष्ण की भक्ति के प्रचारक वल्लभाचार्य्य थे। ये राधावल्लभी*सम्प्रदाय के प्रवर्तक थे इनके और इनके पुत्र विट्ठल नाथ के प्रभाव से राधाकृष्ण की भक्ति सम्बन्धी हिन्दी कविता ने बहुत कुछ उन्नति की व्रज मण्डल के अष्टछाप के कविगण इन्हीं आचार्यों के शिष्य थे सूरसागर के बहुत से पद इन्हीं की प्रेरणा से लिखे गए थे-यह कृष्णभक्ति- के रस से भरी हुई हिन्दी भाषा काव्य की तीसरी धारा है-" डाक्टरग्रियर्सन

हिन्दी भाषा काव्यसरिता की यही तीन प्रधान (Tributary) शाखाएँ हैं- और इन तीनों शाखाओं ने समकालीन बहुत से भिन्न भिन्न अथवा समान (Common) कारणों से अकबर के समय में उन्नति की-अन्तिम दो अर्थात् दूसरी और तीसरी शाखा के क्रमानुसार तुलसी और सूर प्रतिनिधि हैं-और उस समय के समस्या पूरक कवियों की मण्डली, दो एक फुटकर छन्द बनाकर कवि कहलाने वाले, पहिली शाखा के अन्तर्गत हैं-

* राधावल्लभी सम्प्रदाय गो० हित हरिवंश जी के सम्प्रदाय का नाम है। इनकी सम्प्रदाय वल्लभीय या गोकुलस्थ गोसाइयों की सम्प्रदाय कहलाती है। (पत्रिका सम्पादक)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अकबर के समय की हिन्दी की उन्नति का स्वयं भाषा सम्बन्धी कारण

भाषाविज्ञान की दृष्टि से भी सोलहवीं शताब्दि के मध्य में हिन्दी की इतनी उन्नति होना प्राकृतिक था-अर्थात् स्वयं भाषा ही उस प्रौढ़ता को पहुँच गई थी कि जिसने उसको 'सूर' 'तुलसी' और 'केशव' की कल्पनाओं और विचारों के परिधान होने के योग्य बना दिया था-इस बात को समझने के लिये भाषा के इतिहास पर एक सरसरी नज़र डालना आवश्यक है-

हिन्दी भाषा का विकाश

बारहवीं शताब्दि में चन्द और जगनिक हुए। उनकी हिन्दी देखने से मालूम होता है कि उस समय हमारी मातृभाषा अपनी जननी प्राकृत की गोद में पर फड़फड़ा रही थी और हवा में उड़ने की कोशिश कर रही थी परन्तु अभी अपने यत्न में सफल नहीं हुई थी क्षण क्षण और पद पद पर प्राकृत उसे अपनी गोद में खींचती है और बाहर कदम नहीं रखने देती-

तेरहवीं शताब्दि की भाषा का नमूना अमीर खुसरू की कविता में मिलता है यह आज कल की उर्दू भाषा के एक हिसाब से जड़ डालने वाले हुए हैं-इन्हीं के समय से हिन्दी भाषा दो रास्तों में से होकर बहने लगी एक रास्ता तो संस्कृत की ओर और दूसरी अरबी और फ़ार्सी की तरफ उसे ले गया पहिली हिन्दी की हिन्दी रही और दूसरी उर्दू कहलाई पहिली की कविता संस्कृत के छन्दों में हुआ की और दूसरी की फ़ार्सी की बहरों में-अमीर खुसरू की बनाई हुई खालिक़बारी फ़ार्सी की बहरों में लिखी हुई पहिली हिन्दी (या उर्दू?) है।

इस पुस्तक से यह भी मालूम होता है कि उस समय में कौन कौन से शब्द व्यवहार में थे जोकि अब नहीं हैं। अमीर खुसरू के सम्बन्ध में शमसुलउलमा मौलवी मुहम्मद हुसैन साहब आज़ाद अपनी किताब आबेहयात में लिखते हैं कि इन्हों ने "मुल्क सखुन में, ब्रजभाषा की तर्कीब से एक तिलसमख़ाना इन्शापरदाज़ी का खोला'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और "बहुत सी पहेलियाँ अजीबोग़रीब लताफ़तों से अदा की हैं जिनसे मालूम होता है कि फ़ार्सी के नमक ने हिन्दी के ज़ायके में क्या लुत्फ़ पैदा किया है मुकरनी, अनमिल दोसख़नी वग़ैरह ख़ास इनके आईने का जौहर है.........इनसे भी उस वक्त की ज़ुबान का कुछ न कुछ पता लगता है" इसी पते के लिये उन में के दो एक उदाहरणों का यहाँ पर लिख देना आवश्यक है:-

बिनौले की पहेली

तरवर से एक तिरिया उतरी उसने बहुत रिझाया
बाप का उसके नाम जो पूँछा आधा नाम बताया
आधानाम पता पर प्यारे बूझ पहेली मोरे
अमीर खुसरू यूँ कहे अपने नाम बिनौले ॥

नाखून की पहेली

बीसों का सर काटलिया। ना मारा ना ख़ून किया ॥

लाल की पहेली

अन्धा गूँगा बहरा बोले गूँगा आप कहाए।
देख सफ़ेदी होत अँगारा गूँगे से भिड़जाए
बाँस का मन्दिर वाका बासा बासे का वह खाजा
सङ्ग मिले तो सर पर राखें वाको राव औ राजा
सीसा करके नाम बताया तामें बैठा एक
उलटा सीधा हेर फेर देखो वही एक का एक
भेद पहेली में कही तू सुन ले मेरे लाल
अर्बी हिन्दी फ़ार्सी तीनो करो ख्याल

मुकरनी

सिगरी रैन मोरे सँग जागा
भोर भयो तब बिछुड़न लागा
वाके बिछुड़े फाटे हिया
अय सखि साजन ना सखि दिया

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वह आवै तब शादी होय
वा बिन दूजा और न कोय
मीठे लागैं वाके बोल
अय सखि साजन ना सखि ढोल

'दो सखुनी' गोश्त क्यों न खाया-डोम क्यों न गाया, गला न था
जूता क्यों न पहिना-समोसा क्यों न खाया, तला न था

अमीर खुसरू बारहमासे और सावन के भी बड़े रचयिता थे शायद ही कोई उत्तरीय भारत की ऐसी स्त्री हो कि जिसने खुसरू का यह गीत न गाया हो कि:—

जो पिया आवन कह गए। अजहूँ न आए स्वामी हो।
अय हो जो पिया आवन कह गए। आवन२ कह गए आयन बारहमास।
अय हो जो पिया आवन कह गए। इत्यादि।

सावन के महीने में लड़कियाँ झूले पर बैठकर सावन गाती हैं:—

अम्मा मेरे बाबा को भेजो जी	कि सावन आया
बेटी तेरा बाबा तो बुड्ढा री	कि सावन आया
अम्मा मेरे भाई को भेजो जी	कि सावन आया
बेटी तेरा भाई तो बाला री	कि सावन आया
अम्मा मेरे मामू को भेजो जी	कि सावन आया
बेटी तेरा मामू तो बाँका री	कि सावन आया
इत्यादि	इत्यादि

यह गीत भी अमीर खुसरू का बनाया है-देखो इनकी भाषा कैसी सरल है और सब लोगों के समझने योग्य है जब हँसी खेल और दिल बहलाने के छन्दों की यह भाषा है तो न जाने गंभीर और गुरुतर विषयों की कविता की भाषा कितनी प्रौढ़ हो चली होगी बालिका हिन्दी अपनी माँ की गोद से बाहर निकल पड़ी और लगी हवा में पर फड़फड़ा कुछ २ उड़ने।

पन्द्रहवीं शताब्दी के अन्त में गुरु नानक हुए इनके ग्रन्थ साहब की भाषा में अधिकतर भाग हिन्दी का है गुरु नानक पञ्जाबी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

थे। हिन्दी भाषा के लिये एक प्रकार से विदेशी ही थे एक विदेशी का हिन्दी भाषा को इतनी सफलता के साथ व्यवहार करना हिन्दी की प्रौढता को प्रगट करता है उनकी भाषा को दिखाने के लिये उनकी कविता की दो एक पंक्तियों का यहाँ पर उद्धृत करना उचित है।

विषयन सों काहे रच्यो, निमिष न होइ उदास
कहि नानक भजु हरि मना, परै न यम की फाँस
सुमिरौ जासु विश्वम्भर एकै
नाम जपत अगणित हि अनेकै
वेद पुराण स्मृति शुचि आखर
कीन्हें राम नाम एकाखर

इन पंक्तियों को केवल भाषाही की दृष्टि से देखिए खुसरू की भाषा से साफ अन्तर पाइएगा। और यह भेद उन्नति का है अवनति का नहीं इतने दिनों में हमारी भाषा प्रौढ़ता की एक और सीढ़ी नाँघ गई और यदि अमीर खुसरू के ही दर्शित मार्ग पर चली जाती तो और भी अधिक उन्नत हो गई होती और आज कल की हिन्दी में आज कल की उर्दू से इतना अन्तर न होता॥

सोलहवीं शताब्दी की आदि में कबीर दास हुए–वैष्णवधर्म के प्रचार में इन्होंने बड़ा योग दिया इन्होंने धर्मभाव को उत्पन्न कर भाषा की कविता में एक नया जीवन पैदा कर दिया भाषा की दृष्टि से देखने के लिये उनकी कविता की भी दो चार पंक्तियों का यहाँ पर उद्धृत कर देना ज़रूरी है:—

एक दो होइ तो मैं समझाऊँ जगते कहीं बसाई
समुझि कबीर रहै घट भीतर को बकि मरै बलाई
पथरी भीतर अगिनि है बाँटे पीसे कोइ
लाख यतन करि काढ़वी आगिन परगट होइ
है है तो सब कोइ कहै, नाहीं कहै न कोइ।
कबीरा ऐसा ना मिला, यह बैठा है सोइ॥

इनके बाद सन् १५४० में अवधै प्रान्त के अन्तर्गत जायस स्थान में मलिक मुहम्मद ने अवधी बोली में अपनी पद्मावत लिखना आरम्भ किया डाक्टर ग्रियर्सन के मतानुसार यह अवधी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बोली के प्रथम कवि थे दोहा और चौपाइयों का व्यवहार इन्हों ने बड़ी सफलता के साथ किया है इनकी भी दो एक पङ्क्तियाँ देखना चाहिये:—

रानी उतर दीन्ह कै मया । जो जिव जाय रहे किमि कया ॥
हीरामणि तू प्राण परेवा । धोखन लाग करत तेहि सेवा ॥
तहि सेवा बिछुरन नहीं आँखौं । पींजर हिये घालिकै राखौं ॥
... ...
आय शरद्ऋतु अधिक पियारी । नाउँ कुँवार कातिक उजियारी ॥
पद्मावत भइ पूनो कला । चौदह चाँद उई सिंहला ॥
... ...

यहि ऋतु कन्था पास जेहि, सुख तिनके हियमाँह ।
धन हँस लागी पिय गले, धन गल पियके बाँह ॥

पद्मावत ।

गगरि सहस पचास, जो कोउ पानी भरि धरइ ।
सूरज दिपइ अकास, महमद सब मँह देखिये ॥
... ...

दरपन बालक हाथ, मुख देखइ दो सर गनइ ।
तसभा दुइ एक साथ, महमद एकइ जानिये ॥

अखरावट ।

पद्मावत के चौतीस वर्ष बाद अर्थात् सन् १५७४ ई० में शेक्सपियर के समकालीन गोस्वामी तुलसी दास जी ने मलिक महम्मद की चाल पर रामचरितमानस को बना कर खड़ा किया ऊपर उद्धृत उदाहरणों से प्रगट होता है कि उस समय तक हमारी भाषा में आभूषणों की भरमार न थी भूषणातिशय्य ने भाषा का गला नहीं दबा दिया था कवियों को सरसता और सरलता का अधिक ध्यान रहता था इस बात का भी अधिक ख्याल था कि भाषा सहल और सर्वसाधारण के समझने योग्य रहै विशेष कर इधर के कवियों में यह बात पाई जाती है ब्रजमण्डल के कवियों में उतनी नहीं जो हो भाषा के पर जम गए थे उसमें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इतनी शक्ति भी आगई थी कि ऊँचे आकाश में उड़ने लगे और इतना ऊँचा उड़ सक्ती थी कि सूर (सूरदास) शशि (तुलसी दास) उडुगनं (केशव दास) तक पहुँच जाय।

अकबरी समय में हिन्दी की उन्नति के कारणों का सिंहावलोकन।

अकबर के समय में इन प्रान्तों में शान्ति रहना, अकबर और उसके दर्बारियों का हिन्दी के कवियों का आदर सत्कार करना, राजधानी का हिन्दी के केन्द्रस्थल ब्रजमण्डल में होना, राधाकृष्ण की भक्ति और वैष्णव धर्म का उन दिनों अधिक ज़ोर पकड़ना, स्वयं भाषा का उन दिनों प्रौढ़ होजाना इत्यादि यही बहुत से कारण हैं कि जिनके होने से सोलहवीं शताब्दी के मध्य में हिन्दी की बड़ी उन्नति हुई।

उस समय की हिन्दी को 'अकबरी हिन्दी' कहना ठीक है क्योंकि उसी उन्नति के कारणों में अकबर राज्य की पालिसी और स्वयं अकबर का आचरण प्रधान कारण हैं। एलिज़िबेथ के समय की अंग्रेज़ी को एलिज़िबेथन अंग्रेजी कहते हैं।

विदेशी भाषाओं का अकबरी हिन्दी पर प्रभाव

भिन्न भाषाओं की बोलने वाली दो जातियाँ जब पास २ रहती हैं तो एक जाति की भाषा का प्रभाव दूसरी जाति की भाषा पर ज़रूर पड़ता है एक भाषा के शब्द दूसरी भाषा में प्रविष्ट हो जाते हैं एक भाषा के विचार और उक्तियाँ दूसरी भाषा में घुस जाती हैं अकबर के समय में हिन्दू और मुसल्मानों को पास २ रहते वर्षों गुज़र चुकी थीं हिन्दुओं में मुसल्मानों की और मुसल्मानों में हिन्दुओं की बहुत सी सामाजिक रस्में और रीतियाँ प्रवेश कर चुकी थीं तो क्या आश्चर्य यदि हिन्दुओं की भाषा में मुसल्मानी भाषा फ़ार्सी और तुर्की आदि के शब्द और विचार पाए जाएँ आश्चर्य तो इस बात का है कि इतने दिनों साथ २ रहने पर भी हिन्दी भाषा बिल्कुल ही फ़ार्सीमय न हो गई हिन्दू मुसल्मानों से सदाही से जितना हो सका अलग २ रहे, उनका

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धर्म और खानपान मुसल्मानों से पृथक रहा मुसल्मानी बातों को उनसे जहाँ तक हो सका उन्हों ने अपनाया नहीं यही प्रधान कारण है कि आज उतरीय हिन्दुस्तान की प्रधान भाषा के दो रूपों में उर्दू और हिन्दी में इतना भेद है अर्थात् हिन्दी फार्सीमय नहीं है। यदि यह आपुस में इतना एक दूसरे से खिँचावट न होती तो हिन्दू और मुसल्मान दोनों की भाषा का एकही रूप होता।

इतनी खिँचावट होने पर भी हिन्दी के लेखकगण उस प्राकृतिक परिवर्तन को जो दो भाषा बोलनेवाली जातियों के पास २ रहने के कारण एक दूसरे की भाषा में हो जाते हैं रोक नहीं सके उनका रोकना असम्भव था। किसी ही भाषा के इतिहास को देखिए आप पाइएगा कि उसेन अपने जीवन काल और उन्नति के समय में उन लोगों की भाषा के विचारों और शब्दों को खूब ही अपनाया है कि जिनसे उसके बोलनेवालों का कालविशेष में सम्बन्ध रहा हो वरन कहना चाहिए कि बाह्य शब्दों और विचारों का अपनाना ही भाषा के जीवन और उन्नति का चिन्ह है एक भाषा तब तक ही जीवित रह सकती और तरक्क़ी कर सकती है जब तक उसमें अन्य भाषा के शब्दादिकों के अपनाने की शक्ति रहती है।

समाज और साहित्य।

साहित्य और समाज का आपस में बड़ा घनिष्ट सम्बन्ध है समाज की अवस्था विशेष के कारण साहित्य में परिवर्तन विशेष होता है और भाषा में परिवर्तन करने से समाज पर उसका प्रभाव पड़ता है एलीज़िबेथ के समय में अङ्गरेज़ी समाज विशेषोन्नति पथ पर था उसके साहसी नाविक इङ्गलैण्ड अमेरीका को एक कर रहे थे स्पेन और फ्रांस आदि देशों से सम्बन्ध बढ़ रहा था निदान समाज में महान परिवर्तन वर्तमान हो रहा था उस समय की अङ्गरेजी भी खूब उन्नति कर रही थी-नये २ शब्द, नये २ विचार और भाव उसमें प्रवेश कर रहे थे, जिन देशों से और जिन लोगों से इङ्गलैण्ड का संसर्ग था-उनकी भाषा का प्रभाव अङ्गरेजी भाषा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पर विशेष रूप से पड़ रहा था—अकबर के समय में और मुसलमान राजाओं के समय से बढ़कर हिन्दू और मुसलमानों का संसर्ग था-दोनों जातियों के मनुष्य एक ही कार्यक्षेत्र में काम कर रहे थे और यद्यपि खानपान आदि में हिन्दू मुसलमानों से अलग अलग ही रहते थे तथापि अन्य सम्बन्धों में वह अपने को उनसे अलग नहीं रख सकते थे इस कारण हिन्दुओं की भाषा का मुसलमानों की भाषा पर प्रभाव पड़ता था और मुसलमानों की भाषा का हिन्दुओं की भाषा पर इस प्रभाव का पड़ना तो उसी समय प्रारम्भ हो गया था कि जिस समय मुसलमानों का भारतवर्ष में आना—चन्द बरदाई के रायसे में बहुत से मुसलमानी शब्द पाए जाते हैं। परन्तु अकबर के राजत्व काल में यह प्रवाह कहीं अधिक बढ़ गया था राजकाज में आपस का संसर्ग होने के कारण हिन्दुओं को फार्सी और मुसलमानों को हिन्दी और संस्कृत पढ़नी पड़ती थी इस कारण एक दूसरे की भाषा के इतने प्रेमी हो गए थे कि कोई २ हिन्दू फ़ार्सी में कविता करने लगे थे और बहुत से मुसलमान हिन्दी में हिन्दी के कवियों को मुसल्मानों और प्रधानतः मुसल्मान सम्राट् अकबर, की सभा के योग्य बनने के लिये फ़ार्सी पढ़नी होती थी नरहरि कवि ने इसी इरादे से फ़ार्सी का अध्ययन किया था।

अकबरी हिन्दी में विदेशी भाषाओं के शब्द

इन्हीं प्रधान कारणों से अकबरी हिन्दी में फार्सी, अर्बी और तुर्की भाषा के अनेक शब्द और विचार पाए जाते हैं केवल केशवदास ही की कविता में इतने अन्य भाषाओं के शब्द और वाक्य पाए जाते हैं यथा:—

राम चन्द्रिका में—'कपि पति सों तबहीं गुदराने' 'गुदरानो प्रतिहार' 'गुदरानि देन पठये' '(वे) गुदरे' 'नल नील मरातब साथ' 'दिवान कुम्भकर्ण आइयो' 'तुम्हहीं विरंची मरजाद दुनी में' 'रच्यति रावत बात'

रसिक प्रिया में—'लायक', 'कसाई', 'बूझि वे की जक लगी है कान्हहि', 'खजाने', 'जोर', 'सतरञ्ज कैसी बाजी', 'मुद्दत',

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'खवासिन,' 'जहाज', 'आज न आई', 'बारसों बरीक करिहौं' और 'नकीब सम'। कवि प्रिया में—'समशेर', 'शोर', 'अफताली', आदि और विज्ञान गीता में—'तेग', 'खलक' 'फजीहाति', और 'कूच', इत्यादि

सूरदास की भी कविता में खूब फार्सी आदि भाषा के शब्द और वाक्य आए हैं—भेद इतना है कि सूरदास ने उन शब्दों के शुद्ध उच्चारण और उनके व्यवहार में व्याकरण की शुद्धता का भी ध्यान रक्खा है जिससे कि उनका फ़ार्सी भाषा का पाण्डित्य भली प्रकार प्रगट होता है—सूरसागर के आरम्भ के पृष्ठों ही में देखिए कितने विदेशीय शब्द और वाक्य आए हैं:—

सही, नकीब, नौबत, मसाहत, जमा, कैद, गुजरान, मुसाहिब, जवाब, असल, मुजमिल, साबिक़ जमा, वासिल बाक़ी, स्याहा, मुस्तौफ़ी, मुहर्रिर, शोर, फ़ौज, गरीब नेवाज, बेहाल, 'जियजक पकरी', बरामद, साफ़, माफ़, मुहासबा, दस्तक, निशान, मुहकम लाइ किवार', सुलतान, लायक, दीवान, और दामनगीर इत्यादि।

एक भाषा के शब्द जब दूसरी भाषा में घुसते हैं तो उनको अपना रूप धीरे२ बहुत कुछ बदल देना पड़ता है कालान्तर में उनका रूप ऐसा हो जाता है कि यह जानना बड़ा मुश्किल होता है कि वह पहिले किस भाषा के थे भला आज कौन यकायक कह सक्ता है कि कुत्ता शब्द हिन्दी नहीं वरन पुर्तगाली है और 'नीलाम' और 'हथौड़ा' अन्य भाषा से हिन्दी में आए हैं—

ऊपर उद्धृत किए हुए शब्दों के देखने से मालूम होगा कि उनमें से बहुतों ने अपना रूप बहुत कुछ बदल दिया था 'गुदारा' तो अकबर के समय में गुज़ारे का रूपान्तर सर्वमान्य सा मालूम पड़ता है केशवदास और सूरदास के अतिरिक्त तुलसी दास ने भी इसी रूप का प्रयोग किया है—वह लिखते हैं 'मिलिन आइ नाहिं गुदरनि बनई'। इसी भाँति और अन्य शब्द भी अपना रूप बदल चुके थे या बदल रहे थे निदान अकबर के समय में हिन्दी भाषा के भण्डार में फ़ार्सी तुर्की और अरबी आदि के शब्द खूब घुस गए थे जैसे कि आज दिन अङ्गरेजी भाषा के शब्द

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

घुस रहे है " इतना ही नहीं " वरन हिन्दी के खराद पर 'भाय के' उन्होंने रूपान्तर भी ग्रहण कर लिया था

इन शब्दों में अधिकतर वही हैं जिनका कि राजकीय बातों से सम्बन्ध है–यदि फ़ार्सी–साहित्य में किसी ऐसे विज्ञान या दर्शन का चरचा होता जो कि हमारे देश में नहीं था तो उस के भी बैज्ञानिक शब्द हमारी भाषा में बहुतायत से पाए जाते।

अकबरी हिन्दी में विदेशी भाषाओं के भाव और विचार।

फ़ार्सी साहित्य के भावों के सम्बन्ध में भी यही बात है-जितना कि प्राकृतिक था उतना तो उन भावों ने हिन्दी साहित्यपर अपना प्रभाव डाला और हिन्दी साहित्य में घुले पर यह नहीं कहा जा सकता कि हिन्दी लेखकों ने बड़े चाव से उन का स्वागत किया और उन्हें अपने साहित्य में स्थान दिया इसके विरुद्ध उन्होंने हिन्दी साहित्य के भावादिकों का उद्गमस्थान अधिकतर संस्कृत साहित्य ही को रक्खा–यदि ऐसा न होता तो आज हम हिन्दी के शृंगारिक साहित्य में नायिका और नायक के स्थान पर राधा और कृष्ण की जगह लैला और मजनूँ तथा शीरीं और फरहाद को पाते। यद्यपि फार्सी साहित्य के भाव और विचार हिन्दी लेखकों के मन को इतना लुभा न सके कि वह आँख मूँदकर इनका स्वागत करते तथापि अकबरी हिन्दी के कई कवियों ने उन भावों को कहीं कहीं अपनी कविता में रक्खा है संस्कृत साहित्य के कट्टर पक्षपाती कवि केशवदास तक यह लिखने से बाज न आए कि 'बारसो बरीक करिहौं'।

अकबरी हिन्दी के एक कवि गोप का चरणार्द्ध है 'मजनूँ के रट मे सो साहिब के घटमें'" कहने का तात्पर्य यह है कि अकबरी हिन्दी में फ़ार्सी आदि भाषा के शब्दों ने प्रवेश किया उनके साथ साथ उन भावों और विचारों ने भी जिनको कि उन शब्दों से घनिष्ट सम्बन्ध था प्रवेश किया इनके अतिरिक्त और भी कुछ भाव अकबरी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हिन्दी में घुसे-पर यह नहीं कह सके कि अकबरी हिन्दी की साहित्य फ़ार्सी आदि भाषाओं के भावों से परिपूर्ण था

अकबरी हिन्दी में शृङ्गार रस की कविता और उस का कारण।

अकबरी हिन्दी मे कविता ही कविता है और उस कविता में भी शृङ्गार रस की कविता ही सबसे अधिक है इस शृङ्गार रस की कविता के बाहुल्य के लिये उस समय की सामाजिक अवस्था ही अधिकतर जवाब देह है-अकबर के समय में प्रजा राज्यविप्लव आदि आफ़तों से बची हुई थी राजकर्मचारियों के अन्याय और उनकी क्रूरता से भी उसे बहुत दुख झेलना नहीं पड़ता था व्यक्तियों को अपने जीवन निर्वाह के लिये बड़ी कठिनाइयाँ नहीं उठानी पड़ती थीं-सब प्रकार से सामाजिक जीवन उस समय सुखमय था राज दर्बारों में ऐशो आराम के मज़े लूटे जातेथे राज्य सम्बन्धी चिन्ताएँ कम हो गई थीं ऐसे दरबारों के कवियों को अपने आश्रयदाताओं को खुश करने के लिये उन्हीं के मन के अनुसार कविता करनी पड़ती थी यह एक प्रधान बात मालूम पड़ती है कि जिसके कारण अकबरी हिन्दी के कवियों की रुचि शृङ्गार रस की ओर इतनी अधिक थी और शायद फार्सी और उर्दू के साहित्य ने भी ऐसा ही प्रभाव हिन्दी पर डाला हो तो कुछ आश्चर्य नहीं क्योंकि मुसलमानी कवि प्रेम और शृङ्गाररस ही की कविता करते थे अतएव उनकी स्पर्धा से हिन्दी के कवियों ने भी ऐसा करना सीखा हो संस्कृत के साहित्य में भी शृङ्गार रस की कविता की भरमार है--अकबरी हिन्दी के कवि संस्कृत साहित्य ही से अपनी कविता के विषय अधिकतर चुना करते थे यहभी हिन्दी में शृङ्गार रस की अधिकता का कारण हो सकता है-

अकबरी हिन्दी की छन्द रचना और उस पर अन्य भाषाओं की छन्द रचना का प्रभाव

अकबरी हिन्दी की कविता का केवल विषय ही नहीं बरन छन्द भी संस्कृत साहित्य से लिया गया था हिन्दी का कोई अपना पिङ्गल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है ही नहीं उसका पिङ्गल संस्कृत की कविता का पिङ्गल है इस के प्रमाण में कुछ लिखने की आवश्यकता नहीं है क्यों कि वही दशा आज तक बनी हुई है दो एक को छोड़ के बाकी सब आधुनिक कवि भी अपनी छन्द रचना में संस्कृत के पिङ्गल का अनुसरण करते हैं।

फार्सी और उर्दू साहित्य का केवल इतना ही प्रभाव हिन्दी छन्द पर पड़ा कि उर्दू की छोटी २ शेरों को देखकर हिन्दी के कविगण ने अपने साहित्य में भी दोहों का अधिक प्रचार किया। जीवन की एक घटना को लेकर तज्जनित भावों का वर्णन जैसे एक फुटकर शेर में होता है वैसेही फुटकर दोहों में भी एक घटना और तज्जनित भावों का वर्णन होने लगा-फिर एक फुटकर 'कवित्त' या सवैया द्वारा यही काम लिया जाने लगा ऐसे ही फुटकर दोहों और कवित्त आदि द्वारा हिन्दी साहित्य की lyric गीतात्मक कविता की अङ्ग पूर्ति हुई॥

अकबरी हिन्दी की कविता के अलङ्कार और आभूषण

केवल विषय और छन्द ही नहीं वरन अपनी कविता के आभूषण और अलङ्कार तक अकबरी हिन्दी के कवियों ने संस्कृत साहित्य शास्त्र ही से लिए-हिन्दी के अलङ्कार ग्रन्थ कविप्रिया को साहित्य दर्पण से मिलाने पर यह सम्यक् प्रगट होता है-साहित्य शास्त्र के नियमों के सिवाय रचनाप्रणाली और अन्य वाक्य की खूबियाँ को भी अकबरी हिन्दी में संस्कृत से लिया गया-और अलङ्कारिक नियमों का आतिशय्य के साथ आँखमूँद कर पालन हुआ-अलङ्कार की भरमार से अधिकतर कवियों की कृति में कविता का गला घुट गया और अलङ्कार ही अलङ्कार बाकी रह गया शब्द मैत्री और अनुप्रासादि में विशेष खूबी दिखलाना ही कवि कौशल समझा जाने लगा यहाँ दोष युक्त रुचि अकबरी हिन्दी के अनेक कवियों की प्रतिभा और शक्ति के व्यर्थ व्यय कराने की कारण है।

अकबरी हिन्दी की कविता की उपमा और उत्प्रेक्षा

अपनी अद्भुत और पाण्डित्य पूर्ण उपमाओं और उत्प्रेक्षाओं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के लिये भी अकबरी हिन्दी प्रसिद्ध रहेगी वरन कहना चाहिये उसी की उपमा आदि के भण्डार अकबर के बाद की हिन्दी के कविगण भी अपनी २ उपमाएँ लेते रहे–उपमा और उत्प्रेक्षा के प्रयोग करने का अकबरी हिन्दी में बड़ा प्रचार था एक एक बात पर सैकड़ों उत्प्रेक्षायें हो जाया करती थीं -केशवदास को उत्प्रेक्षाओं से बड़ा प्रेम था–केवल रामचन्द्रिका ही में कई स्थलों पर आपने उत्प्रेक्षाओं की झड़ी लगादी है[१]।

मूर्तिचित्रण ।

उपमाओं के अत्याधिक प्रयोग की ओर कवियों की रुचि होने के कारण अकबरी हिन्दी के साहित्य के मूर्ति चित्रण को बड़ी क्षति सहनी पड़ी–पात्र के अङ्गों और उसके वस्त्रादि की विशेषताओं को इस प्रकार से वर्णन करना कि उसकी यथासम्भव स्वाभाविक मूर्ति का ध्यान पढ़नेवाले के चित्त में आ जाय मूर्तिचित्रण कहलाता है । मूर्तिचित्रण को नखशिख वर्णन भी कह सक्ते हैं । अकबरी हिन्दी में दुनिया भर की उपमाओं को लाकर इकट्ठा करदेना ही मूर्ति चित्रण समझा जाने लगा-अकबरी हिन्दी के कवियों में सूरदास ने मूर्तिचित्रण में उपमा का अधिकतर व्यवहार करना आरम्भ किया फिर अकबरी हिन्दी के अन्य कवियों ने उसका खूब व्यवहार किया यहाँ तक कि केशवदास ने अपनी कवि प्रिया में उसके नियम बाँध डाले नख शिख वर्णन में अङ्ग विशेष के लिए उपमा विशेष चुन कर रख दी कि कवि गण इन्हीं को व्यवहार करें-आँख की कमल से उपमा दें भुजाओं की कमल नाल से, जंघाओं की केले से—और अन्य कवि इन नियमों का आँख मूँदकर पालन करने लगे मानों कवियों के हाथों में हथकड़ियाँ पड़ गई उनकी कल्पना का विहार-स्थल परिमित करादिया गया इन्हीं उपमाओं को तरह तरह के संयोगों में व्यवहृत कर असम्भव असम्भव समस्याओं का पूरा करना ही कवित्व समझा जाने लगा सभी कवियों की नायि-

---

(१) यथाः—सीताद्वारा अशोक वाटिका में रामचन्द्र की मुद्रिका के देखने पर और अग्निपरीक्षा में अग्नि के अङ्क में बैठी हुई सीता को देख कर-इत्यादि ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

काएँ कमलनयनी' चम्पक वर्णी और गज गामिनी होने लगी उनमें विशेषता कुछ भी न रही उनका अपनापन जाता रहा उनके शरीर की गठन कैसी है हाथ पैरों की बनावट कैसी है मुँह की 'बनक' कैसी है इन बातों से कुछ प्रयोजन ही न रहा किसी कवि ने अपने कमल महादेव पर चढ़ाए-किसी ने कमल पर भौंरे उड़ाए किसी ने अपने कमल चन्द्रमा के प्रकाश में भी खिलाए किसी ने कमल के लिए तालाब ढूँढ़ा किसी ने अपने तालाब के लिये कमल उगाए निदान इन्हीं बातों में कविता रह गई कल्पना साहचर्य से इसी प्रकार उपमा के अर्थों और शब्दों की खैंचातानी का नाम कविता रह गया-कहने का तात्पर्य यह नहीं है कि उपमा आदि का प्रयोग काव्य में किया ही न जाय-उपमा और उत्प्रेक्षा आदि से तो हम एक घड़ी बच नहीं सक्ते-हमारी भाषा और हमारे शब्द भण्डार इन्हीं से बने हुए हैं हमारी बात बात में उपमा उत्प्रेक्षा और रूपक भरे रहते हैं-किसी ही शब्द के इतिहास को देखिए कि वह कैसे बना-कोई शब्द विशेष किसी वस्तु विशेष या अर्थ विशेष के लिये कैसे व्यवहृत होने लगा आप पाइएगा कि उस शब्द को कल्पना साहचर्य द्वारा ही अर्थ विशेष या वस्तु विशेष को सूचित करना पड़ा है-'तुमारा चित्त बड़ा कठोर है' 'वे दोनों स्नेह में मज़बूत बँधे हैं' 'उनका मिज़ाज गरम है' इत्यादि वाक्य और उदाहरण कल्पना साहचर्य द्वारा ही बने हैं-उपमा, उत्प्रेक्षा और रूपक आदि कल्पना साहचर्य के अन्तर्गत हैं-इसलिये इनका निरादर करना मनोविज्ञान के एक प्रधान नियम से इनकार करना है-परंतु सब की हद होती है उपमा और उत्प्रेक्षा आदि की भी हद है उपमा का वास्तविक काम एक समझ में न आसकने वाली बात का समझना है 'वह शख्स इतना ऊँचा है जितना कि ऊँट' ऊँट की ऊंचाई का लोगों को साधारणतः ज्ञान होता है उससे मनुष्य की उँचाई का अन्दाज़ा कर सक्ते हैं-परन्तु गौर वरण की एक स्त्री की गोरी पीठ पर लटकती हुई काली काली वेणी को 'कञ्चन के कदली दलपै अति साँवरि साँपिनि सोइ रही, कहना एक सहल में अवगत कर सकने लायक चित्र को एक असम्भव चित्र द्वारा समझाना है-उपमित तो सहल पर उपमा को मुश्किल बनाना है-सूरदास की सारी कूट कविता इसी मौलिकतत्त्व पर बनी हुई है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हरि उर मोहन बेलि लसी,
तापर उरग ग्रसित नव शोभित पूरण अंश शशी
चापति कर भुजदण्ड रेखगुण अन्तर बीच कसी
कनक कलश मधुपान मनों कर भुज निज उलटि धसी
तापर सुन्दरि अंचर झाँप्यो अंकित दस तसी

सूरदास प्रभु तुमहि मिलत जनु दाड़िम बिगसि हसी

मुख के स्थान पर चन्द्रमा रखिए, वेणी की जगह साँपिन, कुचौँ के स्थान में कनकघट तब जाके कहीं आप को यह पहेली समझ में आवेगी यह पाण्डित्य है-पर कविता नहीं ॥ कवियों के वर्णन में जहाँ कहीं आवश्यक होगा यथा सम्भव उनका मूर्ति चित्रण निरूपित किया जायगा ॥

रूपक भी उसी मनोवैज्ञानिक न्याय पर बनता है जिस पर कि उत्प्रेक्षा। दोनों का आधार कल्पना साहचर्य है- एक वस्तु के व्याज से दूसरी का वर्णन करना रूपक है अँग्रेज़ी में इसे Allegory कहते हैं-एक फुटकर छन्द ही नहीं वरन एक पूरा कथनात्मक काव्य भी रूपक में लिखा जा सकता है-इलीज़िबेथ के प्रधान कवि स्पेन्सर का काव्य फेरी क्वीन इसी ढङ्ग का है-उसमें एक वीर का कथा के व्याज से सत्य की असत्य के ऊपर जय का निरूपण किया है। अकबरी हिन्दी की कविता में भी ऐसे काव्य पाए जाते हैं। केशवदास की विज्ञानगीता इसी ढंग की पुस्तक है-

अकबरी हिन्दी में दुअर्थी छन्द भी बहुत पाए जाते हैं संस्कृत में एक शब्द के कई अर्थ होते हैं इसलिये संस्कृत में ऐसे छन्दों का बनाना जिनमें कि दुअर्थी शब्दों के आने के कारण दो पृथक अर्थ निकलते हैं अच्छी कविता में समझा जाने लगा संस्कृत साहित्य से अपनी कविता के विषय आदि निकालने वाले अकबरी हिन्दी के कवियों ने भी दुअर्थी छन्दों का लिखना आरम्भ कर दिया, जब बात बात में बात निकलती है जब एकही वाक्य में से २।२ और चार चार अर्थ निकलते हैं तो भला ऐसे वाक्यों के प्रयोग द्वारा कौन नहीं अपनी वाक्पटुता का दिखलाना पसन्द करेगा? परन्तु यह वाक्पटुता झूँठ बोलने के बराबर है और जिस कविता में ऐसे शब्दों और वाक्यों का प्रयोग हो वह झूँठी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कविता है दुअर्थी शब्दों द्वारा वाक्य में चमत्कार लाने का एली-ज़िबेथ के समय में अँग्रेज़ी साहित्य में भी अधिकतर प्रचार था शेक्सपियर अपने काव्य में बहुतयात से दुअर्थी शब्दों का प्रयोग करता था परन्तु अब ऐसी कविता को लोग नहीँ पसन्द करते एडिसन का मत है कि 'Pun is false wit'।

सूरदास और केशव दास दोनों की कविता में ऐसे छन्द बहुत से पाए जाते हैं परन्तु तुलसी दास की कविता में बहुत कम उर्दू के साहित्य में भी दुअर्थी शब्दों को लेकर बहुत कविता कीगई शमसुल उलमा मौलवी मुहम्मद हुसैन साहब आजाद का ख्याल है कि यह हिन्दी कविता ही का प्रभाव है कि उर्दू में भी ऐसी कविता होने लगी।

———:o:———

अकबरी हिन्दी की कविता की भाषा

अकबरी हिन्दी की कविता की भाषा ब्रजभाषा थी तुलसी दास ने अपनी कविता में एक अन्य ही भाषा का प्रयोग किया और केशवदास की भाषा में बुन्देलखण्डी हिन्दी का अधिक अंश है-परन्तु सूरदास से लेकर उस समय के छोटे छोटे कवि तक ब्रज-भाषा का प्रयोग किया करते थे-और तुलसीदास और केशवदास की भाषा ब्रजभाषा से नितान्त ही बची हुई नहीँ है वरन केशव-दास की भाषा के सम्बन्ध में तो यह कहना चाहिए कि वह बुन्दे-लखण्डी हिन्दी मिश्रित ब्रजभाषा है निदान उस काल में ब्रज भाषा ने कवियों पर अपना पूरा पूरा अधिकार जमा लिया था-परन्तु आज कल की खड़ी बोली के चिन्ह अकबरी हिन्दी में भी कहीँ कहीँ देख पड़ते थे-सूरदास ने एक स्थल पर लिखा है:—

काँधे कामरि हाथ लकुटिया गाय चरावने जाते।
दही भात की छाँक मँगावत ग्वालन सँग मिलि खाते॥

इन पङ्क्तियों में क्रियाओं के रूप 'जाते' और 'खाते' ध्यान देने योग्य हैं। ये 'जाना' और 'खाना' धातुओं का भूत

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

काल में रूप है अब इनके अर्थ में 'जाते थे' और 'खाते थे' का प्रयोग किया जाता है।

अकबरी हिन्दी के सम्बन्ध में श्रीयुत् पण्डित महावीरप्रसाद जी द्विवेदी अपने एक लेख में लिखते हैं:—

"इस समय हिन्दी के अनेक उत्तमोत्तम कवि हुए। परन्तु कविता ही की ओर सबका ध्यान रहा। कवियों को कविता के सिवाय और किस ओर ध्यान हो सकता है? छन्द, अलङ्कार, नायिका भेद आदि पर भी अनेक ग्रन्थ इसी समय बने। भगवद्भक्तों ने अपने अपने देवता के गुणगान गर्भित अनेक पुस्तकें लिखीं। बिहारी लाल ने अपने ७०० दोहों में शृंगार रस की पराकाष्ठा कर दी; सूरदास, ने अपने पदों में भक्ति की पराकाष्ठा कर दी; और भूषण ने अपनी कविता में वीररस की पराकाष्ठा कर दी। सूर, तुलसी, बिहारी और केशव इस माध्यमिक साहित्य की आत्मा हैं, और सहस्रावधि कवियों के होते भी इन के बिना, यह साहित्य शरीर निर्जीव ही समझना चाहिए।" (सरस्वती भाग ४ सङ्ख्या २-३)

इस प्रकरण में अकबरी हिन्दी के सम्बन्ध में जो कुछ कहा गया है उस में का अधिकांश आजकल की हिन्दी की कविता के सम्बन्ध में भी सत्य है। अकबरी हिन्दी का जामा हमारी कविता ने अब तक नहीं दूर किया है। देखें हमारी भाषा की कविता किस दिन अकबरी हिन्दी की कविता के गुणों को लिए हुए उस के दोषों से मुक्त होती है।

अँग्रेज़ी के इतिहास के उस समय को जब कि उस पर लैटिन और ग्रीक का बहुत प्रभाव था—जब उसकी पुस्तकों के विषय आदि लैटिन और ग्रीक से अधिकतर लिए जाते थे Classical period कहते हैं उसी प्रकार हिन्दी के इतिहास में अकबरी हिन्दी का समय संस्कृत-समय कहा जायगा क्योंकि उस समय हमारे साहित्य की माता—अर्थात् उस के विषय और भाव आदि का उद्गम स्थान—प्रधानतः संस्कृत भाषा ही थी।

—:o:—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अकबरी हिन्दी के कवि।

कविता का रोजगार।

अकबर के समय में आश्रयदाताओं की बहुतायत से और कवियों के बहुत आदर और सम्मान को देखकर सभी कोई कविता करने लगा था भाटों और ब्राह्मणों ने तो कविता करने का रोज़गार ही खड़ा कर लिया था—जब घर में खाने को कम हुआ तो एकाध कवित्त बना किसी बड़े आदमी के यहाँ पहुँच गए और दो चार हज़ार से लेकर लाख दो लाख तक वसूल कर लाए-घर बैठ के खूब खाया उड़ाया और जब फिर कमी हुई तो फिर कमर कस किसी बड़े आदमी के यहाँ जा पहुँचे—तात्पर्य यह नहीं है कि इनमें कोई अच्छा कवि होता ही नहीं था दो चार इनमें के ऐसे हुए हैं कि यदि उनके बनाए हुए फुटकर छन्दों में से किसी एक ही पर उनकी कविता का विचार किया जाय तो शायद उनके सामने तुलसी और सूर को भी शर्माना पड़े।

———:o:———

कवि और माली।

इनकी उपमा उन मालियों से दी जा सक्ती है कि जो फूलों के फुटकर अति सुन्दर गुलदस्ते बना २ कर तो पेश करते हैं परन्तु फुलवारी का सजाना या उस क्यारी का लगाना नहीं जानते कि जिसमें रङ्ग के हिसाब से यथा स्थान आरोपित रङ्ग विरङ्गे पुष्प महक २ कर मन और आँख दोनों को लुभाते हों—यदि ऐसे फुटकर छन्द बनाने वाले भी पूरे कवि की परिभाषा में आ सक्ते हैं तब तो अकबरी हिन्दी के कवियों की नामावलि ही से इस लेख के कई पृष्ठ भर जायेंगे—परन्तु जैसे केवल गुलदस्ते सजाने से कोई सच्चा माली नहीं कहा जा सकता वैसे ही एकाध छन्द बनाने वाले को पूरा कवि नहीं कह सकते। सच्चा माली वही है जो गुलदस्तों के सजाने के अतिरिक्त फूलों की क्यारियों को लगाना, फुलवाड़ी को सजाना भी, जानता हो। पूरा कवि वही है जोकि फुटकर छन्दों के सिवाय—समस्यापूर्ति करने के अतिरिक्त—महाकाव्य का रचना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बड़ी देर तक आनन्दधारा बहाने वाली, मनको द्रवित करदेने वाले छन्दों की श्रृङ्खला को गूँथना भी जानता हो केवल जानता ही नहीं वरन ऐसी श्रृङ्खलाओं को रचकर संसार के लाभ के लिये छोड़ भी गया हो।

———:o:———

कवि का समाज के प्रति धर्म।

मन बहलाने और हृदय को द्रवित कर देने तथा कल्पना के आनन्द को चखा देने के द्वारा संसार का उपकार संसार का सुधार करना भी कवि के धर्मों में एक मुख्य धर्म है-इस धर्म का सम्पादन कवि श्लेष और व्यङ्ग के द्वारा अथवा कथनात्मक (Narrative) कविता से नीति और शिक्षा (Morals) टपका कर करता है कभी२ एकाध छन्द में भी कवि ऐसी शिक्षा के दर्शाने में सफल होसक्ता है परन्तु प्रायः उनका चित्त पर प्रभाव स्थायी होता नहीं-चित्त पर प्रभाव उत्पन्न करना और उसको वहाँ कुछ काल तक ठहराए रखना तो कथनात्मक कविता ही का विशेष काम है। समाज भर पर-केवल व्यक्तियों ही पर नहीं-प्रभाव डालना, छोटे से लेकर बड़े तक, सर्वसाधारण का सुधार करना कथनात्मक कवि और कथनात्मक कविता ही का काम है। तुलसी दास के रामचरितमानस द्वारा-जोकि उत्तरीय भारत की बाइबिल बन रहा है-इतने समाज के सुधार और उसके संशोधन का होना ऊपर कहीगई बात का प्रत्यक्ष प्रमाण है। इस लिये गुण वाद वाली फ़िलासफ़ी (utiblareanism) की दृष्टि से भी फुटकर छन्दों के बनानेवाले कवियों से बढ़ कर प्रतिष्ठा कथनात्मक कवियों ही की होना उचित है।

———:o:———

कवि प्रतिभा और कवि-कौशल।

सब कोई अपने जीवन में एक बार कवि हो जाता है बढ़ती जवानी में हर किसी के मन में उमङ्गें उठा करती हैं इन उमङ्गों को वह भाव, चेष्टा या कार्य द्वारा या भाषा (गाना इत्यादि) द्वारा प्रगट करता है इस उमङ्ग प्राकट्य का नाम कविता है और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस उमङ्ग समूह का 'कविप्रतिभा'। कवि में ऐसी उमङ्गों का आतिशय्य होता है यह आतिशय्य दैवी होता है परन्तु अपनी कल्पना की सहायता से समुचित शब्द-चित्र द्वारा इस आतिशय्य का प्रगट करना कवि सीख भी सक्ता है, इस को कवि की कला या कवि-कौशल (art of poetry) कहेंगे।

——:o:——

सच्चे कवि की कविता की कसौटी।

सच्चे कवि की कविता के पढ़ने से पढ़ने वाले के मन में वही काल्पनिक चित्र उत्पन्न हो जाता है जो कि कवि के मन में था और चित्र के उत्पन्न होते ही पाठक के मन में वही उमङ्ग-तरङ्ग उठने लगती है जिसके कि आतिशय्य ने कवि को कविता करने के लिये विवश किया था।

——:o:——

कवि और कलावन्त का फ़र्क़।

यही पूरे कवि की कविता की कसौटी है यहाँ पर कवि और कलावन्त का फ़र्क़ भी ज़रा ध्यान देने योग्य है क्योंकि इसी फ़र्क़ के कारण केवल कर्णमधुर शब्दविन्यास द्वारा, शब्द मात्र ही से, मस्त कर देने वाला गुणी कवि नहीं कहा जायगा। कलावन्त अपने गान की ध्वनि द्वारा सुन्ने वाले के चित्त को मोहित कर देता है और कवि भी अपनी वाणी द्वारा यही काम करता है परन्तु कलावन्त केवल कर्णेन्द्रिय पर शब्द (स्वर और लय) द्वारा आघात करके सुन्ने वाले को मोहित करता है उसे काल्पनिक चित्र के श्रोता के हृदय में उत्पन्न करने की आवश्यकता नहीं होती; वरन यदि कहीं किसी कारण से श्रोता के चित्त में कोई काल्पनिक चित्र उत्पन्न भी हो जाता है तो उसके (अर्थात् श्रोता के) गायक की तान में तन्मय होने में बाधा पड़ती है अतएव कलावन्त को काल्पनिक चित्र श्रोता के ध्यान को न बँटा लेवे इसकी फ़िक्र करनी पड़ती है। इसके विरुद्ध कवि को अपनी उमङ्गें पाठक के चित्त में पैदा करने के लिए उसके चित्त में काल्पनिक चित्र के (जिसको कि कवि ने स्वयं अनुभव किया था) अङ्कित करने की परमावश्य-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कता है काल्पनिक चित्र का अङ्कित करना (या उसका घराना) कवि और कलावन्त का फ़र्क़ है। सफलता के साथ शब्दों द्वारा इस काल्पनिक चित्र के चित्रण से कवि-कौशल की नाप होती है इसलिये पूरे कवि में इन दो गुणों की आवश्यकता है कवि प्रतिभा (poetic genius) और कवित्कला या कवि कौशल (art of poetry).

———:o:———

एकाध ही छन्द बना कर कोई पूरा कवि क्यों नहीं कहा जा सक्ता।

किसी कवि के एकाध छन्द में भी उसकी प्रतिभा की झलक आजाती है और एकाध छन्द द्वारा भी वह अपना कौशल दिखला सक्ता है परन्तु इस तरह उसका पूरा २ पता नहीं लगसक्ता है क्योंकि बहुधा सामयिक एकाध छन्द में दर्शाया हुआ कौशल आकस्मिक (suggested by the occasion) भी होता है। इसलिये पूरे कवि की उपाधि केवल कवि प्रतिभा और कवि कौशल ही पर नहीं वरन 'कविता समूह' पर भी निर्भर है क्योंकि इसी के द्वारा उसकी प्रतिभा और उसके कौशल का पूरा २ परिचय मिलता है।

———:o:———

अकबरी हिन्दी के 'पूरे कवि'

इस दृष्टि से देखने से अकबरी हिन्दी के कवियों में 'पूरे कवि' थोड़ेही निकलेंगे 'सूर' और 'तुलसी' सरीखे केवल दो चार। तो क्या अकबरी हिन्दी की कविता साहित्य-वाटिका में फुटकर छोटे छोटे परन्तु अपने सौरभसे मस्त करदेने वाले पुष्पों के लगाने वाले मालियों की बिलकुल ही उपेक्षा कर दी जाय? क्या महामालियों की लगाई हुई फूलों की क्यारियों मे से फूलों को चुन २ कर गुलदस्ते तैयार करने वाले छोटे कवियों का नाम भी न लिया जाय? नहीं इच्छा तो होती है कि इन फूलों को एक २ करके और उनको लगाने वालों के गुण को देखें और एक एक गुलदस्ते को उठाकर उसकी शोभा निरखें माना कि उनके बनाने वालों ने दूसरों ही के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लगाए हुए पुष्पों को चुन चुन कर अपने 'गुलदस्ते' सजाए परन्तु इस सजाने के लिये भी कुछ कौशल चाहिये कौन रङ्ग किस रङ्ग के पास रखने से ज्यादह चटक और सुन्दर मालूम पड़ता है इसके जानने में भी तो कुछ कुशलता दर्कार होती है इस कुशलता और निपुणता का दिखलाने वाला भी तो हमारे धन्यवाद का पात्र है परन्तु खेद है कि इस छोटे से लेख में इतना स्थान नहीं और न उसके लेखक ही में इतनी योग्यता कि यह इच्छा पूरा हो सके।

अतएव सूर' 'तुलसी' और 'केशव' को छोड़कर अकबरी हिन्दी के इतर कवियों में से कुछ के काव्य और जीवन का दिग्दर्शन मात्र कर के और 'सूर' 'तुलसी' और 'केशव' का कुछ थोड़ा सा परिचय देकर इस लेख को समाप्त करना ठीक मालूम होता है॥

———:o:———

अकबर के दरबार के कवि।

गोस्वामी तुलसीदास के समकालीन एक होलराय कवि हो गए हैं उन्होंने एक छन्द में अकबर के दरबार का वर्णन किया है वह छन्द यह है।

दिल्ली ते तखत ह्वै है बखत ना मोगल
कैसो ह्वै है ना नगर कहूँ आगरा नगर ते॥
गङ्ग ते न गुणी तानसेन से न तानबन्द,
मान ते, न राजा औ न दाता बीरबर ते॥
खान खानखाना ते न नर नरहरि ते,
ह्वै है ना दिवान कोऊ बेडर टडर ते॥
नवोखण्ड सात दीप सातहू समुद्र बीच,
ह्वै है ना जलालुदीन शाह अकबर ते॥

बाबू राधाकृष्ण दास ने स्वसम्पादित सूरसागर की भूमिका में निम्न लिखित सवैया उद्धृत किया है।

पूषी प्रसिद्ध पुरन्दर ब्रह्म सुधारस अमृत अमृत बानी
गोकुल गोप गुपाल गणेश गुणी गुण सागर गंग सुज्ञानी।
जोध जगन्नज में जगदीश जगामग जैत जगत है जानी
कोर अकब्बर सैन कथी एतली मिलिकै कविता जु बखानी॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इन छन्दों से और अन्य अनेक ऐतिहासिक प्रमाणों से अकबर के दर्बारी कवियों का पता लगता है।

—:o:—

अकबर के समय के अन्य कवि।

सूरदास अकबर के समकालीन थे उनके समय के कवियों के नाम के दोहे बाबू राधाकृष्ण दास जी ने अपने सूर सागर की भूमिका में दिए हैं अकबर के समय के अथवा उसके लगभग के मुख्य कवियों का पता उन दोहों से मिलता है उन समस्त कवियों के काव्यादि का विचार इस लेख में किया नहीं जायगा इसलिये यहाँ पर उन दोहों के उद्धृत करने की आवश्यकता प्रतीत नहीं होती हाँ उन कवियों का कि जिनका वर्णन आगे किया जायगा नामोल्लेख कर देना आवश्यक है।

—:o:—

अकबरी हिन्दी के छोटे कवि।

अकबरी हिन्दी के कवियों का नाम लेने में सबसे प्रथम स्वयं अकबर बादशाह का नाम आता है फिर बीरबल, खानखाना, रहीम, गंग, और नरहरि का नाम लेना ठीक है क्योंकि ये अकबर के दरबार के प्रधान कवि थे उनके उपरान्त उस समय के काव्य के प्रतिनिधि स्वरूप रसखानि कादिर मुबारक नरोत्तमदास और देव(?)कवि के वर्णन के साथ अकबरी हिन्दी के छोटे कवियों का परिचय समाप्त होगा यहाँ पर तानसेन, बैजूबावरे और सदारंग का भी नाम लेना उचित था परन्तु यह तीनों इतने कवि न थे जितने कि कलावन्त, इनकी प्रसिद्धि इनकी तान ही पर विशेष कर स्थित है।

—:—

तथापूरे कवि।

तुलसी' और 'केशव' इन पूरे कवियों के परिचय के लिये एक पृथक प्रकरण देना ही ठीक है। यहाँ पर यह भी कह देना आवश्यक मालूम पड़ता है कि अकबरी हिन्दी के कवियों के साथ साथ बिहारी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लाल और उनकी कविता का परिचय इस लेख में क्यों नहीं आया है क्योंकि उनकी कविता का भी भाषा आदि की दृष्टि से अकबरी हिन्दी की कविता में ग्रहण हो सक्ता है। परन्तु बिहारी लाल का समय अकबर से कोई पचास वर्ष बाद का है इसी लिये 'सूर' 'तुलसी' और 'केशव' के साथ उनका वर्णन नहीं किया गया है।

———:o:———

अकबरी हिन्दी के कवियों के जीवन चरित्र सम्बन्धी एक साधारण वक्तव्य।

भारतवासियों के जीवन चरित्र लिखने की ओर ध्यान न देने के कारण भारत के ऐतिहासिक पुरुषों और महात्माओं के जीवन के सम्बन्ध में कुछ जानने के लिये हमारे पास कुछ उपाय नहीं है और यदि कुछ है भी तो वह विश्वसनीय नहीं क्योंकि वे अधिकतर अटकल पर स्थित हैं सुनी सुनाई बातें ही प्रायः उनका आधार हैं कोई ऐतिहासिक प्रमाण नहीं अकबरी हिन्दी के कवियों के जीवनचरित्र का भी यही हाल है कवि के काव्य को ठीक २ समझाने के लिये उस के जीवन चरित्र का जानना परमावश्यक है क्योंकि उसकी कविता विशेष का उस के जीवन की घटना विशेष से घनिष्ठ सम्बन्ध होता है यदि कवि दुःख में होता है उसका चित्त दुखित होता है तो वह प्रायः ऐसी कविता करता है कि जिसके पठन से हमारे चित्त में दुःखमय विचार उत्पन्न होते हैं इस लिये किसी कविता का पूरा २ आनन्द लेने के लिये कवि के जीवन की उस घटना का भी अच्छीतरह जानना ज़रूरी है जिससे कि वह कविता जनित हुई हो परन्तु अकबरी हिन्दी के कवियों का जीवन अन्धकाराच्छन्न है अटकल के प्रकाश में हमें उन के जीवन चरित्र का बहुत कम हाल मिलता है इस लिये उनकी कविता के पूरे आनन्द से हम वंचित हैं।

——:o:——

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अकबर ।

अकबर का जन्म सन् १५४२ में उस समय हुआ था जब कि उन का पिता हुमायूँ शेरशाह सूर से हार कर राजपूताने से होता हुआ भागा जा रहा था शेरशाह ने सारा राज्य छीन लिया था और हुमायूँ बड़ी विपत्ति में था उन्हीं दिनों को लक्ष्य करके राजा जोध पुर के यहाँ के अजबेश कवि ने कहा है:—

बढ़ी बादशाही ज्योंही सलिल प्रलय के बढ़ैं
राना राव उमराव सब को निपात भो।
बेगम बिचारी वही कतहूँ न थाह लही
बाँधो गढ़ गाढ़ो गूढ़ता को पक्षपात भो॥
शेरशाह सलिल प्रलय को बढ्यां अजबेश
बूड़त हुमायूँ के बड़ोई उतपात भो।
बलहीन बालक अकब्बर बचाइबे को
बीर भान भूपति अच्छैवट को पात भो॥

सन् १५५६ में हुमायूँ की मृत्यु हुई और तेरह वर्ष की उमर में अकबर सिंहासन पर बैठे और १५५६ से सन् १६०५ तक राज्य किया अकबर के राज्यकाल का वर्णन प्रसङ्गवशात् इस लेख में आ चुका है।

अकबर की रति शृङ्गार रस की ओर अधिक थी उनका कर्तव्याकर्तव्य विषयक आचरण (moral character) दोष रहित न था, उन के बनाए हुए फुटकर कवित्त पाए जाते हैं, वे प्रायः शृङ्गार रस ही के हैं और उन का भाव बड़ाही घृणित है उन में कोई विशेष कविप्रतिभा नहीं है अकबर के नाम से बने हुए दो चार दोहे भी मशहूर हैं इस में से दो एक का यहाँ पर लिख देना ठीक है।

कहते हैं कि एक बार अकबर हाथी पर चढ़ कहीं जा रहे थे एक दरिद्री कवि ने उन के प्रति यह दोहा पढ़ा:—

अकबर कमला कर गहे, झर २ बरसत नीर
मो शिर छत्र दरिद्र को, बूँद न पड़त शरीर।

अकबर ने हाथी पर से उत्तर में कहा:—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मिलत करम अनुसार, बहुत पपीहन स्वाति जल ।
बहुतन उपल प्रहार, होत एक ही जलधिसों ॥

बीरबल की मृत्यु पर अकबर ने अपना शोक प्रगट किया:—

सब को सब कुछ दीन, दुःख न काहू को दियो ।
सोहू मरि करि दीन, भली निबाही बीरबल ॥ *

अकबर की कीर्ति स्पृहा नीचे लिखे दोहे से ज़ाहिर होती है:—

जाको यश है जगत में जगत सराहै जाहि
ताको जीवन सफल है कहत अकब्बर शाहि ।

इन दोहों से इतना तो ज़रूर मालूम होता है कि अकबर को हिन्दी और हिन्दी कविता से शौक़ था ।

——:o:——

बीरबल का जीवन चरित्र ।

(२) बीरबल कालपी के रहने वाले कनौजिया ब्राह्मण थे। कोई २ कहते हैं कि ये कनौजिया नहीं वरन ब्रह्मभट्ट थे राजा मानसिंह की कृपा से अकबर के दरबार तक इनकी पहुँच हुई थी। परन्तु बाद को तो ये अकबर के दाहिने हाथ बन गए थे अकबर ने इनको पाँच हज़ारी के पद और राजाकी उपाधि से विभूषित किया था कहते हैं कि ये हिन्दी के अच्छे कवि थे कविराय की इन्हें उपाधि मिली थी कविता में ये 'कविराय' 'कवि' वा 'ब्रह्म' अपना उपनाम डालते थे। ये बड़े दानी थे; कवियों का बड़ा आदर करते थे सबसे बड़ा गुण इनमें हास्यप्रियता थी हँसी और मज़ाक़ की बातों से अकबर का मन सदा प्रसन्न रखते थे इन के और अकबर के नाम से सैकडों 'लतीफ़े' आज दिन भी मशहूर हैं बातचीत में यह बड़े निपुण और हाज़िरजवाब थे इनकी बनाई हुई बुझनी पहेलियाँ भी बहुत मशहूर हैं उत्तरीय भारत के गावों में जाड़े की रातों में 'अलाव' के इर्द गिर्द बैठ कर देहाती बुड्ढे और जवान आज कल भी बुझनी पहेलियाँ

* पाठान्तर—सबको सब कुछ दीन, एक दुसयो दुसह दुख ।
सो दुख हमको दीन, कछु नहिं राख्यो बीरबर ॥
(पत्रिका सम्पादक)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आपस में कह कर जी बहलाते हैं 'कहँईं पहेली बीरबर बूझईं अकबर साहि' कमसे कम दो चार बार तो रात भर में उनके मुँह से निकलता होगा।

———:o:———

बीरबल की काबुल पर चढ़ाई।

अकबर के भाई शाहज़ादे हकीम (हलमि ?) की मृत्यु से काबुल का राज्य भी अकबर के हाथ आगया था अकबर ने राजा मानसिंह को काबुल का शासक नियत कर दिया था परन्तु उपद्रवी अफ़ग़ानों को राजा मानसिंह नहीँ दबा सके थे इसलिये अकबर को समय समय पर उनकी मदद के लिये सेना भेजनी पड़ती थी "सन् १५८६ ई० के जनवरी में इन अफ़ग़ानों को सदा के लिये शान्त करने के इरादे से एक बड़ी भारी फ़ौज तयार कर के भेजी इस महती सेना के दो भाग थे एक के सेनापति राजा बीरबल और दूसरी के ज़ैनख़ाँ किए गए जहाँ तक मैदान था वहाँ तक तो यह सेना जय पाती हुई और अपने आगे सब कुछ ध्वंस करती हुई चली गई परन्तु अब पहाड़ों में होकर जाना पड़ा तो थोड़ी दूरतक तो राजा बीरबल अपनी सेना लिए हुए बढ़ गए पर अन्त को उन्हें पहाड़ी रास्तों से तङ्ग होकर मैदान में लौट आना पड़ा परन्तु ज़ैनख़ाँ ने इससे कुछ और अधिक साहस दिखाया वह अपनी सेना लिए हुए पहाड़ी मार्ग और पहाड़ों को तय करते हुए कुछ और आगे बढ़ गए परन्तु मार्ग श्रम से उनकी सेना बहुत थक गई थी और उस पर दुशमनों की ढिठाई और पल २ पर बढने वाली संख्या ने बहुत हैरान कर दिया था यहाँ तक कि उनको लौट कर फिर बीरबल की सेना से मिल जाना पड़ा यदि इस समय अकबर ने और सेना न भेज दी होती तो यह दोनों सेनापति आक्रमण जारी रखने में असमर्थ होते।

———:o:———

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बीरबल की मृत्यु ।

"......... बीरबल और ज़ैनख़ाँ की बनती नहीँ थी। ज़ैनख़ाँ की सलाह के विरुद्ध यह निश्चित रक्खा गया कि समस्त सेना के साथ एकदम फिर चढ़ाई की जाय। यह दृढ़ होजाने पर दोनों सेनापतियों ने अपनी फ़ौजेँ आगे को बढ़ादीँ। थोड़ी देर में वे एक मज़बूत दर्रे के पास पहुँच गए राजा बीरबल तो उसके ऊपर चढ़ गए परन्तु ज़ैनख़ाँ नीचेही रहे। दिन भर के कठिन परिश्रम के बाद बीरबल दर्रे की चोटी पर पहुँच पाए पर दुश्मनों ने वहाँ उनको इतना तङ्ग किया कि उनकी सारी सेना तितर बितर होगई और मैदान को भाग गई इधर उसी समय में ज़ैनख़ाँ पर भी दुश्मनों ने धावा कर दिया। वे बड़ी मुश्किल से अपने को बचा सके एक रात और उसके दूसरे दिन के कुछ भाग तक लड़ाई होती रही एक रात और एक दिन के बाद दोनों सेनापतियों को अवकाश मिला कि ठहर जाँय और अपनी 'तितर बितर' हुई, सेना को इकट्ठा कर सकेँ ज़ैनख़ाँ ने सलाह दी कि सन्धि करली जाय पर भला बीरबल कहाँ उनकी सुनते थे उन्होंने ज़ैनख़ाँ की एक बात न मानी और यह ख़बर पा कि अफ़ग़ानों का इरादा है कि रात को धावा कर के बची बचाई सेना को भी नष्ट कर डाले राजा बीरबल ने ज़ैनख़ाँ से बिना परामर्श किए ही अपनी सेना लेकर एक बड़े तङ्ग दर्रे में से होकर मैदान में वापस निकल जाने का यत्न किया। शायद यह ख़बर उन्हें धोखे में फँसाने ही की इच्छा से दीगई थी क्योंकि ज्योंही वे उस तङ्ग दर्रे के मुँह में घुसे कि अफ़ग़ान लोग उन पर टूट पड़े और लगे तीर और पत्थरों की बौछार करने, अफ़ग़ानों ने बीरबल को चारों ओर से घेर लिया; और हाथों में तलवार ले २ कर पहाड़ी के नीचे चकित सिपाहियों पर झपट पड़े। बीरबल ने कितनाही चाहा कि अपनी फ़ौज को सुविहित रक्खें परन्तु उनकी एक न चली सारे यत्न निष्फल हुए; आदमी, घोड़े और हाथी एकही में मिल कर दर्रे की दूसरी ओर को भाग चले इस गड़बड़ में राजा बीरबल और अनेक वीर योधा काम आए।

———:o:———

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वीरवल की मृत्यु पर अकबर का शोक प्रकाश

"...... ..बीरबल की मृत्यु पर अकबर को बड़ा शोक हुआ। बीरबल का शव नहीं पाया गया था इस लिये खबर फैल गई थी कि अभी बीरवल दुश्मनों के हाथ में जीवित हैं-स्वयं अकबर ने इस समाचार पर वीरवल के जीवित रहने की आशा बाँध रक्खी थी-बहुत दिनों के बाद एक धूर्त ने मशहूर कर दिया कि मैं बीरबल हूँ-यह बनावटी वीरबल अकबर के दर्बार में हाज़िर होने के लिये जा रहे थे कि रास्ते में यह भी चल बसे अकबर ने फिर शोक मनाया और इन बनावटी बीरबल की मृत्यु पर 'मातमी लिबास' पहिना क्योंकि उसके ख़याल में तो यह उसका प्यारा मित्र बीरबल ही था" (एलिफिन्सटन लिखित भारतवर्ष का इतिहास) इस प्रकार सन १५८६ई० में छप्पन वर्ष की अवस्था में (क्योंकि बीरबल का जन्म सन् १५२८ में हुआ था) राजा बीरबल का मरण हुआ कहते हैं कि जब घोड़े पर चढ़ कर बीरबल इस चढ़ाई पर जाने लगे थे तो स्वयं अकबर बादशाह इनके घोड़े की रकाब पकड़ कर कुछ दूर तक चले थे बीरबल के आँसू निकल पड़े और कहा महाराज बस अब मैं इस मुहिम पर से जीता न लौटूँगा क्योंकि मेरी प्रतिष्ठा और मान की पराकाष्ठा हो गई' अकबर का भी दिल कहता था कि अब बीरबल से इस संसार में भेंट न होगी इस लिये उन्होंने हुक्म लगा दिया था कि जो कोई हमसे आके यह कहेगा कि बीरबल मर गए तो हम उसका तुरन्त शिर कटवा लेंगे बीरबल के मारे जाने पर लोगों को चिन्ता हुई कि कैसे बादशाह तक यह ख़बर पहुँचाएँ-अन्त को सबने मिल कर एक कवि (गङ्ग या केशव) को अकबर के पास भेजा उसने अकबर को यह दोहा पढ़ सुनाया:—

याचक सब भूपति भए, रह्यो न कोई लेन
इन्द्रहु को इच्छा भई, गयो वीर बर देन ॥

——:o:——

बीरबल की कविता।

बीरबल की लिखी हुई कोई पूरी पुस्तक नहीं मिलती है उन्होंने कोई पूरी पुस्तक लिखी ही नहीं-पर हाँ इनके लिखे हुए फुटकर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कवित्त बहुत पाए जाते हैं-उनमें का एक छन्द देखिए:—

एक समय हरि धेनु चरावत बेनु बजावत पेन रसालहि ।
दीठि भरी मन मोहन की वृषभान सुता उर मोतिन मालहि ॥
सो छवि ब्रह्म लपेटि हिये करसों कर लै करकंज सनालहि ।
शंभु के शीश कुसुंभ के पुंज मनो पहिरावति ब्यालिनि ब्यालहि ॥

राजा बीरबल और अकबर बादशाह कोई बड़े भारी कवि नहीं थे कि जिसके कारण उनका उल्लेख किया गया है हाँ वे कविता के उत्तेजक अवश्य थे इसलिये उस समय के कवियों का नाम लेते समय उनकी प्रति कृतज्ञता प्रकाश करना अनुचित नहीं मालूम पड़ा।

———:o:———

ख़ानख़ाना रहीम ।

ख़ानख़ाना रहीम ख़ानबाबा बैरमख़ां के पुत्र थे बैरमख़ाँ की मृत्यु के उपरान्त अकबर की उनपर बड़ी कृपादृष्टि रहती थी अकबर ने उन्हें बड़े २ 'मनसब' और पदों से विभूषित किया था-अकबर की सेना के सेनापति होकर उन्हों ने कई बार दक्षिण देश पर चढ़ाई की थी-शाहज़ादा मुराद की इनसे कुछ बनती नहीं थी इसलिये मुराद का मन रखने के लिये अकबर एक बार इनसे रुष्ट हो गया था कहते हैं कि "एक बार अकबर ने इनको अपने राज्य से निकाल दिया तब यह अपनी बेगम सहित रीवाँ के राजाराम के यहाँ गए उस समय राजा साहब चित्रकूट में थे यह वहाँ ही पहुँचे राजा का यह नियम था कि किसी मुसल्मान से नहीं मिलते थे परन्तु जब रहीम ने उनके पास यह दोहा लिख कर भेजा कि:—

आए राम रहीम कवि, किए जती को भेश ।
जापै विपता परत है, सो आवत तुव देश ॥

तब उन्हें इनसे भेंट करनी ही पड़ी रहीम ने बहत्तर वर्ष के होकर मृत्यु पाई ।

———:o———

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रहीम का पाण्डित्य ।

ख़ानख़ाना रहीम अर्बी फ़ार्सी और तुर्की के महान पण्डित थे—बाबर बादशाह ने अपना जीवनचरित्र तुर्की भाषा में लिखा है उसका इन्हों ने फ़ार्सी में उलथा किया था संस्कृत के भी यह बड़े अच्छे पण्डित थे इनके बनाए हुए संस्कृत के श्लोक बड़े कठिन समझ जाते हैं और ब्रजभाषा के तो यह कवि ही थे।

———:o:———

रहीम की कविता ।

रहीम के बनाए हुए दोहे बहुत से पुस्तकाकार में छप भी चुके हैं और बाज़ारों में रहिमनशतक के नाम से बिकते हैं—नीति विषय इनके दोहे बहुत मशहूर हैं वह बड़े सरस हैं और उनमें देहाती बोली बहुधा पाई जाती है यथाः—

रहिमन राहिला की भली, जो परसै चित लाय।
परसत मन मैला करै; सो मैदा जरिजाय॥
खीरा शिर धरि काटिए, मलिए निमक लगाय।
करुये मुख को चाहिये, रहिमन यही सजाय॥

अर्बी फ़ार्सी और संस्कृत के पण्डित रहीम का 'रहिला' और 'सजाय' ऐसे शब्दों का व्यवहार करना ध्यान देने योग्य बात है स्वभावोक्तियाँ भी रहीम के दोहों में खूब भरी हुई हैं यही कारण है कि उनके दोहे बात २ पर उद्धृत किए जाते हैं—एक घटना को और तज्जनित भावों को छोटे से दोहे में रहीम ने बड़ी सफलता के साथ चित्रित किया है।

पलटि चली मुसक्याय दुति रहीम उजियाय अति,
बाती सी उसकाय मानो दीनी दीप की।

मालूम होता है कि मानो बिहारी कवि ने अपनी सतसई की नींव रहीम ही के दोहों पर डाली हो मूर्ति चित्रण भी रहीम ने बहुत अच्छा किया है हज़ारों उपमाओं के देने से सब प्रकार के कमलों और नागिनियों को लाकर इकट्ठा कर देने से वह मूर्ति

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ध्यान में नहीं आ सकती जो कि इस छोटे से बरवे के पढ़ते ही सम्मुख आके खड़ी हो जाती है:—

लहरत लहर लहरिया, लहर बहार।
मोतिन जरी किनरिया, बिथुरेबार॥

इस छन्द में चित्रित मूर्ति को भी ज़रा देखिए:—

कलित ललित माला वा जवाहिर जड़ा था।
चपल चखन वाला चाँदनी में खड़ा था।
कटि तट बिच मेला पीत सेला नवेला
अलिबन अलबेला यार मेरा अकेला॥

इस चित्र में भी उपमाओं की अनुपस्थिति ध्यान देने योग्य है

——:o——

गङ्ग कवि।

गङ्ग कवि इटावा ज़िले के एकनौर नामक गाँव के रहने वाले ब्रह्मभट्ट थे शिवसिंह ने 'ज़ैनखाँ जुनार दार मारे एकनौर के' पद वाले छन्द से यह सिद्ध करना चाहा है कि यह भट्ट नहीं वरन ब्राह्मण थे कहते हैं जब गङ्ग के मर जाने पर ज़ैनखाँ ने कुछ जुल्म किया था तो गङ्ग के पुत्र ने यह कवित्त अर्ज़ी के तौर जहाँगीर शाह के यहाँ पेश किया था इस कवित्त में 'जुनारदार' पद पर शिवसिंह तर्क करते हैं कि गङ्ग कवि ब्राह्मण थे क्योंकि जुनारदार (जनेऊ दार) ब्राह्मणही को कहते हैं परन्तु ब्रह्मभट्ट भी अपने को ब्राह्मण ही समझते हैं इस लिये शिवसिंह की तर्क ठीक नहीं मालूम पड़ती गङ्ग कवि का जन्म सन् १५३८ ई० का माना जाता है अकबर के दर्बार में इनका बड़ा मान होता था राजा बीरबल ने एक बार एक छप्पय पर इन्हें एक लाख रुपया दिया था जब अकबर ने चित्तौर पर चढ़ाई की थी तो कहते हैं कि वह गङ्ग कवि को अपने साथ २ ले गए थे और रास्ते में उनसे मन बहलाने के लिये पृथ्वी राज रायसा सुना था।

——:o:——

१७

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गङ्ग कवि की कविता ।

कविता में 'उत्तम पद कवि गङ्ग को' मशहूर है पद लालित्य पर ही इन्होंने विशेष ध्यान दिया है शब्दमैत्री और अनुप्रास के लालच से अर्थ को कहीं २ न्यौछावर तक कर दिया है दूर २ की उपमाओं को सोच कर लाने में भी आपने कष्ट अधिक किया है उदाहरण स्वरूप गङ्ग कवि के दो छन्द देखिए:—

लखि पायनं पायल पायल है पुनि लङ्क ते दौरि निशङ्क गयो।
तब रूप नदी त्रिबली तरि कै करि कै मति साहस पार भयो॥
कुच दोऊ सुमेरु के बीच में री मन मेरो मुसाफिर लूटि लयो।
कवि गंग कहैं बटपार मनोज रुमावली तें ठग संग ठयो॥

लुटेरे और मुसाफ़िर का रूपक बांधने में कितना परिश्रम किया है

मृग नैनी का पीठि पै बेनी लसै मुख साजन सनेह समोइ रही।
शुचि चीकनी चारु चुभी चित में भरि भौनं भरी खुसुबोइ रही॥
कवि गङ्ग जू या उपमा जो कियो लखि सूरति ता श्रुति गोइ रही।
मनों कंचन के कदली दल पै अति साँवरी साँपिनि सोइ रही॥

'कंचन के कदली दल' को लाने के लिये हमें किसी और देश को जाना होगा परन्तु 'गोरी पीठ पर लटकती हुई काली २ वेणी' तो शायद यहीं कहीं देखने को मिलजाय।

गङ्गकवि को भाटों में आदर्श भाट कहना चाहिये बीरबल की सभा की प्रशंसा में आप कहते हैं:—

मालती शकुन्तला सी को है काम कंदला सी,
हाजिर हजार चारु नटी नौल नागरै।
पेल फैल फिरत खवास खस आस पास,
चोवन की चहल गुलावन की गागरै॥
ऐसी मजलिस तेरी देखी राजा बीरबर,
गङ्ग कहै गुँगी है के रही है गिरागरै।
मंहि रह्यो मागधनि गीत रह्यौ ग्वालियर,
गोरा रह्यौ गोरना अगर रह्यौ आगरै॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गङ्ग कवि ने खानखाना रहीम और उनके पुत्र के सम्बन्ध में कहा है:—

....

दशरथ के राम औ श्याम के सगर जैसे,
ईश के गनेश औ कमल पत्र आना के।
... ...
तैसेई सपूत खान बैरम के खानखाना,
वैसेई तुराब खाँ सपूत खानखाना के॥

———:0:———

नरहरि।

नरहरि कवि का जन्म सन् १५०५ ई० में हुआ था इनका निवास स्थान फतेहपूर ज़िले के असनी ग्राम में था। ये जाति के ब्रह्म भट्ट थे आरम्भ में इनको कविता आदि का कुछ शौक नहीं था एक बार वन में गाय चराते हुए इनकी एक महात्मा से भेंट होगई उनके प्रसाद से इनके ज्ञान चक्षु खुल गए - पहिले तो यह केवल कुछ हिन्दी ही जानते थे. पर अब इनको संस्कृत पढ़ने का भी शौक़ हुआ और काशी में जाकर संस्कृत पढ़ी. पढ़ लिख कर ये दिल्ली पहुँचे, वहाँ मुसलमानी दर्बार के योग्य बनने के लिये इन्हें कुछ फ़ारसी भी पढ़नी पड़ी इनको अकबर का पुश्तैनी कवि कहना चाहिये क्योंकि यह बाबर हुमायूँ और अकबर तीनों के दर्बार में वर्तमान थे' एक बार इन्हों ने एक क़साई के हाथ से एक गाय को बचालिया था इसपर उस क़साई ने इनकी फ़र्याद की; अकबर के पूछने पर इन्हों ने गायों की ओर से एक छप्पय में प्रार्थना की उसपर अकबर ने खुश हो कर कुछ दिनों के लिये गोकुशी बन्द करवा दी।

कहते हैं कि एक बार अकबर ने कर्ण कवि से जोकि सिरोहिया बन्दीजन थे पूछा कि भाटों में कौन सबसे बड़े होते हैं–तो उन्हों ने उत्तर दिया कि सिरोहिया क्योंकि वे कलँगी के समान हैं–तब अकबर ने नरहरि की ओर देखा। नरहरि ने कहा "हाँ महाराज कर्ण जी ठीक कहते हैं. सिरोहिया शिर के समान हैं और हम पैर के" इस उत्तर पर अकबर ने बहुत प्रसन्न होकर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इनको महापात्र की उपाधि दी . तबसे नरहरि के वंशज महापात्र कहलाते हैं .

नर हरि को ६१.वर्ष की अवस्था में एक पुत्र उत्पन्न हुआ था जो बड़े होने पर हरिनाथ महापात्र के नाम से प्रसिद्ध हुआ सन् १६०६ में सौवर्ष से भी कुछ अधिक अवस्था में नरहरि की मृत्यु हुई .

---:o:---

नरहरि की कविता ।

नरहरि के सम्पूर्ण ग्रन्थ तो कोई नहीं पाए जाते, परन्तु आप की फुटकर कविता वहुत और वहुत तरह की हैं सुनते हैं कि रुक्मिणी मङ्गल और छप्पय नीति नामक दो पुस्तकें भी इन्हों ने लिखी थीं—नीति और शिक्षा विषयक कविता भी ये बहुत करते थे—गायों की प्रार्थना वाली 'तृण जो दन्तवर धरहिं तिन्हैं मारत न सबल कोइ' इत्यादि छप्पय इनका इतना मशहूर है कि उसके यहाँ पर लिखने की आवश्यकता नहीं प्रतीत होती; नरहरि की एक गर्वोक्ति देखिए :—

नाम नरहरि है प्रशंसा सब लोग करैं,
हंसहू से उज्ज्वल सकल जग व्यापे है;
गंगा के तीर ग्राम असनी गोपाल पुर,
मन्दिर गोपाल जीको करत मंत्र जापे हैं;
कवि बादशाही मौज पावै बादशाही,
वो जगावै बादशाही जाते अरि गण काँपे हैं;
जब्बर गनीमन के तोरिवे को गब्बर,
हुमायूँ के बब्बर, अकब्बर के थापे हैं,,

---:o:---

रसखानि

सय्यद इब्राहीम (रसखानि) अवध प्रान्त के अन्तर्गत पिहानी नामक प्रसिद्ध क़सबे के रहने वाले थे। मुसलमान होने पर भी इन को हिन्दू धर्म से बड़ा प्रेम था। और राधाकृष्ण की भक्ति में सदा मस्त रहा करते थे यहाँ तक कि माला और कंठी को धारण

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कर ब्रज मण्डल में घूमा करते थे । कट्टर मुसलमान इनके इस आचरण पर बहुत रुष्ट हो गए थे-कहते हैं कि एकबार उन्हों ने अकबर से रसखानि की बड़ी बुराई की और न जाने क्या सुझा दिया कि उन्हों ने इनको बँधवा मँगाया । सामने आने पर पूछा कि कहो तुम्हें अब कौन बचावेगा. तो रसखानि ने उत्तर दिया:—

का रसखानि को करिसकै कोऊ घूर्त लबार ।
जो पति राखन हार है माखन चाखन हार ॥

कहते हैं कि रसखानि अबुलफ़ज़ल के भानजे थे. रसखानि का जन्म सम्वत् शिवसिंह १६३० (१५७३ ई०) मानते हैं ॥

———:o:———

रसखानि की कविता ।

कविता में यह अपना उपमान रसखानि देते थे-यह नाम-वास्तव में उनके लिये ठीक था. कभी २ ये भक्तिभाव में मगन होकर बड़ी ही रसीली कविता कर डालते थे ।

या लकुटी अरु कामरिया पर राज तिहूँ पुर को तजि डारौं
आठहु सिद्धि नवौ निधि को सुख नन्द की गाय चरायबिसारौं
कोटि करौ कल धौत के धाम करील के कुंजन ऊपर वारौं ।
रसखानि कहैं इन आँखिन सों ब्रज के बन बागतड़ाग निहारौं

ब्रजमंडल आपके मन को बहुत भाता था ।

मानस होहुँ वही रसखानि बसौं ब्रज गोकुल गोप गुवारन ।
जो पशु होहुँ कहा वश मेरो चरौं नित नन्द की धेनु मँझारन ॥
पाहन होहुँ वही गिरि को जो धरचो कर छत्र पुरन्दरधारन ।
जो खग होहुँ बसेरो करौं वही कालिन्दि कूल कदम्ब की डारन ॥

रसखानि प्रायः भक्ति भाव ही की कविता किया करते थे

———:o:———

कादिरबख्श

कादिर कवि भी पिहानी ही के रहने वाले थे ये रसखानि के शिष्य थे शिवसिंह सरोज के अनुसार इनका जन्म संम्वत् १६३५

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(सन् १५७८) में हुआथा अर्थात् ये रसखानि से केवल पाँचही वर्ष छोटे थे और विशेष हाल इनके जीवन के सम्बन्ध में ज्ञात नहीं॥

—:o:—

क़ादिर की कविता।

नीति मिली हुई स्वभावोक्ति की कविता क़ादिर अच्छी करते थे इनका यह छन्द बहुत प्रसिद्ध है :—

गुण को न पूँछे कोऊ औगुण की बात पूँछे,
कहा भयो दइ कलियुग यों खरानो हैं ;
पोथी औ पुराण ज्ञान ठट्ठन में टारि देत,
चुगुल चवाइन को मान ठहरानो है।
क़ादिर कहत जासों कछू कहिबे की नाहिं,
जगत की रीति देखि चुप मन मानो है ;
खोलि देखो हियो सब भाँतिन सों भाँति भाँति,
गुण ना हिरानो गुण गाहक हिरानो है॥

अन्तिम चरण तो इस कवित्त का आज कल के साहित्य में जनोक्ति सा होगया है। बात बात में लोग इसे उद्धृत करते हैं। विज्ञापनों में भी आपने अनेक वार देखा होगा 'गुण ना हिरानो गुण गाहक हिरानो है'॥

—:o—

मुबारक कवि।

सैयद मुबारक अली उपनाम मुबारक कबि सन् १५८३ ई० में बिलग्राम में हुए हैं. बिलग्राम अवध प्रान्त के हर्दोई ज़िले में एक अच्छा क़सबा है। यह अपने यहाँ के बड़े बड़े मनुष्यों के कारण बहुत दिनों से मशहूर है। प्रसिद्ध विद्वान सैयद अली बिलग्रामी की जन्म भूमि की पदवी इसी क़सबे को प्राप्त है। सैयद मुबारक अली भी कवि होने के अतिरिक्त अरबी, फ़ार्सी और संस्कृत के बड़े पण्डित होगए हैं

—:o:—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुबारक की कविता।

कहते हैं कि मुबारक ने दशों अङ्कों पर दोहों के दश शतक लिखे हैं। परन्तु समय के हेर फेर से आठ शतकों का पता नहीं मिलता, केवल दो शतक (तिलशतक और अलक शतक) मिले हैं जोकि काशी के भारतजीवन प्रेस में छपे हैं। इन दोहों से मालूम पड़ता है कि मुबारक को कविता करने का शौक़ था पर कुछ विशेष कवि प्रतिभा इनमें नहीं थी। उपमा और रूपक का भी व्यवहार खूब किया है। कहीं कहीं पर सूझी भी आप को बहुत दूर की है॥ उदाहरण के लिये तीन दोहे देखिए।

गोरे मुख पर तिल लसै ताहि करौं परनाम।
मानहुँ चन्द बिछाय के बैठे सालिगराम॥ १
क्यों न होय प्रभु जगत को, सम्पत्ति सुक्ख निधान।
जा दुखते द्विजराज को, दीनो है तिलदान॥ २॥
बेसर लगि मुकतानि लगि अरुझी अलक जुआय।
हेमठाठ पर दै अँडा, सापिनि सेवत जाय॥ ३॥

दुअर्थी शब्दों के व्यवहार में भी आपने पाण्डित्य दिखलाया है। इन दोहों को छोड़ के इनके बनाए हुए और बहुत से कवित्त भी पाए जाते हैं। परन्तु यह सब प्रायः शृङ्गार ही रस के हैं। 'काजर देरी न परी सुहागिनि आँगुरी तेरी कटैगी कटाक्षन' भी इन्हीं का चरण है। ठीक है जब कटाक्ष रसिकों के दिलों पर छुरी का काम करता है तो अङ्गुलियों के साथ क्यों नहीं उसी काम को करेगा। आपकी नायकाओं को फिर तरकारी काटने के लिये चाकू की आवश्यकता नहीं होती होगी? मोतियों की माला पहिने काले रङ्ग की चूनरी ओढ़े हुए जाती हुई कामिनी को देख कर आपको मालूम होता है कि 'चन्द्र में लपेटि कै समेटि कै नखत मानो दिन को प्रणाम किए रात्रि चली जाति है॥ लालबुझक्कड़ ने हाथी को समझा था "राति भरे की जगी अँखि-रिया रही इकट्ठइ सोइ"

—:0:—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नरोत्तम दास ।

नरोत्तम दास ब्राह्मण अवध प्रान्त के अन्तर्गत ज़िले सीतापुर के वाड़ीग्राम के रहने वाले थे। शिवसिंह ने इनका जन्म सन् १५४५ का लिखा है परन्तु पं० महेशदत्त ने अपने काव्यसङ्ग्रह में लिखा है कि इन्होंने ने सन् १५२५ में सुदामा चरित्र लिखा था। इनके जीवन के सम्बन्ध में और विशेष ज्ञात नहीं।

———:o:———

नरोत्तम दास की कविता

कविता इनकी सरस और स्वाभाविक है यही कारण है कि इनका नामोल्लेख यहाँ पर किया गया है. नरोत्तम दासकी उतनी प्रसिद्धि नहीं है जितनी कि होनी चाहिये. इनकी दो पन्नों की छोटी सी पुस्तकें सुदामाचरित्र, बाजारों में दो दो पैसे पर बिकती हैं परन्तु उसकी ओर पठित समाज का विशेष ध्यान न होने के कारण उसकी असली भाषा में लोगों ने सुधारने या बिगाड़ने की नियत से बहुत कुछ हस्तक्षेप किया है. कहते हैं कि सुदामा-चरित्र के ढङ्ग की इन्होंने एक और पुस्तक रुक्मिणी मङ्गल, भी लिखी थी. परन्तु उसका अब कहीं पता नहीं लगता इनकी कविता में अलङ्कार और भूषणों की भर मार नहीं है. इनकी कविता कामिनी सुदामा की ब्राह्मणी की भाँति अलङ्कार और आभूषण रहित, परन्तु सुन्दरी है. देहाती महावरे, और ग्रामीण बोलचाल का आपने अच्छा प्रयोग किया है. 'जातहि दै हैं लदाय लढ़ा' आजभी ताने में कहाकरते हैं. एक दरिद्र ग्रहस्थी के घर का देखिए कैसा फोटो खींचा है. ब्राह्मणी सुदामासे कहती है:—

कोदौं समा जुरतो भरि पेट तौ चाहती ना दधि दूध मठौती।
सीत बितीत भयो सिसियातहि हौं हठती पै तुम्हें न हठौती॥
जो सुनती न हितू हरि से तुम्हैं काहेक द्वारि के पेलि पठौती।
या घरते न गयौ कबहूँ पिय टूटो तवा अरु फूटी कठौती॥

इस चित्र की सत्यता का अनुभव आज भी आप किसी गांव में जाकर कर सक्ते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मूर्तिचित्रण भी नरोत्तम दास ने अच्छा किया है—द्वार पर खड़े हुए दुबले पतले, वस्त्र हीन दरिद्री ब्राह्मण को देखकर द्वारपाल राजा कृष्णचन्द्र से कहता है:—

सीस पगा न झगा तन में प्रभु जाने को आहि बसे केहि गामा।
धोती फटी सो लटी दुपटी इक पाय हुँ पानही को नहिँ सामा॥
द्वार खडो द्विज दुर्बल एक रह्यो चकि सो बसुधा अभिरामा।
पूछत दीनदयाल को धाम बतावत आपनो नाम सुदामा॥

गरीब सुदामा का शरीर इस लायक न था कि उसका चित्र अलङ्कारोंमें और उपमाओं के बोझ से लाद दिया जाता॥

———:o:———

देवकवि

देव कवि के जीवन के सम्बन्ध में हमें बहुत कुछ मालूम नहीं शिवसिंह सरोज से केवल इतना पता लगता है कि ये ब्राह्मण थे और सन् १६०४ ई०में या उसके लगभग उत्पन्न हुए थे और मैंनेपुरी ज़िले के समाने गाँव के रहने वाले थे. भाषा काव्य के उस समय के आचार्य थे, ७२ पुस्तकें बनाई थीं, जिनमें से कोई ग्यारह किताबें शिवसिंह ने देखी थीं। बस इसके अतिरिक्त और कुछ हाल मालूम नहीं.

अब प्रश्न उठता है कि यदि ये सन् १६०४ ई० में उत्पन्न हुए थे तो अकबर के समय के कवियों में इनकी गिनती कैसे हो सक्ती है ? परन्तु स्वसम्पादित सूरसागर की भूमिका में जो दोहे बा० राधाकृष्ण दास जी ने लिखे हैं उनमें इन कवि का भी नाम आ गया है और साधारणतः लोग कहते भी हैं कि देव कवि अकबर बादशाह के समय में हुए थे. इसलिये जरूरी मालूम हुआ कि इनकी कविता का भी यहाँ पर नाम ले दिया जाय.

———:o:———

देव कवि की कविता।

देव कवि की कविता में यमक, अनुप्रास और पदलालित्य की बहार है. रूपक भी आपने खूब बड़े २ बाँधे हैं. परन्तु हृदय द्रवित

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कर देने वाले अंश की इनकी कविता में कमी है. कहना चाहिये कि कविता कौशल इनमें अधिक है पर कवि प्रतिभा उतनी नहीं। उदाहरण के लिये यह छन्द देखिए:—

अवनि आकाश के प्रकाशित बनाए पला
दिशनि की डोरी कान्ह ओंज उर ऊरो भो
मारुत की दण्डिका बनाई सुघराई करि,
चतुर सुनार चतुरानन सौं रूरो भो
तापै सुन राधे या अनोखी तौल तौली गई,
गयो वह ऊँचो यह नीचे आनि भूरो भो
तारागन यद्यपि चढ़ाय समुदाय दीने
तदपि नं चन्द मुख चन्द पूरो भो॥
आई वरसाने ते बुलाइ वृषभान सुता
निरखि प्रभान (?) प्रभा भान की अथै गई
चक चकवानि के चुकाए चक चोटिन सौं
चकत चकोर चकचौंधी सी चकै गई
देव नंद नंदनंदनके नैननि अनंद मई
नन्दजूके मंदिरनि चंदमई ह्वै गई
कंजनि कलिन मई कुंजन अलिन मई
गोकुल की गलिन अलिन मई कै गई॥

वाह २ गोकुल को पूरा कमलबाग़ बनादिया पर 'सर' की कसर उसपर भी बाक़ी रह गई. क्या प्रकृति की कोई अद्भुतरस की बात कवि जी को न मिली थी?

सूरदास, तुलसीदास और केशवदास यदि येही तीन हिन्दी भाषा के 'दास' अकबर के समय में प्रगट हुए होते और कोई अन्य कवि न हुआ होता, तोभी अकबरी हिन्दी की महिमा आज कम न होती और इन्हीं तीनों के सम्बन्ध से हिन्दी भाषा साहित्य के इतिहास में अकबर का नाम अटल होजाता, अकबरी हिन्दी की कविता के आकाश के यही तीन प्रचण्ड प्रभामण्डल आज तक हिन्दी भाषा संसार में अपना प्रकाश फैला रहे हैं बाक़ी या तो स्मृतिक्षितिज के नीचे डूब गए या डूब रहे हैं. इन्हीं तीनों महा मालियों की क्यारियों में से पुष्प चुन २ कर गुलदस्ते बना इन्हीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की बनाई हुई सड़क पर अपनी कविता घोड़ा को दौड़ा—अनेक कवि यश और जीविका अर्जित करते रहे और हैं ॥

समय की गणना के अनुसार पहिले सूरदास का नाम आता है क्योंकि सन् १५५० ही में ये अपना सूरसागर बना चुके थे जबकि 'रामचरित मानस' ने दिन का प्रकाश भी नहीं देखा था और रामचन्द्रिका या केशव की सब से प्रथम रचना, रसिक प्रिया, गर्भ में भी नहीं आई थी ॥

——:o:——

सूरदास ।

भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र ने सूरदास का मरण सन् १५६३ के लगभग माना है. इसलिये यदि इनकी उम्र सौ वर्ष की मानी जाय तो इनका जन्म सन् १४६३ के लगभग माना जायगा. परन्तु निश्चित बात केवल यह है कि ये सन् १५५० में जीवित थे क्योंकि उसी सन् में इन्हों ने साहित्य लहरी को सङ्कलित किया, और अकबर के राज्यासन पर बैठने के बाद कुछ वर्षों तक जीते रहे क्यों कि अकबर के दर्बार में ये एकबार गए थे शिवसिंह ने तो इनका जन्म सं० १६४० अर्थात् सन् १५८३ ई० का माना है !!!

सूरदासजी ने साहित्य लहरी में एक स्थान पर अपने वंश का वर्णन किया है। अपने जीवन की भी एकाध घटना का उल्लेख किया है। उससे ज्ञान होता है कि ये जाति के ब्रह्मभट्ट थे—और इनके पिता का नाम(?) हरिचन्द था—आगरे से आकर गोपाचल में इनका कुल रहने लगा था—सूरदास के सात भाई थे। उनमें से सूरदास सब से छोटे थे. छः भाई लड़ाई में मुसलमानों के हाथ मारे गए. केवल अन्धे सूरदास जीते बच रहे। एकदिन यह एक कुएँ में गिर पड़े और सात दिन तक वहीं पड़े रहे किसी ने निकाला नहीं. आप लिखते हैं कि स्वयं कृष्णभगवान ने मुझे सातवें दिन कुएँ से बाहिर निकाला इसके बाद से सूरदास कविता करने लगे. उनका असली नाम सूरजचन्द था परन्तु कविता में अपना उपनाम सूर, सूरश्याम डालते थे, चौरासी वार्ता इत्यादि से इनके जीवन की जो घटनाएँ मालूम हुई हैं वह ऐसा नहीं हैं कि इनकी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कविता से कुछ घनिष्ट सम्बन्ध रखती हों, हाँ इतना तो अवश्य ज्ञात होता है कि इन्होंने समय विशेष और स्थान विशेष पर अपने गुरु प्रभु वल्लभाचार्य की प्रेरणा से अनेक पद बनाए, जोकि सूरसागर में पाए जाते हैं इनके सम्बन्ध में कही गई बातों में कल्पना का इतना अंश मिला हुआ है कि सत्यासत्य का निर्णय करना मुश्किल है।

कहते हैं कि एक बार अकबर ने इन्हें अपने दर्बार में बुलाया और अन्धे सूरदास ने शाह की बेटी की जाँघ का तिल बतला दिया! अन्धे पति पाने पर स्त्रियों के ताना देने से सूरदास की पत्नी को बड़ा दुख हुआ, वह सूरदास के पास आकर रोई, सूरदास ने स्त्रियों के सामनेही अपनी पत्नी के भाल बेंदी विहीन् को बतला कर उनको शर्मा दिया!

तानसेन से सूरदास की बड़ी मित्रता थी, किन्हींर विद्वानों का मत है कि ये दोनो गुरु भाई थे. तानसेन के विद्यागुरु स्वामी हरिदास सूरदास के भी विद्यागुरु थे (?) सूरदास में खास कवि गुण के सिवाय कलावन्त का भी गुण अधिक था. उनके बनाए हुए पद कविता के अतिरिक्त गाने के योग्य (Musical) भी हैं, सूरदास के पदों पर मुग्ध होकर तानसेन ने सूरदास की तारीफ़ की

किधौं सूर को सर लग्यौ किधौं शूर की पीर.
किधौर शूर को पद लग्यौ तासों सुध न शरीर॥

तानसेन की तान पर मस्त होकर सूर दास ने कहा:—

बिधना याही जानि जिय शेष न दीन्हें कान।
धरा मेरु नतु डोलते तानसेन की तान॥

सूर दास दिन रात राधाकृष्ण के प्रेम में मगन रहते थे। प्रेमही उन के जीवन का अवलम्ब था और धर्म भावही उनका जीवन। मरण समय में भी प्रेमराग गाते हुए ही ईश्वर भक्त सूरदास ने परलोक यात्रा की–सूरदास का अन्तिम पद यह है:—

खंजन नैन रूप रस माते
अतिशय चारु चपल अनियारे,
पल पिँजरा न समाते।
चल चल जात निकट श्रवणन के,
उलट पलट ताटङ्क फँदाते॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सूरदास अंजन गुण अटके,
नातर अब उड़ि जाते ॥

सूरदास का पाण्डित्य ।

पाण्डित्य में सूरदास तुलसीदास और केशवदास दोनों से बढ़ कर थे. बहुज्ञता में यह दोनों उनकी बराबरी का दावा नहीं कर सक्ते. संस्कृत के वह महान पण्डित थे. पुराणों का ज्ञान उन को जिह्वाग्र था. पौराणिक कथाओं और महाभारत की कथानकों को न जानने से उनके कूट पदों का अर्थ कोई लगा नहीं सकता संस्कृत साहित्य में आप को पूरा अधिकार था. सूरसागर को तो एक प्रकार से भागवत का अनुवादही कहना चाहिये. फुटकर पदों में भी संस्कृत साहित्य के विचार और कहीं २ तो संस्कृत श्लोकों के पद ज्यों के त्यों रख दिए हैं उदाहरण के लिये निम्न लिखित पंक्तियों को देखिए :—

जोगिरिपति मसि बोरि उदधि में लै सुर तरु निज हाथ ।
मम कृत दोष लिखैं बसुधा भरि तऊ नहीं मित नाथ ॥

इस उक्ति को इस श्लोक से मिलाइए । यह कल्पना सूरसागर में कई जगह आई है :—

असित गिरि समस्यात् कज्जल सिन्धु पात्रे
सुर तरुवर शाखा

सूरदास के एक पद का चरण है :—

चर्चित चन्दन नील कलेवर बरसति बुन्दन सावन ।

'चन्दन चर्चित नील कलेवर पीत बसन बन माली' गीत-गोविन्द का प्रसिद्ध गीत है. यह तो मोटी सी समानता है और अधिक ध्यान देकर देखने से बड़ी बारीक २ समानतायें मालूम पड़ेगी. ज्योतिष में भी आपकी अच्छी गति थी. ज्योतिष की राशि और लग्न सम्बन्धी बातों को लेकर आपने अनेक कूट कहे हैं.

फ़ार्सी भाषा के भी सूरदास अच्छे ज्ञाता मालूम पड़ते हैं. फ़ार्सी शब्दों के व्याकरण की शुद्धता के साथ व्यवहार करने का उल्लेख इसी लेख के एक पिछले प्रकरण में आचुका है-फ़ार्सी के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुहावरों को भी आपने सफलता के साथ व्यवहार किया है-आप एक जगह लिखते हैं "सूरदास प्रभु तुमरे सदका (सदके) घरहिँ जान हम दीजै"

सूरदास का प्रकृति का निरीक्षण ।

पाण्डित्य और बहुज्ञता के अतिरिक्त प्रकृति के निरीक्षण का भी गुण पूरे कवि में होना आवश्यक है । इसके बिना काव्य में स्वाभाविकता नहीं आती है-सूरदास की कविता के देखने से मालूम होता है कि प्राकृतिकनिरीक्षण की भी उन में कमी नहीं थी साधारण जीवन से ली हुई, कृषक जीवन और पशु पक्षी के जीवन से सम्बन्ध रखने वाली उपमाओं से उनकी कविता भरी हुई हैं. केवल एकाध उदाहरणों का यहाँ पर दे देना काफी है :—

कृषक जीवन से—

जन के उपजे दुख किन काटत
जैसे प्रथम आषाढ़ के वृक्षनि खेतहर निरखि उपारत;

पक्षिजीवन से—

यह संसार सुवा सेमर ज्यों सुन्दर देखि लुभायो
चाखन लाग्यो रुई उड़ि गई हाथ कछू नाहिं आयो ।

दैनिक साधारण जीवन के निरीक्षण से ली हुई एक छोटी सी उपमा देखिए :—

'आयु घटत ज्यों अँजुरी पानी'

केशवदास ने भी एक स्थान पर कहा है :—

'प्रति दिन दूनो २ क्षण २ क्षीण होत झीलन की जल सो'

अँग्रेज़ी के प्रसिद्ध कवि पोप ने भी वर्षगाँठ के दिन की चलनी से उपमा दी है । देहाती बोली का भी आपने खूब व्यवहार किया है. कहीं २ पर तो इनका उदाहरण बिलकुल भदेस हो गया है. एक स्थल पर आपने लिखा है :—

'सूरश्याम बिनु कौन छुड़ावै चले जाहु भाइ पोइस'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सूरदास की कविता ।

जो आज हिन्दी साहित्य संसार में कवियों का मुकुटमणि माना जाता है उसकी कविता के सम्बन्ध में कहना ही क्या ? और सच भी है क्योंकि सूरदास के बराबर अधिक लिखने वाला कोई शायद ही अन्यकवि हिन्दी भाषा का हुआ होगा। कहते हैं कि अकेले सूरसागर में सवा लाख पद हैं। कवि प्रतिभा इनमें पूरी थी क्यों कि जो पद अपने प्रेम और भक्ति के जोश में लिखे हैं वह पढ़ने वालों के हृदय को बिना द्रवित किए रहते नहीं-हाँ जो पद इन्हों ने केवल पाण्डित्य दरसाने के लिये लिखे हैं-जैसे कि साहित्य लहरी में सङ्कलित कूट पद—वे अवश्यमेव नीरस हैं और कविता नहीं कहे जा सकते। प्रधानतः सुरदास ने शान्त रस, भक्ति और शृङ्गार रस ही की कविता की है । अवसर और प्रसङ्ग आने पर भी अन्य रसों के दरसाने में आपने प्रायः यत्न नहीं किया है—

सूरदास की कथनात्मक कविता ।

कथनात्मक कविता करने की कुशलता सूरदास में नहीं थी उनके सूरसागर के देखने से तो यही मालूम पड़ता है-सूरसागर की रचना के विषय में दो सिद्धान्त हैं-एक तो यह कि सूरदास ने उसे कथनात्मक कविता ही की दृष्टि से बनाया और दूसरा यह कि नहीं उन्हों ने समय २ पर फुटकर पद बनाए और वह विषय के हिसाब से संग्रह करलिए गए. दृष्टिहीन सूरदास जी पद गाते हुए इधर उधर फिरा करते थे और लोग काग़ज़, और दावात, और क़लम लिए हुए उनके पीछे २ घूमा करते थे और उनके पदों को लिखते जाते थे-बस इन्हीं पदों के एकत्रित करने से सूरसागर बन गया. सूरसागर के भिन्न २ संस्करणों के देखने से सिद्धान्त कुछ ठीक भी मालूम पड़ता है किसी संस्करण में तो पदों की विशेषता के हिसाब से छन्दों का क्रम रक्खा गया है और किसी में विषय के हिसाब से । परन्तु ग्रन्थ के आरम्भ में सूरसारावली के देने से और प्रकरणों के आदि और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अन्त में आए हुए पदों से तो यही मालूम होता है कि सूरसागर को कथनात्मक कविता की दृष्टि से देखना असङ्गत नहीं अस्तु कथनात्मक कविता में इतने प्रधान गुणों का होना आवश्यक है-एक तो उसका विषय ऐसा हो कि पढ़ने वाले का चित्त उनकी ओर आकर्षित हो जाय-दूसरे यह कि उसके पढ़ने से उस में मन लगातार लगा रहे (sustainment of interest) एकरसता और एक ही प्रकार की ध्वनि और शब्द से पढ़ने वाले का मन ऊबने न पावे इसके लिये विविधि ध्वनिवाले और अनेक रस के छन्दों का प्रयोग करना भी कथनात्मक कविता में आवश्यक है-सूरसागर की कविता में यह अन्तिम गुण प्रायः नहीं पाए जाते-आज कल हिन्दी रसिकों में बहुत कम ऐसे होंगे कि जिन्हों ने सूरसागर आदि से अन्त तक पढ़ा हो। इसलिये सूरसागर को अच्छी कथनात्मक कविता नहीं कह सकते हाँ अति सुन्दर भाँति २ के शब्द चित्रों का समूह उसे अवश्यमेव कह सकते हैं। एक ही ध्वनि के छन्दों को पढ़ते २ बड़ी जल्दी ही मन ऊब जाता है। रसों के परिवर्तन में भी सूरदास जी ने कुशलता नहीं दिखलाई है वीर, भयानक और वीभत्स रसों के प्रसङ्ग के आ पड़ने पर भी कवि ने उन्हें टाल सा दिया है—कविता के विषय के चुनने के सम्बन्ध में इतना ही कहना काफ़ी है कि सूरदास के पहिले किसी अन्यकवि ने कृष्णलीला विषयक हिन्दी भाषा में सफलता के साथ कविता की ही नहीं थी. इसलिये सूरसागर का विषय नवीन होने के कारण उस समय के हिन्दी रसिकों के लिये अवश्यमेव रुचिकर हुआ होगा—

सूरसागर की कविता पाण्डित्य से भरी हुई है विशेष करके दशम स्कन्ध की और उससे भी बढ़कर दशमस्कन्धन्तार्गत भ्रमर-गीत में तो पाण्डित्य पद २ में भरा हुआ है परन्तु इतने पाण्डित्य पर भी सूरसागर में स्थल २ पर इतने सरस छन्द पाए जाते हैं कि जिन्हें पढ़कर हृदय द्रवित हुए बिना नहीं रहता इसी सरसता के दो एक उदाहरणों के बाद सूरदास और उनकी कविता के परिचय को समाप्त करेंगे—

———:o:———

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महाभारत के युद्ध में श्रीकृष्णचन्द्र ने प्रतिज्ञा की थी कि हम लड़ाई में अस्त्र ग्रहण नहीं करेंगे। परन्तु भीष्मपितामह के घोर विक्रम के कारण उन्हें अपनी प्रतिज्ञा को तोड़ना पड़ा। उस समय के चित्र को सूरदास ने इन पंक्तियों में खींचा है :—

गोविंद कोपि चक्र कर लीनो
छाड़ आपनो प्रण यादवपति, जन को भायो कीनो,
रथ ते उतरि अवनि आतुर ह्वै चले चरण अति धाए,
मनु शङ्कित भूभार बहुत ह्वै चलत भए अकुलाए
कछुक अङ्ग ते उड़त पीत पट उन्नत बाहु विशाल
स्वेद स्रोत तनु शोभा कन छवि घन वर्षत जनुलाल
सूर सुभुजा समेत सुदर्शन देखि विरञ्चि भ्रम्यो
मानो आनि सृष्टि करिवे को अंबुज नाम भज्यो।

(प्रथम स्कन्ध छं० १४६)

कैसी अच्छी कविता है, पढ़ते ही उस समय की मूर्ति आँखों के सामने आ जाती है। ५वीं और ६ठी पङ्क्तियाँ विशेष ध्यान देने योग्य हैं। उन्में शब्दों का चुनाव और उनका एक दूसरे के पास स्थापन इस तर्कीब से किया गया है कि इन चरणों की ध्वनि से उन्में वर्णित कार्य का बोध होता है। रथ से आतुरता के साथ उतरना। हाथ उठा कर अङ्गुली में चक्र घुमाते हुए दौड़ना फिर चलाने ही को थे कि—भीष्मपितामह के भाल स्थित तिलक को देखकर—रुक जाना इतने कार्य इन शब्दों की ध्वनि के उतार चढ़ाव और छठी लाइन के द्रुतगमन से भली प्रकार प्रदर्शित होते हैं दौड़ती हुई छठी पङ्क्ति के अन्त में एक दम से रुक कर उपमा का वर्णन करने लगना श्रीकृष्ण का घूमते हुए हाथ को एक दम से रोककर सोच विचार में पड़ आगा पीछा सोचने को सम्यक ध्वनित करता है इसी को कवि-कौशल कहते हैं! परन्तु पूरा चित्र इस छन्द में नहीं खिँचा अगले छन्द द्वारा उसकी पूर्ति की गई है,

....

आइ निकट श्रीनाथ विचारी परी तिलक पर दीठि
शीतल भई चक्र की ज्वाला हरि हँस दीनी पीठि
....

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस छन्द में पहिले छन्द में वर्णित कार्य को फिर से वर्णन किया है और फिर शेष कार्य को पूरा किया है, यदि ऐसा न करके केवल ऊपर उद्धृत दो पङ्क्तियाँ पहिलेही छन्द में रख दी जातीं तो पूरा चित्र अति सुन्दर होता। परन्तु ऐसा दोष सूरसागर की कविता में जगह २ पर पाया जाता है और उसकी कथनात्मकता (narrativeness) में बड़ी बाधा डालता है। और यह भी एक बड़ा भारी कारण है कि जिसके होने से लोग सूरसागर को उलट पलट कर पढ़ते हैं शुरू से अखीर तक नहीं।

मूर्ति चित्रण भी सूरदास ने कहीं २ अच्छा किया है उदाहरण के लिये एक मामूली सा छन्द देखिए :—

करतल सोभित बान धनुहियाँ,
खेलत फिरत कनकमय आँगन, पहिरे लाल पनहियाँ
दशरथ कौशल्या के आगे, लसत सुमन की छहियाँ
मानों चारि हंस सरवर ते, बैठे आइ सदहियाँ

....

धनुही बान लए कर डोलत,
चारो बीर सङ्ग इक सोहत, बचन मनोहर बोलत,
लछिमन भरत शत्रुघन सुन्दर, राजिव लोचन राम
अति सुकुमार परम पुरुषारथ, मुक्ति धर्म धन काम
कटि पट पीत पिछौरी बाँधे, काग पच्छ शिष शीश

....

(नवम स्कन्ध छ० १७, १८)

———:o:———

तुलसी दास।

सूरदास के बाद, समय के हिसाब से गोस्वामी तुलसी दास का नाम आता है। तुलसी दास जी की रामायण के न जाने कितने संस्करण छप चुके हैं और उनके साथ न जाने तुलसी दास जी के कितने जीवन चरित्र छप चुके हैं। नागरी प्रचारिणी सभा द्वारा सम्पादित रामायण की भूमिका में उनका जीवन चरित्र विस्तार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पूर्वक छपचुका है। इसलिये यहाँ पर उनका एक संक्षिप्त जीवन वृत्तान्त दे देना ही काफी होगा।

तुलसी दास का जन्म सन् १५३२ ई० में ग्राम राजा पुर में हुआ था। जाति के यह सरयूपारी ब्राह्मण थे। परन्तु किन्हीं २ के मतानुसार यह कान्यकुब्ज ब्राह्मण थे। इनके माता पिता की मृत्यु इनके बचपन ही में हो गई थी और बचपन ही से यह साधुओं के साथ रहने लगे थे। इनके गुरु का नाम नरहरि दास था। इनका विवाह नहीं हुआ था। बचपन ही से साधु मण्डली में रहन के कारण इनके मन का झुकाव राम भक्ति की ओर था और इनको बाल वैरागी कहना चाहिये। यह तीर्थ यात्रा बहुत किया करते थे परन्तु अधिकतर यह अयोध्या चित्रकूट और काशी में रहा किए काशी से सम्बन्ध रखने वाले इनके नाम से अनेक चमत्कार मशहूर हैं। राम चन्द्र का दर्शन, हनूमान का दर्शन, राम और हनुमान द्वारा चोरों का भगाना और मुर्दों का जिलाना आदि कई अद्भुत बातें इनके नाम से मशहूर हैं। तुलसी दास का परलोक वास सन् १६३२ ई० में इक्यानवे वर्ष की आयु पाकर काशी के अस्सी घाट पर हुआ।

तुलसी दास का सारा जीवन फ़क़ीरी ही में व्यतीत हुआ यह वैष्णव सम्प्रदाय के वैरागी थे परन्तु सङ्कीर्ण चित्त और आग्रही न थे इनकी कविता में ठौर ठौर पर इनकी उदार चित्तता का परिचय मिलता है। वैष्णवों और शैवों की सदा लड़ाई रहा करती है वैष्णव समझते हैं कि सारे शैव नरकगामी होंगे और शैव समझते हैं कि सब वैष्णव नरक की आग में जलाए जायँ गे। इसलिए एक सम्प्रदाय दूसरे सम्प्रदाय वालों को गाली देनाही अपना प्रधान धर्म समझता है। परन्तु तुलसी दास जी अपने 'राम' के मुख से कहलाते हैं :—

संकर प्रिय मम द्रोही सिव द्रोही मम दास।
ते नर करहिँ कलप भरि घोर नरक महँ बास॥

इतनाही नहीं वरन यवन, स्वपच और चाण्डालादि के प्रति भी उदारता दिखलाने का आपने ठौर २ पर उपदेश किया है। उस समय में इतना उदार चित्त होना और दूसरों को भी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सङ्कीर्णता त्यागने का उपदेश देना अलौकिक साहस वाले का काम था इसी प्रकार के उच्च (noble) उपदेशों से पूर्ण होने के कारण तुलसी दास की कविता अति आदरणीय है और आदर पाती है। तुलसी दास की कविता से मालुम पड़ता है कि वह एक क्रोधहीन, सहन शील, सन्तोषी और शान्ति प्रिय ब्राह्मण थे। वह अपना धर्म और अपनी जवाबदेही (responsibility) को अच्छी प्रकार समझते थे। वह एक सच्चे वैरागी की भाँति संसार का उपकार करना अपना धर्म समझते थे न कि अपने भोजनों का टैक्स वसूल करने के अतिरिक्त उस से कुछ संबंध ही न रखना यह उपकार सदा सदुपदेश द्वारा किया करते थे। प्रकृति की हर एक वस्तु उनके लिये उपदेश पूर्ण थी। उमड़ घुमड़ कर गर्जने वाले बादल 'थोड़े जल' ही से 'उतरा' चलने वाली चौमासी नदियाँ, जल का 'सिमिट २' कर तालाबों का भरना, वर्षा ऋतु में मगन होकर मेंडकों का बोलना इत्यादि सारे प्राकृतिक आभास (phenomena) गोस्वामी तुलसी दास के लिये उपदेश और शिक्षापूर्ण थे। प्राकृतिक दृश्यों का फोटो खीचने में गोस्वामी जी को इतना आनन्द नहीं आता था जितना कि उनसे कुछ शिक्षा ग्रहण करने में

हरित भूमि तृन संकुल समुझि परहिँ नहिँ पंथ।
जिमि पाखण्ड विवाद तें गुप्त होहिं सद ग्रंथ॥

अहंकार उन को बिलकुल नहीं था। अपनी कविता में वह अपने को बाल बुद्धि और सज्जनों और साधुओं का सेवक लिखा करते थे। सन् १५७४ ई० में तुलसी दास ने राम चरित मानस का लिखना आरम्भ किया उस समय उनकी आयु कोई बयालीस वर्ष की होगी। बयालीस वर्ष के तुलसी दास लिखते हैं। 'बालविनय सुनि करि कृपा राम-चरन-रति देहु'। इससे अधिक और नम्रता (modesty) क्या हो सकती है।

———o:———

तुलसी का पाण्डित्य और हिन्दी भाषा से प्रेम और उसका सुधार।

तुलसी दास संस्कृत के अच्छे पण्डित थे। हिन्दी भाषा में संस्कृत भाषा की बहुत सी विशेषताओं का उन्हों ने प्रयोग किया

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है इन सबों में सब से अधिक ध्यान देने योग्य बात समासों का हिन्दी भाषा में प्रयोग है—'खीर-नीर-विवरण-गति हंसी' 'सकल सुमङ्गल-मूरि' 'संकर-मानस राज-मराला' इत्यादि बड़े२ समासों का हिन्दी भाषा में सब से पहिले और सब से अधिक प्रयोग तुलसी दास ही ने किया है - इस प्रयोग से भाषा की लेखनप्रणाली का बहुत कुछ सुधार हुआ ·

तुलसी दास का बहुपठित होना केवल इसी से सम्यक् प्रकट है कि उन्हों ने राम चरित मानस की कथा को केवल 'नाना पुराण निगमागम सम्मत' और "यद्रामायणे निगदित" ही नहीं वर्णन किया वरन अन्य ग्रन्थों से भी संगृहीत किया है। संस्कृतज्ञ होने पर भी तुलसी दास हिन्दी भाषा में निबन्ध लिखने को तुच्छ नहीं समझते थे उनका प्रयोजन अपना पाण्डित्य दिखलाना नहीं था, उन को तो लोकोपकार करना था और लोकोपकारक ग्रन्थ जब तक लोक-भाषा में नहीं लिखे जायँगे तब तक उन से क्या लोकोपकार हो सकता है? स्वाभाविक कवि होने के कारण तुलसीदास की कवित्वाग्नि अपनी स्वाभाविक वाणी ही में प्रकटित हुई। संस्कृतज्ञ पण्डितों के हँसने और उनके आक्षेपों की आपने पर्वाह न की आप उनके आक्षेपों की उपेक्षा करते हुए कहते हैं 'भाषा भनिति भोरि मति मोरी। हँसिबे जोग हँसे नहिं खोरी' हँसा करो हम से तो भाषा में कविता किए बिना रहा नहीं जाता। पण्डितों का ख्याल था कि हिन्दी भाषा में उत्तम विचारों को प्रकट करही नहीं सकते। परन्तु तुलसीदास का मत उन से विरुद्ध था आप लिखते हैं 'भाषानिबन्ध मति मञ्जुल मातनोति' आप का तो यहाँ तक ख्याल था कि अच्छे से अच्छे और गूढ़ से गूढ़ विषय को एक न सुधरी हुई भाषा में वर्णित कर सकते हैं। हाँ लिखने वाले में निपुणता और कौशल चाहिये। ऐसा करने से विषय की कोई खराबी नहीं होती है वरन उस न सुधरी हुई भाषा को सुधार हो जाता है। 'भनिति भदेस वस्तु भलि बरनी' और 'गिरा ग्राम्य सिय-राम जस गावहिं सुनहिं सुजान'। तुलसीदास की कविताही उनके मत को भली प्रकार पुष्ट करती है। तुलसीदास ने अपने निबन्ध को सारगर्भित करने के लिये राम चरित मानस में कहीं २ तो वेद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और वेदान्त के शब्दों तक को उद्धृत कर दिया है और कहीं २ उन के विचारों का बड़ी सरल रीति से अनुवाद कर के रख दिया है इस प्रकार जिन को भ्रम था कि भाषा में वेद वेदान्त के गूढ़ रहस्य का लिखना दूषित वा भदेस है उन के भ्रमों का तुलसीदास ने छेदन कर दिया। और कर के दिखला दिया कि हमारी भाषा इस योग्य वन चुकी थी कि उन विचारों का परिधान हो सके॥ उत्तर काण्ड में एक स्थान पर तुलसीदास ने ईश्वर के रूप का वर्णन किया है।

सोइ सच्चिदानन्द घन रामा।
अज विज्ञान रूप बल धामा॥
व्यापक व्याप्य अखण्ड अनन्ता।
अखिल अमोघ शक्ति भगवन्ता॥
अगुन अदभ्र गिरा गोतीता।
सब दरसी अनवद्य अजीता॥
निर्मल निराकार निर्मोहा।
नित्य निरञ्जन सुख सन्दोहा॥
प्रकृति पार प्रभु सब उर बासी।
ब्रह्म निरीह बिरज अविनासी॥

आगे चल के एक अन्य स्थल पर आप लिखते हैं :—

तुम्ह सर्वज्ञ तज्ञ तम पारा।
सुमति सुसील सरल आचारा॥

और आगे इसी काण्ड में ब्रह्म उपदेश है :—

... ...

अज अद्वैत अगुन हृद येसा॥
अकुल अनीह अनाम अरूपा।
अनुभव-गम्य अखंड अनूपा॥
मन गोतीत अमल अविनासी।
निर्बिकार निरवधि सुखरासी॥
सो तैं ताहि तोहि नहिँ भेदा।
बारि बीच इव गावहिँ वेदा॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और भी—

सोहमस्मि इति वृत्ति अखण्डा।

यह पङ्क्तियाँ साफ़ तौर पर वेद और वेदान्त की श्रुतियों की याद दिलाती हैं। मूल से मिलाने पर इनकी खूबी मालूम पड़ती है। इन चौपाइयों से तुलसीदास का महान पाण्डित्य सम्यक् प्रदर्शित होता है। संस्कृत साहित्य को तुलसीदास ने अच्छी तरह पढ़ा था स्थल २ पर संस्कृत साहित्य के विचारों को ज्यों का त्यों रख दियां है* कहीं २ मूल संस्कृत ग्रन्थों की उपमायें भी ज्यों की त्यों रख दी हैं परन्तु इस निपुणता से कि वह बाहिर से लाई हुई नहीं मालूम पड़तीं रामचन्द्र के वन जाते हुए का चित्र हैं :—

आगे राम लखण बने पाछे।

....

उभय बीच सिय सोहति कैसी।

ब्रह्म जीव बिच माया जैसी।

इस उपमा का प्रयोग एक संस्कृत कवि ने अपने ग्रन्थ में किया है

इससे साफ प्रकट है कि तुलसीदास को अपनी कविता को सर्वप्रिय बनाने का बड़ा ध्यान था॥

——:o——

तुलसीदास की कविता।

तुलसीदास स्वयं कविता में सरलता के बड़े पक्षपाती थे। उन्होंने अच्छी कविता की पहिचान लिखी है। "सरल कवित कीरतिविमल सोइ आदरहिं सुजान", इस लिये कोई आश्चर्य की बात नहीं कि तुलसी की कविता अधिकतर सरल है, हृदय द्रावी अंश की भी उनकी कविता में कमी नहीं है स्थल २ पर उनकी करुणामई कविता को पढ़ कर कोई बिना दो चार आँसू गिराए नहीं रह सकता राम बनोबास और दशरथ विलाप और

* तुलसीदास जी ने हनुमन्नाटक की छाया बहुत लिया है बहुत से भाव श्रीमद्भागवत से भी लिया है।

पत्रिका सम्पादक।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राम विरह के प्रसङ्ग की कविता शायद ही किसी को बिना रुलाए रहती हो, बन जाने के समय का राम और सीता का सम्वाद बड़ा प्रभाव पढने वाले के चित्त पर उत्पन्न करता है और सच्ची सतीसाध्वी पतिव्रतपरायणा ललना के मनोभावों को ठीक २ प्रकट करता है ॥

हृदय मन को आर्द्र कर देने की शक्ति तुलसीदास में खूब थी वह शब्दों और वाक्यों को इस सफलता के साथ चुनते थे कि उनसे कवि मनोभिलषित भाव और प्रभाव तत्काल उत्पन्न हो जाते हैं, करुण-शान्त और भक्ति-शृङ्गार को तो वह प्रदर्शित करने में पण्डित थे ही परन्तु प्रसङ्ग आ पड़ने पर वह वीर रस का भी अच्छा प्रदर्शन करते थे रामचरितमानसान्तर्गत लक्ष्मण-परशुराम सम्बाद ध्वनि में उतना कटु और तीव्र न होने पर भी कार्य और फल में (प्रभाव में) राम चन्द्रिका के लक्ष्मण-परशुराम सम्वाद के बराबर है बल्कि कहना चाहिये कि उससे बढ़ कर है क्योंकि सरल और मामूली शब्दों द्वारा वीर ऐसे उत्कट रस का प्रदर्शन दुस्तर है, केवल एक अति ऊँचे दर्जे का कवि उसका सम्पादन कर सकता है, ऐसेही कौशल का एक अच्छा उदाहरण अयोध्याकाण्ड के उस स्थल की कविता में है जहाँ पर कि भरत को सेना सहित आते हुए सुनकर लक्ष्मण को भ्रम होता है कि भरत युद्ध कामना से आ रहे हैं और वह रोष में आकर कहते हैं :—

आजु राम सेवक जसु लेऊँ
भरतहिं समर सिखावन देऊँ
राम निरादर कर फल पाई
सोवहु समर सेज दोउ भाई

... ...

जिमि करि निकर दलइ मृगराजू
लेइ लपेटि लवा जिमि बाजू

(इत्यादि)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

केवल दोहे चौपाइयों ही में नहीं जोकि विशेष करके तुलसी दास के हिस्से में पड़ी हैं वरन कवित्त और घनाक्षरी इत्यादि छन्दों और गीतावली रामायण के पदों में भी स्थल २ पर तुलसीदास ने ऐसा ही कौशल दर्शाया है ॥

———o:———

कथनात्मक कविता की दृष्टि ।

कथनात्मक कविता की दृष्टि से भी तुलसीदास पूरे कवि हैं । उनकी कथनात्मक कविताओं में रामचरित मानस सब से बड़ा और सर्वश्रेष्ठ काव्य है । उसकी कथा में कवि को अपनी कल्पना से कुछ ज़्यादह काम लेना नहीं पड़ा । कथा पुरानी है और उसके वर्णन करने की प्रणाली भी पुरानी है । इस लिये कथा और उसके वर्णन करने के ढङ्ग को सोचने में कवि को बहुत श्रम उठाना नहीं पड़ा ; एक घटना को दूसरी द्वारा विकाश करने में भी उसे बहुत परिश्रम करना नहीं पड़ा । एक घटना का दूसरी के ऊपर निर्भर करना, एक घटना का कारण और दूसरी का कार्य बनाना, इसी प्रकार एक घटना-माला का गूँधना, और उसके द्वारा मूल कथा का विकाश इत्यादि इन कार्यों में भी कवि को विशेष परिश्रम करना नहीं पड़ा । इसलिये रामचरित मानस में इन गुणों के होने से तुलसी दास को उनका उत्पादक नहीं कह सकते । तुलसीदास का कथनात्मक काव्य करने का कौशल अन्यही बातों से सम्यक् प्रकट होता है तुलसीदास के उपरान्त बहुत से कवियों ने रामायण की कथा को लेके कविता की है और आज भी कर रहे हैं । केशवदास की रामचन्द्रिका रामचरित मानस की प्रायःसमकालीन ही है और रामचरितमानस को छोड़ कर और अन्य राम-कथा गाने वाले कवियों की कृतियों में सर्व प्रधान है । तुलसीदास के पहिले भी हिन्दी कवियों ने पौराणिक और महाभारत की कथाओं को अपनी कविता का विषय बनाया है । सूरदास का सूरसागर इसी ढङ्ग का है । इन कृतियों से तुलना करने पर रामचरितमानस की कथनात्मकता विषयक खूबियाँ प्रकट होती हैं और तुलसीदास का कथनात्मक-कौशल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मालूम पड़ता है। सूरसागर की कथनात्मकता-विषयक त्रुटियों का उल्लेख ऊपर हो चुका है। उन त्रुटियों की पूर्ति रामचरितमानस में मौजूद है। पाठक का मन न ऊबने पावे इस ध्यान से चौपाइयों के बीच बीच में स्थल स्थल पर और विशेषतः उन स्थानों पर जहाँ कि घटना विशेष को विराम देकर दूसरी घटना का आरम्भ किया गया है कवि ने विविध ध्वनि वाले छन्दों-दोहों आदि का प्रयोग किया है। रस परिवर्तन भी समुचित स्थानों पर किया गया है। रामचन्द्रिका में इस गुण की अति है बिना कारण पङ्क्ति २ में उसके छन्द बदले गए हैं एक घटना का दूसरी के साथ कथनात्मक काव्य में जो सम्बन्ध रहता है उसको सम्यक् स्फुट न होने के कारण चन्द्रिका के पाठक का चित्त कूद २ कर चलने लगता है और ऐसा मालूम पड़ता है कि मानों उसके कर्ता ने यह मान लिया है कि उसके सारे पाठक राम और सीता के इतिहास से भली प्रकार अभिज्ञ हैं। रामचरितमानस इन सब दोषों से रहित है। कथनात्मक कवि में एक इस गुण का भी होना ज़रूरी है कि वह एक घटना विशेष का बर्णन करते समय अपनी कल्पना द्वारा उन हाव भाव या चेष्टाओं को ध्यान में रख ले जिनको कि उस घटना से सम्बन्ध रखने वाले पात्र ने किया हो या कि जिन का उस समय उस के द्वारा किया जाना स्वाभाविक हो अर्थात् देश पात्र, चलन और व्यवहार तथा तत्तत्कालीन सामाजिक अवस्था का ज्ञान कथनात्मक कवि को पूरा होना चाहिये। बिना इस गुण के उसके वर्णन में असम्बद्धता आ जाती है। एक कार्य विशेष को करते समय कर्ता (पात्र) के हृदय में कैसे २ भाव उदित हुए होंगे और उसने उनका किन २ चेष्टाओं द्वारा प्रकाश किया होगा इसके जानने योग्य मनोवैज्ञानिककल्पना का होना भी कथनात्मक कवि में ज़रूरी है क्योंकि इसके बिना उसके काव्य में पूरी स्वाभाविकता नहीं आती। तुलसी दास में यह सब गुण विद्यमान थे। इन गुणों के उदाहरण उनकी कविता में स्थल २ पर पाए जाते हैं। राज्य त्याग के उपरान्त राम एक ग्राम के समीप होकर जा रहे हैं। दो युवकों के साथ २ एक सुन्दरी स्त्री को देख कर लोगों के चित्तों में नाना प्रकार के विचार उत्पन्न होते हैं तुलसी दास ने उनके वर्णन में बड़ी कुशलता दिखलाई है। ग्राम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सन्दर्भ ग्रन्थ
REFRENCE BOOK

की स्त्रियाँ सीता से उन सभों का परिचय पूछती हैं लघुदेवर लक्ष्मण का परिचय देने में इतना सङ्कोच नहीं है परन्तु रामचन्द्र के परिचय देने में उन्हें बड़ी लज्जा है :—

बहुरि वदन विधु अञ्चल ढाँकी।
पिय तन चितइ भौंह करि बाँकी ॥
खंजन मंजु तिरीछे नैननि ।
निज पति कहेउ तिन्हहिं सिय सैननि ॥

एक लज्जाशीला कुल वधू अपने प्यार पति का भला और किस भाषा में परिचय देती ?

सूरदास तुलसीदास से पौराणिक पाण्डित्य और बहुज्ञता में बढ़ कर थे। उनमें कवित्व-प्रतिभा की भी कमी न थी। परन्तु कथनात्मक कौशल उनमें नहीं था। यदि राम चरित मानस को देख कर उसको आदर्श मान कर सूरसागर की सृष्टि होती तो सूरसागर कथनात्मक काव्यों में भी एक ऊँचे दर्जे का काव्य होता -

———:o:———

तुलसीदास की कविता के विषय में और अन्य बातें।

उस समय की सामाजिक दशा और समाज गठन के सम्बन्ध में भी तुलसी की कविता से बहुत कुछ ज्ञान प्राप्त होता है। प्रसङ्गवशात् आए हुए स्थलों पर तुलसीदास ने अपने समय के समाज का वर्णन खूब किया है। चतुर्वर्ण-अवस्था, साधु सङ्ग और तीर्थादिकों का वर्णन राम चरित मानस में जगह २ पर आया है। बाल काण्ड में राम विवाह के उत्सव पर जनक पुर सजाया गया। वितानों और मण्डपादि से जनक पुर शोभित किया गया। उस सजावट के वर्णन से उस समय के शिल्पियों की हस्त कुशलता का अच्छा परिचय मिलता है।

संस्कृत साहित्य के अतिरिक्त उस समय के हिन्दी साहित्य से भी तुलसी दास अभिज्ञ थे क्योंकि उनकी कविता में "भाषा

सन्दर्भ ग्रन्थ
REFRENCE BOOK

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कवियों के भी बहुत से भाव ज्यों के त्यों मिल गए हैं यथा—

रामायण में—"गिरा अनयन नयन बिनु बानी"।

नन्द दास जी की पञ्चाध्यायी में—"नैनन के नहिं बैन बैन के नैन नहीं हैं"।

सूरदास ने भी इसी भाव को सूरसागर के दशमस्कन्ध छन्द १२५ में दर्शाया है यथा:—

जो मेरी अँखियाँ रसना होतीं कहतीं रूप बनाइ री॥

तुलसी दास का "दृष्टान्त और स्वाभावोक्ति बहुतही उत्तम हैं। समुद्र और नदी का रूपक इनको बहुत अच्छा लगता था"

मन की बढ़ती हुई उमङ्गों की उपमा चन्द्रमा को देख कर समुद्र की उठती हुई तरङ्गों से कई बार दी गई है। तुलसी दास का प्रकृति का निरिक्षण भी अद्भुत था।

—:o:—

तुलसी दास की कृति में पढ़ने योग्य स्थल।

तुलसी दास के कुल १२ ग्रन्थ प्रसिद्ध हैं इनमें छः बड़े और छः छोटे हैं। बड़ों में राम चरित मानस सर्व प्रधान है। उसमें से अच्छे २ स्थलों की कविता का चुन्ना मुश्किल है क्योंकि उस्में प्रायः सभी स्थलों की कविता मनोहर है। परन्तु उस पर भी बाल काण्ड में वन्दना और सीयस्वयम्वर तथा राम-लक्ष्मण के फुलवारी की सैर करने की कविता अत्युत्तम है। अयोध्या काण्ड में राम जानकी सम्वाद पढ़ने योग्य है: किष्किन्धा काण्ड में ऋतु वर्णन अच्छा है। उत्तर काण्ड में संसार, जीवन और मृत्यु विषयक दार्शनिक कविता वेदान्तियों के पढ़ने लायक है। कवितावली रामायण में भी राम वनोबास की कविता अच्छी है। गीतावली में राम की बाल्यावस्था और वनोवास का वर्णन भी अच्छा है। इन स्थलों के दिग्दर्शन से यह मतलब नहीं है कि तुलसीदास की समस्त कृति में इन्हीं स्थलों की कविता सर्वोत्तम है परन्तु इनका नामोल्लेख इस कारण किया गया है कि एक सरसरी नज़र से तुलसीदास का अध्ययन करने से इन स्थलों की कविता अत्युत्तम मालूम पड़ती है। इन कविताओं के नमूनों का यहाँ पर देना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कुछ आवश्यक नहीं मालूम पड़ता क्योंकि उन से प्रायः सभी हिन्दी रसिक सम्यक् परिचित होंगे। इसलिये यहीं पर तुलसीदास और उनकी कविता के इस संक्षिप्त और शीघ्रतायुक्त (hasty) अतएव सदोष परिचय को समाप्त करते हैं।

———:o:———

केशवदास।

केशवदास का सन्बन्ध बुन्देलखण्डी हिन्दी से है, केशवदास इस हिन्दी के प्रधान कवि हैं, विन्ध्याचल की पहाड़ियों से घिरे हुए, प्रकृति की सहज शोभा से सम्पन्न अक्खड़ और उत्कट प्रदेश बुन्देलखण्ड के राजाओं के दर्बारों में सदाही से कवियों का आदर होता आया है, प्रकृति जहाँ अपने जौहर दिखलाती है, जहाँ प्राकृतिक विलक्षणता अपनी अद्भुतता से हाथ धो बैठी है. जहाँ पर्वत और पर्वत की नदियों का प्राकृतिक दृश्य, कहीं हरित और मनोहर और कहीं ऊजड़ और बीहड़ है। वहाँ यदि कवियों को स्वःप्रतिभा प्रबोध के कारण मिलें, कविता कुसुम खिले और वहाँ के लोग उसकी क़दर करें तो इसमें आश्चर्य ही क्या है!

———:o:———

केशवदास का जीवन चरित।

केशवदास के जीवन के सम्बन्ध में उनकी पुस्तकों द्वारा ही हमें कुछ थोड़ा बहुत वृत्तान्त मालूम है। अपनी हर पुस्तक के आरम्भ में केशवदास ने अपने बाप दादे का नाम और उस पुस्तक की रचना का समय दिया है और अपने आश्रय दाताओं का भी उल्लेख किया है इसी के आधार पर यहाँ उनके जीवन चरित्र का कुछ वर्णन किया जाता है।

'ओड़छे तीर तरंगिनि बेतवे' के तट पर तुङ्गारण्य में जहाँगीरपुर नामक ग्राम है केशवदास वहीं के रहने वाले थे। वह सनाढ्य ब्राह्मण थे। उनके पिता का नाम काशीनाथ और पितामह का कृष्णदत्त मिश्र था; कृष्णदत्त संस्कृत के महान पण्डित थे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ओड़छे के बसाने वाले राजा प्रतापरुद्र (१) ने उनको पुराण की वृत्ति दी थी । प्रतापरुद्र के बाद उनके पुत्र मधुकर शाह फिर मधुकर शाह के पुत्र वीरसिंह और इन्द्रजीतसिंह परम्परा से इस कुल के कवियों का आदर करते आए और यह कुल ओड़छे के राज्यवंश का पुश्तैनी कवि बना रहा ।

प्रतापरुद्र ने सन् १५३१ ई० में ओड़छा नगर बसाया और उसको अपनी राजधानी बनाया । यह छोटा सा पहाड़ी राज्य सदाही मुसलमानों से लड़ता रहा । और इसके राजागण सदा बीरता के लिये मशहूर रहे ।

राजा प्रतापरुद्र के भारतचन्द नामक एक बड़ा वीर और स्वदेश भक्त पुत्र हुआ । कविप्रिया में केशव इसकी प्रशंसा में लिखते हैं ।

'भारतखण्ड मंडन भए तिनके भारत चन्द । देश रसातल जात जिहिं फेर्यो ज्यौं हरिचन्द' और 'शेरशाहि असलेम के उरशाली शमशेर'। इस अन्तिम घटना का वर्णन बुन्देलखण्ड के इतिहास में इस प्रकार है :—

"सन् १५४४ ई० में शेरशाह ने कुछ काल के लिये हुमायूँ को परास्त कर चुकने के बाद बुन्देलखण्ड के जीतने का यत्न किया । परन्तु राजाज्ञा से मधुकर शाह ने शेरशाह को हरा दिया ।"

मालूम होता है कि इतिहास में भूल से भारतचन्द के स्थान में मधुकर शाह लिख गया : क्योंकि वंश परम्परा से ओड़छा राज्य से सम्बन्ज रखने वाले केशवदास का ऐसी भारी भूल करना सम्भव नहीं । परन्तु कदाचित् भारतचन्द का युद्ध शेरशाह के लड़के से हुआ हो क्योंकि उसका भी नाम शेरशाह या शेरशाह-सलेम था ।

---

(१) कवि प्रिया में लिखा है कि प्रतापरुद्र ने कृष्णदत्त को पुराण की वृति दी थी । (देखो प्रथम प्रभाव छन्द १७, १८) ; परन्तु विज्ञान गीता के अनुसार प्रतापरुद्र के पुत्र मधुकरशाह ने कृष्णदत्त को पुराण की वृत्ति दी थी (देखो वि० गी० प्रभाव प्रथम छन्द १७, १८) ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारतचन्द अपुत्र मर गए। इसलिये उनके बाद उनके भाई मधुकरशाह राजा हुए। इन्होंने भी मुसलमानों से वैर जारी रक्खा। इनकी वीरता की प्रशंसा में बाबू श्यामसुन्दरदास जी स्वसम्पादित छत्र प्रकाश की भूमिका में यों लिखते हैं:—

"ये मधुकर शाह सन् १५५२ में गद्दी पर बैठे इनके समय में अकबर ने बुन्देलखण्ड जीतने का कई बेर उद्योग किया। कभी तो मुसलमानों की जीत होती और कभी बुन्देलों की अन्त में १५८४ में शाहज़ादा मुराद स्वयं एक बड़ी सेना लेकर आया पर मधुकर शाह की वीरता से प्रसन्न होकर उसने उसका सारा राज्य लौटा दिया"

इस घटना का सविस्तर वृत्तान्त बुन्देलखण्ड के इतिहास में यों लिखा है:—

"सन् १५८४ में स्वयं शाहज़ादा मुराद ने कई अन्य हिन्दू और मुसलमान सेनापतियों के साथ राजा मधुकरशाह पर फिर चढ़ाई की लडाई में मधुकर शाह ने मुराद को ज़ख्मी किया और मुराद घोड़े पर से गिर पड़ा और निरस्त्र हो गया। तब मधुकर शाह ने शाहज़ादः से कहा "ज़मीन पर क्यों पड़े हो उठो और अस्त्र ग्रहण करके युद्ध करो." शाहज़ादः ने जवाब दिया। "अब तुम्हारा अवसर है। मुझे मार क्यों नहीं डालते?" राजा ने उत्तर दिया "मैं चत्रिय हूं। और निरस्त्र वैरी का घात करना क्षात्रधर्म के विरुद्ध है"।

राजा की इस उदारता पर शाहज़ादः मुराद बहुत खुश हुआ और उसका राज्य लौटा कर सन्धि कर ली"।

इन्हीं घटनाओं को लक्ष्य करके केशवदास ने लिखा है:—

"सबल शाह अकबर अवनि जीति लई दिशि चारि। मधुकर शाह नरेश गढ़ तिन के लीन्हे मारि ....हारे मधुकर शाह सों आपुन शाह मुरादि"

राजा मधुकर शाह के कई पुत्रों में वीरसिंह देव और इन्द्रजीत बड़े प्रसिद्ध थे "वीरसिंह बड़े न्यायी और सत्यप्रिय शासक थे। उनके पुत्र ने अपने शिकारी कुत्ते द्वारा एक ब्रह्मचारी का घात होने दिया था इस अपराध में वीरसिंह ने उसको प्राणदण्ड की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सज़ा दी" मुसल्मान सम्राट् अकबर से इनकी भी नहीं बनती थी। इन्हों ने शाहज़ादः जहाँगीर के कहने से अबुलफ़ज़ल का सिर काट लिया और कहते हैं कि उसके सिर को अकबर के पास उपहार स्वरूप भेज दिया। वीरसिंह का नाम इस अन्याय कर्म के कारण अकबर के समय के इतिहास में सदा स्मरण रहेगा। वीरसिंह द्वारा सन् १६०२ में अबुलफ़ज़ल मारे गए। और सन् १६१० में केशवदास ने वीरसिंह के लिये विज्ञान गीता लिखी परन्तु उन्हों ने कहीं इस कार्य का वर्णन नहीं किया है।

इन्द्रजीत केशवदास के लँगोटिया यार थे। उन दोनों में प्रगाढ़ मैत्री थी। इन्द्रजीत ज़रा विलासप्रिय थे। प्रवीणराय उनके दर्बार की प्रधान पातुर थी। उसे कविता करना केशवदास ने सिखलाया था। और उसी के लिये सन् १६०१ में कविप्रिया की सृष्टि हुई थी वह अपनी कलाओं में बड़ी प्रवीण थी। उसकी प्रसिद्धि दूर २ तक फैल गई थी। फैलते २ वह अकबर के दर्बार तक पहुँची। अकबर ने ओड़छा के राजा को लिख भेजा कि प्रवीण राय को हमारे दर्बार में भेज दो। सदा से स्वतन्त्र और आत्माभिमानी राजा को यह बात बुरी मालूम हुई। जब कि १ बड़े राजपूत और क्षत्रिय अकबर के माँगने पर अपनी बेटियाँ तक उसे दे डालते थे तब बुन्देलखण्डेश्वर का उसके पास अपनी वेश्या को भेजने से इनकार करना साधारण साहस और गौरव की बात न थी। कहते हैं कि इन्द्रजीत के आज्ञा न मानने पर अकबर ने उनके ऊपर एक करोड़ रुपया जुर्माना किया इस पर केशवदास ने समझा बुझा कर इन्द्रजीत को इस बात पर राज़ी किया कि वह प्रवीणराय को मुग़ल सम्राट् के दर्बार में भेज दें और स्वयं केशवदास उसके साथ २ जाकर किसी चालाकी से उसे वापिस ले आवें केशवदास राजा बीरबल से मिले और उनको यह सवैया सुनाया "पावक पक्षि पशू नग नाग नदी नदलोक रच्यो दिशिचारी। केशवदेव अदेव रच्यो नरदेव रच्यो रसना न निवारी॥ कै नरनाह बली बरवीर भयो कृत कृत्य महाव्रत धारी। दै करतापन आपन ताहि दियो करतारहु दोऊ करतारी"॥ बीरबल ने सिफ़ारिश करके जुर्माना माफ़ कराया पर प्रवीणराय को हाज़िर होना पड़ा।" अकबर और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रवीणराय के सवाल जवाब हुए। अन्त में प्रवीणराय ने यह दोहा पढ़ा।

बिनती राय प्रवीन की सुनिए साह जहान।
झूँठी पातर भषत हैं बायस बारी स्वान॥

बादशाह ने लज्जित होकर उसे विदा किया।

इस कथानक से सम्बन्ध रखने वाला कविप्रिया में एक दोहा है केशवदास अपने सन्तोष की प्रशंसा में कहते हैं॥

योहीं कह्यो जुबीरवर माँगु जु मन में होय।
माग्यो तब दर्बार में मोहिं न रोकै कोय॥

इस दोहे के अतिरिक्त और कहीं केशवदास ने अपनी कविता में इस कथानक का उल्लेख नहीं किया है।

एक दिन केशवदास से प्रसन्न होकर —

इन्द्रजीत तासों कह्यो माँगन मध्य प्रयाग।

परन्तु केशवदास ने —

माँग्यो सब दिन एक रस कीजै कृपा सभाग॥

इन्द्रजीत सिंह और केशवदास तथा उनकी मित्र मण्डली में इतना प्रगाढ स्नेह था कि एक दूसरे से पृथक होना असह्य समझते थे मृत्यु के उपरान्त हम सब एक दूसरे से वियुक्त हो जाँयगे यह विचार उनको बड़ी चिन्ता देता था। केशवदास ने एक तर्कीब सोच निकाली प्रस्ताव हुआ कि एक प्रेत यज्ञ किया जाय और समस्त मण्डली अपने को उस में भस्म करदे "सुना है कि केशवदास ही ने इस भूत यज्ञ का भार उठाया और भृष्ट पदार्थों से बड़ा भारी यज्ञ किया। इस में राजा इन्द्रजित, उनकी समस्त सभा और केशव तथा राजा की कृपापात्र प्रवीनराय वेश्या उपस्थित थीं समस्त मण्डली के चित में यही उत्साह आरूढ़ था कि हम लोग एक ऐसा काम कर रहे हैं जिस के सिद्ध होने से केशव के कथनानुसार दस सहस्र वर्ष तक साथ रहेंगे। यज्ञान्त में सब एक स्थान में विष्ठालिप्त भूमि में बैठे, खोपड़ियों की माला पहनी, मद्यमांस से चर्चित हुए और स्मशान विभूति से धूरित हो भूतप्रेतों में तन्मय हो मत्तावस्था में मुग्ध हो गए, तब इनके पूर्व निर्देशानुसार चारों ओर से भयानक आग लगादी गई सो सब चटपटा के समाप्त हो

२१

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गए। यों सम्भवतः सं० १६७० (सन् १६१३ ई०) में ७६ वर्ष के वय में केशव का इतिहास समाप्त हुआ"। (विहारी विहार की भूमिका)॥

———:o———

केशवदास के धार्मिक विचार और आचरण ॥

केशवदास के जीवन और कृति से मालूम होता है कि उनके धर्म सम्बन्धी विचार तुलसीदास और सूरदास से कुछ भिन्न थे वे कर्म काण्ड को प्रधान मानते थे भक्ति भाव का अंश उन में कम था तन्त्रों में भी उन का पूरा विश्वास था कविता के सम्बन्ध में उन का सिद्धान्त था कि कवि को नियमित न्यायों का उल्लङ्घन न करना चाहिए पिङ्गलादि के नियमों का उसे पूरी भाँति पालन करना चाहिये धर्म में भी वे परतन्त्रता के पक्षपाती थे तुलसीदास की भाँति वे धर्म में उदार न थे यह सङ्कीर्णता उनके आचरणों में भी झलकती है अपने राजा को वेदान्त सम्बन्ध में उपदेश देते हैं कि पहिले अपने यहाँ के ब्राह्मणों ही को दान देना चाहिये और 'उबरो धन देहु विदेशिन को' स्वयं सनाढ्य होने से आप के मत में सनाढ्यों ही को दान देना चाहिये क्योंकि सानढ्य सब ब्राह्मणों में श्रेष्ठ होते हैं ।

केशवदास में तुलसीदास का विनीत भाव नहीं था वह अपने को बहुधा केशव कवि शिर मौर लिखा करते थे ॥

केशवदास का पाण्डित्य केशवदास के वंश में संस्कृत की बड़ी चर्चा थी, उनके पिता और पितामह संस्कृत के महान पण्डित थे—उनके ज्येष्ठ भ्राता बलभद्र मिश्र भी पुराण के वक्ता थे—उन से राजा मधुकर शाह पुराण सुना करते थे ऐसे वंश में उत्पन्न होकर भला केशवदास संस्कृत के सुपण्डित क्यों न होते केशवदास गर्व के साथ कहते हैं—और यह गर्व सत्य है—कि —

भाषा बोलि न जानई जिन के कुल के दास।
भाषा कवि भो मन्द मति तेहि कुल केशवदास ॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस दोहे से केशवदास का संस्कृत का पक्षपात साफ़ प्रगट होता है—उनके रचे हुए ग्रन्थों की भाषा और वाक्य रचना से भी उन का संस्कृत की तरफ़ झुकाव साफ़ है हिन्दी लिखते हुए आप संस्कृत की विभक्ति और क्रिया के रूपों तक का प्रयोग कर देते थे यथा—

'तिहिते त्रिलोक अभूत' और 'सुकाशिनाथ तस्य पुत्र' इत्यादि अपनी बात के प्रमाण में हिन्दी कविता के बीच २ आप स्मृति आदि के श्लोक ज्यों के त्यों उद्धृत कर देते थे संस्कृत साहित्य के विचार और संस्कृत काव्य में प्रयुक्त उपमाओं से केशवदास की कविता भरी पड़ी है वाल्मीकीय रामायण पढ़ कर राम चन्द्रिका की सृष्टि हुई और वेदान्त के सिद्धान्तों को दर्शाने के लिये संस्कृत के, कृष्णदत्त रचित, प्रबोध चन्द्रोदय नाटक की तर्ज़ पर विज्ञानगीता रची गई, और कवि प्रिया को संस्कृत साहित्य के अलङ्कारिक ग्रन्थों की छाया कहना भ्रमात्मक न होगा निदान केशवदास अपनी कविता के लिये विषय, उत्प्रेक्षा और विचार अधिकतर संस्कृत साहित्य ही से ग्रहण करते थे अपनी भाषा में वे शुद्ध संस्कृत शब्दों का प्रयोग खूब करते थे केशवदास न फ़ार्सी के शब्दों और बोल चाल की भाषा के मुहावरों का भी प्रयोग किया है पर न तो वे फ़ार्सी भाषा के पण्डित थे और न बोलचाल की भाषा के बड़े पक्षपाती। संस्कृत के बड़े पक्षपाती होने पर भी केशवदास फ़ार्सी शब्दों का खूब व्यवहार करते थे, कहीं २ पर फ़ार्सी साहित्य के विचारों को भी अपनी कविता में ले आते थे—एक स्थान पर आपने लिखा है "बारसों बारीक करिहा ॥"

प्राकृतिक दृश्यों के सौन्दर्य को अनुभव करने और उसके वर्णन करने की भी योग्यता केशवदास में थी प्रसङ्ग आ पड़ने पर बागों, बनों और ऋतुओं का वर्णन केशव ने अच्छा किया है. नदी आदिकों का बर्णन भी उत्तम है रामचन्द्रिका में एक स्थल, पर सकमल नदी को देखकर आप कहते हैं :—

> अलि कमल सौगन्ध लीला मनोहारिणी
> बहु नयन देवेश शोभा मनो धारिणी

इसको पढ़कर भारतेन्दु हरिश्चन्द्र की पङ्क्ति

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मनुहग धरि अनेक जमुन निरखत व्रज शोभा
याद आजाती है।

विज्ञान गीता के दसवें प्रभाव में वर्षा और शरद का अच्छा वर्णन है।

अरुणोदय के समय नील आकाश में फैलती हुई लालिमा का वर्णन करते हुए केशवदास रामचन्द्रिका मे कहते हैं:—
"सिन्धु में बड़वाग्नि की जनु ज्वालमाल विराजहीं" विज्ञान गीता में एक पङ्क्ति है:—

"केशवराइ अकाश के मेह बड़े बवघूरणि में तृण जैसे" प्राकृतिक दृश्यों का ध्यान देकर अवलोकन करने वाला ही इसे लिख सकता है राम चरित मानस में तुलसीदास परशुराम-लक्षमण-सम्वाद में लक्ष्मण से कहलाते हैं:—

इहाँ कुँभड़ बतिया कोई नाहीं
जो तर्जनी देखि मरि जाहीं

रसिक प्रिया में इसी के जोड़ का वानस्पतिक जीवन से लिया हुआ उदाहरण है:—

प्रीति कुम्हेड़े की जैहै जई सम,
होति तुमै अँगुरी परसों हीं

मैली सारी पहने हुए म्लान सीता को केशवदास कहते हैं:—
मृणाली मनो पङ्क सों काढ़ि डारी

——:o:——

थोड़े से शब्दों द्वारा बहुत से अर्थ का व्यंजन।

केशवदास में कविकौशल सम्बन्धी एक बड़ाभारी गुण और था. वह थोड़े से शब्दों में बहुत सा अर्थ भर देते थे. ऐसा करने के लिये वह प्राय: दुअर्थी शब्दो का बहुत प्रयोग किया करते थे. परन्तु जहाँ पर उन्होंने ऐसे शब्दों का प्रयोग किए बिना ही थोड़े से शब्दों द्वारा बहुत से अर्थ को व्यञ्जित करने में सफलता पाई है वहाँ की कविता बहुत ही अच्छी हुई है. इसका एक ही उदाहरण यहाँ पर दे देना काफी है—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लंङ्काविजय के उपरान्त सीता की अग्नि परीक्षा हुई उस स्थल पर रामचन्द्रिका में केशवदास ने उत्प्रेक्षाओं की भरमार की है. अग्नि में बैठी हुई सीता को आप कहते हैं —

पिता अङ्क ज्यों कन्यका शुभ्रगीता,
लसै अग्नि के अङ्क त्यों शुद्ध सीता।
महादेव के नेत्र की पुत्रिकासी,
कि सङ्ग्राम की भूमि में चण्डिकासी।

अग्नि में सीता इतनी ही सावधानी और सुख से बैठी हुई है जैसे पिता की गोद में छोटी सी कन्या बैठी हो. कन्या-कन्या भी नहीं कन्यका का पिता की गोद में बैठना असीम निष्पक्षपात और निर्दोषता का चिन्ह है-अग्नि सब कुछ भस्म कर देती है परन्तु सीता को नहीं भस्म करती-महादेव की तीसरी आँख से प्रलयङ्कारी ज्वाला निर्गत होती है-सारे संसार का संहार करती है-परन्तु नेत्र के अन्तर्गत पुतली की कुछ हानि नहीं होती. एवं प्रकार से आग में बैठी हुई सीता कुछ क्लेश नहीं पाती. इतने अर्थ के व्यञ्जित करने के लिये कम से कम दो चार छन्द तो लिखे जा सकते हैं. ऐसे संक्षिप्त परन्तु अर्थ बाहुल्य वाले उदाहरणों के देखने से मिल्टन की कविता का स्मरण हो आता है.

———:o———

केशवदास की कृति।

फुटकर छन्द केशवदास के कम मिलते हैं-उनकी पाँच पुस्तकें प्रसिद्ध हैं. १, रसिकप्रिया, २ कविप्रिया, ३ रामचन्द्रिका, ४ विज्ञानगीता और ५ राम अलङ्कृत मञ्जरी पिङ्गल. रसिक प्रिया को केशवदास ने सन् १५६१ ई० (सं० १६४८) में इन्द्रजीत सिंह के नाम से बनाया. यह नायका भेद का ग्रन्थ है; कविप्रिया को सन् १६०१ ई= में प्रवीणराय पातुर को कविता की शिक्षा देने के लिये बनाया-यह साहित्यालङ्कार का ग्रन्थ है-रामचन्द्रिका की सृष्टि भी सन् १६०१ ई० में इन्द्रजीत के लिये हुई-यह कथनात्मक कविता का ग्रन्थ है. सन् १६१० ई० में विज्ञानगीता रची गई. यह वेदान्त विषयक पुस्तक है। यह वीरसिंह देव की प्रेरणा से लिखी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गई थी. पाँचवीं छन्द रचना की पुस्तक है। इन पाँचों में काव्य की दृष्टि से रामचन्द्रिका और विज्ञानगीता सर्वोत्तम हैं। कवि प्रिया और रसिक प्रियों में भी उदाहरणों के लिये जो छन्द दिए गए हैं उनमें से बहुतों की कविता अच्छी है—

केशवदास की सब से पहिली पुस्तक रसिक प्रिया है और अन्तिम विज्ञानगीता; रसिक प्रिया सन् १५६१ ई० में और विज्ञानगीता सन् १६१० में बनी अर्थात् केशवदास का साहित्य जीवन केवल १९ वर्ष का था। उन्नीस ही वर्षों तक उन्हों ने पुस्तक रचना जारी रक्खी। और यदि पण्डित अम्बिकादत्त व्यास की अटकल ठीक है तो अपनी मृत्यु के तीन वर्ष पूर्व तक केशवदास कविता करते रहे केशवदास की कविता तत्काल फल देने वाली नहीं है। उसके समझने के लिये अधिक परिश्रम और मनन करने की आवश्यकता है। उस पर कठिनाई यह है कि केशवदास प्रायः जान बूझ कर कठिन २ उदाहारणों का प्रयोग करते हैं इसी लिये लोग कहते हैं कि केशवदास की कविता की भाषा किताबी हिन्दी है। केशवदास का स्वयं अपना मत है कि आभूषण और अलङ्कारों के बिना कविता अच्छी नहीं होती। इतना कुछ होने पर भी उनकी कविता के समझने के लिये जो परिश्रम किया जाय वह प्रायः निष्फल नहीं होता। सूरदास के कूट छन्दों के समझने के लिये जो परिश्रम किया जाय उसको पहाड़ खोद कर चुहिया निकालना कह सकते हैं। उसमें अङ्गद (बाजू बन्द भूषण विशेष) के समझने के लिये कर्ण कुन्ती सूर्य और बालि वानरराज तक जाना पड़ता है परन्तु केशवदास की कविता के सम्बन्ध में प्रायः ऐसा नहीं कहा जा सकता क्योंकि उसके लिये किया गया परिश्रम बहुधा निष्फल या अल्पफल होता नहीं। परन्तु केशवदास भी दुअर्थी शब्दों का, एक ही ध्वनि और रूप के शब्द का दो अर्थों मे, बहुधा प्रयोग कर बैठते थे—

सखि तो हित हैं सब भूषण भूषित।
भूषण तो तब भूषित नाहीं॥

इस चरण में पहिले भूषण का साधारण अर्थ है-पर दूसरे भूषण के मानी हैं "पृथ्वी खोदना" सूरदास के एक से अधिक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

छन्दों में एकही छन्द के अन्तर्गत पचास वार सारंग शब्दको पढ़ कर चित्त भागने लगता है उन्होंने एक स्थल पर लगातार दो छन्दों में तनक शब्द का ३७ बार प्रयोग किया है !! अनुप्रास और शब्द मैत्री के लालच से रचीगई केशवदास की दो एक पङ्क्तियाँ देखिए।

"लाडिली लीली कलोरी लुरीकहँ लायलुके कहँ अंगलगायके"
(रसिक प्रिया)

"फिर फिर फेर फेर फेर्यो मैं हरी-इत्यादि (तथा)

यदि ऐसेही प्रयोगों का आभूषण नाम है तो यह ऐसे आभूषण हैं कि जिनको अपने शरीर पर लाद लेने से कविता वनिता विचारी पग भर भी नहीं चल सकती पर हाँ सोंच विचार कर और ज़रा हाथ खींचे हुए ऐसे प्रयोगों का व्यवहार सचमुचही कविता भूषण होजाता है और प्रशंसार्ह है उदाहरण के लिये केशवदासही की एक पङ्क्ति लीजिए और उसे ऊपरवाली पङ्क्तियों से मिलाइए।

तरनि तनूजा तीर तरुवर तर ठाढ़े
तारी दै दै हँसत कुमार कान्ह प्यारी सों ॥
(रसिक प्रिया)

केशवदास के, द्यर्थ शब्दों वाले, एक दोहे को देखिए.—

जहीं वारुणी कीकरी रंचक रुचि द्विजराज।
तहीं कियो भगवन्त बिन सम्पति शोभा साज ॥

यहाँ 'वारुणी' और द्विजराज का द्यर्थ में प्रयोग है इन्हीं दो शब्दों के दुअर्थी होने पर इस दोहे की सारी कविता निर्भर है।

इतना कुछ होने पर भी केशवदास बहुधा बड़ी रसीली तत्काल फलदायक, प्रसाद युक्त और सरल कविता कर डालते थे, रसिक प्रिया में एक दो चरण हैं।—

हौं तो यहै तबही की बिलोकत,
होतो गुमान क्यों याहि भौं के तो।
लामी लटैं अरु पातरी देह,
जु नेक बड़ी विधि आँखन दे तो।

उसी पुस्तक में एक अन्य स्थल पर एक पंक्ति है:—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चन्द सो आनन काढ़ि कहाँ चली,
सूझत है कछू तोहि की नाहीं ।

रामचन्द्रिका में परशुराम लक्ष्मण संवाद, अङ्गद रावणसंवाद और रामाश्वमेधकी कविता बड़ी सरस है ।

---:o:---

केशवदास की कविता का रस विशेष ।

केशवदास सब रसों की कविता करते थे सब रसों के दर्शाने में निपुण थे। परन्तु विशेषतः वीररसात्मक और रौद्ररसात्मक कविता उनकी बहुत अच्छी होती थी। परशुराम और रामचन्द्र के सम्बाद में आया हुआ 'जो धनु हाथ लियो रघुनाथ तो आजु अनाथ करों दशरत्थहि' चरणवाला छन्द इन रसों के उदाहरणमें बहुधा उद्धृत किया जाता है भयानक और वीभत्स रसों के दर्शाने में भी केशवदास पण्डित हैं ।

जैसे केशवदास ने सब रसों की कविता की वैसेही शायदही कोई छन्द पिङ्गल में रहगया हो जिसका प्रयोग केशवदास ने न किया हो। दोहा चौपाई और घनाक्षरी से लेकर छोटे छोटे दो २ शब्दों वाले छन्दों तक का प्रयोग केशवदास ने किया है। परन्तु नाराच छन्द उनको अति प्रिय था और उसका व्यवहार भी वह बड़ी सफलता के साथ करते थे।

---:o:---

केशवदास का मूर्ति चित्रण ।

यों तो केशवदास नख शिख वर्णन में साहित्यशास्त्रों के नियमों का आँख मूँदकर पालन करनेवाले थे पर तौभी उन्हों ने विज्ञानगीता और रामचन्द्रिका में कहीं २ मूर्तिचित्रण बहुतही अच्छा किया है। विज्ञानगीता के आठवें प्रभाव में कापालिक, बौद्ध भिक्षुक और सन्यासी आदि का चित्र उत्तम है उदाहरण के लिये भिक्षुक का स्वरूप देखिए:—

तमाल तूल तुङ्ग है, पिसङ्ग चीर अङ्ग है ।
सचूड़ मुण्ड मुण्डिए, सखी सुको बिलोकिए ॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संन्यासी का चित्र है:--

कौपीन मण्डित दण्डसों, नख काँख दीरघवार।
मालाक्ष शोभित हस्त पुस्तक, करत वस्तु विचार॥

इन शब्द चित्रों के पढ़ने से चित्रित व्यक्तियों का स्वरूप सामने आजाता है॥

मनोवैज्ञानिक कल्पना।

एक कार्य विशेष को करते समय कर्ता के मन में नाना भावों का उदय होता है उन भावों का मनोवैज्ञानिक नियमों के अनुसार यथातथ्य वर्णन करना कवि का एक प्रधान गुण है। केशवदास में भी यह गुण पूरा था-अशोक वाटिका में बैठी हुई सीता के सामने वृक्ष के ऊपर से हनुमान रामचन्द्र की मुद्रिका डाल देते हैं। सीता के मन में मुद्रिका को देख कर अनेक भाव उत्पन्न होते हैं-सन्देह शोक, आशा और निराशा का एक साथ ही सीता के मन में उदय होता है-रामचन्द्रिका में इस स्थल की कविता केशवदास की मनोवैज्ञानिक कल्पना का पूरा परिचय देती है। ऐसे अनेक स्थल केशव की कविता में हैं। कथनात्मक कविता की दृष्टि से रामचन्द्रिका और विज्ञानगीता ये दो केशवदास की कथनात्मक कविता की पुस्तकें हैं। रामचन्द्रिका में रामचन्द्र के जीवन का वर्णन है इसी विषय को लेकर केशवदास से पूर्व हिन्दी में कविता हो चुकी थी-तुलसीदास का रामचरितमानस चन्द्रिका से सत्ताईस वर्ष पहिले का है और सन् १५५० ई० में अर्थात् रामचन्द्रिका से इक्यावन वर्ष पूर्व सूरदास अपने सूरसागर के नवम स्कन्ध में रामचरित का वर्णन कर चुके थे। विज्ञानगीता रूपक काव्य है-इसमें एक रूपक के व्याज से विवेक और अज्ञान-महामोह की लड़ाई का वर्णन है। संस्कृत में प्रबोधचन्द्रोदय नाटक इसी विषय को लेकर केशवदास से पूर्व ही बन चुका था। अतएव विज्ञानगीता का भी विषय केशवदास के लिये नवीन नहीं था-परन्तु विषय को वर्णन करने का ढङ्ग अपना निराला है-रामचन्द्रिका की कथनात्मकता के

२२

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विषय में तुलसीदास के परिचय में कुछ उल्लेख हो चुका है-इस लिये यहाँ पर विज्ञानगीता ही की कथनात्मकता पर दृष्टि डालनी ठीक है।

विज्ञानगीता एक रूपक है-इस रूपक में विवेक और महामोह दो राजा माने गए हैं। महामोह की मिथ्यादृष्टि रानी है और इन्द्रियाँ चेरियाँ हैं। मदिरा नौकरानी है और क्रोध कामादि उसके दलपति, सलाहकारी और मित्र हैं-भारतदुर्दशा में दुर्दैव के आलस्य और रोग प्रधान भट हैं-विज्ञानगीता में भी महामोह के आलस रोग भले भट्ट लेखो। महामोह और विवेक राज में युद्ध ठनता है काशी विवेक का प्रधान गढ़ है-उसके जीतने के लिये महामोह अपने दलबल सहित उस पर चढ़ाई करता है। छल कपट श्रद्धायुक्त पाखण्ड और दम्भ आदि दूत उसने पहिले ही से काशी में भेज दिए हैं और उन्हों ने वहाँ अपना अधिकार भी जमा लिया है और केशवदास के मतानुसार अधर्म वहाँ फैल रहा है क्यों कि वहाँ "पढ़ै शास्त्र को वेद विद्या विरोधी"। फ़ैज़ी आदि मुसल्मानों के सम्बन्ध में मशहूर है कि उन्हों ने ब्राह्मणों का वेष रखके काशी में संस्कृत का अध्ययन किया था। केशव ऐसे कट्टर हिन्दू को भला यह कब सह्य था। कदाचित् इसी को लक्ष्य करके उन्हों ने यह पंक्ति लिखी हो। अस्तु इतना कुछ होने पर भी लड़ाई में विवेक राज की जय होती है, क्यों कि अन्त में "सत्यमेव जयते नानृतम्"। इस कथा का वर्णन केशवदास ने अच्छे ढङ्ग से किया है, एक दार्शनिक विषय को सरस बनाने का अच्छा यत्न है। बीच बीच में वीर बीभत्स आदि अन्य रसों का कुशलता के साथ सन्निवेश किया है—दशवें प्रभाव में वर्षा और शरद् का वर्णन बहुत अच्छा किया है। नाना प्रकार के छन्दों के होने के कारण और नाना रसों की कविता के कारण, विज्ञानगीता के लगातार पढ़ने से चित्त भी नहीं ऊबता। सर्वथा विज्ञानगीता रामचन्द्रिका से कथनात्मकता में घटकर नहीं है। वरन जो दोष रामचन्द्रिका की कथनात्मकता में पाए जाते हैं वे इसमें कम पाए जाते हैं। निदान विज्ञानगीता केशवदास के कथनात्मक कौशल का अच्छा परिचय देती है और केवल कविता की दृष्टि से भी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हिन्दी साहित्य में आदर योग्य है। विज्ञानगीता के बनाने पर केशवदास को बहुत कुछ पुरस्कार मिला था। केशवदास स्वयं कहते हैं कि वीरसिंह देव ने उनको—

बृत्तिदई पदवी दई दूरि करी दुखत्रास।
जाइ करो सकलत्र श्री गङ्गतट बसवास॥

——:o:——

केशवदास की कविता के सम्बन्ध मे दो एक अन्य बातें

केशवदास की कविता में उनके समकालीन कवियों के भी विचार पाए जाते हैं। तुलसीदास के अनेक विचार उनकी रामचन्द्रिका में पाए जाते हैं। इसके कई कारण हो सकते हैं परन्तु सब से प्रधान कारण यह मालूम पड़ता है कि दोनों कवियों ने एक ही स्थान से अपने अपने विचार लिए हैं। बाल्मीकीय रामायण की छाया रामचरितमानस है और उसीका अध्ययन कर केशवदास ने अपनी चन्द्रिका बनाई है। नीचे लिखी हुई पंक्तियों की समानता का यही कारण मालूम पड़ता है।

क्षत्रिय रूप रक्खे हुए परशुराम को तुलसीदास कहते हैं।

धरि मुनि तनु जनु वीर रस, आयउ जहँ सब भूप।

केशवदास का वर्णन है:—

रघुवीर को यह देखिए रसवीर सात्विक धर्म सों।

आगे २ राम उनके पीछे सीता और सीता के पीछे लक्ष्मण बन को जाते हैं। तुलसीदास उत्प्रेक्षा करते हैं :—

उभय बीच सिय सोहति कैसी।
ब्रह्म जीव बिच माया जैसी॥

केशवदास कहते हैं:—

देखि देही सबै कोटि धाकै भनो।
जीव जीवेश के बीच माया मनो॥

एक और स्थल की समता को देखिए:—

सुन्दरकाण्ड में (रामचरितमानसान्तर्गत) विभीषण हनूमान से कहते हैं :—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुनहु पवनसुत रहनि हमारी।
जिमि दसनन्हि महुँ जीभ बिचारी ॥

केशवदास रामचन्द्रिका के १३ वें प्रकाश में अशोक वाटिका में राक्षसियों से घिरी हुई सीता को कहते हैं:—

असी बुद्धिसी चित्त चिन्ता न मानो।
कियो जीभ दन्तावली में बखानो ॥

केशवदास की उक्तियाँ और उपमाएँ बहुधा बहुत अच्छी होती थीं। अयोध्या का वर्णन करते हुए घरों की दीवारों पर चित्रित चित्रों की प्रशंसा में केशवदास रामचन्द्रिका में कहते हैं

"जनु विश्वरूप की अमल आरसी, रची बिरञ्चि विचारि ॥"

अशोक वाटिका में बैठी हुई सीताजी रामचन्द्र की मुद्रिका को देखकर उससे कहती हैं:—

"श्रीपुर में बन मध्य हौं, तू मग करी अनीति।
कहि मुँदरी अब तियन की, को करि है परतीति ॥

"राज्यलक्ष्मी ने अयोध्यानगरी मे, मैंने बन में और तूने रास्ते में रामचन्द्र के साथ अनीति की, अर्थात् उनका साथ छोड़दिया, हे मुद्रिके, कहो अब स्त्रियों का कौन विश्वास करेगा"?

———०———

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भाषातत्त्व ।

[पण्डित रामावतार पाण्डेय एम. ए. लिखित ।]

———:o:———

भाषाशास्त्र का विषय तीन भागों में बटा हुआ है (१) भाषा की उत्पत्ति (२) अनेक भाषाओं का परस्पर सम्बन्ध और भाषाओं का वर्गीकरण, (३) भाषा में परिवर्तन। भारतवर्ष की संप्रति मुख्य भाषा हिन्दी है इसलिये इस व्याख्यान मे प्रायः हिन्दी ही से उदाहरण लेकर भाषाशास्त्रीय तत्वों को दिखलाया गया है।

(१) भाषा की उत्पत्ति के विषय में अनेक मत हैं। कोई लोग कहते हैं कि मनुष्य के पूर्वपुरुषों को ईश्वर ने भाषा सिखाई।

(२) कोई कहते हैं कि सुख दुःख आदि में मनुष्य स्वभावतः कुछ आँह उँह अहा ओहो आदि शब्द कहते हैं। ऐसे ही चलने की खड़-खड़ाहट, गाड़ी की गड़गड़ाहट, ताड़ आदि के पत्तों की फड़फड़ाहट आदि विविध शब्दों का आविर्भाव प्राकृतिक पदार्थों में हुआ करता है। बस इन्हीं दो मूलों से मनुष्य ने धीरे धीरे सब शब्द बना लिए। जैसे किसी पक्षी को काँव काँव करते देख उसे लोग कौवा कहने लगे। ऐसे ही गड़गड़ाती हुई सवारी को गाड़ी और सर-सर चलते हुए जन्तु को सर्प कहने लगे। योंही किलाना चिल्लाना खाँसना किकियाना मिमियाना आदि क्रियाओं का भी निर्माण हो गया। यह अमेरिका के प्रसिद्ध डाक्टर ह्विट्नी का मत है।

(३) कुछ नीतिज्ञ पुरुषों ने एक तीसरा ही कारण भाषा के उद्भव का निकाला है और वे कहते हैं कि किसी समय मौन रहने से काम न चलते देख कर जब मनुष्य बहुत उकता गए और हाथ पैर आँख भौंह के इशारों से भी अपने आशय को न प्रकट कर सके तो उन्होंने एक बड़ी सभा की और उस महासभा या महामण्डल में उस समय के जो बुद्धिमान और नई रोशनी वाले थे उन्होंने एक भाषा स्थिर करने का प्रस्ताव किया और सबकी सम्मति से सैंकड़ों शब्द

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्थिर हुए। मालूम होता है कि इस सभा में केवल मनुष्य ही नहीं किन्तु पशु पक्षी जड़ चेतन सभी इकट्ठे किए गए थे। कार्य आरम्भ होने के समय मूक मण्डल में बड़ा चूँचाँ हूँहाँ खूँखाँ मचा अन्ततः किसी ने एक बैल को पकड़ कर कहा 'बइल्ला' बस सभी चिल्ला उठे 'बइल्ला' और यह निश्चित हुआ कि इस जन्तु को 'बइल्ला' कहना। ऐसे ही अनेक शब्द स्थिर हुए। गाय भैंस घोड़ा कुत्ता जब गोहूँ लोटा थाली आदि के नाम निश्चित हुए। सभा के पति उपपति सम्पादक आदि नियत हुए और उस दिन से मूकमहामण्डल के अनेक उपदेशक घूम घूम कर व्याख्यान की पताका उड़ाते हुए स्थान स्थान पर सभा के उद्देश्यों का प्रचार करने लगे।

(४) किन्तु पूर्वोक्त तीनों मतों से असन्तुष्ट होकर कितने विद्वानों ने एक चतुर्थ मत प्रकाशित किया है जिसके अनुसार स्वाभाविक ईश्वर की दी हुई एक मनुष्य में अपूर्वशक्ति है जिससे मनुष्य स्वभावतः शब्द बना लेता है। पूर्वोक्त मतों से असन्तोष का कारण यह है कि पहिले मत में यह बात आश्चर्य की है कि यदि मनुष्य को ईश्वर से मिलने के समय भाषा ज्ञान न था तो ईश्वर से उससे बात चीत कैसे हुई। कोई व्याकरण या कोश जिसके द्वारा ईश्वर ने पुरुष को भाषा सिखाई होगी अवश्य उसके ज्ञान के लिये भी अपेक्षित है। दूसरे मत में यह एक बड़ा दोष है कि अनुकरण की रीति से १० या बीस शब्द तो भले ही निकल सकते हैं पर सम्पूर्ण भाषा को अनुकरण मूलक कहना असंगत सा जान पड़ता है। यदि गाय को लड़कों का सा 'भाँय' कहा जाता तो ठीक था किन्तु 'गाय' यह शब्द अनुकरण की रीति से कदापि नहीं निकल सकता। इसी प्रकार मूकमहामण्डल वाली बात भी नहीं ठीक मालूम होती क्योंकि मूकों में भाषाज्ञान जब था ही नहीं तो सभा में बात चीत कैसे हुई, किस वस्तु को क्या कहना यह सब कैसे निश्चित हुआ। इस प्रकार यह विदित होता है कि चतुर्थ मत जिसका मैक्समूलर ने भी आश्रय लिया है वही ठीक है। अस्तु भाषा की उत्पत्ति का विचार यदि इस प्रकार समाप्त किया जाय तो दूसरा प्रश्न यह उठता है कि पहिले पहल क्या एक ही कोई भाषा संसार में हुई और उससे अनेक भाषाएं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जहाँ तहाँ देश काल जल वायु मनुष्यों के आचार व्यवहार आदि के भेद से भिन्न हुईं या प्रथम अनेक स्थानों में भिन्न भिन्न ही भाषाएं हुईं और अनेक नदियों के सदृश कभी मिलती कभी युक्त पृथक् होती हुई आज भी अनेक ही हैं। यह प्रश्न गंभीर है और इसका समाधान कठिन है क्योंकि इस प्रश्न का विचार केवल भाषाशास्त्र के अधीन नहीं है, भूगर्भशास्त्र और मनुष्यशास्त्र (Geology and Anthropology) से भी इसका सम्बन्ध है। प्रथम यदि उस बात का निश्चय हो ले कि एक कुटुम्ब से सारी पृथ्वी के मनुष्य निकले हैं या अनेक कुटुम्ब से तब इसका भी निश्चय हो सकता है कि सब भाषाओं का मूल एक था या अनेक। भाषाशास्त्र के परिशीलन से यह ज्ञात होता है कि यदि अरबी संस्कृत लेटिन ग्रीक आदि सब भाषाएं अपनी धातु अवस्था में पहुँचा दी जाँय तो भी भिन्न भिन्न वर्ग की भाषाओं के धातुओं में इतना अन्तर पाया जाता है कि अनेक वर्गों के अनेक मूल थे ऐसा ही कहना पड़ता है। मनुष्यशास्त्र से और भूगर्भ विद्या से यह ज्ञात होता है एकही समय पृथ्वी पर बहुत जगहों में मनुष्य वर्तमान थे। ऐसा अभी तक नहीं पाया गया है कि पृथ्वी के किसी एक तह में एक ही जगह थोड़े से मनुष्य थे और कहीं मनुष्य थे ही नहीं। इन बातों से यह विदित होता है कि इस समय जैसी भाषाशास्त्र भूगर्भशास्त्र आदि की अवस्था है ऐसी अवस्था में भाषा का मूल एक था या अनेक इसका निश्चय नहीं हो सकता।

भाषाशास्त्र का दूसरा विभाग अनेक भाषाओं का परस्पर सम्बन्ध और वर्गीकरण है। पहिले तो यह विदित होता है कि भाषाओं का वर्गीकरण बहुतही सहज है क्योंकि चीन वर्ग की जो भाषाएं हैं उनके साथ भला हिन्दी का कौन सा सम्बन्ध होसकता है पर वस्तुतः यह कार्य अत्यन्त कठिन है क्योंकि कभी राज्यदिग्विजय आदि के कारण प्रायः एक देश के शब्द अनेक देशों में फैल जाते हैं जैसा कि भारतीय उर्दू में इतने फारसी शब्द हैं कि यह कहना कठिन हो जाता है कि क्या उर्दू फारसी वर्ग में है या संस्कृत वर्ग में। इसी प्रकार एकही देश में पहाड़ नदी आदि के अलङ्घनीय होने के कारण अथवा भाषाओं के प्रयोग करनेवालों की जाति प्रकृति आदि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अत्यन्त भिन्न होने के कारण परस्पर भाषाओं में इतना भेद पाया जाता है कि अत्यन्त समीप वासी दो जातियों की भाषाएं वस्तुतः भिन्न वर्ग की समझी जाती हैं जैसे कि उड़ीसा के निवासियों की भाषा संस्कृतवर्ग की है पर उनके पश्चिम मद्रास प्रान्तवालों की भाषा द्रविडवर्ग की है। ऐसी अवस्था में वर्ग परिचय कैसे करना और सामान्यतः कितने वर्ग और अन्तर्वर्ग हैं सो यहाँ संक्षेप से दिखाया जाता है। भाषा का मुख्य रूप शब्द नहीं हैं किंतु उसकी रचना है। अर्थात् शब्द एक भाषा के दूसरी भाषा में आसानी से जासकते हैं पर व्याकरण की रचना भिन्न भाषाओं की प्रायः भिन्न होती है। उदाहरण, एक पण्डित जी कहते हैं कि मुझे वाष्पसकट के विश्राम स्थान पर प्रस्थान करना है। एक बङ्गाली बाबू कहते हैं कि हम रेलवे स्टेशन के वास्ते स्टार्ट करने माँगता है। एक विचारा गवइयाँ कहता है कि हमारा रेलवई इस्टीसन पर जाय के वाटे। एक चौथे शहरू मुसलमान् फर्माते हैं कि मुझको रेल के स्टेशन पर जाना है। मैं समझता हूँ किसी को संदेह नहीं होगा कि ये चारों साहेब अपने अपने ढंग से हिन्दीही बोल रहे हैं क्योंकि शब्द चाहे अंगरेजी के या फारसी के या संस्कृत के हों जब तक टूटी फूटी किसी प्रकार से रचना हिन्दी की रहेगी तब तक भाषा हिन्दी ही समझी जायगी। तब इसी नियम के अनुसार यदि व्याकरण की रचना के अनुसार वर्ग बनाए जाँय तो आर्य, अरबी, तुरकी, द्राविड, चीनी, और स्कांडनेव ये छ वर्ग होते हैं। ये मुख्य वर्ग हैं। इनके अतिरिक्त भी कुछ भाषाएं हैं जिनका ठीक वर्गीकरण नहीं हो सका है। प्रायः उतर भारत की सब भाषाओं को मिलाकर एक शाखा आर्य भाषा की समझनी चाहिए। इसकी दूसरी शाखा पारसी और अवेस्ता की भाषा है। तीसरी शाखा लेटिन और ग्रीक। चौथी शाखा अंगरेजी जर्मन आदि। पाँचवी शाखा कल्टिक और छठीं रूस की भाषा आदि। तो इस रीति से ज्ञात होता है कि हिन्दी भाषा आर्य भाषा की एक शाखा है। इस प्रकार भाषावर्गों का कुछ विचार कर भाषाओं की अवस्थाओं का अब विचार करना है। सामान्यतः प्रत्येक भाषा की चार अवस्थाएं होती हैं किंतु इन चारों अवस्थाओं में इतना अन्तर है कि एक अवस्था से दूसरी अवस्था में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चने तक सैकडों हजारों वर्ष लग जाते हैं, देश बदल जाता है, भाषाओं के नाम बदल जाते हैं, प्राचीन अवस्था नवीन दशा के आविर्भाव तक सर्वथा लुप्त होजाती है, इसलिये एकही भाषा को चारों अवस्था में देख पाना दुर्घट है पर अनेक भाषाओं को परस्पर भिन्न अवस्था में देख कर उनका तारतम्य करने से इन अवस्थाओं का वर्णन किया जा सकता है। १ धातु अवस्था, २ समास अवस्था, ३ प्रत्यय अवस्था, ४ उपसर्ग अवस्था। चीन की भाषा संप्रति धातु अवस्था में है, शब्दों में प्रत्यय विभक्ति आदि नहीं लगते, शब्द परस्पर मिलते नहीं, सब शब्द पृथक् पृथक् रख दिए जाते हैं और एक वाक्य बन जाता है। यदि मनुष्य आम खाता है-ऐसा कहना होगा तो वे लोग मनुष्य आम खा तीन शब्दों के लिये चीनी शब्द कहेंगे। मनुष्य का बहुवचन करना होगा तो मनुष्य झुण्ड इन दोनों शब्दों के लिये अपना शब्द कहेंगे। अभी तक हिन्दी में भी कभी कभी ऐसा होता है जैसे मनुष्य का बहुवचन बनाने के लिये प्रत्यय न रख कर 'मनुष्य लोग' 'मनुष्य गण' कहते हैं। दूसरी समास अवस्था में मेक्सिको आदि की भाषाएँ हैं 'आदमी घर में आम धीरे धीरे खाता है' ऐसा जब इन लोगों को कहना होता है तब इस हाथ का समस्त एक शब्द ये लोग कहते हैं। हिन्दी में इस समासावस्था का उदाहरण 'इस बारात में खूब-खा-पी-घर-मार-गडबड-सडबड' हुआ। इस पद में बहुत से शब्द एक साथ मिला दिए गए हैं। इन दोनों अवस्थाओं के बाद तीसरी प्रत्यय अवस्था आती है। 'खायँ वे' यह प्रायः धातु अवस्था हुई। दोनों को लोग मिला कर बोलने लगे तो खायँ+वे यह समासावस्था हुई। जब दोनों शब्द ऐसे मिल गए कि एक अंश घिसते घिसते बहुत दुर्बल होगया तो 'खावें' यह एक शब्द होगया जिसमें खा धातु में वें प्रत्यय माना जाता है। इसी प्रकार सब प्रत्यय किसी न किसी स्वतन्त्र शब्द से निकलते हैं। यहाँ वे शब्द पहिले तो समस्त हुआ पर धीरे धीरे घिसकर अपना स्वतन्त्र रूप खो बैठा और प्रत्यय होगया। इस तीसरी अवस्था का प्रधान उदाहरण संस्कृत है जिसमें बहुत से प्रत्यय हैं। चौथी अवस्था उपसर्ग अवस्था है। जिसमें प्रत्यय अलग होकर फिर स्वतन्त्र होजाते हैं, जैसे कि हिन्दी या अंगरेजी में। इन भाषाओं में प्रत्यय कम होगए

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हैं क्योंकि बहुत से शब्द जो सम्बन्ध वाचक हैं वे स्वतन्त्र अव्यय रूप से रहते हैं। *Of* man, *in* the house, *from* him इत्यादि अँगरेजी शब्दों में अव्यय पहिले लगे हैं। हिन्दी में अव्यय पीछे लगते हैं जैसे 'घर में' 'उस का' इत्यादि।

भाषा में परिवर्तन होजाया करता है यह सबको विदित है। अब यह परिवृतन प्रायः किन कारणों से होता है इसका कुछ विचार होना चाहिए। इतने मुख्य कारण भाषा में परिवर्तन के पाए जाते हैं — १ देश, २ आलस्य, ३ धर्म, ४ व्यक्तिस्वभाव, ५ संपर्क, ६ कविता।

देश के भेद से एकही भाषा भिन्न रूप की होजाती है इसमें किसीको सन्देह नहीं है। पक्की हिन्दी में 'आप जाते हैं' और पच्छिम में 'आप जाते हो' कहते हैं। बिहार में 'रौं आ जातानी,' काशी में 'तू जात होअः' या 'जात बाटः' कहते हैं। एकही शब्द भैया, भयवा; भाई, भाय आदि रूप को धारण करता है। एकही शब्द गौ, गाय, गैया आदि होजाता है। देश देश का स्वभाव कुछ भिन्न होता है। जलवायु आदि के भेद के कारण एक अक्षर जो एक देश में सीधा समझा जाता है दूसरे देश में कठिन समझा जाता है। हमारे देश में ल एक सीधा अक्षर है पर महाराष्ट्र लोग उसे प्रायः ड़ कहते हैं और एक जापान के विद्यार्थी हमसे पढ़ते थे उनका यह कथन था कि ल अक्षर से बढ़कर कठिन और कोई अक्षर नहीं है और ल को वे अर्ड कहा करते थे।

अँगरेज लोग भीम को बीम, पण्डित को फैण्डित आदि कहा करते हैं। और र अक्षर को प्रायः ठीक उच्चारण नहीं कर सकते। चीन के लोग क्राइस्ट को किलीसित्तू कहते हैं। यहाँ के गवाँर लोग प्रामिसरी नोट को परमेश्वरी लोट और लाइब्रेरी को लबेरी या रायबरेली कहा करते हैं। इस प्रकार प्रत्येक देश के भिन्न भिन्न दोष गुण हैं जिनके अनुसार भाषा में परिवर्तन हुआ करता है। संस्कृत लक्ष्मण और लक्ष्मी को बङ्गाली लोग लक्खन और लक्खी कहते हैं। हिन्दी में लछुमन या लखन (तुलसी दास) और लछिमी कहते हैं। परिवर्तन का दूसरा कारण आलस्य कहा गया है। कोई शब्द जब अत्यन्त कठिन मालूम होता है तो प्रायः मनुष्य उसको बदलने लगते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कज्जल इतना कठिन है कि उसे बदल कर लोगों ने काजल या काजर कर लिया है। कृष्ण से प्राकृत कण्हो हुआ, कण्हो से कान्हा कान्ह कन्हैया आदि होगया। कर्ण से करन, करन से कान होगया। ऐसेही श्वशुर का ससुर, श्वश्रू का सास, ननान्दा का ननद इत्यादि। खास हिन्दी शब्दों में प्रायः इतने नियम पाए जाते हैं। *तालव्य श मूर्द्धन्य ष और व हिन्दी के शब्दों में नहीं हैं। संस्कृतज्ञ लोगही संस्कृत के शब्दों में इन अक्षरों को लिखते और बोलते हैं। इससे हिन्दी में इन अक्षरों का दन्त्य स और न हो जाता है। श्रीकृष्ण सिरीकिसुन, श्याम-साम, इत्यादि। कहीं कहीं आदि में मुर्द्धन्य ष का छ होजाता है षष्ठी का छठ, षष्ठ का छठाँ। ड और ढ का ड़ और ढ़ होजाता है-खड़गपुर खड्गपुर के लिये। किंतु आदि में ड और ढ मिलते हैं जैसे ढाकना, डाकू इत्यादि। ह्रस्व इ और उ प्रायः शब्द के अन्त में दीर्घ से होजाते हैं जैसे मुनी लोग साधू आदमी। ऋ प्रायः ईरि होजाता है जैसे कृति कीरित। कहीं ऋ का इ होजाता है कृष्ण का किसुन। ऌ तो संस्कृत में भी एकही आध जगह मिलता है, हिन्दी में कौन पूछे। ए औ का उच्चारण हिन्दी में अय अव का सा होता है। कौन है या कवन हय। ए ओ हिन्दी कविता में ह्रस्व भी होते हैं 'केहि कारन मोहि मारिके'। विसर्ग हिन्दी में नहीं होता। आदि में प्रायः य को ज कहा जाता है 'यज्ञ का जग' पर कहीं पर य भी बोला जाता है जैसे 'या, याने, यहाँ,' इत्यादि। व प्रायः ब होजाता है पर कहीं व भी बोला जाता है 'वन, वहाँ'। ञ ण ये दोनो अक्षर हिन्दी में नहीं मिलते। ङ बहुत कम पाया है जैसे कि अङरखा, पर यह भी यदि अँगरखा लिखा जाय तो ऐसे शब्दो में भी ङ की स्थिति लुप्तप्राय ही है। संयुक्ताक्षर हिन्दी में बहुत कम हैं जैसे क्यों, क्या अच्छा, पक्का, कच्चा इत्यादि। भाषान्तर के शब्द हिन्दी में आने पर प्रायः अपने संयुक्त अक्षरों में से एक को खो बैठते हैं, या दोनो अक्षर अलग हो जाते हैं या दोनों † मिल कर एक तीसरा ही अक्षर हो जाता है। उदाहरण-प्रयाण का पयान हो जाता है। यहाँ र का

---

* ये नियम शुद्ध हिन्दी शब्दों के लिये हैं, संस्कृत आदि से जो शब्द प्रतिदिन मँगनी लिए जाते हैं उनके लिये नहीं।

† उदाहरण के लिये दोनों कहा गया है वस्तुतः तीन चार अक्षर भी मिल सकते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लोप हो गया, स्नान का असनान * हो जाता है यहाँ स और न पृथक् हो गए हैं, लक्ष्मण का लखन हो जाता है यहाँ क्ष का ख एक और ही अक्षर हो गया है। ऐसे ही और भी बहुत से परिवर्तन के नियम हैं जो विस्तार से हमारे नागरीनिर्वचन नामक ग्रन्थ में पाए जायँगे। तीसरा परिवर्तन का कारण धर्म है। कई प्रकार के धर्म सम्बन्धी झूठे वा सच्चे नियम याने शास्त्रविहित अथवा भ्रमरूप प्रायः मनुष्यों के हृदय में जमे रहते हैं। इस प्रकार जिस जिस शब्द के उच्चारण में घृणा है वे उस शब्द को कुछ और कहने लगते हैं। उनके द्वारा कुटुम्ब में, कुटुम्ब के द्वारा देश भर में ऐसे परिवर्तित शब्द कभी कभी फैल जाते हैं। स्त्री पति का नाम नहीं धरती, पति स्त्री का नाम नहीं धरता ऐसे ही अत्यन्त शठों का, पतितों का, गुरु का या खाने पीने की चीज़ों में निषिद्ध वस्तुओं का नाम लोग नहीं लेते। पश्चिमोत्तर में कितने लोग गोभी नहीं खाते क्योंकि इसमें गो शब्द पड़ा है। विहार के अगरवाले लोग गोभी कहने से बहुतही चिढ़ते हैं और कोबी के कहने से मज़े में उसे खाते हैं। किसी के गुरु का नाम सतुआदास हो तो वह सतुआ कभी नहीं कहेगा, सीतल बुकनी कहा करेगा। बस चलो सीतल बुकनी धीरे धीरे चल निकला। चौथा परिवर्तन का कारण व्यक्तिस्वभाव है! कितने भगत लोग पावलागें, पाँयलागे इत्यादि अशुद्ध शब्दों को छोड़ कर जय श्री कृष्ण, जय गोपाल, भगत जी राम राम इत्यादि पवित्र वाक्य प्रणाम के लिये प्रयोग करते हैं। उन में भी कितने सीताराम से चिढ़ते हैं कितने राधाकृष्ण से और इन नामों को कभी नहीं कहते। ऐसे ही कितने शब्दों का प्रयोग लुप्त हो जाता है और कितने नए शब्द उत्पन्न हो जाते हैं। पाँचवाँ परिवर्तन का कारण संपर्क है। जिनको संस्कृत भाषा से सम्बन्ध है या संस्कृतज्ञों से अधिक संपर्क है उनकी हिन्दी संस्कृत शब्दों से भरी हुई होती है, यहाँ तक कि महामहोपाध्याय लोग और उन के मैथिल शिष्य लोग गलियों में सामान्य पुरुषों से बात चीत करने में अवच्छेदकता प्रकारता विषयता प्रतियोगिता आदि का प्रयोग करने लगते हैं। ऐसेही अंगरेजी वालों की हिन्दी और

* ऐसे शब्दों में पहिले अ इ आदि भी लगजाता है। असनान, इसटीसन इत्यादि।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

खासकर अंगरेजों की हिन्दी कुछ अपूर्वही होती है। अंगरेजों को पेशाब करनेकी इच्छा होती है तो चपरासी से कहते हैं कि हम पानी बनाने माँगता है और घोड़ी के बदले कोई घोड़ा लावे तो कहते हैं हम शा घोड़ा मत लावो मेमशाहेब का शा घोड़ा लावो याने घोडी लावो। मुसलमान कायस्थ आदि लोगों की हिन्दी मग़रूर, मुलाहिज़ा, मुमानियत, मुमकिन, दौलतख़ाना, ग़रीबखाना फ़र्माना, आदि शब्दों से भरी हुई होती है। साधुलोगों की हिन्दी डोलडाल, छोरा, भ्रष्टान्न, दुर्गन्ध ॐ आदि शब्दों से भरी हुई होती है। छठाँ कारण भाषापरिवर्तन का कविता है। शब्दों के बहुत से नए रूप, व्रजभाषा के व्याकरण का देशान्तरीय कवित में प्रचार आदि के कारण हुए हैं। तुलसीदास लिखते हैं 'हसब ठठाब फुलाइब गालू, एक सँग नहिँ होइ भुआलू' यहाँ भुआलू है कहीँ तुक मिलाने के लिये भुआला रहता है, कहीं 'भु-आली मिलता है। इसको देख किसी ने अपने लड़के का नाम भु-आलदास रखलिया। किसी ने भुआल का अर्थ बेवकूफ समझ लिया और जब कोई बेवकूफी का काम करता है तो कहते हैं बड भु-आल बाड़ हो। ऐसी अनेक प्रकार की बोली बानी कबीरकी सूर की नानक की सन्यासियों की निकली हैं। यहाँ बालक आदि के समक्ष व्यख्यान होने के कारण कठिन गम्भीर बहुत से भाषा शास्त्र के नियम छोड़ दिए गए हैं। उनका पूर्ण विवरण नागरीनिर्वचन' के प्रकाश होने पर पाठकों को विदित होगा।

ॐ वैरागियों की भाषा में भ्रष्टान्न का अर्थ मिष्टान्न याने मिठाई है और दुर्गन्ध कहते हैं दुग्ध याने दूध को।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रेडियम ।

[बाबू दुर्गाप्रसाद बी. ए. लिखित ।]

राजनैतिक समाज में जिस प्रकार आजकल सब ओर हलचल मचा हुआ है, ठीक उसी प्रकार वैज्ञानिक समाज में कुछ काल हुआ रेडियम के आविष्कार और उसके विचित्र गुणों की धूम मची हुई थी। आजकल के नवीन रासायनिक मत से सँसार मात्र के यावत पदार्थ क्या ठोस क्या द्रव क्या वाष्पीय सभी लगभग ७८ मूल पदार्थों से बने हुए माने जाते हैं जिनको मूलतत्त्व कहते हैं। ये मूलतत्त्व इसलिये कहलाते हैं कि वे अबतक किसी प्रकार की कृत्रिम रीति से विभक्त नहीं हो सकते, वही के वही रहते हैं जैसे लोहा, सोना, ताँबा, कार्बन, गँधक हाइड्रोजन इत्यादि। इन्हीं मूल पदार्थों में रेडियम भी है। इस विचित्र धातु के आविष्कार होने का मुख्य कारण एक्स रेज या रांजन किरणें हैं। आप लोगों को रांजन किरणें क्या हैं यह भली भांति मालूम होगा—इसका संक्षिप्त हाल नागरीप्रचारिणी पत्रिका में पहिले प्रकाशित हो चुका है। ये एक ऐसी अदृष्ट किरणें हैं कि जो भली भांति काष्ठ पत्थर कागज, या पतली धातुओं के पत्र के भी पार हो जाती हैं अर्थात् ये वस्तुएँ इन किरणों के लिये पारदर्शक हैं। यदि हम इन किरणों को स्वयँ देख सकते तो बक्स में बंद की हुई वस्तुएँ शरीर के भीतर का अस्थिपँजर वा कोठड़ी के भीतर के पदार्थ भली भांति दृष्टिगोचर होजाते।

पर वास्तव में ये किरणें स्वयं अदृश्य हैं पर मुख्य मुख्य वस्तुओं पर जब ये पड़ती हैं तो वे प्रकाशमान हो जाती हैं। इस गुण को विसर्जनशक्ति कहते हैं। यदि हीरा इन किरणों में रख दिया जाय तो वह एक सुँदर हलकी महताबी की नाईं चमकने लगता है। इसी विसर्जनशक्तिमय गुणवाली और वस्तुओं के जानने के हेतु डाक्टर बेकुरल ने बहुत सी वस्तुओं की जांच की। एक दिन अकस्मात उन्होंने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यूरेनियम (Uranium) के जो ७८ में से एक मूल पदार्थ है एक टुकड़े को एक लिफाफ पर जिसमें फोटोग्राफ का प्लेट बंद था रख कर धूप में कुछ काल के लिये रख दिया और प्लेट को मसा-लोँ से धोने पर उन्होंने आश्चर्ययुक्त यह बात देखी कि उस प्लेट पर उस यूरेनियम के टुकड़े का चित्र भली भांति बन गया जिस से उन्होंने यह सिद्धान्त ठहराया कि यूरेनियम में ऐसा गुण है कि सूर्य्य की किरणों को अपने में लुप्त कर यह विसर्जनशक्तिमय किरण प्लेट पर डालता है जो रासायनिक क्रिया से उस पर चित्र बना देती है पर पीछे उनको मालूम हुआ कि उसको धूप में रखने की आवश्यकता नहीं; यह गुण स्वयँ यूरेनियम में है। और भी कई एक धातुएँ ऐसी ही गुणवाली पाई गई हैं। इस प्रकार की किरणों का नाम बेकरल किरण आविष्कर्ता के नाम पर रखा गया। इसके उपरान्त ऐसी ही वस्तुओं की जांच करते हुए पैरिस की एक स्त्री मैडम क्यूरी ने एक खनिज वस्तु की जिसको पिचब्लेण्ड कहते हैं और जिससे पहिले जस्ता निकाला जाता था, जांच की और आश्चर्ययुक्त हो कर यह पाया कि यह वस्तु बहुत ही अधिक विसर्जनशक्ति का गुण रखती है जो युरेनियम से लगभग एक लाख गुना अधिक है। इस पर मेडम क्यूरी ने जो फ्रांस देश के गौरव का कारण हैं उस वस्तु के जानने की इच्छा की जिसका यह मुख्य गुण है, क्योंकि पिचब्लेण्ड में लोहा जस्ता सोडा इत्यादि और कई एक वस्तुएँ हैं। इस कार-ण से उन्होंने पिचब्लेण्ड के रासायनिक पृथक्करण द्वारा प्रत्येक पदार्थ की पृथक् पृथक् जांच की और बड़े परिश्रम और धैर्य्य के उपरांत उन्हें उनमें से एक ऐसी बस्तु मिली जिसका यह मुख्य गुण था और जिसकी किरणों द्वारा फोटोग्राफिक प्लेट पर चित्र बन जाता था। उसी वस्तु का नाम रेडियम रक्खा गया। सन् १९०२ इस्वी में उन्होंने इसका लवण अर्थात् हरिद तय्यार किया और वैज्ञानिक समाज में इस बात को प्रगट किया। इस वस्तु के एक रत्ती तय्यार करने में इनका लग भग ८५००० रुपया खर्च हुआ, आध सेर रेडियम तय्यार करने में इस हिसाब से लगभग १०५०००७० रुपया व्यय होगा और इसके लिये १३५०००मन पिचब्लेण्ड की आवश्यकता पड़ेगी। आशा की जाती है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कि कुछ दिन पाकर रासायनिक शास्त्र के पंडित ऐसी रीति निकालें-गे कि जिससे इसका मूल्य बहुत सस्ता हो जाय और यह सर्व साधारण को प्राप्त हो सके। इसमें कई एक विशेष गुण हैं। सब से विचित्र गुण तो यह है कि यह स्वयं प्रकाशित न होकर दूसरी वस्तुओं को प्रकाशित कर देता। है प्रोफेसर क्रूक्स ने एक पिचब्लेण्ड के टुकड़े पर हरिदरेडियम से इसके नाम के ६ अक्षर R A D I U M लिखे। अंधेरे में ये ६ अक्षर इतने प्रकाशित हुए कि प्रोफेसर क्रूक्स भली भांति इसके पास समाचारपत्र पढ़ सकते थे। यदि प्रकाश शरीर पर कुछ काल तक डाला जाय तो उस स्थान पर गहिरा घाव हो जाता है और देर में अच्छा होता है। प्रोफेसर क्रूक्स को स्वयम् भोगना पड़ा। उन्हों ने डिबिया में रेडियम को बंद कर के जेब में भूल से रख लिया था। उस स्थान पर शरीर में उनके घाव हो गया। वैज्ञानिक लोग तो यह कहते हैं कि एक छिटांक रेडियम जिस कमरे में हो वहां मनुष्य आँखों या शरीर को बिना हानि पहुंचाए नहीं रह सकता। यही नहीं यदि किसी मनुष्य की आंखें बंद कर पट्टी बांध दी जाय तो वह इसके चांदने को भली भांति अनुभव कर सकता है अर्थात् इसकी किरणें बंद आंखों में से भी पार होकर आंखों के तारे तक पहुँच जाती हैं। कई एक जरमन डाक्टरों ने ऐसे अंधों पर जिनकी आंखों के तारे नष्ट नहीं हुए थे इसकी किरणों की परीक्षा की जिससे आशा की जाती है कि यह इस काम में बहुत ही उपयोगी होगी। वायना के एक प्रसिद्ध डाक्टर ने अंधेरे में बैठ कर इसके प्रकाश की सहायता से बहुत ही सूक्ष्म प्रयोग किए अर्थात् यह अंधों तथा चक्षु वालों दोनों के काम में आने वाली वस्तु है—शारीरिक रोगों में भी यह बहुत ही उपयोगी सिद्ध हुई है। कई प्रकार के नासूर जो अब तक असाध्य समझे जाते थे इसकी किरण डालने से थोड़े ही काल में अच्छे हो जाते हैं। आज कल के मत से बहुत से शारीरिक रोग एक प्रकार के अत्यंत सूक्ष्म जीवों से होते हैं-जैसे हैज़ा, प्लेग, क्षयी रोग इत्यादि। इस प्रकार के सूक्ष्म जीवों के लिये ये किरणें कालवत् हैं। इससे आशा होती है कि इससे और भी विशेष रोगों में औषधि का काम लिया जायगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri